DAMAGE BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186773

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP 902—26-3-70—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No H २८१ Accession No. PgH4213

Author भगवानदास

Title सवा हजार की कहानी १९३१

This book should be returned on or before the date last marked below

॥ श्रीः ॥

विद्याभवन राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला

२६

सब धर्मों की बुनियादी एकता

मूललेखक

डॉ० भगवानदास

अनुवादक

पण्डित सुन्दरलाल

प्राक्कथन

श्रीप्रकाश

राज्यपाल : महाराष्ट्र

चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-१

प्रकाशक : चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
मुद्रक : विद्याविलास प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० संवत् २०१७
मूल्य : १२-००

(सर्वाधिकार सुरक्षित)
The Chowkhamba Vidya Bhawan,
Chowk, Varanasi.
(INDIA)
1961
Phone : 3076

प्राक्कथन

दिसम्बर सन् १९३० मे काशी मे एशिया खण्ड मे प्रचलित धर्मो और सम्प्रदायो के प्रतिनिधियो का सम्मेलन हुआ था। उसमे पिताजी डॉक्टर भगवान दासजी को 'यूनिटी आफ एशियाटिक थॉट' अर्थात् 'एशिया खण्ड के विचारो की एकता' पर भाषण करने के लिए निमन्त्रित किया गया था। पिताजी सदा अपने भाषणो को पहले से लिख लेते थे और उन्हे पढ कर ही सुनाते थे। उन्होने मौखिक भाषण देने का कभी अभ्यास नही किया और वे ऐसा करने मे सदा सङ्कोच करते रहे। जो भाषण उन्होने उस सम्मेलन मे किया था उसकी सभी प्रतिनिधियो ने बड़ी प्रशसा की और उसे पुस्तकाकार मे प्रकाशित देखने की इच्छा प्रकट की।

इसी भाषण ने आगे चलकर 'एसेंशल यूनिटी आफ आल रिलिजन्स' अर्थात् 'सब धर्मो और सम्प्रदायो की मौलिक एकता' नामक पुस्तक का रूप लिया। पिताजी का यह प्रकार था कि अपनी पुस्तको की आवृत्ति करते हुए उसकी बराबर वृद्धि करते जाते थे। जो पुस्तक प्रथम सस्करण मे एक छोटे से जिल्द मे छपी, उन्होने आगे चल कर तीसरे-चौथे सस्करण तक पहुचते-पहुचते तीन-तीन मोटी-मोटी जिल्दो के रूप ले लिये। उनकी सभी पुस्तको की यही हालत रही। मैने प्राय उनकी सब पुस्तके पढी है। दो और कभी तीन सस्करण तक मै पढता रहा, पर वे आगे चल कर इतनी मोटी होती गयी कि फिर पढने का साहस नही हुआ।

मेरे लिए इस सम्बन्ध मे कुछ कहना छोटी मुँह बड़ी बात होगी, पर मै इतना कहने से अपने को रोक नही सकता कि मुझे उनकी पुस्तको के प्रथम सस्करण ही सबसे अच्छे लगते रहे। दिसम्बर सन् १९३० के 'एशिया खण्ड के विचारो की एकता' सम्बन्धी उनके भाषण ने जब 'सब धर्म और सम्प्रदायो की मौलिक एकता' नाम की पुस्तक का रूप धारण किया, तो इसका बहुत से देशो मे प्रचार हुआ और इसके सस्करण पर सस्करण निकलते रहे। पिताजी इस पुस्तक पर बडा परिश्रम करते रहे, और २५ वर्ष तक इसके कई सस्करण निकाले। एक अमेरिकन सज्जनको

यह पुस्तक ऐसी पसन्द आयी कि उन्होंने इसकी कई हजार प्रतियाँ छपवा कर मुफ्त चारों तरफ उन्हें बाटा। सन् १९५५ में इसका अन्तिम संस्करण मद्रास के थियोसोफिकल पब्लिसिंग हाउस ने निकाला और पीछे बम्बई के भारतीय विद्या भवन द्वारा अभी हाल में ही (१९६०) इसका पुनः प्रकाशन हुआ।

पिताजी ने आरम्भ से ही अपनी पुस्तकें अंग्रेजी में लिखीं। उनका ऐसा विचार था कि इस भाषा में लिखने से अपने देश के प्राचीन और उपयोगी शिक्षाप्रद शास्त्रीय तत्त्वों का अन्य देशों में प्रत्यक्ष प्रचार होगा। बहुत से मित्रों ने चाहा था कि वे हिन्दी में लिखें। बहुत कहने पर पीछे उन्होंने तीन चार पुस्तकें हिन्दी में भी लिखीं। एक संस्कृत में भी लिखी, पर उन्होंने अपने विचार अधिकतर अंग्रेजी भाषा में ही व्यक्त किये हैं। अपनी सब पुस्तकों में उन्हें 'सब धर्मों और सम्प्रदायों की मौलिक एकता' नामक ग्रंथ से ही सबसे अधिक प्रीति रही। इस विषय में सदा उनको बड़ा रस रहा। बहुत से मित्रों ने भी इसकी आवश्यकता और उपयोगिता अनुभव की। पिताजी का यह अविचल विश्वास था कि एक ही सत्य को भिन्न-भिन्न उपदेशकों ने भिन्न-भिन्न शब्दों में धर्म अथवा सम्प्रदाय के नाम से प्रकट किया है। भाषा की भिन्नता के कारण जन साधारण ने इनकी मौलिक एकता को नहीं पहचाना और स्वार्थ वश उन्होंने अपने-अपने धर्मों और सम्प्रदायों के नाम पर एक दूसरे से भीषण संघर्ष भी किया।

संसार के इतिहास में धार्मिक युद्धों का विस्तार से विवरण आता है। प्रायः लोगों का ऐसा विचार है कि हमारा ही धर्म अथवा सम्प्रदाय सत्य है। जो बातें उसमें कही हैं, वे ही ठीक हैं। बाकी धर्म या सम्प्रदाय झूठे हैं या गलत हैं। पिताजी को इस मनोवृत्ति से बहुत क्लेश होता था और जब वे हिन्दू और मुस्लिम उत्पातों को देखते थे—उन्हें शान्त करने के लिए कभी-कभी उन्होंने अपने प्राणों को भी संकट में डाला है—तो उनको दुःख होता था कि एक ही सत्य को जो भिन्न-भिन्न भाषाओं और भिन्न-भिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न स्थानों पर प्रतिपादित किया गया है उसे न समझ कर लोग ऐसा अनर्थ कर रहे हैं। उनका बराबर यह प्रयत्न रहा कि सबको धर्मों की एकता बतला दी जाय जिससे कम से कम उसके नाम पर तो

झगडा न करें। यदि झगड़ा अनिवार्य हो तो दूसरे नाम पर किया जाय, धर्म का नाम कलङ्कित न हो।

सन् १९३१ मे जब कानपुर में भीषण साम्प्रदायिक उत्पात हुआ था, उस समय काग्रेस की तरफ से उसकी जाँच के लिए और ऐसी भीषण घटनाओ के निवारण के उपायो को निर्धारित करने के लिए समिति स्थापित की गयी थी, जिसके अध्यक्ष पिताजी थे। उस समिति में अन्य सदस्यो के साथ-साथ पडित सुन्दरलालजी भी थे। कई महीनो तक इस समिति ने काम कर अपना विवरण काग्रेस को दिया था, जिसके प्रकाशित होने पर उस समय के शासन ने उसे जब्त कर लिया था। एक सुन्दर और उपयोगी ग्रन्थ इस प्रकार से लुप्त हो गया। पडित सुन्दरलालजी पिताजी के निकट के साथियो मे रहे है। उन्हे पिताजी पर बराबर बड़ी श्रद्धा भी रही है। उनके भी विचार इस सम्बन्ध मे पिताजी के विचारो की तरह रहे है और हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए उन्होने भी बराबर प्रयत्न किया है। जब पिताजी की पुस्तक का अनुवाद इन्होने करना चाहा तो पिताजी ने भी उन्हे बहुत उत्साहित किया।

पिताजी अपनी पुस्तको पर कभी कोई कापीराईट सुरक्षित रखना नही पसन्द करते थे। वे प्रकाशको से भी कह देते थे कि हमारी पुस्तको को जो कोई छापना या जो कोई उसका अनुवाद करना चाहे उसे इसकी स्वतन्त्रता रहे। पडित सुन्दरलालजी ने काफी परिश्रम करके यह अनुवाद किया है। अनुवाद वे बीच-बीच मे पिताजी की पुस्तक के पुराने सस्करणो का ही करते रहे। इसे खण्ड-खण्ड मे पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित भी करते रहे है। उनका अनुवाद पुस्तक के अन्तिम सस्करण का नही है। अन्तिम सस्करण मे पुराने विचारो का ही विस्तार है, इस कारण इस अनुवाद मे कोई बाते वास्तव मे छूटी नहीं है। अन्य लेखको की तरह वे भी अपने अनुवाद के प्रकाशन के लिए प्रकाशक को खोजते रहे। पिताजी के देहावसान के बाद (१९५८) उनकी हिन्दी पुस्तको के प्रचार का कार्यभार काशी के सुप्रसिद्ध चौखम्बा सस्कृत सीरीज आफिस तथा चौखम्बा विद्याभवन के मालिको ने बडी उदारता पूर्वक अपने ऊपर ले लिया, और जब मुझे मालूम हुआ कि पडित सुन्दरलालजी का अनुवाद तैयार है तो मैने उन्ही मित्रो से

कहा कि यदि आप इस अनुवाद के प्रकाशन का भी कार्य उठा लें तो बड़ा उपकार होगा। इसके मालिक श्री कृष्णदास गुप्तजी ने इस कार्य को सहर्ष स्वीकार कर लिया और परिणाम स्वरूप यह पुस्तक आज छपकर जन साधारण के अवलोकन और मनन के लिए प्रस्तुत की जा रही है।

मूल पुस्तक के लेखक के पुत्र के नाते पंडित सुन्दरलालजी और श्री कृष्णदासजी गुप्त के प्रति मैं हृदय से अनुगृहीत हूँ कि उन्होंने पिताजी के विचारों का हिन्दी जगत् में प्रचार की सुव्यवस्था की और इतना परिश्रम और व्यय भार उठा कर आज इसे हमें इस रूप में दिया। पंडित सुन्दरलालजी की शैली विशेष है। पिताजी भी इसे पसन्द करते थे। महात्मा गांधी भी ऐसी ही भाषा का प्रतिपादन और समर्थन करते थे। इसमें हिन्दी-उर्दू या यों कहिए फारसी-संस्कृत शब्दों का मिश्रण है। सरल भाषा के विकास का यह प्रयत्न कहा जा सकता है। आशा है पाठक गण इसे पसन्द करेंगे और पिताजी के भावों को समझने में उन्हें सुविधा होगी। मेरी भगवान् से यही प्रार्थना है कि उनके सुयोग्यतम दास मेरे पिता डॉक्टर भगवान् दास की यह कृति अमर रहे और इसके द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी संसार के नर-नारी लाभ उठावें और एक दूसरे के धर्मों और सम्प्रदायों के वास्तविक मूल तत्त्वों को समझ कर परस्पर प्रेम रक्खें और विश्व-शान्ति की स्थापना में सहायक हों।

महाराष्ट्र गवर्नर कैंप, पूना
१३ दिसम्बर, १९६०

श्रीप्रकाश

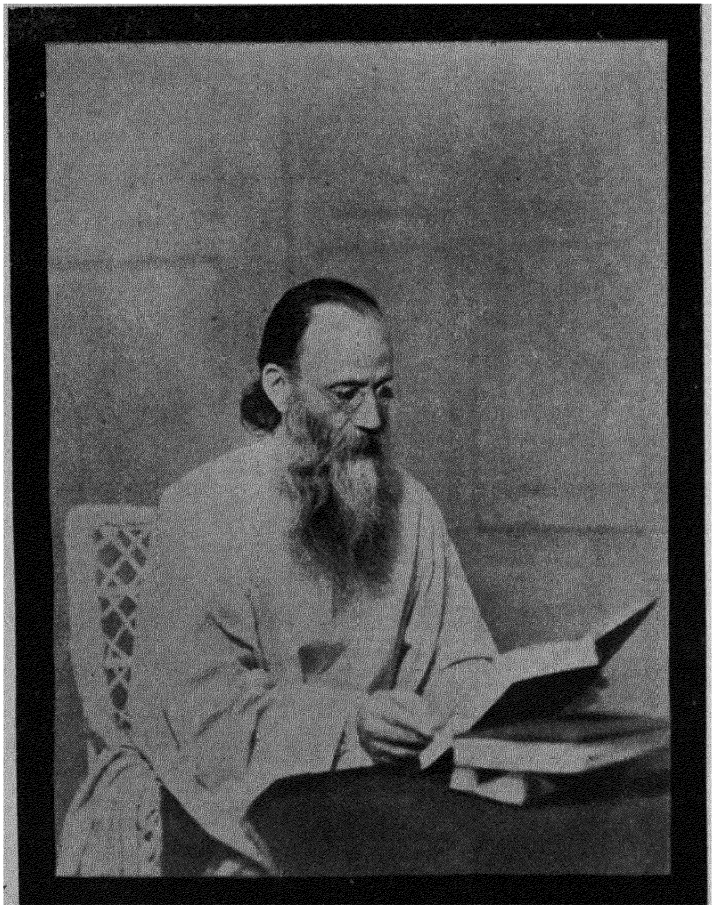

डॉ० भगवानदास

भूमिका

दुनिया के सब बड़े-बड़े धर्मों के संस्थापक और सब धर्म-ग्रन्थ हमें यही उपदेश देते हैं कि सम्पूर्ण मानव-समाज एक कुटुम्ब है और मानव-समाज की इस एकता को साक्षात् करना ही मनुष्य-जीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' हिन्दू धर्म का पुराना आदर्श है. इसी तरह कुरान की एक मशहूर आयत है :—"इस इन्सान अल्लाह का कुनबा है." इसी तरह की उक्तियाँ दुनिया के और सब धर्म-ग्रन्थों में भी पाई जाती हैं.

आजकल के उन्नत से उन्नत राजनैतिक विचार भी हमें इसी ओर ले जाने का प्रयत्न कर रहे हैं. संसार के ऊँचे से ऊँचे राजनैतिक विचारक और दार्शनिक हमें यही बताते हैं कि सब मनुष्य भाई-भाई हैं और उन सबको एकता के सूत्र में बाँधना ही इस पृथ्वी पर हमारे जीवन का ध्येय है.

सारांश यह कि धर्म और राजनीति दोनों इस समय मनुष्य को इसी एक आदर्श की ओर ले जाने की कोशिश में हैं.

अब देखना यह है कि मनुष्य के इस आदर्श की ओर बढ़ने में कौन-कौन-सी रुकावटें हैं.

आजकल की दुनिया को देखते हुए हमें इस तरह की दो सबसे बड़ी रुकावटें दिखाई देती हैं. एक मेरा धर्म और दूसरे का धर्म यानी अलग-अलग धर्मों की कल्पना, और दूसरे मेरा राष्ट्र और दूसरे का राष्ट्र यानी अलग-अलग राष्ट्रों की कल्पना. धर्म के क्षेत्र में लोगों के अलग-अलग धर्म और राजनीति के क्षेत्र में अलग-अलग राष्ट्र ये दो ही मनुष्यों को अलग-अलग टोलियों में बाँट देनेवाली सबसे बड़ी संस्थाएँ हैं. दूसरे शब्दों में मानव-एकता को साक्षात् करने के रास्ते में यही दो सबसे बड़ी बाधाएँ मालूम होती हैं. विशेषकर हमारे देश के अन्दर धार्मिक मतभेद एक बड़े दरजे तक हमारे अनैक्य का एक ख़ास कारण है.

किन्तु थोड़ा सा सोचने से मालूम होता है कि यदि सारा मानव-समाज एक कुटुम्ब है और यदि ईश्वर, अल्लाह या गॉड सबका एक है, तो धर्म, मज़हब या रिलिजन भी सब का लगभग एक ही होना चाहिये. ऐसी सूरत में धर्म लोगों को एक दूसरे से मिलाने वाली चीज़

होनी चाहिये, अलग करने वाली नहीं. यह विचार भी हमें सब धर्म ग्रन्थों में मिलता है. संस्कृत शब्द—'धर्म' 'धृ' धातु से निकला है, जिसका अर्थ ही 'संभाले रखना' या 'मिलाए रखना' है. महाभारत में एक स्थान पर धर्म शब्द की परिभाषा करते हुए इस विचार को बड़ी सुन्दरता और बड़े विस्तार के साथ बयान किया गया है. मशहूर मुसलमान सूफ़ी सन्त मौलाना जलालुद्दीन रूमी का एक शेर है :—

तू बराए वस्ल करदन आमदी,
न बराए फ़स्ल करदन आमदी.

अर्थात् :—तुझे एक को दूसरे से मिलाने के लिए भेजा गया है, एक को दूसरे से अलग करने के लिये नहीं.

किन्तु फिर भी अलग-अलग धर्म मज़हबों के फ़रक़ों, अलग-अलग कर्मकाण्डों और अलग-अलग रीति रिवाजों को भी हम आँख से ओझल नहीं कर सकते. तब फिर प्रश्न उठता है कि सब धर्मों की एकता का क्या मतलब है.

सब बड़े-बड़े धर्मों और उनके प्रामाणिक ग्रन्थों के निष्पक्ष अध्ययन से पता चलता है कि बुनियानी असूल सब धर्मों के एक हैं, मौलिक बातों में सब धर्मों के बीच एकता है, और अलग-अलग धर्मों के बीच भिन्नता देश और काल के अनुसार अलग-अलग कर्मकाण्डों और ऊपरी रीति रिवाजों में है. अर्थात् मौलिक और बुनियादी बातों में सब धर्मों में एकता है और ऊपरी सौर गौण बातों में भिन्नता. इसी दृष्टि को राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी 'सर्वधर्म समभाव' कहा करते थे.

इसी तरह राजनीति दुनिया के बड़े से बड़े विचारक और दार्शनिक अब इस नतीजे पर पहुँच गये हैं कि अलग-अलग राष्ट्रों के बीच हितों की जो टक्करें दिखाई देती हैं वह केवल थोड़े से बड़े कहलाने वाले लोगों, धनाढ्य लोगों या पूँजीपतियों के तुच्छ हितों की टक्करें हैं, और दुनिया की करोड़ों और अरबों आम जनता का हित बिलकुल एक है और एकता में ही हम सब का भला है.

नतीजा यह निकला कि धर्म के मैदान में सब बड़े-बड़े अलग-अलग धर्मों की बुनियादी एकता को सामने लाना और दर्शाना इस समय धर्म और मानव-समाज दोनों की सब से बड़ी सेवा है. देश के अन्दर और एक बड़े दरजे तक बाहर भी, मनुष्य मनुष्य के बीच प्रेम उत्पन्न करने और एकता के संचार करने का इस से बढ़कर उपाय नहीं हो सकता.

हमारे देश के लिये तो हमारी आजकल की स्थिति में हमारी अधिकांश कठिनाइयों और हमारे अधिकांश रोगों की यही रामबाण ओषधि है.

हाल के ज़माने में देश के जिन विद्वानों ने इस ओर सबसे अधिक मूल्यवान प्रयत्न किये हैं उनमें बनारस के स्वर्गीय डा० भगवान दास का नाम सबसे अधिक प्रसिद्ध और आदर से लेने योग्य है. मैंने स्वयं इस विषय में स्वर्गीय डा० भगवान दास से बहुत कुछ सीखा है और सदा उन्हें अपने गुरु की तरह माना है.

डा० भगवान दास ने इस विषय पर अनेक पुस्तकें लिखी हैं. मुझे उनकी अन्य पुस्तकों के साथ-साथ उनकी अंगरेजी पुस्तक "The Essential Unity of all Religions" यानी "सब धर्मों की बुनियादी एकता" को भी पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ. उस अमूल्य ग्रन्थ में डा० भगवानदास ने दुनिया के सब बड़े-बड़े धर्मों—वैदिक धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, यहूदी धर्म, पारसी धर्म, ईसाई धर्म, इसलाम, चीन के कनफ्युशियन धर्म, जापान के शिन्तो, आदि—के मूल ग्रन्थों से हवाले दे-दे कर अलग-अलग विषयों पर इन सब धर्मों की बुनियादी एकता को दर्शाने का सराहनीय प्रयत्न किया है. पुस्तक शायद संसार में अपने विषय की अद्वितीय और अतुलनीय है.

डा० भगवान दास की यह पुस्तक केवल अंगरेजी में थी. बहुत से मित्रों की यह राय हुई कि उसका हिन्दी अनुवाद भी हिन्दी पाठकों के लिये प्रकाशित किया जाय.

मैंने डा० भगवान दास से सलाह की, उनकी भी यह प्रबल इच्छा थी कि "The Essential Unity of all Religions" का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जाय, उनकी आज्ञा से मैंने अनुवाद करना शुरु कर दिया. वह सम्पूर्ण अनुवाद क्रमशः लेखों के रूप में इलाहाबाद से निकलने वाली मासिक पत्रिका 'नया हिन्द' में प्रकाशित होता रहा. मुझे यह कहते हुए हर्ष और गर्व होता है कि मेरे प्रत्येक लेख को, अर्थात् पुस्तक के सम्पूर्ण अनुवाद को, डा० भगवान दास ने सुना और खूब पसन्द किया. उनकी सलाह और इजाज़त से ही कहीं-कहीं किसी किसी विषय पर मैंने किसी धर्म विशेष की किसी पुस्तक से और विशेषकर इसलाम की पुस्तकों से कुछ नए हवाले भी शामिल कर दिये.

'नया हिन्द' की ग्राहक संख्या बहुत परिमित थी. इसलिये 'नया हिन्द' के अन्दर पुस्तक के पूरे अनुवाद के प्रकाशित हो जाने के बाद डा० भगवान दास ने अनेक बार यह इच्छा प्रगट की कि पूरी पुस्तक हिन्दी में पुस्तकाकार भी प्रकाशित की जाय. मुझे खेद है कि यह महत्वपूर्ण कार्य डा० भगवान दास के जीवन में सम्पन्न न हो सका. डा० साहब के देहावसान से कुछ सप्ताह पहले जब मैंने अन्तिम बार उनसे वाराणसी में भेंट की तब भी उन्होंने आग्रह के साथ यह इच्छा प्रगट की कि पुस्तक हिन्दी में प्रकाशित हो जानी चाहिये. मैंने उनसे वादा किया कि मैं इसका प्रबन्ध करूँगा.

डा० भगवान दास के देहावसान के बाद मैंने डा० साहब के सुयोग्य पुत्र आदरणीय भाई श्रीप्रकाश जी से इस विषय में पत्रव्यवहार किया. भाई श्रीप्रकाश जी के द्वारा वाराणसी के सुप्रसिद्ध चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ आफ़िस तथा चौखम्बा विद्याभवन के मालिक श्री कृष्णदास जी गुप्त से मेरा परिचय हुआ. मैं श्री कृष्णदास जी गुप्त का अत्यन्त आभारी हूँ कि उन्होंने पुस्तक के प्रकाशन का भार अपने ऊपर लेकर मुझे प्रातः-स्मरणीय पूज्य डा० भगवान दास के साथ अपने अन्तिम वचन को पूरा करने का सुअवसर दिया.

मुझे हर्ष है कि मानव-समाज के लिये स्वर्गीय डा० भगवान दास का यह अनमोल प्रसाद और मेरा यह तुच्छ प्रयत्न हिन्दी पाठकों के सामने आ रहा है. मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि हमारे हिन्दी पढ़ने वाले देशवासी इससे पूरा-पूरा लाभ उठाएँ और यह पुस्तक विविध धर्मों के लोगों, विशेषकर इस देश के बहुसंख्यक हिन्दुओं और मुसलमानों, को एक दूसरे के धर्मों को समझने समझाने, उनके दिलों को निकट लाने, एक दूसरे के लिये प्रेम बढ़ाने और समस्त भारतवासियों को सच्चे अर्थों में एक संयुक्त राष्ट्र बनाने में सहायक हो.

राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी और स्वर्गीय डा० भगवान दास जैसों के जीवनोद्देश्य को पूरा करने का यह एक छोटा सा प्रयास है।

नई दिल्ली
१-१२-१९६०

सुन्दरलाल

विषय-प्रवेश

१ सबधर्मी मजहबों की एकता	...	१
२ मजहब और साइन्स	...	२१
३ मेल या लडाई	...	३२
४ धर्म मजहब की जरूरत	...	४०
५ इनसान और मजहब	...	४७
६ मानव धर्म यानी मजहबें इनसानियत का रास्ता	...	५७
७ ज्ञान यानी भारफत का रास्ता	...	७३
८ आत्मा और परमात्मा	...	८५
९ खुदी और खुदा	...	१०४
१० सब रास्ते उसी तक पहुंचते हैं	...	११०
११ सब कुछ खुदा है	...	११६
१२ पुनर्जन्म यानी तनासुख	...	१२०
१३ पुनर्जन्म और कर्मफल	...	१२६
१४ आत्मा की उन्नति का रास्ता	...	१३६
१५ एक ही खयाल सब जगह	...	१४३
१६ जीवन का लक्ष्य—सब के अन्दर एक ही आत्मा को देखना	...	१५२
१७ जो सब के अन्दर एक ही आत्मा को देखे वही दुनिया का सच्चा सेवक हो सकता है	...	१६२
१८ भक्ति यानी इश्क का रास्ता	...	१६९
१९ जबान पर काबू	...	१७८
२० माँ बाप और घर	...	१८३
२१ नेकी का सुनहरा असूल	...	१९०
२२ पुण्य और पाप	...	२००
२३ हमारे अन्दर का परमात्मा	...	२०८
२४ खुदी को मिटाना खुदा को जानना है	...	२१७

२५ एक ही ज्ञान सबकी जान है ... २२३
२६ सुख, दुख और आदमी का फ़र्ज़ ... २३७
२७ मज़हब में धोखे से बचने की ज़रूरत ... २५१
२८ हमारी ख़ुदी ही हमारे और अल्लाह के बीच का परदा है ... २६१
२९ मानव जीवन में प्रार्थना (दुआ) का स्थान ... २७४
३० धर्म का शरीर और उसकी आत्मा ... २९१
३१ धर्मों के अलग अलग रीति रिवाज ... ३११
३२ हिन्दू जात पात, उसकी असलियत, बुरा रूप और इलाज ... ३२४
३३ इनसानी भाई चारे का असली रास्ता ... ३५६
३४ शब्द और अर्थ ... ३६२
३५ 'हज़ारों काबों से एक दिल बेहतर है' ... ३६८
३६ किताबों के शब्दों में न उलझो, असल मतलब की तरफ़ जाओ ... ३८३
३७ अमन और प्रेम का एक ही रास्ता ... ३९४
३८ दुनिया की तालीम और तालीम देने वाले ... ४०५
३९ तालीम का चौथा 'आर' ... ४२३
४० सच्चा समाजवाद ... ४३१
४१ कहाँ भटके ... ४४४

सब धर्मों की बुनियादी एकता

१

सब धर्मों मज़हबों की एकता

जब कभी धर्मों मज़हबों की एकता की बात की जाती है तो लोग कई तरह के एतराज़ उठाते हैं. कुछ लोग तो यह कहते हैं कि आप सब मज़हबों में से मोटी मोटी एकता की बातें एक जगह जमा कर देते हैं, तो उन छोटी छोटी बातों को भी साफ़ साफ लिखिये जिनमें एक मज़हब और दूसरे मज़हब में फ़रक़ है. जो आदमी हर मज़हब की हर छोटी बड़ी बात को जानना ज़रूरी समझे उसके लिये यह कहना ठीक है. पर यह पंडितों और आलिमों की बहस है, दिमाग़ी चीज़ है, अमली और दिल की चीज़ नहीं. इसके अलावा छोटे और बारीक फ़रक़ों पर तो ज़रूरत से ज़ियादा ज़ोर दिया ही जा रहा है. इन फ़रक़ों पर अमल भी काफी हो रहा है. इससे इनसानी समाज को नुक़सान ही पहुँच रहा है. एक सी और एकता की बातों से लोगों ने आँखें फेर रखी हैं जिससे दुनिया साफ़ घाटे में है.

दिमाग़ी ख़याल से देखें तब भी जिन बातों में एक मज़हब और दूसरे मज़हब में फ़रक़ है वह सब बातें ऊपरी हैं, यानी वह बुनियादी या ज़रूरी नहीं हैं, और जो बातें सब में पाई जाती हैं वही बुनियादी हैं, वही असल हैं. इसलिए उन बुनियादी चीज़ों पर जिनमें सब मज़हबों की एक राय है ज़ियादा ज़ोर देना चाहिये. अभी तक इन पर काफ़ी ज़ोर नहीं दिया गया, इन ही बातों को सब मज़हबों का दिल और सचाई या हक़ीक़त का इत्र समझना चाहिये. आज कल के जनतंत्र यानी जम्हूरियत के असूल

पर भी जिन बातों में सब की या बहुत सों की राय मिलती है वह तो सारे इनसानी समाज का मज़हब हैं ही. इस लिये अमली तौर पर भी और इस धरती पर नेक समझ और अमन क़ायम करने के लिये भी यह काम बहुत ही बड़ा और ज़रूरी है.

कुछ लोगों को एक दूसरी तरह का एतराज़ है. यह वह लोग हैं जो अपने अक़ीदे के बड़े कट्टर होते हैं. क़ुदरती तौर पर इस तरह का हर आदमी यह समझता है कि मेरा ही धर्म, मेरा ही मज़हब सबसे अनोखा और वही अकेला ठीक और सबसे अच्छा मज़हब है. क़ुदरत ही ने शुरू से यह बात हर आदमी के अन्दर पैदा कर दी है कि वह चाहता है कि मैं 'सबसे पहला', 'अनोखा', 'अपूर्व' और 'बेमिसाल' माना जाऊँ, दुनिया माने कि मेरा जैसा और कोई है ही नहीं. खुली या छिपी दबी यह चाह सब के अन्दर होती है. इनसानी ज़िन्दगी के सब पहलुओं में यह नज़र आती है. खाने पीने में, माल असबाब रखने में, ब्याह शादी में, सिपहगरी में, यहाँ तक कि साहित्य या अदब में और साइन्स तक के मैदान में हमें यह चीज़ सब जगह दिखाई देती है. हर जगह आदमी के अन्दर लाग डाट या दूसरों से बढ़ चढ़ कर रहने की इच्छा एक क़ुदरती चीज़ है. इसी से लगातार प्रेम और नफ़रत, मेल और जंग चलते रहते हैं. दुनयवी ज़िन्दगी में तो यह बात है ही. पर त्याग (तर्क) और तपस्या (ज़ोहद) की ज़िन्दगी में भी यह चीज़ आख़ीर तक चमकती रहती है और मिटते मिटते ही मिटती है. यही ख़ुदी और ख़ुदा, स्वार्थ और परमार्थ की वह खेंचातानी है जिसका नाम ज़िन्दगी है. यही बात जब मज़हब के मैदान में आती है तो आदमी कहता है—"मेरा ही मज़हब सबसे अच्छा है. मेरा मज़हब बिलकुल अनोखा है, बिलकुल नया है, और सब मज़हबों से अलग है. इससे पहले कोई ऐसा मज़हब हुआ ही नहीं, मेरे मज़हब में कोई बात किसी दूसरे मज़हब से नहीं ली गई, मेरा मज़हब ही आख़िरी है, इससे अच्छा तो क्या इतना अच्छा भी कोई मज़हब आगे होगा ही नहीं."

यह वैसी ही बात है जैसी लोग कहते कि—मेरी नसल, मेरा वर्ण या रंग, मेरी जात जैसे ब्राह्मण, क्षत्री वग़ैरा, या अगर मैं मर्द हूँ तो मर्द जात और अगर औरत हूँ तो औरत जात ही सबसे ऊँची और अच्छी है, मेरी क़ौम को ख़ुद भगवान ने सबमें से चुना है, ईश्वर ने मेरी जात वालों को ख़ास हक़ दिये हैं, मैं सूर्यवंशी हूँ, मैं चन्द्रवंशी हूं, मेरी क़ौम समन्दर की लहरों पर हकूमत करती है, मेरी क़ौम सबसे बढ़ कर है, मेरे मुल्क के पास सबसे ऊँचे, आसमान को छूने वाले मकान हैं, सबसे बड़े हवाई जहाज़ हैं, सबसे ज़ियादा सोना है, मेरी हर चीज़ सबसे बढ़ कर है, मेरे साम्राज्य पर कभी सूरज नहीं डूबता, मैं ब्रह्मा के मुख से निकला हूँ. मैं सूरज का बेटा हूँ, वग़ैरा वग़ैरा.

इस अहंकार को जीतने के लिये आदमी को बड़े बड़े और कड़े तजरबों में से निकलना पड़ता है. बड़ी बड़ी मुसीबतें झेल कर आदमी इस बात को सीखता है कि जब कि इस तरह की थोड़ी बहुत ख़ुदी छोटे जानवरों या नई नई क़ौमों की बढ़वार के लिये ज़रूरी होती है, इससे आगे बढ़ते ही यह ख़ुदी आदमी के अपने लिये और दूसरों के लिये दोनों के लिये बरबादी का कारण बन जाती है. तब जाकर आदमी की रूह सच्चे परमार्थ, सबके भले, बरदाश्त, धीरज, रवादारी, नेकी और हमदरदी की तरफ़ मुड़ती है. वह देखती है कि हक़ीक़त या सचाई सब के अन्दर है. बड़े छोटे, बच्चे बूढ़े, कमज़ोर ताक़तवर में फ़रक़ तो हैं पर यह सब फरक़ दिखावे के और एक ख़ास हद के अन्दर ही हैं. इन पर ज़ियादा ज़ोर देना बुरा है. आदमी को आदमी बनने के लिये न अपनी ताक़त का ज़रा सा भी घमंड होना चाहिये और न दूसरे की कमज़ोरी को ज़रा भी नफ़रत की निगाह से देखना चाहिये.

कोई आदमी यह दावा नहीं कर सकता कि मेरा शरीर ऐसे ज़र्रों या ऐसे परमाणुओं का बना हुआ है जो पहले कभी कहीं थे ही नहीं, यानी जो मेरे लिये ही वजूद में आए. ज़ाहिर

है कि हर शरीर का हर ज़र्रा अनगिनत जिस्मों में से होकर निकल चुका है और इस शरीर के मिट जाने के बाद भी अनगिनत शरीरों में से निकलेगा और निकलता रहेगा. इस पर भी हर दो आदमियों के रूपों में कुछ न कुछ फ़रक़ होता ही है, यह दूसरी बात है. इसी तरह हर दिमाग़ का हर ख़्याल, हर जज़बा, हर भाव दूसरे अनगिनत दिमाग़ों में से होकर निकल चुका है और अनगिनत दिमाग़ों में से होकर निकलता रहेगा. उसकी गढ़त और बनावट में फ़रक़ पड़ता रहता है यह अलग बात है. इसी फ़रक़ से हर एक का दिमाग़ अपना अपना दिमाग़ है, वैसे ही जैसे हर एक का शरीर अपना अपना शरीर है. हम इन फ़रक़ों को भी समझें और मानें. इन्हीं फ़रक़ों से 'मैं' 'तू' और 'वह' वजूद में आते हैं. पर हम इन फ़रक़ों को, बदलने वाली चीज़, आनी जानी चीज़ समझें, और उस हक़ीक़त को जो सब में और सबके अन्दर रमी हुई है ज़ियादा बड़ी, ज़ियादा टिकाऊ और ज़ियादा बुनियादी समझें. ख़ुदी की भी अपनी क़ीमत है, पर उसे बेजा महत्त्व देना हमें मिटा देगा. सबके भले की यानी सबके अन्दर काम करने वाली जान की हमें ज़ियादा क़द्र करनी चाहिये. तब ही 'हर आदमी सबके लिये और सब हरेक के लिये' का असूल चल सकेगा. सिर्फ़ इसी से समाजी ज़िन्दगी, मिली जुली ज़िन्दगी, या अलग अलग 'मैं' और 'तू' की जगह एक 'हम' क़ायम हो सकेगा और हम सबका भला मुमकिन होगा.

कमी यह है कि अभी तक हम में से अधिकतर के दिमाग़ उस कमउमरी या लड़कपन की हालत में हैं जिसमें आदमी को अपने 'अनोखेपन' में ज़ियादा मज़ा आता है और अपने को कुल का यानी सारी इनसानी क़ौम के जिस्म का एक हिस्सा समझने में उतना आनन्द नहीं आता. लेकिन यह ऊँची प्यास भी हर दिल के अन्दर मौजूद है. हमने अभी उसे पहचाना नहीं है. कोई आदमी भी सदा बिलकुल अकेला

रहना नहीं चाहता. तब फिर उसका अनोखापन कौन देखेगा और मानेगा? आदमी दूसरों से मिलना चाहता ही है. दूसरों से बँधना चाहता ही है. यही प्यास जब और ऊँची और गहरी हो जाती है तो आदमी की रूह को उस 'रूहे कुल' से जा बाँधती है जहाँ पहुँच कर आदमी अपनी हक़ीक़त और अपने खोए हुए रुतबे को पहचानता है. तभी उसे असली 'अपनापन' मिलता है, तभी पूरा और सच्चा आनन्द मिलता है.

पर जिस तरह हम अलग अलग आदमियों के वजूद को नहीं मिटा सकते उसी तरह अलग अलग मज़हबों के वजूद को मिटा देने की कोशिश भी फ़ज़ूल है. लेकिन हमें इन अलग अलग मज़हबों के अलगपन को कम करना है, जहाँ तक हो सके इनमें मेल बैठाना है और दुनिया को, जैसे और मामलों में वैसे ही मज़हब के मामले में भी, एकता की तरफ़ ले जाना है. लोगों के दिलों को धीरे धीरे इधर मोड़ना है. यह काम नामुमकिन नहीं है. यह भी उतना ही क़ुदरती और ज़रूरी है जितना खुदी का होना बल्कि उससे कहीं ज़ियादा ज़रूरी है.

कुछ पढ़े लिखे विद्वान इस बात को साबित करने के चक्कर में पड़ जाते हैं कि बाद के मज़हबों ने पहले के मज़हबों से नक़ल की है. की है या नहीं इसका पता लगाने का महत्त्व थोड़े से विद्वानों के लिये कुछ हो सकता है. पर कहीं ज़ियादा जानने और समझने की चीज़ आम लोगों के लिये और सब के लिये यह है कि अगर मज़हबों ने एक दूसरे से नक़ल की भी है तो क्यों की है. क्या इसका यह सबब नहीं है कि सब मज़हब और सब सचाई की बात करने वाले 'एक ही अनादि अनन्त सचाई' की नक़ल करते रहे हैं? किसी के सामने और कुछ नक़ल करने के लिये था ही नहीं. नई नसलें पुरानी नसलों में से पैदा होती हैं. नई क़ौमें पुरानी

क़ौमों और उनकी नौआबादियों में से उग पड़ती हैं. पुराने दियों से नए चिराग़ रोशन किये जाते हैं. पर वह जान, वह ज्योति (नूर), वह शक्ति (क़ुदरत) जो इन सब बदलती हुई सूरतों में से झलक रही है और इन्हें चला रही है, इन सबसे ऊपर है, इन सब में से होकर बह रही है. वही इन सब शकलों को पैदा करती है. जिस चीज़ की नक़ल की जावे वह अगर हक़ है, सचाई है, तो नक़ल करना इज्ज़त की बात है और फ़र्ज़ है, और जो कोई नई, अनोखी चीज़ पैदा की जा रही है वह अगर 'झूठ' है तो अनोखा या मौलिक होना ज़िल्लत की बात है. अनोखापन या नयापन सिर्फ़ फ़ानी (नश्वर) चीज़ों में ही हो सकता है. और फ़ानी चीज़ें सब बातिल (असत्य) होती हैं. सचाई में नयापन नहीं हो सकता, क्योंकि जो हमेशा से है और हमेशा रहेगा वही सच है. वही है. उसकी नक़ल करनी चाहिये और नक़ल ही हो सकती है. यह नक़ल बड़ी मेहनत से करनी चाहिये. यही बड़ी बात है. सचाई का 'कापी राइट' नहीं होता. उसमें किसी का इजारा नहीं है. पर ठीक बात तो यह है कि किसी मज़हब के क़ायम करने वाले को, किसी सच्ची बड़ी रूह को, कभी 'नक़ल' करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी. आध्यात्मिक जीवन (रूहानी ज़िन्दगी) का दरिया हमेशा बहता रहता है. जिस किसी को रूहानी प्यास होती है वह अपना डोल उसमें डुबो कर भर सकता है. वही एक सचाई अलग अलग अपने आज़ाद तरीक़े से हर नए खोजी, मुतलाशी, नए पैग़म्बर, नए ऋषि और नए तीर्थंकर के सीने में अन्दर से उबलती और जोश मारती रहती है.

इस एकता को समझने के लिये दूसरों या दूसरे धर्मों की बेक़दरी करने, उन्हें छोटा दिखाने या उनका मज़ाक़ उड़ाने की जगह, उन्हें समझना, उनकी क़दर करना और उनकी इज्ज़त करना ज़ियादा अच्छा है. दूसरों की बुराई या कमी को देखने

की निस्बत उनकी अच्छी अच्छी बातों को देखना ज़ियादा फ़ायदे का है. एक दूसरे के फ़रक़ों को निगाह में रखने की निस्बत मेल की बातों पर निगाह रखना ज़ियादा काम का है. लड़ने की निस्बत सुलह से रहना ज़ियादा अच्छा है.

फ़लसफ़े में और साइन्स में यानी दर्शन में और विज्ञान में, दोनों में हर बात और हर क़ायदे को समझने के लिये उससे पहले की दूसरी बातों और दूसरे क़ायदों को जानने की ज़रूरत पड़ती है. यह सिलसिला बराबर पीछे को चलता रहता है, यहाँ तक कि इसका कोई सिरा दिखाई नहीं देता. इस तरह चलते चलते आख़ीर में हम उस अनन्त आत्मा, उस रूहे कुल, उस परम चेतन तक पहुँच जाते हैं जिसकी चेतनता में हमारी जागने की हालत, सपने की हालत और गहरी नींद की हालत तीनों समा जाती हैं. उस रूहे कुल में ही कायनात (सृष्टि) की सारी शकलें बनती और बिगड़ती रहती हैं. सब माद्दी और रूहानी, जड़ और चेतन क़ानून उसी के बनाए और उसी के मातहत हैं. उसी अनन्त आत्मा, उसी रूहे कुल में जाकर सब मज़हब, सब फ़लसफ़े, सब साइन्स, सब क़ानून और सब हुनर मिल जाते हैं. उसी से यह सब फिर निकलते हैं. यह सिलसिला फिर बेअन्त दिखाई देता है. जब हम उस सचाई तक पहुँच जाते हैं तब हमें सब सवालों का जवाब मिल जाता है, हमारे सब शक दूर हो जाते हैं, हम आख़िरी संगम, आख़िरी समन्वय, मजम-उल-बहरैन तक पहुँच गए. हमारी आत्मा को पूरी शान्ति, रूह को पूरा इत्मीनान मिल जाता है.

इस संगम पर पहुँचे बग़ैर इनसानी समाज को न इस दुनिया में सुख मिल सकता है, न दूसरी दुनिया में. हमारी मज़हबी जंगें, हमारी फ़िरक़ेवाराना लड़ाइयां, हिन्दू मुसलमानों के झगड़े, हिंदुओं हिन्दुओं के झगड़े, जात जात के झगड़े, शिया सुन्नी के झगड़े, अरबों और यहूदियों के झगड़े, यहूदियों और जरमनों के झगड़े,

अगली पिछली लड़ाइयाँ, सब की असली वजह असल में इसी एक मेल की कमी में है, यानी इसी एकता को अपने अन्दर न समझ सकने में है. जिस दरजे तक भी हम इसे अपने अन्दर पैदा कर सकें और समझ सकें उसी दरजे तक हम इन मुसीबतों से बच सकते हैं.

जितनी रूहानी, दिमाग़ी और जिस्मानी बारूदें हमने जमा कर ली हैं उन सबको चाहे एक दूसरे को मारकाट कर और चाहे सचाई और दूरन्देशी से एक दूसरे को समझ कर, और एक दूसरे से राज़ी होकर, जब हम ख़तम कर देंगे तब सारी इनसानी ज़िन्दगी और आपस के सम्बन्धों को नए सिरे से और नए ढंग से क़ायम करके, हमें इस तरह का एक बहुत बड़ा संगम बनाना ही पड़ेगा, नया मेल जोल क़ायम करना पड़ेगा, एक ऐसे नए और ज़बरदस्त संगठन को रूप देना होगा जिसमें सब खप जायँ और जिसमें हमारी इनसानी ज़िन्दगी के सब पहलू रूहानी और माद्दी शख़्सी और समाजी समा जावें.

इसी का एक नया तजरबा रूस में हो रहा है. अगर वह कामयाब हो गया तो हर जगह उसकी नक़ल होने लगेगी. अगर वह कुछ ख़ास बातों में नाकाम रहा—और उसके नाकाम होने का ही डर है, क्योंकि उसमें वह ज़हरों को चूसने वाली, भरोसा पैदा करने वाली, सचाई और हमदर्दी को जनम देने वाली रचनात्मक रूहानी ख़ूराक नहीं है—तो फिर दूसरा रास्ता एक ऐसे विश्वव्यापक, आलमगीर, मज़हब, मज़हबे इनसानियत, मानव धर्म को क़ायम करना है जो सब अलग अलग धर्मों को मिलाकर एक कर दे, जिसमें सबके दिल और दिमाग़ मिल जावें, जो सब को रूहानी ख़ूराक दे, जिससे बिखराव और फूट के सब तरह तरह के ज़हर इनसानी क़ौम के जिस्म से निकल कर बाहर हो जावें, इस बड़े जिस्म के सब रग पट्ठे एक दूसरे से गठते चले जावें, प्रेम बढ़े, भरोसा बढ़े, और सारा इनसानी समाज एक ख़ानदान माना जाने लगे. इसी से समाजी संगठन

की वह ठीक ठीक तरतीब पैदा होगी जिसमें सब अपने अपने स्वभाव और शक्ति के अनुसार सबके भले के कामों में लग सकेंगे.

सब मुल्कों और सब क़ौमों की पाक किताबें हमें इसी का उपदेश दे रही हैं और इसी तरफ़ ले जाना चाह रही हैं. यह कोई नई राह नहीं है. धर्म या मज़हब को अगर ज़िन्दा रहना है तो उसे इनसानी क़ौम के लिये इस दुनिया में और दूसरी दुनिया में ज़ियादा से ज़ियादा सुख और ज़ियादा से ज़ियादा तरक़्क़ी के सामान पैदा करके दिखाने होंगे.

दीन, धर्म या मज़हब के बाहरी और ग़लत रूपों पर ज़ोर देना—और यही मज़हब मज़हब में फ़रक़ करने वाली चीजें हैं—और दीन धर्म की उस असलियत को सामने न रखना—जो सब मज़हबों की असलियत है—इसी का नतीजा है कि आज दुनिया में अपनी अपनी हुकूमत को क़ायम रखने के लिये बेचैन हाकिम, और अपने अपने बड़प्पन को बनाए रखने की फ़िक्र में बड़े बड़े नेता न सिर्फ़ अँधेरे में राह टटोल रहे हैं बल्कि 'अंधों को राह दिखाने वाले अंधो' की तरह राजकाजी जंगों, माली लड़ाइयों और फ़िरक़ेवाराना मारकाट के ज़रिये इस दुनिया को भयंकर नरक बनाए हुए हैं, और जिन का भला करना चाहते हैं, या कम से कम करने का दावा करते हैं, उन्हीं के जिस्मों, इख़्लाक़ और रूहों सब को बरबाद कर रहे हैं.

कोई यह नहीं कह सकता कि उसे 'सच्ची राह' दिखाई नहीं देती. हमने खुद अपनी आंखें उस राह से फेर रखी हैं. सच्चे दीन धर्म का सूरज अब भी पूरी तेज़ी के साथ चमक रहा है. उसकी किरनें बराबर चारो तरफ़ फैल रही हैं. इन राजकाजी हाकिमों और नेताओं को सिर्फ़ अपनी आँखो पर से पट्टियाँ खोल कर फेंकनी हैं. यह पट्टियाँ हैं अहंकार की, अपनी अपनी राष्ट्रीयता की ढपली की—मेरा राष्ट्र, मेरी क़ौम, मेरा दीन, मेरा धर्म, इन पट्टियों को उतार कर उसकी जगह इन्हें मानवता, इनसानियत की ऐनकें लगानी हैं. ऐसा करते ही

उन्हें अपनी और सब की सुख, शान्ति का रास्ता साफ़ दिखाई दे जावेगा. हमारी सब बड़ी बड़ी मज़हबी किताबें बार बार जगह जगह और साफ़ साफ़ बता रही हैं कि वह रास्ता क्या है और इनसानी समाज को उसके असली भले के लिये किस तरह संगठित करना और चलाना चाहिये.

अगर सब अलग अलग धर्मों के इस तरह के बड़े बड़े विद्वान जिनके दिमाग़ साफ़ और दिल बड़े हों और जो सबके भले को सचाई से सोचते हों मिल कर छोटे बड़े दरजों के लिये इस तरह की किताबें तय्यार कर दें जिनमें सब अलग अलग धर्मों की किताबों से एक सी बातें लेकर इस आलमगीर विश्वव्यापी मानव धर्म, मज़हबे इनसानियत, के सब मोटे मोटे असूल बयान किये गए हों, और उन पर अमल की मिसालें भी उन्हीं धर्मों की किताबों से ले लेकर दी गई हों, तो दुनिया का और ख़ास कर आगे आने वाली नसलों का बहुत बड़ा कल्याण हो सकता है. इस तरह की किताबें सब ज़बानों में, सब मज़हबों के लोगों में, सब स्कूलों और कालिजों में पढ़ाई और फैलाई जा सकती हैं.

—⊙—

आज कल आम तौर पर ११ मज़हब दुनिया के प्रचलित मज़हबों में गिने जाते हैं. पूरब से पच्छिम को चलते हुए वह ११ यह हैं—(१) जापान का शिन्तो मत, (२) चीन का ताओ मत जिसे लाओत्सी मत भी कहते हैं, (३) चीन ही का कनफ़्यूशियन मत, (४) हिन्दुस्तान का वैदिक मत जिसे आज कल हिन्दू मत कहते हैं, (५) बौद्ध मत, (६) जैन मत, (७) सिक्ख मत, (८) ज़रथुस्त्री यानी पारसी मत, (९) यहूदी मत, (१०) ईसाई मत और (११) इसलाम.

इन सब मज़हबों की अपनी अपनी पाक किताबें हैं जिन्हें यहाँ गिनाने की ज़रूरत नहीं है. इन किताबों में से मिलती जुलती अच्छी अच्छी बातें लेकर योरप के कुछ विद्वानों ने

बड़ी मेहनत के साथ एक जगह जमा कर दी हैं. जो लोग अँगरेज़ी पढ़ सकें उनके लिये इस तरह की एक बहुत अच्छी किताब राबर्ट अरनेस्ट ह्यूम की लिखी 'ट्रेज़र हाउस आफ़ लिविंग रिलीजन्स' है जिसके मानी होते हैं 'ज़िन्दा मज़हबों का तोशाख़ाना'. यह किताब सन् १९३३ में न्यूयार्क और लन्दन से निकली है. इसमें अलग अलग मज़हबो की किताबों से ३०७४ अच्छे अच्छे फ़िक़रे, मन्त्र, आयत या वाक्य जमा कर दिये गए हैं. इन्हें जमा करने के लिये विद्वान लेखक को १,०६,४२३ पन्ने पढ़ने पड़े थे. किताब चार हिस्सों में है जिनमें कुल ५१ मज़मून हैं. लेखक ने किसी चीज़ पर अपनी कोई राय नहीं दी. सिर्फ़ समझाने के लिये और अते पते के लिये अपने कुछ नोट दे दिये हैं जिनसे पढ़ने वाले को कुछ मदद मिले. किताब के चौथे हिस्से में सब मज़हब वालों के लिये एक मिली जुली पूजा का ढंग भी बताया गया है.

इसी तरह की एक दूसरी बहुत अच्छी किताब डाक्टर फ्रैन्क एल० रिले की लिखी 'दि बाइबिल आफ़ बाइबिल्स' है, जिसके मानी होते हैं 'इन्जीलों की इन्जील' या 'किताबों की किताब'. यह सन् १९२९ में छपी है. इसके ३४३ सफ़ों में दुनिया की साठ पाक किताबों में से, जिनमें से कोई कोई कहा जाता है तेरह हज़ार बरस पुरानी हैं, उन्नीस बरस की मेहनत से, लेखक ने क़रीब १४०० चुनी चुनी बातें बारह अध्यायों के अन्दर जमा कर दी हैं.

यह दोनों किताबें विद्वान लेखकों की केवल ग़ज़ब की मेहनत ही का सबूत नहीं देतीं बल्कि सब धर्मों की एकता और इनसानी भाई चारे में लेखक के ज़बरदस्त विश्वास का भी सबूत देती हैं. सच्चे धर्म के फैलने और इनसानी भाई चारे के क़ायम करने के लिये इस तरह की किताबों की सब मुल्कों में और दुनिया की सब ज़बानों में बेहद ज़रूरत है.

दुनिया की इस समय जो हालत हो रही है और दुनिया भर के लोग जिस तरह की मुसीबतों में फँसे हुए हैं उससे ज़ाहिर है कि 'नेकी, सचाई और रोशनी की ताक़तों' को 'बदी, झूठ और अँधेरे की ताक़तों' के साथ अभी बहुत दिनों और बड़ी कड़ी लड़ाई लड़नी है. यह दूसरी तरह की ताक़तें ही इनसानी क़ौम की असली दुशमन हैं. ज़रूरत इस बात की है कि सब मुल्कों में बहुत से सच्चे कार्यकर्ता इस काम को अपने हाथों में लें. इसके बिना आर्थिक या राजकाजी अमन भी दुनिया में क़ायम नहीं हो सकता.

हमें एक ऐसे व्यापक आलमगीर मज़हब की ज़रूरत है जिसका साफ़ अपना रंग रूप हो, जिसमें इधर उधर से लेकर चीज़ें जोड़ न ली गई हों बल्कि जो आप एक क़ुदरती और ज़िन्दा चीज़ की तरह दिखाई दे. सब अलग अलग मज़हबों के अलग अलग बाहरी रूपों में से यह चीज़ उसी तरह साफ़ चमकती हुई दिखाई दे जिस तरह सब अलग अलग आदमियों के अलग अलग शरीरों में से एक इनसानी जिस्म साफ़ दिखाई देता है. फिर जिस तरह एक इनसानी जिस्म के होते हुए अलग अलग आदमी भी होते हैं, और उनसे कुल इनसानी क़ौम का मान और .खुशहाली बढ़ सकती हैं उसी तरह इस एक व्यापक आलमगीर दीन या धर्म के होते हुए, जो सबका धर्म हो, लोगों के अलग अलग रास्ते, अलग अलग विश्वास और अलग अलग रीतरिवाज भी इनसानी क़ौम की शोभा और .खुशहाली को बढ़ा सकते हैं.

हमें अपने सब स्कूलों और कालिजों में लड़कों और लड़कियों को धर्म की शिक्षा ज़रूर देनी चाहिये. पर वह शिक्षा सच्चे धर्म या सदाचार की शिक्षा हो. वह शिक्षा सब मतों और मज़हबों के लड़के लड़कियों को एक सी दी जावे. वह तालीम उदार हो, रवादारी की हो. उसका सम्बन्ध केवल किसी एक अलग मज़हब से न हो. उसमें सब मज़हब शामिल हों.

एक दूसरे के ख़िलाफ़ दिखाई देने वाले मज़हब भी शामिल हों. और इस तरह शामिल हों कि किसी के ख़िलाफ़ कोई बात न हो. किसी से दूसरे की मुख़ालफ़त न झलके. इस तालीम का मक़सद हो बच्चों के चरित्र को, उनके चलन को मज़बूत और ऊँचा बनाना. उन्हें नेक बनाना. . उन्हें अपनी तरफ़ और दूसरों की तरफ़ अपने फ़र्ज़ को समझाना और उस फ़र्ज़ के पूरा करने के क़ाबिल बनाना. उन्हें ईमानदार, प्रेमी, सच्चा, मेहनती और इन्साफ़पसन्द बनाना, यानी उन्हें अच्छा शरीर और अच्छा इनसान बनाना. इसका यही तरीक़ा है कि उन्हें सब मज़हबों के वह बुनियादी असूल बताए जावें जिनके अनुसार हममें से हर एक का जीवन चलना चाहिये. इस तरह की तालीम में वह सब बातें चमकाई जावेंगी और सिखाई जावेंगी जिनमें सब मज़हब एक हैं और वह सब बातें अलग रखी जावेंगी जो मज़हब मज़हब में तफ़रक़ा पैदा करती हैं. आख़ीर में इस तरह की तालीम में यह कोशिश की जावेगी कि लड़के लड़कियों में एक दूसरे की तरफ़ और सब मज़हबों की तरफ़ उदारता हो जिससे वह एक दूसरे की अलग अलग मान-ताओं या रीतरिवाजों के फ़रक़ों का भी आदर कर सकें और यह समझें कि यह सब अलग अलग रास्ते उसी एक ईश्वर, अल्लाह, तक पहुँचने के रास्ते हैं. सब मज़हबों की किताबों से इसके लिये बेहद मसाला और मदद मिल सकती है.

इसमें शक नहीं कि सब बड़े बड़े मज़हब उसी एक ईश्वर से निकले हैं. बाद में सब में तरह तरह की नई नई बातें जुड़ गईं या अजीब अजीब और अलग अलग रीत रिवाज जुड़ते चले गए. अगर हम इन बाद की चीज़ों या ऊपरी रीत रिवाजों को अलग कर दें तो फिर सब मज़हबों का तत्त्व, उनकी असलियत एक ही दिखाई देगी.

इंजील में लिखा है—

"ईश्वर की भेजी हुई सब मज़हबी किताबें आदमी के फ़ायदे

की हैं, वह आदमी को तालीम देने, ठीक रखने, बुराई से बचाने और नेकी सिखाने के लिये हैं, जिससे ईश्वर का हर बन्दा कामिल बन सके और हर नेक काम कर सके." (इंजील, २ तिमोथी ३, १६—१७)

क़ुरान में लिखा है—

"हम उस ज्ञान को मानते हैं जो अल्लाह ने हमें भेजा है और उसे भी मानते हैं जो अल्लाह ने तुम्हें भेजा है. हमारा और तुम्हारा अल्लाह एक ही है. और उसी अल्लाह के सामने हम झुकते हैं." (कुरान २६—४५)

इंजील में लिखा है—

"कोई आदमी केवल अपने लिये नहीं जीता·····हम सब एक दूसरे का हिस्सा हैं·····ईश्वर ने सब क़ौमों को जो इस धरती पर आबाद हैं एक ही ख़ून से बनाया है."

क़ुरान में लिखा है—

"सब मख़लूक़ (जानदार) अल्लाह का एक बड़ा कुनबा हैं."

वेद में लिखा है—

"सब इनसानों का एक दूसरे के साथ ऐसा ही नाता है जैसा एक शरीर के सिर, हाथ, धड़ और टांगों का एक दूसरे के साथ."

—०—

अब हम सब धर्मों के ग्रन्थों की कुछ ख़ास ख़ास प्रार्थनाएँ नीचे देते हैं.

उपनिषद का कहना है—

"एक ही ईश्वर सब प्राणियों में छिपा हुआ है.

"वही सबको देखता है, वही सब दिलों के अन्दर है.

"समझदार आदमी उसे अपने ही अन्दर ढूँढ़ते और पाते हैं.

"ऐसे लोग ही टिकाऊ सुख पा सकते हैं दूसरे नहीं.

"वही हमेशा से और हमेशा रहने वाला है, वह सब जानों की जान है.

"वह अकेला सब की इच्छाओं को पूरा करता है.

"अक़लमन्द आदमी उस एक को अपने अन्दर देखते हैं.

"ऐसे लोग ही टिकाऊ शान्ति हासिल कर सकते हैं दूसरे नहीं.

"वह सब जगह मौजूद है, सब रूहों की रूह है.

"उसका कोई रूप नहीं पर वह सब रूपों का बनाने वाला है.

"अक़लमन्द आदमी उस एक को अपने अन्दर देखते हैं.

"ऐसे लोग ही टिकाऊ सुख पा सकते हैं दूसरे नहीं.

"वह एक है उसका कोई रंग नहीं पर वह अपनी शक्ति (क़ुदरत) से,

"तरह तरह के बेशुमार रंग पैदा करता है,

"फिर उन्हें मिटाता है और फिर बनाता है.

"वह ईश्वर हमें साफ़ साफ़ समझ दे."

एक मुसलमान सूफ़ी कहता है—

"वह बेरंग है, पर उसकी क्या अजीब बेरंगी है कि जिससे लाखों रंग पैदा होते हैं !

"अजब उसकी बेशकली है कि जिससे बेशुमार शकलें पैदा होती हैं !"

"मैं शुरू करता हूँ उसके नाम से कि जिसका कोई नाम नहीं.

"जिस नाम से उसे पुकारो उसी से वह सर ऊँचा करके जवाब देता है.

"मैं उसके नाम से शुरू करता हूं जो इस कसरत (बहुतात) में आप अकेला है.

"कि उसकी वहदत (एकपन) में कसरत क़ैद है."

वेद में लिखा है—

"उस एक परमेश्वर की हम पूजा करते हैं. उसकी ज्योति (नूर) का हम ध्यान करते हैं ! वह ज्योति हमारी बुद्धियों को रोशन करे और रास्ता दिखावे. हे ईश्वर ! हमें सीधे रास्ते पर ले चल. तू ही सब कुछ जानता है. हमें बल दे कि हम उन

गुनाहों से लड़ सकें जिनका रुजहान हमारे अन्दर पैदा होता रहता है और जो हमें ठीक रास्ते से भटकाते रहते हैं. हम तेरे ही सामने झुकते हैं और तेरी ही पूजा करते हैं."

क़ुरान कहता है—

"साथ नाम उस अल्लाह के जो रहमान (दयावान) और रहीम है. हम उसी अल्लाह की हम्द (स्तुति) करते हैं जो सब दुनियाओं का मालिक है ! जो रहमान और रहीम है ! जो एक दिन सबको उनके कामों का फल देने वाला है. ऐ अल्लाह ! तेरी ही हम इबादत (पूजा) करते हैं, तुझ से ही हम मदद चाहते हैं. हमें सीधा रास्ता बता. वह रास्ता जो उन लोगों का रास्ता है जिन्हें तूने अपनी बरकतें दे रखी हैं. उन लोगों का रास्ता नहीं जो भटके हुए हैं और जिनसे तू नाराज़ है."

पारसियों की गाथा में लिखा है—

"ऐ बड़े ईश्वर ! हमें बड़ी उम्र दे और धीरज दे और साफ़ दिमाग़ दे और हमें वह सीधा रास्ता दिखा जिस पर तू मिलता है और जो तुझ तक पहुँचता है."

इंजील के पुराने अहदनामें में लिखा है—

"ऐ ईश्वर ! मेरा रोना सुन ! मेरी प्रार्थना की तरफ़ कान दे ! यह प्रार्थना मेरे दिल से निकल रही है. मुझे अपने रास्ते पर सँभाल कर ले चल ताकि मेरे पैर इधर उधर न भटकें. मुझे अपना रास्ता दिखला. ऐ ईश्वर ! मुझे अपने रास्तों की तालीम दे. मुझे अपनी सचाई की तरफ़ ले चल. तू ही मेरी निजात (मुक्ति) का मालिक है. मेरी आँखें खोल ताकि मैं तेरे क़ानून की अजीब अजीब बातें देख सकूँ. अपने कहने के अनुसार मुझे अन्दर से चला. मुझे झूठ के रास्ते से अलग रख."

इंजील के नए अहदनामें में लिखा है—

"ऐ हम सबके पैदा करने वाले जो आसमान में है ! तेरा पाक नाम फैले ! तेरा राज दुनिया में क़ायम हो ! इस धरती पर जैसे आसमान में सब तेरी मरज़ी पर चलें ! आज के दिन

हमारी रोज़ की रोज़ी हमें दे ! हमारे क़सूर माफ़ कर दे जिस तरह हम अपने क़र्ज़ वालों का माफ़ कर देते हैं. हमें लोभ में मत फँसा ! हमें बुराई से बचा ! असली राज तेरा ही राज है ! तेरी ही शक्ति है, तेरी ही शान है, हमेशा हमेशा के लिये ! आमीन"

चीन के पैग़म्बर कनफ़्यूशियस ने कहा है—

"ऐ बड़े, सबसे बड़े ईश्वर ! हम तुझी को बुलाते हैं ! तू ही हमारा बाप और तू ही हमारी माँ है."

सिखों के 'ग्रन्थ साहब' में लिखा है—

"ऐ दया के सागर ! तू हमेशा हमारे दिलों के अन्दर रह और हमारे दिमाग़ों को रोशन कर, ताकि हम तुझे प्यार करें, तेरी सेवा करें और तेरी पूजा करें. ऐ ईश्वर ! हम हमेशा तुझे अपने पास समझें ! तू ही हमारा बाप, हमारी माँ, हमारा गुरू और हमारा सब कुछ है."

प्यारे दोस्तो, बहनो और भाइयो !

हर नेक बात सोचने और हर नेक काम करने से पहले हमें सब जानों की जान उस परमेश्वर का ध्यान करना चाहिये और उससे मदद मांगनी चाहिये जो अपनी वहदत यानी अपनी एकता में से बेशुमार जानों और इस बेअन्त रंग बिरंगी क़ुदरत को पैदा करता है और फिर इस सब कुनबे को एक सूत में बाँधे रखता है. वही ज़र्रों से रग पट्ठे, रग पट्ठों से जिस्म, जिस्मों से गिरोह, क़ौमें और मुल्क, मुल्कों से ग्रह और नक्षत्र, उनसे सूरज, उनसे सौर जगत (निज़ामे शम्सी), इन्हें मिलाकर फिर और बड़े बड़े जगत बेअन्त और बेहद बनाकर उन सब की फिर एक दुनिया, एक विश्व, एक यूनीवर्स बनाता है. आदमी गोश्त पोस्त का लोथड़ा है. वही इसमें घुसकर जान और चेतना पैदा करता है. वह चेतना जो सारे विश्व, सारे आलम को अपने अन्दर ले सकती है. सब दिलों में वही छिपा हुआ है. उसी की बदौलत हम सब गोश्त

पोस्त के लोथड़े एक दूसरे को समझ सकते हैं, एक दूसरे के साथ हमदर्दी कर सकते हैं और दुख दर्द में एक दूसरे की मदद कर सकते हैं. हममें जो कुछ एकता है वह उसी एक की दी हुई है, उसी एक से पैदा हुई है. उसी एक को अपने अन्दर और सबके अन्दर बैठा हुआ देख और समझ कर हम सुख चैन पा सकते हैं. वह रूहे कुल, वह ज्योतियों की ज्योति, वह नूरों का नूर हमारे दिलों और दिमाग़ों को रोशन करे ! हमें 'सीधा रास्ता' दिखावे और हमें उस रास्ते पर चलने की हिम्मत और ताक़त दे. किसी भी काम में हमें कामयाबी तभी मिल सकती है जब हम शुरू करने से पहले अपने दिल उस ईश्वर अल्लाह के सामने खोल दें.

इसके बाद हमें चाहिये कि अदब के साथ सब मुल्कों, सब क़ौमों और नब ज़मानों के ऋषियों, पैग़म्बरों, बुद्धों, मसीयाहों, नबियों, रसूलों, अवतारों, तीर्थंकरों, अर्हतों, गुरुओं और रूहानी रास्ता दिखाने वालों को याद करें और सलाम करें जिन्होंने बार बार सच्ची तालीम देकर इनसानी समाज के दिलों में उस 'एकता' को जगाए रखने की कोशिश की.

आख़ीर में हमें उन सब भाई, बहनों, सोसाइटियों को नमस्कार करनी चाहिये जो अपनी अपनी जगह इस एकता को बनाए रखने, सबका ध्यान, सबकी असलियत की तरफ़ दिलाने और बिना देश, जात, मज़हब, रंग, क़ौम, नसल या किसी तरह के फ़रक़ के एक आलमगीर, व्यापक इनसानी भाई चारे को क़ायम रखने और मज़बूत करने की कोशिश में लगे हुए हैं. बिना यहाँ की इस एकता के हम उस दुनिया की, अल्लाह की एकता को नहीं पा सकते !

—∞—

२

मज़हब और साइन्स

यह बात मशहूर है कि एशिया वालों के विचार धर्म मज़हब की तरफ़ ज़ियादा जाते हैं और आज कल के योरप वालों के ख़याल साइन्स की तरफ़ ज़ियादा झुकते हैं. दुनिया के सब बड़े बड़े मज़हब, जिनके नामलेवा इस समय मौजूद हैं और लगभग वह सब भी जिनके नामलेवा अब नहीं रहे, एशिया ही में पैदा हुए. एशिया वालों की सारी ज़िन्दगी पर मज़हब छाया रहता है. हिन्दू, मुसलमान, यहूदी, पारसी, कन्फ़्यूशियस यहाँ तक कि रोमन कैथोलिक फ़िरक़े के ईसाइयों के भी रहन सहन, खान पान, आचार विचार सब पर धर्म की गहरी छाप रहती है. इनमें से हर मज़हब वाला हर बात में यही सोचता है कि उसका मज़हब क्या चाहता है. नए मज़हबों में पुराने मज़हबों की अपेक्षा इनसाफ़, नेकी और सचाई पर ज़ियादा ज़ोर दिया जाता है और रीत रिवाज पर कम. इसी लिये बौद्ध, जैन और सिख मज़हब शायद आदमी की रात दिन की ज़िन्दगी और उनके छोटे छोटे कामों को इतना ज़ियादा नहीं कसते जितना इनसे पुराने मज़हब. पर हालत इन मज़हबों के मानने वालों की भी क़रीब क़रीब यही है.

सब मज़हब मानते हैं कि आदमी का नाता हर समय किसी ऐसी बड़ी शक्ति के साथ जुड़ा हुआ है जो हमारे इन हाथ, आँख, नाक, कान की पहुँच से बाहर है. आदमी की दुनियावी

ज़िन्दगी बड़े दरजे तक उस शक्ति के अधीन है. वह शक्ति इस ज़िन्दगी के बाद भी अपना काम करती रहती है, चाहे उसे हम ईश्वर कहें, ख़ुदा कहें या आत्मा कहें. इसी लिये इन मज़हबों के मानने वालों की निगाह दूसरी दुनिया की तरफ़ भी जाती रहती है. कभी कभी यह चीज़ इतनी बढ़ जाती है कि बीमारी बन जाती है और दूसरी दुनिया की बेजा चिन्ता में हम अपनी यह दुनिया भी बिगाड़ लेते हैं.

हर धर्म का मानने वाला यह चाहता है कि मेरा धर्म ज़िन्दगी के हर काम में मुझे रास्ता दिखावे—मैं क्या ख़र्च करूँ, क्या पहरूँ, क्या खाऊँ पिऊँ, कैसे रहूँ सहूँ, कैसे रोज़ी कमाऊँ, क्या काम करूँ, वग़ैरा, क्यों कि एक न एक दिन इन सब कामों के लिये मुझसे पूछ ताछ की जावेगी. हर मज़हब अपने देश, काल और हालत के अनुसार इस फ़र्ज़ को पूरा करने की कोशिश भी करता है. धीरे धीरे हर मज़हब के कुछ ठेकेदार पैदा हो जाते हैं जो इन्हीं बातों में बाल की खाल निकालने लगते हैं, छोटी छोटी बातों पर बेजा ज़ोर देने लगते हैं. उनका मज़हब ठस, कट्टर और बेजान होने लगता है. उसका लचीलापान जाता रहता है. वह ज़माने की ज़रूरत के मुताबिक़ अपने छोटे मोटे रीत रिवाजों को भी नहीं बदल सकता. वह निकम्मी, ग़ैर ज़रूरी चीज़ों को इतना चिपटता है कि ज़रूरी और काम की चीज़ों को भूल जाता है. यहाँ तक कि जो रास्ता अगर समझ कर चला जाता तो नेकी और भलाई का रास्ता होता, वही बदी और बरबादी का रास्ता बन जाता है.

यह तो एशिया वालों की हालत रही. अब ज़रा योरप की हालत लीजिये. बहुत थोड़े दिनों पहले तक योरप के वह सोचने वाले जो समाज के आगे आगे चलते थे, उन सब चीज़ों की तरफ़ से दिन दिन बेपरवाह होते जा रहे थे जो हमारे बाहरी हाथ, कान, आँख, नाक की पहुँच से बाहर हैं.

मानों उन्हें इन चीज़ों से कोई वास्ता ही नहीं. तरह तरह की साइन्सों के अन्दर भी इस तरह की बहुत सी ख़याली चीज़ें हैं जिनके बिना काम नहीं चल सकता. और यह साइन्सें लोगों को बारबार आगाह करती रहती हैं कि हाथ, कान, आँख, नाक की पहुँच के अन्दर की चीज़ों और इनकी पहुँच से बाहर की चीज़ों दोनों में गहरा और अटूट नाता है. फिर भी योरप वालों का ख़याल दूसरी दुनिया की तरफ़ नहीं गया. पर इस दुनिया में इतना अधिक फँस गया कि वहाँ के लोग हमसे भी अधिक बुरे रोग के शिकार हो गए जिससे दो भयंकर महायुद्ध हो चुके और तीसरे उनसे अधिक भयंकर महायुद्ध का डर बना हुआ है.

हमें अगर यह देखना है कि एशिया वालों के तरह तरह के मज़हबी विचारों में कोई एकता है या नहीं तो हमें अलग अलग धर्मों का मिलान करना होगा. ऐसे ही यह देखने के लिये कि योरप वालों के अपने ख़यालों में एकता है या नहीं हमें अलग अलग साइन्सों और साइन्स वालों के ख़यालो का मुक़ाबला करना होगा.

कुछ लोग कहते हैं कि सब साइन्सों की बुनियादी एकता साफ दिखाई देती है और मज़हबों के लड़ाई, झगड़े और फ़रक़ भी उतने ही साफ़ नज़र आते हैं. दूसरे लोग कहते हैं कि नई नई साइन्सों के रोज़ के नए नए असूल, डाक्टरी की नई नई दवाएँ, नई नई खोजों के नए नए नतीजे बता रहे हैं कि साइन्सों और साइन्स वालों में भी कोई एकता नहीं. बात यह है कि जैसे मज़हबों में तंगनज़री और कट्टरता होती है वैसे ही अपने ढंग की तंगनज़री और कट्टरता साइन्सों में भी होती है. अंध-विश्वास भी दोनों में होते हैं. राजनीति और कूटनीति की बाँदी बनकर साइन्स ने मज़हब से कहीं अधिक मारकाट की है. पर यह सब झगड़े न सच्ची साइन्स का नतीजा हैं और न सच्चे धर्म या मज़हब का. इनमें क़सूर न साइन्स का है और न धर्म

का. यह नतीजा हैं हमारे अन्दर के शैतान, हमारी ख़ुदी, हमारे स्वार्थ और हमारे अहंकार का. हम अपनी छोटी, झूठी और चन्दरोज़ा ग़रज़ों के लिए साइन्स और मज़हब दोनों का ग़लत इस्तेमाल कर लेते हैं, और दोनों को बदनाम करते हैं.

हर आदमी के अपने अन्दर जो कुछ होता है वही वह बाहर देखना चाहता है, और जो वह चाहता है वही देख लेता है. जो एकता देखना चाहते हैं उन्हें एकता दिखाई देती है और जो झगड़े देखना चाहते हैं उन्हें झगड़े दिखाई देते हैं. जो बेलाग होकर दोनों पहलुओं को ठीक ठीक देखना चाहते हैं वह दोनों को देख लेते हैं. सचाई हमेशा दो पहलुओं के बीच में होती है. सच यह है कि दुनिया की सब चीज़ों में बुनियादी बातों में एकता है, और ऊपरी बातों में फ़रक़. जड़ एक और डाल पत्ते अलग अलग. यही बात साइन्स की है और यही मज़हब की. इस एकता को दरशाना और चमकाना दर्शनशास्त्र यानी फ़लसफ़े और विद्वानों का काम है. कोई दो चेहरे एक से नहीं होते. कोई दो दिमाग़ एक तरह नहीं चलते. दुनिया नाम ही रंगारंगी और बहुरूप का है. फिर भी एक दरजे तक सब आदमी एक से दिखाई देते हैं और एक तरह सोचते हैं. नहीं तो न हम एक दूसरे को समझ पाते और न मिल कर रह सकते. यह एकता ही हमारी आपसी हमदर्दी, मेल मिलाप और सारी सभ्यता (तहज़ीब) की जड़ है. इसी इनसानी तहज़ीब को ज़िन्दा रखने और आगे बढ़ाने के लिये सब मज़हबों की बुनियादी एकता को देखना, समझना और सामने लाना ज़रूरी है.

जो लोग ख़ुद इस सचाई को देख सकें, उन्हें अगर एशिया और योरप दोनों की करोड़ों जनता से प्रेम है तो उनका धर्म है कि वह इस एकता को सामने लावें, चमकावें और फैलावें, ताकि रीत रिवाज के फ़रक़ की चीज़ें भी इस एकता ही के रंग में रँगी रहें. इनसानी क़ौम के प्रेमियों को अपनी पूरी ताक़त इस काम में लगा देनी चाहिये. योरप के अन्दर मुल्क मुल्क के बीच

लड़ाइयां, लागडाट और दुशमनी और एशिया, ख़ासकर हिन्दुस्तान में, हमारे जातपात, छुआछूत और मज़हब के नाम पर लड़ाई दंगे दिखा रहे हैं कि हमारी निगाहें इस एकता पर कम और ऊपरी फ़रक़ों पर अधिक रहती हैं. यही दोनों तरफ़ की आम जनता की ग़ुलामी, बरबादी, लूट और मुसीबतों का कारण है. दोनों जगह अमन, प्रेम, शान्ति और ख़ुशहाली को बढ़ाने का तरीक़ा यही है कि लोगों को समझाया जावे कि मज़हब मज़हब सब एक हैं और मज़हब और साइन्स भी एक हैं. उनके सामने एक ऐसे इनसानी संगठन का नक़शा पेश किया जावे जिसमें सब तबियतों और सब उमरों के लोगों को "अपनी अपनी शक्ति के अनुसार काम और अपनी अपनी ज़रूरत का सामान" मिल सके. सब दुनिया को ठीक ठीक जिस्मानी और रूहानी दोनों तरह की ख़ूराक पहुँचाने का यही तरीक़ा है.

मज़हब के नाम पर झगड़े दुनिया में होते रहे हैं और होंगे. पर इन झगड़ों की वजह से मज़हब को दुनिया से मिटाने की कोशिश ऐसी ही है जैसे रोग को दूर करने के लिये शरीर को मार डालने की कोशिश. जब तक दुनिया में दुख और मौत हैं तब तक लोगों को मज़हब की ज़रूरत रहेगी और उससे उन्हें तसल्ली भी मिलेगी. ऐसे ही जब तक लोगों को यह बताया जाता रहेगा कि बुनियादी बातों में भी सब मज़हब एक दूसरे के ख़िलाफ़ हैं, तब तक लोग अपने अपने अलग अलग मज़हबों के नाम पर लड़ते रहेंगे. दूसरी तरफ़ अगर उन्हें यह बताया जावेगा कि बुनियादी बातों में सब मज़हब एक हैं तब लोगों के दिल एक दूसरे के नज़दीक आवेंगे और वह सबको अपना भाई समझकर एक दूसरे से प्रेम करना सीखेंगे.

इस तरह जब लोगों को सब मज़हबों की एकता और मज़हब और साइन्स की एकता दरशाई और समझाई जावेगी और लोग उसे समझेंगे तब एक नया ज़माना शुरू होगा जिसे साइन्टिफ़िक मज़हब या मज़हबी साइन्स का ज़माना कह सकेंगे, जिसमें हर

एक को सबके भले में अपना भला दिखाई देगा और सब सबकी भलाई के कामों में लगेंगे.

थोड़े दिनों पहले तक साइन्सों साइन्सों में भी काफ़ी फ़र्क़ था, पर अब बड़े बड़े साइन्सदां यह समझने और कहने लगे हैं कि साइन्सें अलग अलग नहीं हैं, बल्कि सब साइन्सें मिलाकर एक ही साइन्स हैं. उसी एक साइन्स की रोशनी में और उसकी मदद से लोग बहुत जल्दी इस चीज़ को भी समझ लेंगे कि मज़हब भी अलग अलग नहीं हैं बल्कि सब मज़हब एक ही मज़हब हैं. आख़ीर में हम देखेंगे कि साइन्स और मज़हब भी दोनों एक ही सचाई के दो रुख़ हैं, एक ही हक़ीक़त है जिसकी रोशनी में हम अपनी ज़िन्दगी को समझ सकते हैं और इस दुनिया और दूसरी दुनिया दोनों में उसे काम का बना सकते हैं. मज़हब मज़हब की एकता और साइन्स और मज़हब की एकता में ही हमारी रूह या आत्मा के आगे के रास्ते खुल सकते हैं.

दुनिया में जब जब कोई नया मज़हब आया है तब तब इस लिये आया है कि उससे पहले का मज़हब या पहले के मज़हब ग़ैरज़रूरी निकम्मी बातों, ग़लत रीत रिवाजों और झूठे अंध विश्वासों से इतने ढक गए थे कि उनकी असली शुरू की शकल पहचानी तक नहीं जा सकती थी. इसी लिये एक नए मज़हबी ऐलान की ज़रूरत पड़ी. किसी महान् आत्मा ने अपने तप, अपने अन्दर की रूहानी आग से उसी पुराने सनातन मज़हब के ऊपर के मैल को जलाकर उसे फिर से चमकाया, उसमें नई जान डाली, उसका नए सिरे से ऐलान किया, उसकी बुनियादी सचाइयों की तसदीक़ की. ढाँचा बदल गया, चीज़ वही थी. शब्द बदले, पर मानी वही थे.

अब इस ज़माने में जिस नए ऐलान की ज़रूरत है वह भी किसी नए धर्म का ऐलान न होगा. वह हो सकता है कुछ लोगों के लिये नया हो, पर असल में वह वही व्यापक,

आलमगीर, साइन्टिफ़िक, इनसानी धर्म होगा, जिसके लिये किसी नए महापुरुष की ज़रूरत न होगी. उस तरह के महापुरुष जो कहना था सब कह गए. ज़रूरत है सब मज़हबों और सब साइन्सों के सोचने वालों के मिलकर उन बुनियादी सचाइयों को चमकाने की जो सब मज़हबों और सब साइन्सों की जड़ और जान हैं. यह काम शुरू भी हो चुका है. उसे बढ़ाना, फैलाना और रूप देना है.

मज़हब और साइन्स एक दूसरे के कितने नज़दीक आते जा रहे हैं, इसे समझने के लिये दुनिया के कुछ बड़े बड़े साइन्स वालों के विचार नीचे दिये जाते हैं :—

योरोपियन साइन्स के नामी पंडित सर ओलिवर लाज ने मौत के बाद की ज़िन्दगी और रूह के बारे में बात करते हुए सन् १९३० में ब्रिस्टल में कहा था—

"इसमें शक नहीं वह समय नज़दीक आ रहा है जब साइन्स इन नए मैदानों में घुसेगी और उनका हाल जानने की कोशिश करेगी...सच यह है कि हम एक ऐसी रूहानी दुनिया में रह रहे हैं जो इस माद्दी दुनिया पर छाई हुई है. वह रूहानी दुनिया एक बड़ी और सच्ची दुनिया है. वह सदा हमारे पास है. उसकी ज़बरदस्त ताक़तों को हमने अभी कुछ कुछ समझना शुरू किया है. अगर हमें यह भरोसा और तसल्ली न होती कि वह ज़बरदस्त ताक़तें एक ऐसी शक्ति के मातहत हैं जो सबका भला चाहती है, सब के बाप की तरह है, और जिसका नाम 'प्रेम' है, तो यही ताक़तें हमारे लिये बड़ी डरावनी हो जातीं."

इंगलैण्ड की रायल सोसाइटी के सेक्रेटरी सर जेम्स जीन्स ने लिखा है—"पहले हम जड़ माद्दे को असली चीज़ और मन या आत्मा को उससे पैदा हो जाने वाली चीज़ समझते थे. अब मालूम होता है बात उलटी है. अब हमें यह महसूस होने लगा है कि मन या आत्मा ही माद्दी दुनिया को पैदा

करता है और उसे चलाता है. मेरा मतलब हमारी अलग अलग आत्माओं से नहीं है, बल्कि उस बड़ी सर्वव्यापक आत्मा से है जिसके विचार के कणों से हमारी अलग अलग आत्माएँ बनी हैं."

सन् १६३३ में "दि न्यू बैकग्राउन्ड आफ़ साइन्स" नाम की किताब में सर जेम्स जीन्स ने लिखा था—

"उन्नीसवीं सदी की साइन्स (फ़िज़िक्स) की ख़ास चीज़ माद्दीयत (भौतिकवाद) और माद्दी जगत के अटल और ऊँचे क़ानून समझे जाते थे. पर अब हम उससे शायद अधिकाधिक दूर होते जांयगे."

सन् १६३७ में "दि मिस्टीरियस यूनिवर्स" नाम की किताब में उन्होंने लिखा कि—

"जो नई बातें हमें पता चली हैं उनसे हम मजबूर हैं कि शुरू में जल्दी में आकर हमने जो राय बना ली थी उसे अब हम फ़िर से जाँचें. अब मालूम होता है कि जिसे हम जड़ माद्दा और असली हक़ीक़त समझे थे वह असल में मन या आत्मा ही से पैदा हुआ है और उसी का एक ज़हूर या रूप है."

प्रोफ़ेसर सर ए० एस० एडिंगटन ने हाल में कहा है—

"हम आजकल इस नतीजे पर पहुँच गए हैं कि कोई अज्ञात शक्ति (ग़ैर मालूम ताक़त) काम कर रही है और हम यह नहीं जानते कि वह क्या कर रही है."

और "आजकल की साइन्स (फ़िज़िक्स) में से बेजान माद्दे का ख़याल मिट गया. अब हमारे तजुरबों में पहली और सब से सीधी चीज़ मन, विचार या आत्मा है. मैं समझता हूँ चेतनता या विचार ही बुनियादी चीज़ है. माद्दा इसी चेतनता या विचार से पैदा हुआ है."

मशहूर साइन्सदां हरबर्ट स्पेन्सर ने सन् १६०० के क़रीब अस्सी साल की उमर में कहा था—

"जिस चीज़ को मैं 'हमारे ज्ञान की पहुँच से परे' (अननोएबल) कहता हूँ वह किसी तरह मज़हब को नहीं काटती, बल्कि उसे ताक़त पहुँचाती है."

सब बड़े बड़े मज़हबों के क़ायम करने वाले कह गए हैं कि यह 'हमारे ज्ञान की पहुँच से परे' की चीज़ ही आत्मा है.

हरबर्ट स्पेन्सर और चार्ल्स डारविन के साथी एलफ्रेड रसल वैलेस ने अपनी किताब 'सोशल इनवाइरनमेन्ट एन्ड मारल प्रोग्रेस' में साफ़ लिखा है कि—"मुझे यक़ीन है कि रूह माद्दे को चलाती है."

'दि ग्रेट डिज़ाइन' (१६३४) नाम की किताब में चौदह बड़े बड़े साइन्स वालों ने अपनी सब की यह मिली हुई राय ज़ाहिर की है कि—"यह दुनिया बिना रूह की मशीन नहीं है, यह अकस्मात् यूँ ही नहीं बन गई है. माद्दे के इस परदे के पीछे एक दिमाग़. एक चेतन शक्ति काम कर रही है चाहे उसे हम कुछ भी नाम क्यों न दें."

इस सदी का सबसे मशहूर और सबसे बड़ा साइन्स का पंडित एलबर्ट आइन्सटाइन लिखता है—

"मैं ख़ुदा को मानता हूँ. इस दुनिया की तरतीब में और सारी सृष्टि के सुरीले मेल में ख़ुदा अपने को ज़ाहिर करता है. मैं मानता हूं कि सारी क़ुदरत में चेतनता काम कर रही है. साइन्स के काम की बुनियाद अब इसी यक़ीन पर है कि यह दुनिया यूँ ही अकस्मात् पैदा नहीं हो गई है बल्कि इसमें एक तरतीब और एक मतलब है जो समझ में आ सकता है."

जे० बी० एस० हैलडेन ने लिखा है :—

"जिस दुनिया को हम एक अंधी मशीन समझे थे, वह असल में रूहानी दुनिया है जिसे हम अभी बहुत कम और बहुत अधूरा देख पाए हैं. रूहानी दुनिया ही असली दुनिया है. सच यह है कि दुनिया या विश्व की असलियत न माद्दा है, न

कोई माद्दी ताक़त, न कोई और माद्दी चीज़, बल्कि असलियत मन या आत्मा है."

सर आर्थर एस० एडिंगटन ने लिखा है:—

"यह पुराना विचार कि खुदा नहीं है जाता रहा. मज़हब का नाता रूह और मन की दुनिया से है. इस लिये मज़हब को हिलाया नहीं जा सकता."

आर्थर एच० कौम्पटन ने लिखा है:—

"मालूम होता है हमारा सोचना एक दरजे तक हमारे दिमाग़ से अलग भी होता है, जिससे अभी पूरी तरह साबित तो नहीं हुआ, पर मालूम ऐसा होता है कि मरने के बाद भी चेतनता या रूह बनी रहती है."

राबर्ट ए० मिल्लीकान का कहना है—"इस दुनिया को एक डोरे में बाँधने वाली शक्ति ईश्वर की शक्ति है. विकासवाद (एवोल्यूशन या इर्तक़ा) से पता चलता है कि अनगिनत युगों या बेअन्त ज़माने के अन्दर प्रकृति में लगातार जान फूँक कर और आख़ीर में एक दरजे तक खुदा की सी रूहानी ताक़तों वाले इनसान पैदा करके खुदा अपने आप को ज़ाहिर करता है. इससे बढ़कर ऊँचा विचार कोई इनसान के दिमाग़ में अभी पैदा नहीं हुआ."

सर जे० ए० टामसन ने 'दि ग्रेट डिज़ाइन' नाम की किताब में, यह बताने के बाद कि दरख्तों, पौदों और छोटे से छोटे कीड़ों से लेकर इनसान तक सब में आत्मा ही का ज़हूर है, एक बहुत बड़ी अमरीकी यूनीवर्सिटी के फाटक पर खुदे हुए इस वाक्य (दुआइया फ़िक़िरे) को दोहराया है—"ऐ खुदा! तू मेरी आँखें खोल दे, ताकि मैं तेरी क़ुदरत की अजीब अजीब चीज़ों को देख सकूँ!"

लन्दन, बौन, लेडेन, लीपज़िग और और बहुत सी योरप और अमरीका की यूनीवर्सिटियों में अब रूहानी चीज़ों की खोज के लिये ख़ास महकमें खुलते जा रहे हैं और ख़ास प्रोफ़ेसर रखे

गए हैं जहाँ पुराने मिस्र की मज़हबी किताबों से लेकर हिन्दुस्तान के 'योग' और सूफ़ियों के 'सलूक' तक की तालीम दी जाने लगी है.

आजकल की योरप की साइन्स मज़हब ही से पैदा हुई. जब वह जवान हुई तो मज़हब ने उसे खूब सताया और दबाया. उसके बाद साइन्स ने बढ़कर बदला लिया और मज़हब पर हमले किये. फिर जब बदला हो चुका तो वही साइन्स अब शुरू के प्रेम का क़रज़ा चुकाने के लिये एक अधिक उच्च, अधिक सूक्ष्म, अधिक समझदारी के, और झूठे वहमों और अंध विश्वासों से पाक रूप में मज़हब को फिर से जिन्दा और जानदार बनाने की कोशिश में है.

जब साइन्स और मज़हब के बीच की दीवारें टूटेंगी तो मज़हब मज़हब के बीच की दीवारें भी टूटे बिना नहीं रह सकतीं. तब ही मुल्क मुल्क और क़ौम क़ौम के बीच की दीवारें भी टूटेंगी. तब ही सब क़ौमों, सब मुल्कों और सब इनसानों के दिल मिलेंगे. तब ही सारी इनसानी दुनिया, सारा मानव समाज, सचमुच एक मिला जुला कुटुम्ब होगा. तब ही आदमी आदमी में सच्चा भाईचारा पैदा होगा. आजकल की हमारी सारी मुसीबतें उसी सुनहरे दिन के आने की तय्यारी हैं.

३

मेल या लड़ाई

आदमी के अन्दर प्रेम और नफ़रत, मेल और लड़ाई, दोनों की तरफ़ झुकाव मौजूद है. प्रेम हमारे दिल के अन्दर का खुदा है. नफ़रत ख़ुदी से पैदा होती है और वही हमारे अन्दर का शैतान है. यही हमारे अन्दर का सुर असुर संग्राम है. मौलाना रूम का एक बड़ा अच्छा और मशहूर शेर है—

तू बराए वस्ल करदन आमदी,
नै बराए फ़स्ल करदन आमदी.

यानी आदमी को दुनिया में एक दूसरे से मेल और प्रेम के लिये भेजा गया था, लड़ाई और नफ़रत के लिये नहीं.

आज जब बहुत से लोग एक मज़हब वालों और दूसरे मज़हब वालों में, एक सरकार और दूसरी सरकार में, लड़ाई की बातें करते रहते हैं, हम यह देखें कि यूरोप के दो बड़े महायुद्धों से वहाँ के तजरबेकार लोगों ने क्या नतीजा निकाला. कई बड़े बड़े राजकाजियों और सेनापतियों ने, जिन्होंने पहले और दूसरे महायुद्धों को पैदा करने और चलाने में सब से अधिक हिस्सा लिया था—बाद में महसूस किया कि युद्ध ज़रा भी मान या शान या फ़ायदे की चीज़ नहीं है।

इंगलिस्तान के एक फ़ील्ड मार्शल सर विलियम रौबर्टसन ने, जिन्होंने पहले महायुद्ध में बहुत बड़ा हिस्सा लिया था, सन् १९३० में अपनी एक तक़रीर में कहा था—

"पहले कभी लोगों ने इतनी अच्छी तरह इस बात को नहीं समझा था जितनी अब कि मुल्कों मुल्कों या क़ौमों क़ौमों के बीच के झगड़ों को तय करने के लिये लड़ाई का तरीक़ा एक ग़लत और नाकारा तरीक़ा साबित हो चुका है. दिन पर दिन यह बात ज़ाहिर होती जा रही है कि असल में कोई क़ौम ग़ैर क़ौम है ही नहीं, बल्कि सब का नफ़ा नुक़सान एक दूसरे के साथ इस तरह गुथा हुआ है कि अगर एक क़ौम या एक मुल्क को नुक़सान होता है तो कम या अधिक सब को नुक़सान उठाना पड़ेगा. इसमें कोई शक नहीं कि युद्ध को रोकने के लिये सब से ज़रूरी चीज़ यह नहीं है कि बड़ी बड़ी फ़ौजें व क़ीमती हथियार रखे जावें. सब से पहली और ज़रूरी चीज़ यह है कि क़ौमों क़ौमों के आपसी व्यवहार में 'ख़ुद ग़रज़ी' कम हो और एक दूसरे से 'लागडाट या द्वेष' मिटे. हमें उम्मीद है कि अब धीरे धीरे हम उधर को जा रहे हैं. जब तक यह बात न हो जावेगी तब तक न हथियारों की दौड़ ख़तम होगी और न दुनिया की क़ौमों में मेल मिलाप और अमन क़ायम होगा. और जब यह बात हो जावेगी तो आसानी के साथ हथियारों का भी ख़ात्मा हो जावेगा और दुनिया अपने आप मेल मिलाप और अमन के रास्ते पर चलने लगेगी".

ये शब्द एक ऐसे तजरबेकार सेनापति के हैं जो जंग से उकता गया था. इस सारे बयान में दो शब्द सब से अधिक मार्के के हैं–'ख़ुद ग़रज़ी' और 'लागडाट'. श्री कृष्ण ने, जिन्हें शायद जंग का इससे कम तजरबा नहीं था, हज़ारों साल पहले कहा था कि—

"काम, क्रोध और लोभ, नरक के ये ही तीन दरवाज़े हैं."

युद्ध से बढ़कर नरक और कौन सा हो सकता है ?

एक दूसरे बड़े योधा ब्रिगेडियर जनरल एफ़० पी० क्रोज़ियर ने सन् १६२६ में लिखा था—

"दुनिया धीरे धीरे इस बात की तरफ़ आ रही है कि अब लड़ाई के तरीक़ों से हट कर शान्ति के तरीक़ों को बरतना

चाहिये. इधर ही दुनिया को आना चाहिये. दुनिया की आगे की खुशहाली का दार मदार इसी बात पर है कि आम जनता की राय को ऐसा बना दिया जावे जिससे लोगों को लड़ाई की बातें सोचने की जगह हमेशा शान्ति (अमन) की ही बातें सोचने की आदत पड़ जावे. मैंने इस बात पर अच्छी तरह सोचा है, समझा है और तजरबा करके देखा है.

"इसलिये अब मैं चाहता हूँ कि इस तरह के विचारों को फैलाऊं. मेरी ज़िन्दगी का बहुत सा हिस्सा लड़ने में या लड़ाई की तय्यारी करने में बीता है. अब मैं अपनी रही सही ज़िन्दगी दुनिया के अन्दर शान्ति क़ायम करने में बिताना चाहती हूँ."

यूरोप के किसी विद्वान ने कहा है—"अगर ईश्वर न होता तब भी हमें खुद अपनी ख़ैरियत के लिये एक ईश्वर गढ़ लेना पड़ता."

ईश्वर या ईश्वर में सच्चा विश्वास ही आदमी को आदमी का गला काटने से बचा सकता है. खुशक़िस्मती से अब साइन्स और फ़िलासोफ़ी यानी विज्ञान और दर्शनशास्त्र दोनों मिलकर नए सिरे से आदमी को बता रहे हैं कि खुदा है, और खुदा जितना हमारे बाहर है उससे अधिक हमारे अन्दर है.

कई बरस से यूरोप के बहुत से मुल्कों में इस तरह की नई नई तहरीकें चल रही हैं जिनकी ग़रज़ लोगों में राष्ट्रीयता या नैशनलिज़्म की जगह अन्तर्राष्ट्रीयता, इन्टरनैशनलिज़्म, या मानवता, यानी इनसानी क़ौम की एकता, के ख़याल को जगाना है. इसी से आगे की नसलों में अधिक ऊँचे सदाचार और ऊंची रूहानियत पैदा होगी. इन तहरीकों में नई पौध के लोग ही अधिक हिस्सा ले रहे हैं. 'राष्ट्रीयता' एक हद के अन्दर अच्छी चीज़ हो सकती है. पर जब राष्ट्रीयता इनसानियत के ख़िलाफ़ जाने लगती है, जब वह इनसानी भाईचारे पर वार करती है तो वह ज़हर और हम सब के लिये घातक बन जाती है. आज दुनिया में नैशनलिज़्म, राष्ट्रीयता या क़ौमीयत के पाक जज़्बों

की यही बुरी गत बनी हुई है. इनसानियत के ख़िलाफ़ बुरे से बुरे पाप आज इन जज़्बों के नाम पर किये और कराए जा रहे हैं.

यूरोप के समझदार लोग इस बात का जतन कर रहे हैं कि इस बारे में स्कूलों और कालिजो की पढ़ाई का ढंग बदला जावे. अपनी अपनी क़ौम की बड़ाई की डींग हांकना, दूसरी क़ौमों की बुराई करना, हँसी उड़ाना और उनसे नफ़रत पैदा कराना, मारकाट, लड़ाई और अपने पड़ोसी इनसानों के साथ बदसलूकी को अच्छी चीज़ें बताकर उनकी तारीफें करना, यह सब बच्चों और नौजवानों की तालीम से निकाल दिया जावे. इनकी जगह चुन चुन कर सब की अच्छी अच्छी बातों को गिनाना, सबसे प्रेम, मेल मिलाप और सब की सेवा के भाव को फैलाना तालीम की ख़ास ग़रज़ होनी चाहिये. सब धर्मों के बड़े बड़े योद्धाओं और विजेताओं की तारीफें करने की जगह जिन्होने दूसरों को मार कर और जलाकर नाम कमाया, हमें दुनिया भर में शान्ति और प्रेम फैलाने वालों को उजागर करना चाहिये. लोगों के दिलों और दिमाग़ो से लड़ाई मिटे तब ही दुनिया से लड़ाई मिट सकती है, केवल हथियारों को बढ़ाने या घटाने से नहीं. धार्मिक तालीम भी अगर इसी तरह सब धर्मों की अच्छी अच्छी बातों और सब धर्म वालों के अच्छे अच्छे कामों को मिलाकर, सब को एक सी तालीम दी जावे तो मनुष्य ज़ाति के लिये बरकत साबित हो सकती है. सब धर्म एक, सब क़ौमें एक, सारा इनसानी समाज एक, यही हमारे सुख से रहने का एक मात्र मंत्र है.

भगवान की दुनिया में सब के लिये सब तरह के खाने मौजूद हैं. जो नमकीन चाहें उनके लिये नमकीन, जो मिठाई चाहें उनके लिये मिठाई, जो अचार खटाई चाहें उनके लिये अचार खटाई, जो फल चाहें उनके लिये फल, एक दूसरे की चाह और पसन्द के लिये हम एक दूसरे के सर क्यो फोड़ें, हाँ, साफ़ नाज, निरमल पानी और शुद्ध हवा की सब को जरूरत है. इन

के बिना किसी का अलग खाना हज़म नहीं हो सकता और न बदन को लग सकता है. यही सब धर्मों के वह बुनियादी असूल, नेकी और मुहब्बत की वह राहें हैं जिनके बिना सब धर्म बेकार और सब रास्ते ग़लत.

जिस तरह बहुत ज़ियादा क़ानून लोगों की शहरी ज़िन्दगी और उनके दिलों की सुख शान्ति को मटियामेट कर देते हैं और लोगों को सैकड़ों हज़ारों छोटे बड़े सरकारी नौकरों का हर वक़्त मुँह ताकने वाले बेबस अपाहज बना देते हैं; उसी तरह बहुत अधिक मज़हब, हर बात में मज़हब, आदमी के अन्दर के ख़ुदा को मार डालता है और आदमी को तरह तरह के वहमों, रीत रिवाजों और अन्ध विश्वासों का ग़ुलाम और फूट और बरबादी का शिकार बना देता है. अच्छी से अच्छी चीज़ की भी अति या ज़ियादती बुरी होती है. सचाई और कल्याण हमेशा औसत की राह पर, बीच के रास्ते पर मिलता है.

इसीलिये बुद्ध ने अपने धर्म का नाम ही 'मज्झिम पतिपदा' यानी 'बीच का रास्ता' रखा. यही बात किसी न किसी शब्दों में सब धर्मों में कही गई है.

चीन के महात्मा कङ्गफूत्ज़े की एक पुस्तक का नाम 'बीच का असूल' है.

संस्कृत की एक मशहूर कहावत है—

"बीच के रास्ते पर चलना चाहिये, किसी बात में भी अति नहीं करनी चाहिये."

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

"न अधिक खाने वाले को योग से फ़ायदा हो सकता है, न बिल्कुल न खाने वाले को, न अधिक सोने वाले को और न अधिक जागने वाले को, जो बीच की राह से खावे पिये, हमेशा बीच का रास्ता चले, ठीक सोवे भी और जागे भी, उसी के दुख योग से दूर होते हैं."

उपनिषद् का कहना है—

"विद्वान आदमी बात करने में या काम करने में किसी में अति नहीं करता."

महाभारत में लिखा है—"समझदार वह है जिससे जब कोई बढ़ बढ़ कर बातें करे या बेजा बहस करे तो वह ख़ामोश होकर सुन ले, सहले और कोई जवाब न दे."

क़ुरान में लिखा है—

"उस रहमान के सच्चे बन्दे वह हैं जो आजज़ी के साथ झुक कर धरती पर चलते हैं, और जब जाहिल लोग उनसे कुछ उलटी सीधी बात करते हैं तो वह जवाब देते हैं 'सलाम'."

(२५-६३)

चीनी महात्मा लाओत्ज़े ने कहा है—"भरे हुए बरतन में पानी भरते ही रहो तो पानी ज़ाय जायगा. कुल्हाड़ी की धार तेज़ हो जाने के बाद भी उसे सान पर घिसते रहो तो धार ख़त्म हो जायगी. अधिक रोशनी अंधा कर देती है. अधिक शोर बहरा कर देता है. अधिक मसाले सवाद को मार डालते हैं. जो बीच की राह से चलता है वही टिकता है और क़ायम रहता है. अति हर बात में लानत है, और सब से बुरी धन की अति है."

कङ्गफ़ूत्ज़े ने लिखा है—

"किसी बात में भी अति न करो."

इंजील में लिखा है—

"ऐ ईश्वर ! मुझे न बहुत ग़रीब बना न मालदार. मुझे मेरी ज़रूरत भर का खाना दे. ऐसा न हो बहुत धन मिलने से मैं तुझे भूल जाऊँ, या बहुत ग़रीब होने से चोरी करने लगूँ और तेरे नाम पर धब्बा लगे."

जापान का शिन्तो धर्म कहता है—

"जो कोई बीच के इन्साफ़ के रास्ते (संयम यानी एतदाल) से नहीं चलता वह हद से बढ़कर अपने बदन और आत्मा दोनों

को नापाक करता है. देवताओं की नक़ल करने के मानी हैं क़ुदरत पर चलना. इसका मतलब है जैसे क़ुदरत करती है वैसे करना। यानी हमारी आत्मा और हमारे विवेक (ज़मीर और अक़्ल) ने जो हदें बाँध दी हैं उनके अन्दर रहना." ('जापान'–इनाज़ो नितोबे).

बुद्ध के धर्म का नाम है 'मज्झिम पतिपदा', जैन धर्म का नाम है 'अनेकान्तवाद'. पहले फ़िक़रे का मतलब है—बीच का रास्ता, दूसरे का मतलब है—किसी एक ही राय को न चिपटना, सब के अन्दर सच को देखना.

"जिस तरह ग्वालिन मेहनत के साथ बारी बारी दोनों तरफ़ की डोरियों को खेंचती और ढीला करती है, तब सोने जैसा मक्खन निकालती है, वैसे ही समझदार आदमी हर सवाल के दोनों पहलुओं पर बार बार सोच कर आख़ीर में सचाई को पाता है." (अमृतचन्द सूरी).

क़ुरान में लिखा है—

"हद से न बढ़ो, सचमुच अल्लाह हद से बढ़ने वाले को प्यार नहीं करता."

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—

"सब कामों में भलाई ऐतदाल (बीच की राह) में होती है."

यूनान के एक फ़िलासफ़र का कहना है—

"ठीक तवाज़ुन (बराबर की तोल) हासिल करने की कोशिश करो—तुममें बहादुरी हो जल्दबाज़ी न हो, अहतियात हो बुज़दिली न हो, दया हो कमज़ोरी न हो, इन्साफ़ हो बदले का ख़याल न हो, मौन हो दम्भ न हो, चतुराई हो दग़ाबाज़ी न हो, मिठास हो ख़ुशामद न हो, दृढ़ता (इस्तक़लाल) हो ज़िद न हो, सोच समझ कर काम करने की आदत हो पर काम को टालने की आदत न हो, धीरज हो बेपरवाही न हो, दोस्ती हो पर किसी की बेजा रिआयत न हो, ऊँचे जाने की लगन हो पर ख़ुदग़रज़ी न हो."

महाभारत, शान्ति पर्व, अध्याय ७० में लिखा है—"धार्मिक बनो पर तआस्सुबी (हठधर्मी) नहीं, नेक बनो पर अपनी नेकी पर इतराओ नहीं, भक्त बनो पर कट्टर नहीं, धन कमाओ पर किसी से अन्याय करके नहीं, खुश रहो फूलो नहीं, मीठा बोलो पर बन कर नहीं, बहादुर हो पर डींग न हाँको, उदार हो पर फ़ज़ूलख़र्च न हो, दान दो पर बिना देखे भाले नहीं, निडर होकर बोलो पर कठोर वचन न बोलो, दोस्ती करो पर बुरे लोगों से नहीं, लड़ो पर अपने दोस्तों से नहीं, ख़बरें सुनो पर बेऐतबारों से नहीं, अपना भला चेतो पर दूसरो को नुक़सान पहुँचा कर नहीं, सलाह लो पर भूखों से नहीं, नेक कामों की तारीफ़ करो पर अपने नेक कामों की नहीं, साफ़ सुथरे रहो पर वहमी नहीं, सवाद वाली चीज़ें खाओ पर तन्दुरुस्ती के ख़िलाफ़ नहीं, अच्छो की इज़्ज़त करो पर उस पर घमण्ड न करो, सेवा करो पर धोखा मत दो, दूसरों को खुश रखो पर .खुशामद न करो, चतुर बनो पर बेमौक़े नहीं, नाराज़गी ज़ाहिर करो पर बिना काफ़ी सबब के नहीं, भगवान की पूजा करो पर दिखावा करके नहीं."

हर सवाल के दो पहलू होते हैं, समझदारी दोनों को समझ कर चलने में होती है.

४

धर्म मज़हब की ज़रूरत

दुनिया के सब बड़े बड़े मज़हबों की धर्म पुस्तकों को मिला कर पढ़ने से उन में तरह तरह की समानता देखने को मिलती है. मिसाल के तौर पर यह विचार भी सब धर्म पुस्तकों में पाया जाता है कि लगभग हर चीज़ के दो पहलू होते हैं और समझदारी इसी बात में है कि हम दोनों पहलुओं को मिला कर देखें और जहाँ तक हो सके बीच के रास्ते से चलने की कोशिश करें. उपनिषद में लिखा है—"यह सारा जगत द्वन्द्वमय है यानी दुई से भरा है. यहाँ की सब चीज़ें दो दो के जोड़ों में रहती हैं."

क़ुरान में अल्लाह कहता है—"हमने सब चीज़ें दो दो के जोड़ों में बनाई हैं."

ठीक यही बात इन्जील में भी कही गई है.

कभी कभी देख भाल कर इन दो में से एक को चुनना पड़ जाता है. योगभाष्य में लिखा है—"आदमी के चित्त (मन) की नदी एक दूसरे के ख़िलाफ़ दो तरफ़ को बहती रहती है, कभी भलाई और नेकी की तरफ़ और कभी पाप और बरबादी की तरफ़." एक सूफ़ी ने कहा है—"एक कड़ुवे पानी की नदी और दूसरी मीठे पानी की नदी दोनों साथ साथ बहती रहती हैं, और इन दोनों के बीच से तलवार की धार की तरह बारीक असली सकून और सलामती का रास्ता है."

महाभारत में लिखा है—"जिस तरह सरदी और गरमी के बीच एक जगह है जहाँ न सरदी है और न गरमी, इसी तरह सुख और दुख के बीच में शान्ति का वह मुक़ाम है जहाँ न सुख है और न दुख." यही विचार सब मज़हबी किताबों में मिलता है. गीता में बार बार यह विचार आया है—"ऐ अर्जुन ! जो आदमी द्वन्द्व (दुई या ग़ैरियत) से ऊपर उठ जाता है वह आसानी के साथ सब बन्धनों से छूट जाता है. जो कामयाबी और नाकामयाबी में एक रस रहता है, जो अपने पराए का फ़रक़ नहीं करता, जिसे किसी से बैर नहीं, जो अपने लिये जो कुछ भी मिल जाय उसी में सन्तोष मान लेता है. वह दुनिया में अपना फ़र्ज़ पूरा करते हुए भी अपने कामों से बन्धन में नहीं पड़ता."

सब धर्म पुस्तकें हमें यह समझाती हैं कि इस दुनिया में लाभ और हानि, नफा और नुक़सान, सुख और दुख साथ साथ चलते हैं. जब तक हमारे अलग अलग जिस्म हैं तब तक ये सब रहेंगे. इसलिये इन सब का शान्त चित्त से और एकरस होकर सामना करते हुए अपनी तरफ़ और दूसरों की तरफ़ अपने फ़र्ज़ों को पूरा करते रहना और इससे .ख़ुद अपने लिये कोई बदला न चाहना ही द्वन्द्व यानी दुई से ऊपर उठ जाना है.

यूनान के एक मशहूर मन्दिर, डेलफ़िक टेम्पिल, पर यह दो वाक्य खुदे हुए थे. एक—"कोई चीज़ हद से ज़ियादा नहीं." और दो—"अपने को जानो." ये दोनों बातें एक दूसरे को पूरा करती हैं. जो किसी बात में भी हद से बढ़ता है वह अपने को नहीं जान सकता. यह समतोल यानी सकून हासिल कर लेना ही सच्चा ज्ञान हासिल कर लेना और अपने को पहचानना है.

पारसी धर्म के बानी ज़रतुश्त ने लिखा है—"उजाला और अँधेरा, अच्छाई और बुराई, जो एक दूसरे के साथ बँधी

हुई हैं हमेशा से चली आ रही हैं. फिर भी वह एक दूसरे से अलग हैं. हमारे सोच विचार में, हमारी बातों में और हमारे कामों में सब जगह यह साथ साथ भी और अलग अलग भी दिखाई देती हैं. समझदार आदमी रोशनी की तरफ़ चलते हैं और नासमझ तब तक अँधेरे की तरफ़ को चलते रहते हैं जब तक वह समझदार न हो जाएँ. इन्हीं पुराने रास्तों पर चल कर अच्छी और बुरी इच्छाएँ आदमी में पैदा होती हैं. इन्हीं से एक नफ़रत की तरफ़ जाते हैं और दूसरे मुहब्बत की तरफ़. ऐ अहुरमज्द (ईश्वर) ! मुझे अपने मन पर क़ाबू हासिल करके इस दुई से ऊपर उठते हुए सीधे रास्ते पर चलने की शक्ति दे."

सब धर्म पुस्तकों में ईश्वर अल्लाह के नामों के बारे में भी यह दुई मौजूद है और सब धर्म वालों ने ईश्वर को दो दो नामों से पुकारा है.

क़ुरान उसे 'अल-अव्वल' और 'अल-आख़िर' कह कर पुकारता है. वेदों में उसे 'आदि' और 'अन्त' कहा गया है. दोनों के एक ही मानी हैं. क़ुरान उसे 'अल-बातिन' और 'अल-ज़ाहिर' कह कर पुकारता है. वेद उसी को 'अव्यक्त' और 'व्यक्त' कहता है. दोनों का एक ही मतलब है. क़ुरान में उसे 'अल-बादी' और 'अल-जामी' कहा गया है. वेदों में उसी को 'स्रष्टा' और 'संहर्ता' कहा गया है. दोनों का ठीक वही मनशा है. क़ुरान में 'अल-मुही' और 'अल-मुमीत' नाम आते हैं. वेदों में उसी को 'भव' और 'हर' कहा गया है, यानी जान डालने वाला और मारने वाला. क़ुरान में जो 'अल-मुज़िल' और 'अल-हादी' से मतलब है वही वेदों में 'मायी' और 'तारक' से है, यानी लुभाने वाला या आज़माने वाला और ठीक रास्ता बताने वाला. क़ुरान में 'अल-क़हहार' और 'अल-रज्ज़ाक़' नाम आते हैं. वेदों में उन्हीं के मुक़ाबले के 'रुद्र' और 'शिव' हैं. क़ुरान में 'ग़ज्जाब' और 'ग़फ़्फ़ार' का वही मतलब है जो

हिन्दू पुस्तकों में 'यम' और 'क्षमावान' का. 'अल-जब्बार' और 'अल-करीम' का वही अर्थ है जो 'घोर' और 'दयालु' का. 'अल-जलील' और 'अल-जमील' के वही मानी हैं जो 'ईश्वर' और 'मधुर' के, वग़ैरा. इसी तरह के जोड़े जोड़े के नाम ईश्वर के दुनिया की सब धर्म पुस्तकों में मिलते हैं.

इसलाम की किताबों में जिन्हें 'सिफ़ात' कहा गया है हिन्दू किताबों में उन्हीं को 'विभूतियाँ' कहा गया है. 'सिफ़ात' दो तरह की हैं. 'जलाली' और 'जमाली'. विभूतियाँ भी दो तरह की हैं, 'ऐश्वर्य वाली' और 'माधुर्य वाली'. दोनों का एक ही मतलब है.

यहूदियों के धर्म ग्रन्थों में भी जिन्हें 'क़ब्बालह' कहा जाता है ठीक इसी तरह के नाम मिलते हैं. 'क़ब्बालह' के बहुत से नाम अरबी और संस्कृत नामों से बिलकुल मिलते हुए हैं.

क़ुरान में अल्लाह के निन्यानवे नाम मशहूर हैं. पारसी किताबों में 'अहुरमज्द' के एक सौ एक नाम हैं. यह एक सौ एक नाम वेदों के संस्कृत नामों से बेहद मिलते हुए हैं, जैसे पारसी 'अहुरमज्द' संस्कृत 'असुर-मेधा', पारसी 'अवितन्य' वैदिक 'अभितन्य', पारसी 'ख़तु' वैदिक 'क्रतु' (फ़ारसी 'ख़िरद'), पारसी 'चिश्ति' वैदिक 'चित', पारसी 'दाता' संस्कृत 'धाता', पारसी 'धाता' संस्कृत 'त्राता'. पारसी 'दूरेदर्शता' संस्कृत 'दूरद्रष्टा', पारसी 'ज्ञाता' संस्कृत 'ज्ञाता' वग़ैरा वग़ैरा. ईश्वर के इन पारसी नामों का एक एक कर ठीक वही मतलब है जो संस्कृत नामों का. पुरानी पारसी भाषा और संस्कृत दोनों का निकास एक ही जगह से है.

यही दुई का ख़याल और यही जोड़े जोड़े के नाम हमें चीनी महात्मा कंगफ़ूत्ज़े की किताबों में मिलते हैं.

ठीक यही चीज़ें चीनी महात्मा लाओत्ज़े की किताबों में भी

मिलती हैं. लाओत्से जिसे 'सनत्साइ' कहता है उसी को हिन्दू किताबें 'सन्सार' कहती हैं.

यूनानी धर्म की किताबों से भी इसी तरह की बातें नक़ल की जा सकती हैं.

आदमी की ज़िन्दगी इस दुई के साथ एक लगातार संग्राम है. इसी दुई में से हमें अपना रास्ता बनाना है, ठीक रास्ता चुनना है, दुई को पार करना है.

यही सब धर्मों का उपदेश है, यही सब विद्याओं का और यही ऊँची से ऊँची साइन्स का. सच यह है कि हमें एक साइन्सी मज़हब की ज़रूरत है. मज़हब दुनिया के लिये उतना ही ज़रूरी है जितनी साइन्स. आदमी जब तक दुख और मौत की बाबत सोचता रहेगा, जब तक वह अपने आगे और पीछे दोनों तरफ़ निगाह डालेगा, तब तक इनसान को मज़हब की ज़रूरत रहेगी. तब तक मज़हब में उसे वह शान्ति और सकून मिलेगा जो उससे छीनना नामुमकिन भी है और ज़ुल्म भी. आदमी के दिल से यह बात नहीं मिट सकती कि 'अगर उसे सारी दुनिया भी मिल आवे पर उसकी आत्मा या रूह उससे खो जावे तो उसे कोई फ़ायदा नहीं'. अगर समझदार आदमी लोगों को सच्चा और साइन्सी मज़हब न देंगे तो लोग मजबूर होकर झूठे वहमों और अन्धविश्वासों के उन मज़हबों में फँसते रहेंगे जो दुनिया भर के पंडे पुजारी, पादरी और कठमुल्ला उन्हें देते रहते हैं. धर्म मज़हब की प्यास केवल उन लोगों में नहीं होती जो जानवरों की तरह आगे पीछे नहीं देख सकते, या उन लोगों में भी नहीं होती जो सब देख भाल कर अपनी अनन्त आत्मा के अन्दर सारी दुनिया का रहस्य यानी राज़ देख चुके हैं. यह दूसरे लोग धर्म मज़हब से ऊपर उठ चुके. आज की दुनिया में इस तरह के आदमी बिरले ही हैं. अधिकतर लोगों के लिये धर्म की ज़रूरत है इसीलिये धर्म ज़िन्दा है. उसका एक रूप ख़तम हो जाता है तो वह दूसरा रूप धारण कर लेता है.

स्वामी शंकराचार्य ने लिखा है—"जो आदमी इच्छा, ज्ञान और कर्म तीनों गुणों से ऊपर उठ जाता है उसके लिये फिर न कोई विधि या हुकुम है और न किसी चीज़ का निषेध या मनाही."

इसी बात को सूफी दूसरे शब्दों में यों कहता है—"जो रब को पहुँच गया वह रब हो गया, जिसके लिये सब रब ही रब है उसके लिये फिर अलग रब कहाँ; जहाँ सूरज ही सूरज है वहाँ रात कहाँ; सूफी अपने को मिटा चुका. जिसने अपने को मिटा दिया उसके लिये कोई मज़हब नहीं, जो यार तक पहुँच गया उसे दूसरा कोई मतलब नहीं."

अगर यह बात सच है, और यह सच है, कि इनसान के दिल के अन्दर यह बात जमी हुई है कि इस ज़िन्दगी के बाद भी कोई ज़िन्दगी है, और आदमी उस ज़िन्दगी को और इस ज़िन्दगी के साथ उसके सम्बन्ध को जानना और समझना चाहता है, अगर यह बात है, और यह सच है कि साइन्स जीवन के लिये है, जीवन साइन्स के लिये नहीं, तो समझदार आदमी कभी इस बात को आख़िरी नहीं मान सकता कि साइन्स और मज़हब दोनों में मेल नामुमकिन है. हक़ीक़त, साइन्स, वेद, मारफत और ज्ञान पाँचों के एक ही मानी हैं. हमें इन पाँचों को एक दूसरे की रोशनी में देख कर इन की एकता को समझना है.

वैशेषिक सूत्र में लिखा है—"यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस-सिद्धिः स धर्मः." यानी जिस बात से इस दुनिया में और दूसरी दुनिया में दोनों में आदमी को सुख मिले वही धर्म है. ईश्वर अल्लाह की आज्ञाओं को मानने का मतलब ही ईश्वर की क़ुदरत के क़ानूनों को मानना है. यही वह क़ानून है जो सब क़ौमों, सब मुल्कों और सब मज़हबों के ज्ञानी, महात्मा और साइन्सदां बताते आए हैं. इन क़ानूनों को मानने और उन पर अमल करने

से ही इस दुनिया और दूसरी दुनिया में आदमी को सुख मिल सकता है.

यह वह क़ायदे क़ानून हैं जिन पर सब अलग अलग धर्म एकराय हैं.

हम आज तक सुनते आए हैं कि हर बच्चे को तीन 'आर' यानी पढ़ना, लिखना और हिसाब सिखाना ज़रूरी है. इन तीन में एक चौथा 'आर' 'यूनीवरसल रिलिजन' यानी व्यापक आलमगीर मज़हबे इनसानियत, मानव धर्म, को भी हमें जोड़ लेना चाहिये. पर पहले इस मानव धर्म को खोज निकालना और समझना होगा. यह मानव धर्म वह असूल हैं जो सब धर्म मज़हबों के अन्दर एक बराबर पाए जाते हैं. दुनिया के तालीम देने वालों और साइन्सदानों का फ़र्ज़ है कि वह इस काम में मदद दें. अलग अलग मतों और तफ़रक़ों के अन्दर से एकता के जवाहर बीन निकालें, इसके लिये दुनिया के सब बड़े बड़े मज़हबों की खोज ज़रूरी है. फिर इन एकता के क़ीमती जवाहरात को जमा करके किताबों और पाठों की सूरत में दुनिया के सब लड़कों और लड़कियों को सिखावें. दुनिया को एक करने के जितने तरीक़े बताए जा रहे हैं उनमें सबसे मुफ़ीद, सबसे ज़रूरी और सबसे टिकाऊ तरीक़ा यही है.

५

इनसान और मज़हब

मज़हब के नाम पर अंधे, कट्टर और नासमझ लोगों के झगड़ों, हठधर्मियों, ज़ुल्मों और बुरे से बुरे पापों को देख कर बहुत से लोग यह कहने लगे हैं कि हमें अपने बच्चों को किसी तरह की भी मज़हबी तालीम नहीं देनी चाहिये, इतनी बुरी चीज़ अपने बच्चों के ऊपर लादने का हमें क्या हक़ है ? जो मज़हब आदमी आदमी में दुश्मनी पैदा करते हैं, उन्हें इतना अन्धा कर देते हैं, बच्चों को उनकी तालीम देने की क्या ज़रूरत ? अगर मज़हब के बिना आदमी का काम चल सकता तो हम भी इन सवालों का यही जवाब देते कि हमें कोई हक़ नहीं, और न इसकी कोई ज़रूरत है. पर सच यह है कि मज़हब के बिना काम नहीं चल सकता. इसलिये जवाब देना पड़ता है कि बच्चों को मज़हबी तालीम देने का हमें उतना ही हक़ है और यह हमारा उतना ही ज़बरदस्त फ़र्ज़ है जितना उन्हें लिखना, पढ़ना, हिसाब, भूगोल, इतिहास और साइन्स सिखाना. इतना ही नहीं, यह सब चीज़ें आदमी की आत्मा के भले के लिये उतनी ज़रूरी नहीं हैं जितना मज़हब. हम यह सब चीज़ें अपने बच्चों को इसलिये पढ़ाते हैं क्योंकि हमने तजरबे से देख लिया है कि इन्हें जानने में ही उनका भला है. इसमें अगर हम ग़लतियां कर जाएँ तो कर जाएँ. ग़लतियां इनसानों से ही होती हैं. चूँकि खाना कभी कभी लोगों को

बदहज़मी और नुक़सान कर देता है इसलिये लोगों का खाना हम हमेशा के लिये बन्द नहीं कर सकते. हमें चाहिये यह कि हम इस बात की भी कोशिश करें कि खाना अच्छा हो, जल्दी पचने वाला हो और जितना चाहिये उतना ही दिया जाय, जिससे तन्दुरुस्ती बने, बिगड़े नहीं. इसी तरह अपने बच्चों को मज़हब की तालीम देते समय तीन बातों को समझ लेने की पूरी कोशिश करनी चाहिये—एक यह कि मज़हब की कौन कौन सी बातें पक्की, मुहकम और अटल हैं, दूसरी यह कि वह बातें ऊँची से ऊँची साइन्स की कसौटी पर सच्ची और खरी उतरती हैं या नहीं, और इससे भी बढ़कर तीसरी बात हमें यह देखनी चाहिये कि कौन कौन सी बातें सब मज़हबों में एक सी हैं, जिन पर सब की राय मिलती है, जिन से सबमें एक दूसरे से हमदरदी, मेल मिलाप और प्रेम बढ़ सके. कट्टर मज़हबी लोगों के अन्धेपन और उनकी आपसी नफ़रतों को कम करने का भी यही एक तरीक़ा है.

इसी सवाल पर अब हम दूसरी तरह से विचार करें. दुनिया के अधिकतर लोग अपने अपने धर्म में पैदा होते हैं और उसी को चिपटे रहते हैं, ठीक जिस तरह हर आदमी अपने बाप दादा की जायदाद को चिपटा रहता है. पर अगर दो बच्चे साथ साथ पैदा हों, एक किसी मुसलमान घर में और दूसरा किसी हिन्दू घर में, और हम उसी समय हिन्दू बच्चे को ले जाकर मुसलमान घर में और मुसलमान बच्चे को ले जाकर हिन्दू घर में रख दें और दोनों को वहीं पलने और बड़ा होने दें, तो हिन्दू घर में पैदा हुआ बच्चा बड़ा होकर मुसलमानों की सी सब बातें करने लगेगा और मुसलमान घर में पैदा हुआ बच्चा हिन्दुओं की तरह रहने सहने और सोचने लगेगा. इसी तरह अकसर लोग अपने जनम के मज़हब से विश्वास हटा कर दूसरे किसी मज़हब को भी मानने लगते हैं. पर दिलों की गहराई के अन्दर किसी न किसी मज़हब की प्यास सबके

अन्दर बराबर बनी रहती है. इस से जाहिर है कि आदमी के लिये 'मज़हब' ज़रूरी चीज़ है, यह मज़हब या वह मज़हब नहीं. अब हमारे लिये दो रास्ते रह जाते हैं. या तो सब मज़हबों से इनकार कर दें या सब को मानने लगें. यह दोनों नामुमकिन हैं. इसलिये अमली चीज़ और सब से अच्छी और अक़लमन्दी की बात यही है कि जितने बड़े बड़े मज़हब दुनिया में हैं उन सब में से हम उन नाम रूपों और रीत रिवाजों को अलग कर के जो सब में अलग अलग हैं, और जो अपनी अपनी जगह और अपने अपने हालात में ही मुफ़ीद हो सकते हैं, उन सब चीज़ों को जमा कर लें जो सब में एक सी हैं और जिन्हें सब ज़रूरी मानते हैं. फिर हम अपने सब बच्चों को यही असली रूहानी ख़ुराक खिलाएं, उन्हें उस ही की तालीम दें, और उन्हें यह भी बताएं कि रीत रिवाज के छिलके सचाई के दानों को क़ायम रखने के लिये ज़रूरी हो सकते हैं, पर वह खाने और हज़म करने की चीज़ नहीं हैं.

कुछ लोगों का कहना है कि पुराने ज़माने में जो काम मज़हब से लिया जाता था वह अब कला, क़ानून, फ़लसफ़े और साइंस से मिलाकर लिया जाता है. इसलिये अब हमें किसी नए या पुराने मज़हब की ज़रूरत नहीं रही. इस का जवाब यह है कि आदमी कोई तीन या चार टुकड़ों में बंटी हुई चीज़ नहीं है, वह एक वजूद है, एक अस्तित्व है. फ़लसफ़े, साइंस, क़ानून और कला का आपस में मेल बैठाने वाली उसके अन्दर कोई एक चीज़ होनी चाहिये. अंगरेज़ी शब्द 'रिलीजन' का अर्थ 'बांधना' है. हिन्दी शब्द 'धर्म' का अर्थ सब को 'संभालना' है. धर्म या मज़हब ही वह चीज़ है जो सब लोगों के दिलों को एक दूसरे के साथ और सब को ईश्वर के साथ एक डोर में बांधे रखती है. इसके ख़िलाफ़ दुनिया के लोभ, लालच और दुनियावी ख़ाहिशें हमें एक दूसरे से फाड़ती हैं. वेदान्त या तसव्वुफ़ वह चीज़ है जिसमें फ़लसफ़ा, साइंस

और कला, बल्कि कहना चाहिये मज़हब, साइंस और कला तीनों आकर मिल जाते हैं और जिसमें सब मज़हबों का इत्र खिंच कर आ जाता है. हमें यह भी न भूलना चाहिये कि आजकल की साइंस के बड़े से बड़े पंडितों की खोज ने हमें यहाँ पहुँचा दिया है कि सारी माद्दी दुनिया यानी सारा जड़ जगत ऐटमों यानी परमाणुओं 'इलकट्रोन', 'प्रोटोन', 'न्युट्रोन', 'प्लूट्रोन' 'पोज़ीट्रोन', वग़ैरा वग़ैरा, यहाँ तक कि बिजली की ताक़त और आख़ीर में केवल माइण्ड फ़ोर्स यानी 'चित्त शक्ति' या 'ख़याल की ताक़त' से बनी हुई है और उसी से क़ायम है.

कुछ लोग इस बात पर ज़ोर देते हैं कि तालीम में लड़कों और लड़कियों को ज़ियादा से ज़ियादा आज़ादी देनी चाहिये. हर बच्चा अपनी आज़ाद तबियत, अपनी पसन्द और अपने अन्दर के झुकाव के अनुसार जो चाहे पढ़े या न पढ़े और जिधर को चाहे जाय. लेकिन इस तरह के सब आदमी भी नौजवानों को कुछ न कुछ सिखाते ही हैं और वही चीज़ें सिखाते हैं जो वह ख़ुद नौजवानों के लिये सब से अधिक फ़ायदे की समझते हैं. रूस के कम्युनिस्ट अपने नौजवानों को ज़ोरों के साथ कम्युनिज्म सिखाते हैं, इटली के फ़ासिस्ट उन्हें फ़ासिज्म सिखाते हैं. इंगलैंड और अमरीका वाले अपने नौजवानों को ज़बरदस्ती 'डेमोक्रेटिज्म' बल्कि 'इम्पीरियलिज्म' सिखाते हैं. बातें सब आज़ादी की करते हैं, पर सब अपने अपने यहाँ के नौजवानों को पूरे ज़ोरों के साथ अपने अपने सांचे में ढालने की कोशिशों में लगे हुए हैं. आज़ादी की इस दलील में सचाई केवल इतनी है, और वह बड़ी ज़रूरी चीज़ है, कि बाक़ी ज़िन्दगी भर के लिये हर लड़के लड़की को उस काम, उस धन्धे या उस पेशे की तालीम देनी चाहिये जो उसकी तबियत, उसकी ताक़त और उसकी पसन्द के अनुसार हो. बस, यह तो हुई हर बच्चे की ख़ास तालीम. इसके अलावा और इसके साथ साथ हर बच्चे को आम और ज़रूरी कचहरी तालीम भी चार चीज़ों की देनी

चाहिये—पढ़ना, लिखना, हिसाब और मानव धर्म (मज़हबे इन्सानियत).

यह ठीक है कि बड़े होकर हर लड़के लड़की को अधिकार है कि वह जिस चीज़ को चाहे माने और जिसे चाहे न माने, जो चाहे अपनाए रहे और जो चाहे छोड़ दे. सैकड़ों आदमी, ख़ास कर पढ़े लिखे, रोज़ अपना मत, अपने विचार और अपनी पारटी बदलते रहते हैं. यह आए दिन का बदलाव हमारे समाज को बहुत नुक़सान भी पहुँचा रहा है. इसका इलाज भी यही है कि हम मज़हब के बुनियादी असूलों यानी सब मज़हबों के उन आम असूलों की, जो हर इनसान के लिये ज़रूरी रूहानी और इख़लाक़ी यानी आध्यात्मिक और नैतिक, ख़ूराक हैं, दुनिया के सब लड़कों और लड़कियों को छोटी उमर से ही पूरी पूरी तालीम दें. आगे चल कर हमारे बच्चे कोई भी पेशा क्यों न अपनावें, मानव धर्म के यह आम असूल उनकी हर तरह की ज़िन्दगी में बुनियाद का काम करेंगे और उन्हें गुमराही से और एक दूसरे की नफ़रत और दुशमनी से बचावेंगे.

अब सवाल रह जाता है कि यह मानव धर्म यानी यह इनसानी मज़हब है क्या चीज़. इसी को हम विश्व धर्म या आलमगीर मज़हब भी कह सकते हैं. इस इनसानी मज़हब में वह सब सचाइयाँ और वह सब काम शामिल हैं जिन्हें केवल अधिकतर ही नहीं बल्कि सब बड़े बड़े मज़हब ठीक मानते हैं.

अब सबसे पहले हम यह देखें कि इन सब अलग अलग मज़हबों के क़ायम करने वाले ख़ुद इस बारे में क्या कहते हैं. इन सब मज़हबों के बानियों ने साफ़ साफ़ यह कहा है कि हम सब एक ही बुनियादी सचाइयों का उपदेश देते आए हैं.

उपनिषद में लिखा है—

गवाम् अनेकवर्णानाम्
क्षीरस्यास्ति एकवर्णता

क्षीरम् पश्यते ज्ञानी
लिङ्गं न तु गवाम् यथा.

यानी गाएं अलग अलग रंगों की होती हैं, पर दूध सब का एक रंग का यानी सफ़ेद होता है, ज्ञानी (यानी आरिफ़) दूध को देखता है और ऊपर के रीत रिवाजों में फँसे हुए लोग गायों के रंग को देखते हैं. मौलाना रूम ने हज़रत ईसा के उपदेशों का ज़िकर करते हुए कहा है—

जामये सद रंग ज़ां खुम्मे सफ़ा,
सादाओ यकरंग गश्ता चूंज़िया.

यानी सैकड़ों रंग के कपड़े उस साफ़ भट्ठी में पड़ कर इस तरह सफ़ेद और यकरंग हो गए जिस तरह सातों रंग मिलकर सफ़ेद रोशनी बन जाते हैं.

श्री कृष्ण ने भगवद्गीता में दो बार कहा है—

"ऐ अर्जुन ! लोग सब तरफ़ से चलकर अलग अलग रास्तों से भी मुझ तक ही पहुँचते हैं."

यही वह आख़िरी मंज़िल है जिसकी तरफ़ सारी दुनिया बढ़ी चली जा रही है.

पारसी धर्म के बानी महात्मा ज़रतुश्त ने लिखा है—

"और हम दुनिया के उन सब पहले के धर्मों को मानते और पूजते हैं जो नेकी सिखाते हैं."

गाथा में लिखा है कि—"असभ्य दस्यु क़ौमों में भी उन लोगों को सच्चा धर्म सिखाने के लिये पैग़म्बर होते रहे हैं."

जो ज़माना हिन्दुस्तान में बुद्ध और महाबीर का था वही चीन में लाओत्ज़े और कंगफ़ूत्ज़े का था. चीन के लोग बुद्ध, लाओत्ज़े और कंगफ़ूत्ज़े तीनों को एक त्रिमूर्ति की तरह बराबर के पैग़म्बर या अवतार मानते हैं. कंगफ़ूत्ज़े ने कहा है—"जो दीन धर्म पहले से चला आ रहा है मैं केवल उसी को आगे चला रहा हूँ, मैं कोई नई बात नहीं गढ़ सकता."

बुद्ध ने अपने से पहले के 'बुद्धों' का और अपने बाद के 'बुद्धों' का, और इसी तरह महावीर ने अपने से पहले के और अपने बाद के 'तीर्थंकरों' (पुल या रास्ता बनाने वालों) का ज़िकर किया है, और दोनों ने कहा है कि यह सब अगले पिछले 'बुद्ध' और अगले पिछले 'तीर्थंकर' बार बार उन्हीं एक बुनियादी सचाइयों का उपदेश देते रहे हैं. केवल जब यह सचाइयां लोगों के दिलों में फीकी या धुँधली पड़ जाती हैं तब यह महापुरुष अपनी ठीक ठीक ज़िन्दगी से उनमें नई जान डालते रहे हैं और डालते रहेंगे.

इनजील में लिखा है—"क्या कोई ऐसी बात है जिसकी बाबत यह कहा जा सके कि यह नई बात है ? हर बात पहले से चली आ रही है, हर बात सनातन है, सूरज के नीचे कोई बात नई नहीं है." (एक्लेज़ियास्टिक्स)

हज़रत ईसा ने कहा है—"मैं पुराने धर्म और पहले के नबियों के काम को नष्ट करने के लिये नहीं आया बल्कि उसे पूरा करने के लिये आया हूं." (इनजील)

कृष्ण ने अर्जुन से कहा है—"जो बात मैं तुझे सिखा रहा हूँ वही विवस्वान् ने मनु को, मनु ने इक्ष्वाकु को, इक्ष्वाकु ने दूसरों को, इसी तरह युग युग में एक ऋषि ने दूसरे को, एक आदमी ने दूसरे आदमी को, सिखाई है, लोग उसे भूल गए हैं, पर सब जगह मौजूद, सब कुछ जानने वाले सर्वशक्तिमान परमात्मा के अन्दर वह सब ज्ञान मौजूद है."

क़ुरान में यह चीज़ बार बार और तरह तरह से कही गई है. क़ुरान में लिखा है—

"जो बात इस क़ुरान में कही गई है वही सब पुरानी किताबों में कही गई है."

"कोई क़ौम नहीं कि जिसके अन्दर हादी यानी राह दिखाने वाले न भेजे गए हों."

"और अल्लाह ने जितने रसूल इससे पहले भेजे हैं, सब ने यही उपदेश दिया है कि सब का अल्लाह एक है और सब को केवल उसी की इबादत करनी चाहिये."

"और जितने रसूल भेजे गए हैं उन सब ने अपनी क़ौम की ज़बान में ही उपदेश दिया है ताकि लोगों के दिलों में किसी तरह का शक न रह जावे."

"यह क़ुरान अरबी में इसलिये उतरा है ताकि मक्का और आस पास के शहरों के लोग आसानी से समझ सकें."

"हम उन सब रसूलों में किसी तरह का फ़रक़ नहीं करते."

इन आयतों से और इसी तरह की और बहुत सी आयतों से साफ़ ज़ाहिर है कि सब धर्मों की बुनियादी .सचाइयां एक हैं. सचाई एक ही सचाई है. उस पर किसी क़ौम, किसी धर्म या किसी रसूल का इजारा नहीं है. ऊपर के रीत रिवाज देश, काल और हालत के अनुसार बदलते रहे हैं और बदलते रहेंगे. हम सब का अल्लाह ईश्वर अलग अलग किताबों, अलग अलग ज़बानों और अलग अलग रसूलों के ज़रिये एक ही हक़ीक़त दुनिया को सिखाता रहा है.

क़ुरान कहता है—"अल्लाह के प्रेम की मज़बूत रस्सी और एक दूसरे से प्रेम तुम सब को मिलाए रखे, कभी एक दूसरे से फटने की न सोचो."

वेद कहता है—"तुम सब के दिल, दिमाग़ और सब का ध्येय एक हो, ताकि तुम सब फूलो फलो. सब सुख से रहो, सब मिलकर खाओ, मिलकर पियो और मिलकर काम करो. साथ साथ चलो, एक आवाज़ से बोलो और सब एक ही सचाई को समझो."

चीनी ग्रन्थ शुकिंग में लिखा है—"अपने सब पड़ोसियों के साथ मेल मिलाप से रहना सीखो, तुम सब भाई भाई हो, सब के साथ प्रेम से रहो."

यही बात और इसी तरह की बातें इनजील में जगह जगह पढ़ने को मिलती हैं.

मशहूर ईसाई शहीद जस्टिन ने कहा है—"जितनी अच्छी बातें कही गई हैं, दुनिया के किसी देश और किसी क़ौम में भी, वह सब हम ईसाइयों की मिलकियत हैं."

एक सूफ़ी कहता है—

"फ़क़त तफावत है नाम ही का
दर अस्ल सब एक ही हैं, यारो !
जो आबे साफ़ी कि मौज में है
उसी का जलवा हुबाब में है."

यानी केवल नामों ही का फ़रक़ है, ऐ यारो ! असल में सब एक हैं, जो साफ़ पानी लहर के अन्दर है उसी की चमक बुलबुले के अन्दर है.

मशहूर सूफ़ी अत्तार ने कहा है—"रूह अक़्ल और इल्म से ज़िन्दगी को जानती है. रूह के लिये ताज़ी और तुरकी का कोई फरक़ नहीं है."

मौलाना रूम ने कहा है—"रूह की दोस्ती अक़्ल से है और इल्म से है. रूह के अन्दर हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, तुरक का कोई फ़रक़ नहीं."

वेदों में बारबार कहा गया है कि आत्मा की कोई जात, सम्प्रदाय, रंग या वर्ण नहीं होता.

सचमुच फ़रक़ केवल नामों का ही है. बात एक ही है. जो अल्लाह है वही ईश्वर है. जो 'अकबर' का मतलब है वही 'परम' या 'महा' का अर्थ है. 'अल्लाहो अकबर' के लफ़्ज़ी मानी हैं 'परमेश्वर' या 'महादेव'. जो मानी 'रहीम' के हैं वही 'शिव' के हैं. जो मानी 'रहमान' के हैं वही 'शंकर' के हैं. 'दास' और 'अब्द' के एक ही अर्थ हैं. 'क़ादिर' और 'भगवान' दोनों के ठीक एक ही मानी हैं. जो 'भगवानदास' का मतलब है ठीक वही

'अब्दुल क़ादिर' का है. पारसी नाम 'अहुरमज्द' और संस्कृत 'असुरमेधा' दोनों का एक ही मतलब है.

दुनिया के धर्मों को क़ायम करने वाले अपने अपने देश और काल की ज़रूरत के मुताबिक़ उसी एक सनातन धर्म, उसी 'दीनुलक़य्यमा' के ख़ास ख़ास पहलुओं पर ज़ोर देते रहे हैं. असली धर्म, विद्या या इरफ़ान, एक ही है. चीज़ वही है, रूप नए नए.

६

मानव धर्म यानी मज़हबे इनसानियत का रास्ता

कुछ लोग दुनिया में ऐसे हैं जिन्हें अलग अलग धर्म मज़हबों और तौर तरीक़ों में एकता महसूस करने और मिलती जुलती बातें ढूँढ निकालने में आनंद आता है. यह लोग इसी एकता को दिल से चिपट जाते हैं. इसके ख़िलाफ़ एक दूसरे के फ़रक़ ढूँढने और उन पर ज़ोर देने से उन्हें तकलीफ होती है. मौलाना रूम ने कहा है—

ख़ुशतर आँ बाशद कि सिर्रे दिलबराँ
गुफ्ता आयद दर हदीसे दीगराँ

यानी ज़ियादा अच्छी बात यही है कि प्रीतम के राज़ न्याज़ यानी उसके प्रेम की बातें दूसरों की कहानियों में कही और सुनी जायँ.

भागवत में कहा गया है—

"सब कवियों और महापुरुष ने उन्हीं एक नित्य सचाइयों को अपने अपने ढंग से बयान किया है. जानने वालों के लिये उनके बयानों में कोई बात एक दूसरे के ख़िलाफ़ नहीं है. वह उन्हें मिला कर समझना जानते हैं."

सुन्दर से सुन्दर चेहरा भी उस समय तक अपनी सुन्दरता को अनुभव नहीं कर सकता जब तक कि अपने को शीशे में न देखे. वेदान्तियों और सूफ़ियों दोनों का कहना है कि ईश्वर अल्लाह

ने अपने अन्दर छिपी हुई बहुरूपता को साक्षात करने के लिये 'शून्य' यानी 'अदम' के आईने में से अपने को देखा. सूफ़ी कहता है कि 'ऐनियते हक़ीक़ी' केवल 'ग़ैरियते एतबारी' के ज़रिये ही समझी जा सकती है. वेदान्ती कहता है कि 'आत्म-अद्वैतसत्ता' यानी आत्मा की एकता का साक्षात्कार 'द्वैत-मिथ्यात्व' यानी ग़ैरियत के झूठेपन के द्वारा ही हो सकता है. दोनों एक ही शब्दों में एक ही बात कह रहे हैं.

एक सूफ़ी कहता है—

.खुद रा ब लिबासे ग़ैर दीदन अजबस्त
कीं बुलअजबी कारे .खुदाई बाशद

यानी दूसरे के कपड़ों में .खुद अपने को देखना कैसी मज़े की बात है. यही करामात है. यही .खुदा की राह है. यही .खुद .खुदाई है.

.खुद अपने विचारों और भावों को भी हम उस समय तक पूरी तरह नहीं समझ पाते जब तक हम उनका अक्स दूसरों के दिलों और दिमाग़ों में न देख लें. यही कारण है कि बोलने वाला चाहता है लोग उसे सुनें, लेखक चाहता है लोग उसकी चीज़ पढ़ें और कलावन्त या चित्रकार चाहता है कि दूसरे उसकी कला या चित्र की तारीफ़ करें.

किसी विचार को एक ही भाषा के परदे से देखना ऐसा ही है जैसा उसे एक आंख से या एक तरफ़ से देखना. उसी विचार को कई भाषाओं के अन्दर से देखना ऐसा है जैसा उसे दोनों आँखों से और सब तरफ़ से जी भर कर देखना.

दो दोस्त अगर दो अलग अलग तौर तरीक़ों और दो अलग अलग कलचरों में पैदा हुए हों और उन्हीं में अलग अलग परवान चढ़े हों, लेकिन दोनों सब कलचरों की बुनियादी एकता और जीवन की भरपूरता को समझ सकने के क़ाबिल हों, तो उनका मिलना जितना दिलचस्प और फल देने वाला होता है उतना दिलचस्प और फल देने वाला ऐसे दो दोस्तों का मिलना

कभी नहीं हो सकता जो एक ही कलचर में पैदा हुए और पले हों. दोनों को मालूम होता है कि हम नए नए देशों की सैर कर रहे हैं, नई नई जगह मेहमांनवाज़ी का आनन्द ले रहे हैं, नए नए सीन, नए नए खानों, नए नए फूलों, नए नए लिबास और और नए नए रीत-रिवाजों का मज़ा ले रहे हैं, जिनमें वह सब सुख सुविधाएं भी हैं जो अपने यहां की चीज़ों में हैं और अनोखापन भी है. तब 'एकोहं बहु स्याम्' (मैं एक हूँ, बहुत हो जाऊं) की ईश्वरी सचाई के कुछ कुछ अर्थ समझ में आते हैं. तब पता चलता है कि उस एकरूप या बेरूप ने अनेक रूप या बहुरूप क्यों धारण किये.

अगर हम अपने किसी प्यारे को केवल एक ही पौशाक में पहचान सकें दूसरी में नहीं तो हम अपने प्यारे को नहीं पहचानते, पौशाक को पहचानते हैं. अपने 'प्रीतम' को पहचानना तब ही कहा जा सकता है जब हम उसे जापान के 'किमोनों' में या चीन के 'मंडारिन कोट' में, पुराने हिन्दुस्तान के 'उत्तरीय' या 'अवशीय' में या नए हिन्दुस्तान की चपकन शेरवानी में, काशमीर के दुशाले में या ईरान के 'अबा' या चोग़े में, अरब के 'बरनोऊ' में या यूरोप के हैट कोट या पेटी कोट में, अमरीकी हब्शियों की परों की पौशाक में या पुराने रोमियों के 'तोगा' में, सब में एक सा पहचान सकें. अगर हम ख़ुद ही बार बार पौशाक बदल कर बार बार शीशे के सामने खड़े हों तो क्या हम अपने चेहरे को या अपने को न पहचान सकेंगे ? हम चाहे संस्कृत में बोलें या अरबी में, हीब्रू में बोलें या यूनानी में, लातीनी में या चीनी में, ज़ेन्द में या जापानी में, पाली में या प्राकृत में, या गुरमुखी में या उन हज़ारों बोलियों में से किसी में भी बोलें जो हम गढ़ चुके हैं या रोज़ गढ़ते और भुलाते रहते हैं, हर हालत में हम अपनी आवाज़ को पहचान लेते हैं और अपना मतलब भी समझ लेते हैं.

इन सब अलग अलग बोलियों, लिबासों और तौर तरीक़ों

में इधर से उधर तक फैली हुई और रमी हुई एक बुनियादी एकता है जो इन सब को सँभाले और मिलाए हुए है. यही वह सचाई है जिसे हमें कभी अपनी याद से मिटने नहीं देना चाहिये.

घड़े, मटके, सुराही, गिलास, लोटे, जग वग़ैरा बरतन कितनी भी अलग अलग शकलों के हों उन सब के अन्दर का पानी एक है. लैम्प, लालटेन, दिये, क़न्दील, फ़ानूस और बल्ब कितनी भी अलग अलग शकलों के हों सब के अन्दर की रोशनी एक है. लकड़ी हो या कोयला, उपले हों या कोई और ईंधन, आग सबके अन्दर एक है. चलते फिरते जानवर अनगिनत हैं और अनगिनत ही उनकी शकलें हैं पर जान सब के अन्दर एक है. इसी तरह मज़हब बहुत से हैं और सबके अलग अलग रीत रिवाज और नाम रूप हैं पर आमलगीर यानी व्यापक मानव धर्म, मज़हबे इनसानियत एक ही है, जो उन सबके अन्दर से झलकता है.

मशहूर अंगरेज़ विद्वान जे० ई० कारपैन्टर ने अपनी किताब 'दि प्लेस आफ़ क्रिशचियानिटी इन दी रिलीजन्स आफ़ दि वर्ल्ड' में चीन की चरचा करते हुए लिखा है—

"चीन में यह रिवाज है कि जब कई देशों या सूबों के लोग एक दूसरे से मिलते हैं तो हर एक दूसरे से पूछता है—'आप किस महान (सबलाइम) धर्म के हैं?' तीन आदमियों में शायद एक कनफ़ूशियन धर्म का मानने वाला है, दूसरा ताओ धर्म का और तीसरा बौद्ध धर्म का. इसके बाद उन तीनों में से हर एक अपने धर्म को छोड़कर किसी दूसरे धर्म की दिल खोलकर तारीफ़ करना शुरू कर देता है. फिर वह तीनों मिलकर यह कहते हैं—'धर्म बहुत से हैं, समझ की बात एक है, हम सब भाई भाई हैं'."

चीन के इस रिवाज को सुनकर एक तरह के आदमी चिल्ला पड़ेंगे—"ढोंगी!" दूसरी तरह के आदमी कह पड़ेंगे—"पुराने

खूसट, पागल, काठ के उल्लू !" एक तीसरी तरह के आदमी, जिनकी तादाद आजकल बदक़िस्मती से शायद बहुत कम है, कहेंगे—"कैसी अच्छी इनसाफ़, समझदारी और शराफ़त की बात है !" अलग अलग विद्याओं के माहिर और अलग अलग कलाओं के कलावन्त जो अपनी अपनी विद्या और अपनी अपनी कला में मगन हैं और उसे समझते हैं, अगर वह सच्चे विद्वान और कलावन्त हैं, नीम मुल्ला या नीम हकीम नहीं हैं, तो एक दूसरे की कलाओं और विद्याओं के अन्दर उसी एक इनसानी होशियारी, लगन और बुद्धि की प्रखरता को देख सकते हैं, उस की क़द्र कर सकते हैं और उसके सामने आदर के साथ सिर झुका सकते हैं.

जापान के एक विद्वान डाकटर इनाज़ो नितोबे ने अपनी किताब 'जापान' में लिखा है कि सातवीं सदी ईसवी के शुरू में जापान में एक बहुत बड़ा सन्त और नेता हुआ है जिसका नाम शोतोकू था. जापान के इतिहास में उसे बड़े से बड़े महात्माओं में गिना जाता है. कहते हैं कि जब वह मरा तो बूढ़े लोग इस तरह रोए कि जिस तरह उनका बच्चा मर गया हो और नौजवान लोग इस तरह रोए कि मानो उनकी मां मर गई हो. उस ज़माने में 'शिनतो' धर्म जापान में पहले से मौजूद था और कनफ़ूशियन धर्म चीन से और बौद्ध धर्म भारत से कोरिया के रस्ते जापान पहुँच चुके थे. इन तीनों मज़हबों के पंडे पुरोहित आपस में लड़ने लगे थे. डर था कि जापान के रहने वालों में झगड़े न बढ़ जायँ. शोतोकू ने उन झगड़ों का फ़ैसला इन शब्दों में किया—

"शिनतो धर्म, धर्म की जड़ और उसका आरम्भ है. ज़मीन और आसमान के पैदा होने के साथ साथ इस धर्म के अंकुर फूटे. यह धर्म आदमी को शुरू का रास्ता सिखाता है. कनफ़ूशियन धर्म, धर्म की शाखें और उसके पत्ते हैं. आदमी की पैदायश के साथ साथ इस धर्म के कल्ले निकले. यह धर्म आदमी को बीच

का रास्ता बताता है. बौद्ध धर्म, धर्म का फूल और उसका फल है. आदमी की मानसिक शक्तियों के बढ़ने के साथ साथ इसने जन्म लिया. यह धर्म आदमी को आख़िरी रास्ता दिखाता है. इसलिये इन तीनों में से किसी को छोड़ना और किसी को लेना या एक को दूसरे से अधिक पसन्द करना या बड़ा बताना केवल हठधर्मी और ख़ुदग़रज़ी है. × × × × बाहर से किसी भी नए धर्म के आने और अपनाए जाने से हमारी क़ौम की मानसिक ऊंचाई एक हाथ बढ़ेगी ही. उससे पहले के धर्मों का अधिकार छिन नहीं जायगा. सच यह है कि हर नया धर्म पुराने धर्म की रोशनी को बढ़ाता और चमकाता है."

एक अंगरेज़ी कवि ने बहुत अच्छा कहा है—"दूसरे का मज़ाक उड़ाना छोटे दिल वालों का काम है. बड़े और उदार दिल वालों के तौर तरीक़े भी बड़े और उदार ही होते हैं."

चीनी बौद्ध विद्वान ल्यू शुन-यान ने लिखा है—

"अलग अलग मज़हबों की तालीम एक दूसरे के ख़िलाफ़ नहीं है. बड़े दिल वाले लोग जानते हैं कि सब मज़हबों के अन्दर एक ही सी सचाइयां हैं. छोटे दिल वाले लोग केवल उनके फ़रक़ों को देखते हैं."

हर ज़माने की पाक आत्माओं के अन्दर एक ही सा ज्ञान उतर कर उन सबको एक ईश्वर के और सब रसूलों के दोस्त बना देता है.

एक सूफ़ी ने कहा है—

तफ़रक़ा दर नफ़्से हैवानी बुवद
रूहे वाहिद रूहे इनसानी बुवद

यानी फ़रक़ या भेदभाव जानवरों या जानवरों के से दिमाग़ वालों के अन्दर होता है, इनसानी रूह वह है जो सब रूहों की एकता को समझती है.

अरबी का शब्द 'इनसान' 'उन्स' से निकला है जिसके

मानी हैं 'प्रेम' या 'हमदरदी'. इनसान वह है जो सब के साथ प्रेम या हमदरदी करे, जो सब इनसानों का दोस्त हो. ऐसे ही संस्कृत शब्द 'आर्य' 'ऋ' धातु से निकला है जिसका अर्थ 'जाना' है. 'आर्य' शब्द का अर्थ बताते हुए एक विद्वान ने कहा है—

निवारणार्थम् अर्तीनाम् अर्तुम् योग्यो भवेत् तु यः
अर्यते सततञ्चार्तैः स आर्य इति कथ्यते.

यानी 'आर्य' उस आदमी को कहना जो दुखियों का दुख दूर करने के क़ाबिल हो और जिसके पास हमेशा दुखी लोग अपने दुख दूर कराने के लिये चल कर आवें.

गीता में बार बार कहा गया है कि "जो सब प्राणियों को एक ही निगाह से देखता है और अपने को सब में और अपने अन्दर सब को देखता है, और जो एक ईश्वर के अन्दर सब को और सब के अन्दर एक ईश्वर को देखता है वही ज्ञानी है और वही देखने वाला है."

यह भी ज़ाहिर है कि किसी भी धर्म, मज़हब के सब रीत रिवाज और उसकी सब बातें एक बराबर ज़रूरी या एक सी अहम नहीं होतीं. सब मज़हबों में यह बात बता दी गई है कि उनमें कुछ बातें ज़ियादा ज़रूरी हैं और कुछ कम, कुछ 'नित्य' हैं और कुछ 'काम्य', कुछ पक्के हुकुम हैं और कुछ समझाने के लिये मिसाल के तौर पर कही गई हैं, कुछ 'मोहकमात' हैं और कुछ 'मुतशाबेहात'. सब मज़हबों में यह भी बताया गया है कि देश, काल और हालत के मुताबिक़ आदमी के यह छोटे छोटे फ़र्ज़ या ऊपरी रीत रिवाज बदलते रहते हैं. महाभारत में लिखा है—

देश-काल-निमित्तानाम् भेदैः धर्मो विभिद्यते.

यानी देश और काल, जगह और वक़्त के फ़रक़ से धर्म अलग अलग होते हैं. यहाँ पर धर्म से मतलब इन्हीं ऊपरी रीत रिवाजों से है.

इनजील में लिखा है—

"हर चीज़ के लिये मौसम होता है और दुनिया की हर

ग़रज़ के लिये एक वक़्त होता है. × × × × पैदा होने का एक वक़्त होता है और मरने का अलग वक़्त होता है, दरख़्त लगाने का एक वक़्त होता है और उखाड़ने का दूसरा वक़्त होता है.....गिराने का एक वक़्त होता है और बनाने का दूसरा वक़्त होता है, कोई वक़्त रोने का होता है और कोई हँसने का, कोई समय चुप रहने का होता है और कोई बोलने का."

मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है. वह कहा करते थे—"इस समय तुम एक ऐसे ज़माने में हो कि जब जो जो हुकुम तुमको दिये जा रहे हैं उनमें से एक दसवां हिस्सा भी अगर तुम छोड़ दोगे तो तुम बरबाद हो जाओगे. इसके बाद एक ज़माना आयगा कि जब जो आदमी जो जो हुकुम इस वक़्त दिये गए हैं उनके दसवें हिस्से पर भी अमल करेगा वह निजात पायगा." (तिरमिज़ी)

मौलाना जलालुद्दीन रूमी ने दीन की 'अस्ल' यानी उसके प्रधान अंश को उसके 'फ़रु' या गौण अंश से अलग करते हुए अपनी मसनवी में लिखा है—

मन ज़ क़ुरां मग़ज़ रा बरदाश्तम्
उस्तख़ां पेशे सगां अन्दाख़्तम्

यानी मैंने क़ुरान में से गूदा गूदा ले लिया है और हड्डियां कुत्तों के सामने फेंक दी हैं.

मौलाना रूम की मसनवी को मुसलमान आलिम 'फ़ारसी ज़बान का क़ुरान' कहते हैं.

गीता में श्री कृष्ण ने साफ़ साफ़ शब्दों में वेदों के रीत रिवाजों और कर्मकांडों पर ज़ोर देने वालों की निन्दा की है और उन्हें 'नासमझ' कहा है.

एक और बात भी है. जिनकी आत्माएं अभी बच्चों की सी हैं उन्हें हम धीरे धीरे कम ज़रूरी चीज़ों से अधिक ज़रूरी चीज़ों की तरफ़ ले जाते हैं. धीरे धीरे उन्हें शब्दों से असल अर्थ की

तरफ़ लाते हैं. इंजील में कहा गया है कि—"बच्चों को दूध दो और बड़े आदमियों को खाना दो." हज़रत मूसा और हज़रत मुहम्मद भी बिना नक़ाब यानी परदे के 'नूरे क़ाहिर' यानी उस 'अल्लाह के चेहरे' को न देख सकते थे. अर्जुन की जब एक पल के लिये आखें खुलीं और उसने 'हज़ारों सूरजों से बढ़कर' चमक वाले उस विराट रूप को देखा तो वह काँप उठा. उस बेअन्त की ज्योति के सामने आदमी की सारी खुदी और उसका सारा वजूद जलकर या पिंघल कर ख़तम हो जाता है.

पुरान में लिखा है—

"मामूली आदमियों के देवता नदियों और तालाबों में होते हैं, उन से ज़ियादा सोचने समझने वालों के देवता आकाश और रोशनी में होते हैं. बच्चों के देवता लकड़ी पत्थर में होते हैं, और बुद्धिमान आदमी ख़ुद अपनी आत्मा के अन्दर अपने भगवान का दर्शन करता है."

हीरा हरेक को नहीं दिखाया जाता. हरेक उसकी क़द्र भी नहीं कर सकता. इसीलिये असली ज्ञान उपमाओं और मिसालों में ही बयान किया जाता है.

हज़रत ईसा ने इनजील में एक जगह कहा है—

"ईश्वर के राज के भेद जानने का तुम्हें मौक़ा दिया गया है. लेकिन उन दूसरे लोगों को यह मौक़ा नहीं दिया गया. जिस किसी के पास चाबी होगी उसी को मौक़ा दिया जायगा, और उसे बहुतायत के साथ मिलेगा. लेकिन जिस किसी के पास चाबी नहीं है या जिससे डर है कि वह चाबी का ग़लत इस्तेमाल करे उस से कभी कभी जो कुछ उसके पास है वह भी ले लिया जाता है."

लेकिन फिर सवाल सामने आता है कि आख़िर धर्म, मज़हब या रिलिजन है क्या चीज़ ? यहाँ हम इस सवाल पर बहुत सरसरी विचार ही कर सकते हैं.

अंगरेज़ी शब्द 'रिलिजन' दो लातीनी शब्दों 'रि' और 'लिजारे' से बना है जिसके मानी हैं 'फिर से बाँधना' यानी जो चीज़ आदमियों को एक दूसरे के साथ और सबको भगवान के साथ हमदरदी और प्रेम की डोर में बाँधे वही 'रिलिजन' है. आदमी का निचले दरजे का स्वभाव, उसका मन, उसका नफ़्स उसे बार बार दूसरे आदमियों से और भगवान से फाड़ता रहता है और 'रिलिजन' उसे बार बार फिर से जोड़ता रहता है. इस एकता की तरफ़ बराबर ध्यान जमाए रखना, खाते पीते चलते फिरते इसका ख़याल रखना यही धर्म का सार है. इसी से आदमी के सब काम ठीक और अच्छे रह सकते हैं. इसी से क़ौमों में वह शक्ति पैदा होती है जिससे बड़ी बड़ी सभ्यताएँ जन्म लेती हैं और क़ायम रहती हैं. इतिहास में जितनी बड़ी बड़ी सभ्यताएँ हुई हैं या हैं हरेक का अपना कोई न कोई ख़ास 'रिलिजन' होता है, कोई न कोई आदर्श होता है जिसको वह मानती और पूजती हैं. हर नए 'रिलिजन' की पैदाइश के साथ साथ यानी धर्म की पुरानी भावना में फिर से जान डाले जाने के साथ साथ लोगों में मिल कर काम करने की इच्छा जागती है और हमेशा इसी से नई सभ्यताओं ने जन्म लिया है.

संस्कृत शब्द 'धर्म' 'धृ' धातु से निकला है जिसके मानी भी 'बाँधे रखना' या 'सँभाले रखना' हैं, जो अर्थ रिलिजन का है वही धर्म का है.

समाज में लोगों को बाँधे रखना या मिलाए रखना तभी हो सकता है जब सब एक दूसरे को कुछ देते रहें और एक दूसरे से लेते रहें. इसी को 'हक़ और फ़र्ज़' या 'अधिकार और कर्तव्य' अंगरेज़ी में 'राइट एन्ड ड्यूटी' का नाम दिया जाता है. एक दूसरे के लिये छोटी छोटी क़ुरबानियाँ या त्याग सब इसमें आ जाते हैं. बिना इस तरह की क़ुरबानी और इस तरह के त्याग के कोई आदमी अपनी अपनी छोटी छोटी निजी ज़रूरतों को भी पूरा नहीं कर सकता. स्वार्थ भी परमार्थ के सहारे ही चल सकता है.

संसार का यही अटल नियम है. गीता में श्री कृष्ण ने कहा है—

"भगवान ने सृष्टि के शुरू में यज्ञ से सब प्राणियों को बना कर उन्हें यह हिदायत कर दी कि इस यज्ञ से ही तुम सब फल फूल सकते हो. यही वह कामधेनु गाय है जो तुम्हारी सारी इच्छाओं को पूरा कर सकती है."

यहाँ 'यज्ञ' का मतलब है एक दूसरे की सेवा, एक दूसरे की मदद और एक दूसरे के लिये त्याग यानी अपनी छोटी सी .खुदी को दूसरों की या समाज की भलाई के लिये क़ुरबान कर देना. इसी तरह समाज भी हर आदमी के लिये यज्ञ यानी क़ुरबानी करता है. इसी लेन देन को इस तरह के क़ानूनों के ज़रिये क़ायदे में लाया जाता है जो क़ानून अधिकारों को कर्तव्यों के साथ और इनसानों को एक दूसरे के साथ बाँधते हैं. हर आदमी को यह समझना होता है कि मैं समाज का एक छोटा-सा हिस्सा हूँ. मेरी आत्मा उसी बड़ी आत्मा का एक ज़र्रा है, ठीक उसी तरह जिस तरह आदमी के जिस्म का हर अंग और हर ज़र्रा सारे जिस्म का अंग होता है. जिस्म की ज़िन्दगी में उसकी ज़िन्दगी और जिस्म की मौत में उसकी मौत होती है. इस एक बात को समझ लेना ही सारे धर्म, मज़हब या रिलिजन का इत्र है. और आगे चल कर यह जान लेना कि यह सब अलग अलग जानें या अलग अलग वजूद उसी एक बड़े वजूद से निकले और बने हैं और आख़िर में उसी में जाकर मिल जायंगे और इस समझ से जो सच्चा बड़प्पन, ऊँचापन, उदारता और रवादारी आदमी में पैदा होती है यही ऊँचे से ऊँचा धर्म, मज़हब या 'रिलिजन' है.

इसलाम शब्द 'सल्म' से निकला है, जिसके मानी हैं 'शान्ति' या 'अमन'. इन मानों में इसलाम शब्द ही इसलाम धर्म का सार है. इसका मतलब है शान्ति के साथ अल्लाह के सामने झुकना यानी अपने को उसके हवाले कर देना, उसकी सब आज्ञाओं को मानना. संस्कृत में इसी को 'प्रणिधान' या

'प्रपत्ति' कहा गया है, यानी .खुदी को मारना और खुदा को उसकी जगह बैठाना. वैदिक असूल है—"न मम किन्तु तव ईहा" यानी 'हे ईश्वर! तेरी इच्छा पूरी हो मेरी नहीं.' इस भाव में डूब कर और उसके अनुसार अमल करके ही आदमी सारी दुनिया के साथ अमन और सुख से रह सकता है.

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि कितने आदमी ईश्वर, .खुदा या परमात्मा की इच्छा को जान सकते हैं. इसके दो जवाब हैं. एक यह कि व्यापक बुनियादी धर्म, साइनसी धर्म या रूहानी साइन्स, मानव धर्म या मज़हबे इनसानियत, जो सब अलग अलग धर्मों का वह हिस्सा है जो सब में पाया जाता है, हमें यह साफ़ बताता है कि ईश्वर की इच्छा क्या है. दूसरा यह कि ख़ास सूरतों में अच्छे और समझदारी के क़ानून जो अच्छे और समझदार लोगों के बनाए हुए हों, ऐसे लोगों के जो ईश्वर को यानी सबके घट घट में रहनेवाली आत्मा को जानते और प्यार करते हों, और जो बेलाग और बेग़रज़ होकर सब का, सब अलग अलग धर्म वालों का, सब जमातों और सब पेशे वालों का भला चाहते हों, और भला करने की पूरी कोशिश करते हों, जिन पर सबको भरोसा हो—ऐसे लोगों के बनाए हुए क़ानून ही जहाँ तक मुमकिन हो सकता है ईश्वर की इच्छा के अनुसार हो सकते हैं. ऐसे लोग ही अल्लाह के नज़दीक हैं और उसके बेटे कहलाने के हक़दार हैं. वह जनता या समाज की व्यापक आत्मा, 'रूहे कुल' के नुमाइन्दे होते हैं. ऐसे लोगों के बनाए हुए क़ानूनों से ही जनता का भला हो सकता है. ऐसे लोगों की हकूमत ही 'राम राज' या 'हकूमते इलाही' कहला सकती है.

'क्रिश्चियैनिटी' शब्द का भी असल मतलब वही है जो धर्म का. 'क्रिस्टास' का अर्थ है 'ईश्वरी ज्ञान में नहाया हुआ' यानी वह जो अपनी छोटी .खुदी को मिटा कर बड़ी .खुदी यानी समाज की आत्मा या परमात्मा को उसकी जगह बैठा चुका हो.

'वैदिक धर्म' का अर्थ है ज्ञान का धर्म, समझदारी का धर्म. 'सनातन धर्म' का अर्थ है हमेशा का धर्म. 'मानव धर्म' का अर्थ है सब इनसानों का धर्म जिसे आजकल योरप में 'ह्यूमनिज्म' कहते हैं, 'बौद्ध धर्म' का अर्थ है बुद्धि यानी अक़्ल का धर्म. 'आर्य धर्म' का अर्थ है भले लोगों का धर्म. मज़हब का अर्थ है रास्ता, यानी पथ या पंथ, नेकी का रास्ता, सुख सौख्य का रास्ता.

इस रास्ते पर चलने के लिये रोशनी हर आदमी को अपने अन्दर से ही मिल सकती है. भागवत में लिखा है—

"रोशनी आदमी के अपने अन्दर ही है और कहीं नहीं, और वह रोशनी सब प्राणियों में एक बराबर है."

हज़रत ईसा ने कहा है—"इस बात को समझ लेना ही कि सब की आत्मा ही मेरी आत्मा है सचाई को जानना है, अपनी तरह सबसे प्यार करना ही ठीक ज़िन्दगी है और सबके लिये वही करना जो आदमी अपने लिये चाहता है यही धर्म का रास्ता है."

जापान के पुराने धर्म का नाम 'शिन्तो' है. 'शिन्तो' का अर्थ भी सब 'आत्माओं का रास्ता' है. लाओत्ज़े ने चीन के धर्म का नाम 'ताओ' रखा. 'ताओ' का अर्थ भी रास्ता है. चीनी शब्द 'ताओ' के लगभग वह सब अर्थ होते हैं जो संस्कृत शब्द 'धर्म' के. ताओ धर्म और वैदिक धर्म दोनों के जानने वालों की राय है कि दोनों में क़दम क़दम पर एक दूसरे के साथ गहरी समानता है. 'ताओ' शब्द 'ब्रह्म' शब्द के भी अर्थ में आता है.

हम इनमें से किसी रास्ते को भी समझें, परखें और उस पर चलें, नतीजा हर सूरत में हमें एक ही मिलेगा, यानी यह कि धर्म का रास्ता सुख शान्ति का रास्ता है, दुख, मौत और डर से छुटकारे का रास्ता है. वह रास्ता 'तर्के खुदी' या 'अस्मिता

त्याग' यानी अपनी छोटी ख़ुदी को समाज की और दुनिया की बेअन्त विशाल आत्मा में लीन या फ़ना कर देने का रास्ता है.

दुनिया के सब धर्मों में तीन अलग अलग मार्ग या तरीक़े मिलते हैं. वैदिक धर्म में इन्हें 'ज्ञान' मार्ग, 'भक्ति' मार्ग और 'कर्म' मार्ग कहा गया है. इसलाम में इन्हीं को 'मारफ़त', तरीक़त' और 'शरीअत' कहा जाता है. यही तीन रास्ते ईसाई मज़हब में भी मिलते हैं. बौद्ध धर्म में इन्हीं तीन को 'सम्यक् दृष्टि', 'सम्यक् संकल्प' और 'सम्यक् व्यायाम' कहा गया है. जैन तत्त्वार्थ सूत्र में भी इन्हीं तीनों का ज़िकर है. सूफ़ी किताब 'गुलशने राज़' में इन तीनों रास्तों को खूब अच्छी तरह समझाया गया है और यह भी कहा गया है कि ये तीनों रास्ते— "बुअद दायम मियाने कुफ़्रो ईमाँ" यानी कुफ़्र और इसलाम दोनों में यह एक बराबर हैं.

ऐसे ही महाभारत में लिखा है—

"अपनी ज़बान को, अपने मन को और अपने शरीर को, जो इन तीनों को अपनी बुद्धि के बस में रख सके वही त्रिदंडी है."

बौद्ध ग्रंथ धम्मपद में भी 'भिक्षु' की ठीक यही तारीफ़ की गई है और इसी को 'साधूपन' कहा गया है. आदमी के स्वभाव के ये तीन पहलू साफ़ हैं—ज्ञान, इच्छा और क्रिया यानी इल्म, ख़ाहिश और अमल. इसी लिये इन तीन के मुताबिक़ तीन रास्ते या रास्ते के तीन पहलू सब धर्मों में बताए गए हैं— ठीक जानना, ठीक चाहना और ठीक अमल करना. पारसी धर्म में इसी को ज़रा बदल कर 'हुम्त', 'हुख़्त', 'हुवर्श्त' नाम दिये गए हैं, जिनके मानी हैं—ठीक सोचना, ठीक बोलना और ठीक बरतना. उपनिषदों में भी यह ख़याल बार बार आता है. यही बात महाभारत में भी बार बार दोहराई गई है. ज़ेन्दअवस्ता में लिखा है—

"अहुरमज़्द यानी ईश्वर कहता है कि जो लोग भलाई

सोचते हैं, भलाई कहते हैं और भलाई करते हैं उनके मैं साथ रहता हूँ और उनके नहीं जो बुराई सोचते हैं, बुराई कहते हैं और बुराई करते हैं."

यही तीन पहलू दुनिया की हर सभ्यता के होते हैं. एक साइन्स, ज्ञान और विद्या का पहलू. दूसरा लोगों की इच्छाओं, उनके आदर्शों, उनके शौक़ और भावों का पहलू, और तीसरे उनके रहन सहन, बरताव और काम काज का पहलू. किसी भी सभ्यता या तहज़ीब का ज्ञान का भंडार जितना बड़ा, जितना तरह तरह का और जितना ठीक और सच्चा होगा, वहाँ के लोगों के भाव, जज़बात, शौक़ और आदर्श जितने ऊँचे, जितने सुन्दर, जितने बेलाग और जितने नेक होंगे, उनका रहन सहन जितना पाक, जितना इनसानियत के असूलों पर क़ायम और उदार और रवादार होगा, उतनी ही वह सभ्यता या वह तहज़ीब बड़ी और ऊँची समझी जायगी. इस तरह हर तहज़ीब का बड़प्पन धर्म या मज़हब के इन तीनों असूलों में ठीक ठीक तरक़्क़ी करने और उन पर ठीक ठीक अमल करने पर है.

दुनिया के उस्तादों, अध्यापकों और तालीम देने वालों का ख़ास फ़र्ज़ है कि वह हमेशा इस बात का ख़याल रखें कि उनके विद्यार्थियों का दिमाग़. उनका दिल और उनका जिस्म तीनों ठीक ठीक और एक साथ मिल कर चलें और बढ़ें. वह तालीम ही अच्छी तालीम हो सकती है जो विद्यार्थी के दिमाग़ को सच्चे और काम आने वाले ज्ञान से भर दे, उसके दिल को ऊँचा रखे और उसे दिल पर क़ाबू करना सिखावे और उसके रहन सहन को नेक, परोपकारी और मेहनती बनावे जिससे दिमाग़, दिल और जिस्म तीनों सुन्दर दिखाई दें. इसके लिये साइन्स की तालीम, मानव धर्म यानी मज़हबे इनसानियत की तालीम और अच्छी दस्तकारियों और पेशे की तालीम तीनों जरूरी हैं.

आजकल योरप के बढ़े चढ़े देशो में यह बात बड़ी अच्छी होने लगी है कि किस विद्यार्थी में कितने दरजे की और किस

तरह की समझ है, इसे वह खूब तजरबे कर कर के पता लगाते हैं. लेकिन अभी शायद उनका ध्यान इस तरफ़ नहीं गया कि हर विद्यार्थी के स्वभाव को भी समझने की कोशिश करें, यानी यह कि विद्यार्थी में ज्ञान को बढ़ाने का पहलू ज़ियादा ज़ोर का है या इच्छा का पहलू ज़ियादा ज़ोरदार है या अमल का पहलू ज़ियादा चमकता हुआ है. इस चीज़ के बग़ैर समझे हर लड़के या लड़की को समाज में उसकी ठीक जगह दे सकना नामुमकिन है. इसके बिना न वह फूल की तरह पूरा खिल सकेगा और न समाज को उससे पूरा फ़ायदा पहुँच सकेगा. जिस तरह हकीम या वैद्य का काम है कि वह अपने रोगी के मिज़ाज को समझ कर यह तय करे कि रोगी के अन्दर कफ़, वात या पित्त में से किस को बढ़ाने और किस को दबाने की ज़रूरत है, वैसे ही धर्म और गुरुओं और मज़हबी लीडरों का यह फ़र्ज़ है कि वह अपने लोगों की अलग अलग तबियतों को समझ कर उन्हें ज्ञान, भक्ति या कर्म की तरफ़ लगावें और दुनिया भर के तालीम देने वालों का फ़र्ज़ है कि वह लड़कों और लड़कियों के अलग अलग स्वभाव को समझ कर उन्हें इनसानी समाज का ज्ञान बढ़ाने या कला और कलचर को तरक़्क़ी देने या अपने अमल से पेशों और दस्तकारियों को बढ़ाने और तरक़्क़ी देने की तरफ़ लगावें. यही मानव धर्म यानी मज़हबे इनसानियत का रास्ता है.

७

ज्ञान यानी मारफ़त का रास्ता

'ज्ञान' का विषय बहुत ही कठिन और रूखा विषय है. हिन्दू धर्म की किताबों में जिसे ज्ञान कांड कहा जाता है उसी को सूफ़ी किताबों में मारफत, हक़ायक़, दक़ायक़, और अक़ायद के नामों से बयान किया जाता है. दीन धर्म का यह एक ऊंचा और ज़रूरी पहलू है. ज्ञान का पहला असूल यह है कि असल हक़ीक़त एक है. सच एक है, झूठ बहुत से होते हैं. रास्ती एक है ग़लतियां अनगिनत हैं. ठीक उसी तरह जिस तरह दो नुक़्तों के बीच सीधी लकीर एक ही हो सकती है. वही दोनों के बीच का सबसे छोटा फासला है. उन्हीं दोनों नुक़तों के बीच टेढ़ी मेढ़ी लकीरें बेशुमार खिंच सकती हैं. आदमी के इल्म, उसकी समझ, उसके भावों यानी जज़बात और उसके चलन के लिये ठीक और सीधी राह एक ही है, और वह राह एक बुनियादी रूहानी सचाई का नतीजा है. उक़लैदस (रेखा गणित) की सारी विद्या दो तीन बुनियादी परिभाषाओं के अन्दर बन्द है. संस्कृत की एक कहावत है—"सर्व त्रैराशिकम् पाति" यानी सारा इल्म हिसाब एक 'रूल आफ़ थ्री' के अन्दर आ जाता है. इसी तरह सारा दीन धर्म. सारा फलसफा और सारी साइन्स, ख़ुदा, क़ुदरत और इनसान इन तीन से सम्बन्ध रखती है, इनमें भी क़ुदरत और इनसान दोनों का वजूद ख़ुदा के वजूद में शामिल है.

हक़ यह है कि असल वजूद भी एक ही है, और वह उस पाक ज़ात ईश्वर अल्लाह का वजूद है. सब सचाइयों की बुनियादी सचाई यह है कि इनसान की आत्मा ईश्वर ही का एक अंश है. क़ुदरत भी अल्लाह ही की क़ुदरत है. यह सारी सृष्टि उसी अनन्त और सदा यकसाँ रहने वाले परमात्मा का नित्य बदलता हुआ लिबास है. इस ज़िन्दगी का असल मतलब यही है कि ईश्वर इनसान के अन्दर अपने को भूला हुआ है और इनसान को चाहिये कि फिर से ईश्वर के अन्दर अपने आप को पहचाने. आत्मा यानी रूह माद्दापरस्ती में फँस कर प्रवृत्ति यानी 'क़ौसे नजूल' के रास्ते नीचे उतरती जा रही है. उसे निवृत्ति यानी 'क़ौसे उरूज' के रास्ते फिर से ऊपर उठना है, अपने आप को पहचानना है और जिस ईश्वर अल्लाह से वह निकली थी उसी में फिर फ़ना यानी लीन हो जाना है. प्रवृत्ति का रास्ता नफ़्स परस्ती यानी 'इन्द्री सुख' का रास्ता है. निवृत्ति का रास्ता नफ़्स पर यानी इन्द्रियों पर क़ाबू हासिल करने का रास्ता है. परम आत्मा, रूहे कुल यानी अल्लाह ने अपने को महदूद करके अपनी ऐनियते हक़ीक़ी यानी शुद्ध अद्वैत रूप के ऊपर ग़ैरियते एतबारी यानी मिथ्या इतरता का जामा पहर लिया. .खुदाय मुरक्कब, परम आत्मा यानी ब्रह्म ने मायावी कामसंकल्प यानी शयूनात के ज़रिये जीव आत्मा यानी खुदाए मोअय्यन की शकल अख़्तियार की. अब रूह यानी जीव आत्मा को फिर से अपने विराट आलमगीर रूप को जानना और पहचानना है. इसी एक सचाई को सब मज़हबों ने तरह तरह से बयान किया है. यह सचाई सब से सीधी लेकिन सब से मुशकिल सचाई है. वजह यह है कि हम सब .खुदी और ग़ैरियत की भूलभूलैयाँ में इस बुरी तरह फंसे हुए हैं कि वहदानियत यानी अद्वैत की बेलाग सचाई को हम समझना भी नहीं चाहते. एक सूफ़ी कहता है.

चीस्त दुनिया ? अज़ .खुदा ग़ाफ़िल .शुदन
नै कि माश.ओ-नुक़रा-ओ-फ़रज़न्द-ओ-ज़न

न गुम शुद कि रूयश ज़ दुनिया बताफ़्त
कि गुमगशतए ख़ेशरा बाज़ याफ़्त.

यानी दुनिया क्या है ? रोज़ी, चांदी, बेटा या बीवी दुनिया नहीं हैं. ख़ुदा से ग़ाफिल होना दुनिया है. जिस किसी ने दुनिया से अपना मुंह मोड़ा वह फिर मिट नहीं सकता, क्योंकि वह अपनी भूली हुई असलियत को फिर से जान जाता है.

न कोई परदा है उसके दर पर
न रूए रोशन नक़ाब में है,
तू आप अपनी ख़ुदी से, ऐ दिल !
हिजाब में है हिजाब में है.

चीनी महात्मा लाओ-त्से ने अपनी किताब 'ताओ-ते-किंग' में लिखा है—

"उस अनन्त को जान लेना ही असली ज्ञान है, उसे न जानने से नफ़्स यानी इन्द्रियाँ ज़ोर करती हैं और यही बुराई है."

ठीक यही बात श्री कृष्ण ने बार बार गीता में कही है. इंजील में लिखा है—

"तुम ईश्वर और दुनिया दोनों की सेवा नहीं कर सकते. असली ज़िन्दगी की तरफ जाने वाला रास्ता तंग और सीधा है. बहुत कम हैं जिन्हें वह रास्ता मिलता है और जो उस रास्ते पर आगे बढ़ते हैं उनमें से भी कम लिये जाते हैं."

यही बात एक सूफ़ी ने इस तरह कही है—

हम ख़ुदा ख़ाही व हम दुनिया ए दूं
ईं ख़याल अस्त-ओ-महाल अस्त-ओ-जनूं

यानी तू ख़ुदा को भी पाना चाहता है और इस ज़लील दुनिया को भी हासिल करना चाहता है. यह सिर्फ़ तेरा ख़याल है. यह नामुमकिन और पागलपन है.

उपनिषद में लिखा है—

"बुद्धिमान आदमी जानते हैं कि वासनाओं यानी ख़ाहिशों के ज़रिये आदमी का मन संसार में फंसा रहता है. इन ख़ाहिशों से आज़ाद हो कर ही आत्मा आज़ाद हो सकती है."

इंजील में लिखा है—

"अगर तुम .ख़ुदा को पा जाओ और उसके नेकी के राज को हासिल कर लो तो बाक़ी सब चीज़ें तुम्हें अपने आप मिल जायँगी."

उपनिषद में लिखा है—

"हक़ यानी सचाई को जान कर आदमी जो चीज़ चाहेगा हासिल कर लेगा."

सूफ़ी कहता है—

.ख़ुदा को पाया तो क्या न पाया,
सभी मिला जो मिला .ख़ुदा है.
ज़रा तो सोचे कभी भी ख़ालिक़
से उसकी ख़िलक़त हुई जुदा है.
सभी तो मैं हूँ, सभी तो मेरा
हमेशा आती यही निदा है,
तु ही है ख़ालिक़, तुझी में ख़िलक़त
ख़याले ख़ायल तु ही .ख़ुदा है.

ख़ालिक़ का अर्थ सृष्टिकर्ता है और ख़िलक़त का सृष्टि, निदा आवाज़ को कहते हैं और ख़याले ख़ायल का अर्थ है विचारक का विचार.

जिस तरह डाक्टरी के मामले में उसी तरह दीन धर्म के मामले में, बड़े बड़े डाक्टरों और बड़ी बड़ी दवाओं से लोग .ख़ुश रहते हैं. तनदुरुस्ती अच्छी रखने के लिये लोगों को साफ़ हवा, साफ़ पानी और साफ़ सादे खाने की सलाह दी जावे तो उसका उनके दिल पर उतना असर नहीं होता. हालांकि बड़ी बड़ी दवाएँ अधिक से अधिक यह कर सकती हैं कि बीमारी को अच्छा

कर दें. पर अगर नुक़सान कर जाएं तो और नई बीमारियाँ पैदा कर देती हैं. जब कि साफ़ हवा, पानी और सादा खाना तनदुरुस्ती को भी ठीक रखता है और बीमारी को भी आदमी से दूर रखता है. मगर आज कल की बनावटी ज़िन्दगी में साफ़ हवा, साफ़ पानी और साफ़ खाने का मिलना भी मुशकिल है. यही हाल हमारा दीन धर्म के मामले में हो रहा है.

सब मज़हब यही तालीम देते हैं कि इनसान का वजूद .ख़ुदा से है. लेकिन अपने अन्दर के .ख़ुदा को पहचानने से पहले तरह तरह के ज्ञान की ज़रूरत है. हज़रत मोहम्मद ने कहा है—"जो अपनी ज़िन्दगी इल्म के हासिल करने में लगा देता है वह कभी नहीं मरता." हज़रत अली ने कहा है—"फलसफ़ा मोमिनों की खोई हुई भेड़ है, उसे फिर से ले लेना चाहिये. अगर वह मुनकिरों या काफ़िरों से मिले तो भी ले लेनी चाहिये." शेख़ सादी ने कहा है कि "बिना इल्म के आदमी .ख़ुदा को नहीं पहचान सकता." वेदान्त की भी यही तालीम है.

इंजील में लिखा है—

"देखो ईश्वर का राज तुम्हारे अन्दर है."

"क्या तुम नहीं जानते कि तुम ही ईश्वर का मन्दिर हो और ईश्वर की आत्मा तुम में रहती है."

"वह ईश्वर हम में से किसी से दूर नहीं है. क्योंकि हम उसी में रहते हैं, उसी में चलते फिरते हैं और उसी में जीते हैं.....ईश्वर एक है.....उसकी आत्मा आदमी के अन्दर काम करती है.....एक ईश्वर सब का पैदा करने वाला है जो सब से ऊपर है और तुम सब में है."

गीता में श्री कृष्ण ने कहा है—"ऐ अर्जुन ! मेरे सिवा और कोई चीज़ असल में है ही नहीं."

वेदों के सबसे आख़ीर के हिस्सों को उपनिषद कहते हैं. 'उपनिषद' शब्द का अर्थ है 'गुरु के बिल्कुल पास बैठना.'

उपनिषद वह ज्ञान है जो गुरु या पीर सच्चे खोजी को धीरे से उसके कान में बताता था. इस तरह का ज्ञान जब तक धीरे से न दिया जाय और पूरे चित्त से और भक्ति भाव से न सुना जाय दिल में नहीं उतर सकता और न आत्मा को ऊँचा ले जा सकता है. यहूदी, ईसाई, मुसलिम और हिन्दू हर मज़हब में और हर देश में इस तरह के खोजी लोगों के गिरोह रहे हैं. यहूदियों में ऐस्सेनीज़ (संस्कृत संन्यासी) इसी तरह का एक गिरोह था. ईश्वर, अल्लाह और आत्मारूह की बातें केवल सच्चे खोजी, नम्र, दीन, शुद्ध हृदय, शुद्ध चरित्र के और खुले दिल के लोग ही समझ सकते हैं. झगड़ालू, घमन्डी या हलके दिल के नहीं. जिस तरह मकान की खिड़कियां बन्द होने पर उसमें सूरज की रोशनी नहीं आ सकती वैसे ही दिल और दिमाग़ के बन्द होने पर आत्मज्ञान (मारफ़ते इलाही) हासिल नहीं हो सकता.

क़ुरान में लिखा है—

"वफ़ी अनफ़ुसेकुम अफ़लातबसेरून"

यानी मैं (अल्लाह) तुम्हारे अन्दर, तुम्हारे सांस के अन्दर मौजूद हूँ, लेकिन तुम नहीं देख पाते.

सूफ़ी कहता है—

बावजूदे कि वह मुज़दा तेरा 'नहनो अक़रब'
सफ़े मसहफ़ पै लिखा था मुझे मालूम न था.

अर्थ—अगरचे क़ुरान के पन्ने पर तेरी बाबत यह .खुशख़बरी लिखी हुई थी कि तू इनसान की गरदन की रग से भी उसके ज़ियादा पास है, फिर भी मुझे तेरा पता न था, यानी मेरी .खुदी ने मुझे अन्धा कर रखा था.

इसलाम का कलमा यानी महावाक्य 'लाइलाह इल्लल्लाह'—सिवाय उस एक .खुदा के और कोई .खुदा नहीं है—अल्लाह को अपने से अलग समझ कर कहा गया है. सूफ़ी कहता है कि यह केवल उनके लिये है जो अभी अन्दर के ज्ञान को नहीं पा सके.

भागवत में भगवान कहते हैं कि—"मेरे सिवा और कोई दूसरा नहीं है, यह सचाई अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये."

यही बात अल्लाह ने क़ुरान में कही है—"लाइलाह इल्ला अना." यही बात गीता में बार बार साफ़ साफ शब्दों में दोहराई गई है.

सब पैग़म्बरों, ऋषियों, नबियों, रसूलों, तीर्थंकरों और अवतारों ने यही उपदेश दिया है.

यह उपदेश सच्चे खोजियों, अहलेदिल, भिक्षुओं, फ़क़ीरों और दरवेशों, दीक्षितों और मिस्कीनों को दिया जाता है. यही 'इल्म सीना' यानी पराविद्या है, दूसरे सब इल्म 'इल्मसफ़ीना' यानी अपरा विद्या हैं—यह इल्मसफ़ीना नीचे का ज्ञान है जो अहले दौल, श्रावकों, उपासकों और मामूली गृहस्थों के लिये है, यानी उनके लिये जो दुनिया की खोज में हैं.

जिस तरह ईसाई किताबों में कहीं कहीं 'प्राफ़ेट' यानी नबियों और 'प्रीस्ट' यानी पुरोहितों में फ़रक़ किया गया है, उसी तरह इसलाम में 'सूफ़ी औलियाओं' और 'शरा (कर्मकांडी) के पाबन्द मुल्लाओं' में फ़रक़ किया गया है. ऐसे ही वैदिक धर्म में ज्ञानी भक्तों और कर्मकांडियों में. हज़रत ईसा ने इस तरह के रस्म परस्तों को 'क़ानूनी' कह कर उन्हें इन शब्दों में डांटा है—"ऐ क़ानूनियों, तुम पर अफ़सोस है ! तुमने ज्ञान की कुंजी लेली है, पर ज्ञान का दरवाज़ा खोल कर तुम उसके अन्दर नही गए, और जो अन्दर जाना चाहते थे उन्हें भी तुमने रोक दिया." बुद्ध ने सच्चे ब्राह्मण में और झूटे नाम के ब्राह्मण में फ़रक़ किया. इसी से लोग उनके ख़िलाफ़ हो गए. असली ज्ञान की कुंजी आदमी .खुद ही अपने अन्दर घुमा सकता है.

मोहम्मद साहब कहते थे—"मैं इल्म रूहानी का शहर हूँ और अली उस शहर में जाने का दरवाज़ा है."

मुसलिम सूफ़ियों में यह बात मशहूर है कि सब से पहले हज़रत अली ने कुछ चुने हुए लोगों को, जो इस बात के हक़दार थे, इल्म रूहानी यानी तसव्वुफ़ की तालीम दी. यह इल्म रूहानी दुनिया के शुरू से चला आता है. इसी को दिव्य ज्ञान या थियासोफ़ी कहते हैं. यह रूह की साइन्स है. इसे रूहानी साइन्स भी कहा जा सकता है. इसी को गुप्त विद्या या इल्म सीना कहते हैं. अंगरेज़ी में इसी को 'डाक्टरिन आफ़ दी हार्ट' कहते हैं. दरअसल यह इल्म 'सीना ब सीना' यानी दिल से दिल को ही पहुँचता रहा है और सिर्फ़ फ़क़ीरों और ज्ञानियों ने इसे जाना है. आम लोग न इसे समझ सकते हैं और न उनके लिये यह फ़ायदे का हो सकता है. आम लोगों से इसकी बात चीत जितनी हो सकती है वह क़िस्से कहानियों, उपमाओं, इस्तआरों और मुतशाबेहात के ज़रिये ही हो सकती है. उपनिषद कहते हैं कि यह चीजें ज्ञान की आँखों से ही देखी जा सकती हैं.

सचमुच परम आत्मा सूरज की किरनों की तरह साफ़ और रौशन है. वह हर वक़्त हमारे पास है, हमारे अन्दर है, वही हमारी आत्मा है, फिर भी हम उसे नहीं देख पाते.

सूफ़ी कहता है—

ग़ायब जो हो .ख़ुदा से आलम है उसको हू का
जिस में अनानियत है मौक़ा नहीं है तू का.

यानी जिसका दिल .ख़ुदा से दूर है वह सिर्फ़ यही कह सकता है कि '.ख़ुदा है' लेकिन जिसने उस दिलबर को अपने अन्दर पा लिया है वह फिर .ख़ुदा को 'वह' या 'तू' से याद नहीं कर सकता. वह फिर यही कहेगा—

ज़ाहिदे गुमराह के मैं किस तरह हमराह हूँ
वह कहे अल्लाह है और मैं कहूँ अल्लाह हूँ.

उपनिषद में लिखा है—

"जो यह समझता है कि ब्रह्म है उसका ज्ञान परोक्ष यानी आँखों से ओझल है, और जो जानता है कि मैं ब्रह्म हूँ उसका ज्ञान अपरोक्ष है यानी उसने सचमुच .ख़ुदा को देख लिया है."

ज़रथुस्त्र (ज़रतुश्त) की एक गाथा में कहा गया है :

"मज़दओ सखारे मैरस्तो" यानी सिर्फ़ उस एक अल्लाह ताला की ही इबादत करनी चाहिये.

उपनिषदों में कहा गया है—"केवल आत्मा की ही बात सुननी चाहिये. उसी पर सोचना चाहिये, उसी पर ग़ौर करना चाहिये और कोई न जानने की चीज़ है और न जानने वाला है."

हमने ऊपर परोक्ष ज्ञान और अपरोक्ष ज्ञान की बात कही है. एक अरब फ़िलासफ़र का कहना है—"इल्म दो क़िस्म का है. एक सुना हुआ और दूसरा वह जिसे दिल के अन्दर महसूस किया गया हो. सुने हुए इल्म से उस वक़्त तक कोई नतीजा पैदा नहीं हो सकता जब तक अपने अन्दर के किसी तजरबे के ज़रिये रूह ने उसे न जांच लिया हो."

एक और सूफ़ी का कहना है—"ख़ुदा ने हर आदमी की जान में एक कसौटी रख दी है जिस पर कस कर वह पूरे यक़ीन के साथ सचाई को झूठ से अलग कर सकता है."

चीन की किताब 'सु-किंग' में लिखा है कि—"यह कसौटी ईश्वर ने हर छोटे से छोटे आदमी को दे रखी है." इसी को 'कान्शन्स', 'ज़मीर' या 'अन्तरात्मा' कहा जाता है. यही आदमी के अन्दर अल्लाह की आवाज़ है. हिन्दू किताबों में इसे तरह तरह से बयान किया गया है. मोहम्मद साहब की एक हदीस है—"इस्तिफ़तह क़लबक" यानी जब कभी तुम्हें शक हो तो अपने दिल से पूछो.

चीनी किताब 'वांग यांग मिंग' में लिखा है—"हर दिल के अन्दर एक 'सजिन' यानी जानने वाला रहता है. पर आदमी उस पर पूरी तरह भरोसा नहीं करता. इसी लिये उसकी आवाज़ अन्दर ही अन्दर दब जाती है."

संस्कृत में जिसे परोक्ष ज्ञान कहा गया है उसी को शब्द ज्ञान या आगम भी कहते हैं और जिसे अपरोक्ष ज्ञान कहा गया है उसे प्रत्यक्ष ज्ञान भी कहते हैं. अरबी में इन्हें मतबूअ और मसमूअ या माक़ूलात और मनक़ूलात भी कहते हैं.

संस्कृत में जिसे साधारण ज्ञान और योगज ज्ञान कहते हैं उस ही को अरबी में इल्म लदुन्नी और इल्म कसबी कहते हैं. योगज ज्ञान को समाधिज ज्ञान या प्रतिभा ज्ञान भी कहते हैं. ऐसे ही इल्म लदुन्नी को इल्म वजदानी या इलहामी, या कशफ़ा या इशराक़ी भी कहते हैं और इल्म कसबी को इल्म इकत्साबी या इस्तदलाली भी कहा जाता है. इसलाम में 'अनल हक़' या 'हक़ तुई' का जो मतलब है वही संस्कृत में 'अहं ब्रह्म' और 'तत्त्वमसि' का है. अरबी की कहावत है "क़लबुल इनसान बैतुर्रहमान" इसका ठीक संस्कृत तरजुमा है "आत्मा अन्तर् हृदये." इंजील में भी कहा गया है—"तुम लोग भगवान का मन्दिर हो." ख़लीफ़ा अली कहा करते थे—"ईमान वाले आदमी का दिल अल्लाह का तख़्त है." हज़रत ईसा ने कहा है—"मैं और मेरा बाप एक हैं." ज़रथुस्ती धर्म में कहा गया है—"नेस्त एज़द मगर यज़दाँ" जिसके लफ़्ज़ी मानी हैं "लाइलाह इल्लल्लाह." बौद्ध धर्म और जैन धर्म में भी ठीक यही तालीम दी गई है. जो लोग फ़रक़ देख देख कर ख़ुश नहीं होते उन्हें इस बारे में बौद्ध मज़हब और वेदान्त दोनों की तालीम एक ही दिखाई देगी. अपने एक 'उदान' में समाधि से उठने के बाद महात्मा बुद्ध ने कहा था—"जो आदमी कामयाबी के साथ ब्रह्मचर्य के व्रत को पूरा कर लेता है और जिसे पूरा ज्ञान हासिल हो गया है वही ब्रह्म की बाबत दूसरे उन लोगों से बात करने का हक़ रखता है जो उस रास्ते पर चलना चाहते हैं. वही आदमी अपने को ब्राह्मण कह सकता है." महात्मा बुद्ध के यह शब्द बिल्कुल उपनिषदों के शब्दों से मिलते हैं. केवल उनकी भाषा संस्कृत की जगह पाली है.

बुद्ध से बहुत पहले इसी तरह की रूहानी हालत में अष्टावक्र ने कहा था—"अहो अहम् ! नमो मह्यम् !" इसके बहुत दिनों बाद बायज़ीद बुस्तामी ने कहा था—"सुबहानी व आज़म शानी." दोनों का मतलब एक ही है यानी यह कि मैं कैसी अजीब ग़रीब चीज़ हूँ, मेरी शान कितनी बड़ी है. उपनिषदों में बार बार कहा गया है—"अहं ब्रह्म अस्मि" यानी मैं ही ब्रह्म हूँ, "यस्त्वमसि सो ऽहमस्मि" यानी जो तू है वही मैं हूँ. "इदम् सर्वमसि, अहम् एव इदम् सर्वम्" यानी यह सब कुछ तू ही है और मैं ही यह सब कुछ हूँ.

हिन्दू वेदान्त और मुसलिम तसव्वुफ़ दोनों की बातें और दोनों के विचार एक दूसरे से इतने मिलते हैं कि अगर उन दोनों का किसी तीसरी भाषा में तरजुमा किया जावे तो उनमें किसी तरह का भी फ़रक़ दिखाई नहीं दे सकता.

शिव पुराण में लिखा है—"योगी लोग शिव यानी ईश्वर को अपनी आत्मा के अन्दर देखते हैं, पत्थर या मिट्टी की मूर्तियों के अन्दर नहीं. और जो लोग उस ईश्वर को अपने अन्दर नहीं देख पाते वह उसे तीर्थों में ढूँढते फिरते हैं."

शम्स तबरेज़ी ने कहा है—

ऐ क़ौम ब हज रफ़्ता कुजाएद कुजाएद,
माशूक़ हमीं जास्त बेयाएद बेयाएद !
माशूक़े तो हमसाया तो दीवार ब दीवार,
दर बादिया सर गश्ता चराएद चराएद !
आनाँ कि तलबगारे .खुदाएद .खुदाएद,
हाजत ब तलब नेस्त .शुमाएद .शुमाएद.
चीज़े कि न गर्देद गुम अज़ बहर च जोएद
कस गैरे शुमानेस्त कुजाएद कुजाएद.

अर्थात्—"ऐ लोगो ! तुम जो हज को जा रहे हो, कहाँ जा रहे हो, कहाँ जा रहे हो ? तुम्हारा माशूक़ यहीं मौजूद है, वापस

आ जाओ, वापस आ जाओ. तुम्हारा माशूक़ तुम्हारा पड़ोसी है. तुम्हारी दीवार से उसकी दीवार मिली हुई है. तुम जंगल में सर खपाते हुए क्यों फिर रहे हो, क्यों फिर रहे हो ? तुम जो ख़ुदा को ढूँढ रहे हो, ढूँढते फिरते हो, ढूँढने की ज़रूरत नहीं है, तुम .ख़ुद ही .ख़ुदा हो, तुम .ख़ुद ही .ख़ुदा हो. जो चीज़ कभी गुम हुई ही नहीं उसे काहे के लिये ढूँढते हो. तुम्हारे सिवा कोई है ही नहीं, कहाँ जाते हो, कहाँ जाते हो ?"

८

आत्मा और परमात्मा

हम ज़रा यह देखें कि दुनिया के बड़े-बड़े धर्मों और महापुरुषों ने आत्मा और ईश्वर को क्या कहकर और किन शब्दों में बयान किया है, और उनके अलग अलग बयान कहां तक मिलते हैं.

योगवाशिष्ठ में लिखा है—

सर्वस्य एव जनस्य अस्य
विष्णुर् अभ्यंतरे स्थितः।
तम् परित्यज्य ये यान्ति
बहिर् विष्णुम् नराधमाः॥

यानी ईश्वर सब लोगों के दिलों के अन्दर मौजूद है. उस अन्दर के विष्णु को छोड़ कर जो लोग बाहर के विष्णु को ढूँढने जाते हैं वे अधम यानी गिरे हुये हैं.

भागवत का कहना है—

"जो आदमी सब जानदारों के अन्दर भगवान को देखता है, सबको भगवान का रूप समझता है और भगवान के अन्दर सब जानदारों को देखता है, वही भगवान का मानने वाला और सबसे अच्छा भक्त है."

इन बयानों से आदमी के अन्दर की आत्मा यानी रूह और विश्वात्मा यानी रूहे कुल या परमात्मा में कोई फ़रक़ मालूम नहीं होता.

उपनिषदों में बार बार आता है—"एकम् एव अद्वितीयम्"

जो 'वहदहू लाशरीक' का लफ़्ज़ी तरजुमा है. यानी यह कि ईश्वर एक है, उस जैसा दूसरा कोई नहीं.

सूफ़ी कहता है—

हर गियाहे कि बर ज़मीं रोयद
वहदहू लाशरीक लह गोयद

यानी घास का हर तिनका जो ज़मीन पर उगता है, यही पुकार पुकार कर कहता है कि 'अल्लाह एक है, उसका कोई शरीक नहीं'.

पारसी धर्म की किताब गाथा में लिखा है—"उस एक ईश्वर के सिवा मैं किसी और को जानता ही नहीं."

"वजूद सिर्फ़ उसी एक ईश्वर का है, वही सच है, वही हक़ है और वही असल हक़ीक़त है, जो पिछले, अगले और हाल के तीनों कालों में और आगे, पीछे, ऊपर, नीचे सब जगह एक सा मौजूद है, जिसमें कोई तबदीली नहीं होती, इसके ख़िलाफ़ जो भी किसी समय है और किसी समय नहीं है, या जो इस समय है और फिर नहीं रहेगा, उसका वजूद केवल धोका है.

बरट्रंड रसल इंगलिस्तान के एक मशहूर फ़लसफ़ी और विद्वान हैं. वह एक जगह लिखते हैं—"मैं देखता हूँ कि मेरा बेटा अभी तक इस बात को किसी तरह समझ ही नहीं पाता कि कोई वक़्त ऐसा भी था जब वह मौजूद न था. जब मैं उससे मिस्र के मीनारों के बनने की या कोई इसी तरह की बात करता हूँ तो वह हमेशा यह पूछता है कि वह खुद उन दिनों क्या करता था. और जब मैं उससे यह कहता हूं कि तुम उन दिनों मौजूद नहीं थे तो मेरा बेटा सिटपिटा जाता है. उसकी समझ काम नहीं करती." लेकिन सच यह है कि बरट्रंड रसल की निस्बत उस बच्चे की आत्मा असलियत को ज़ियादा समझती है. चेतनता, रूह या आत्मा मान ही नहीं सकती कि कोई ऐसा वक़्त भी था जब वह नहीं थी, या कोई ऐसा

वक़्त भी होगा जब वह नहीं रहेगी. चेतनता के, रूह के या आत्मा के ऊपर अमर होने की छाप अमिट रूप से लगी हुई है. जब मैं यह कहता हूँ कि यह सूरज या यह तारे इतने करोड़ बरस हुये पैदा हुये थे और यह इतने करोड़ बरस तक रहेंगे तो वह सारा आगे पीछे का ज़माना और यह सारी अरबों खरबों मील की जगह मेरी चेतना के अन्दर आ जाती है. नहीं तो मेरे कहने का कुछ अर्थ ही नहीं होता. इन्हीं मानों में सरमद ने कहा है—

मुल्ला गोयद कि बरफ़लक शुद अहमद
'सरमद' गोयद कि फ़लक व अहमद दर शुद

यानी मुल्ला कहता है कि मोहम्मद साहब आसमान पर गये थे. सरमद कहता है कि आसमान मोहम्मद साहब के अन्दर समा गया था.

भागवत में लिखा है—

"आत्मा न कभी पैदा होती है, न मरती है, न कभी घटती बढ़ती है."

क़ुरान के "लम यलिद वलम यूलद" का भी यही असली मतलब है :

आत्मा को 'स्वयंप्रभ' यानी 'नूर ही नूर' कहा गया है. क्योंकि वह ख़ुद अपने से रोशन है. कोई दूसरा उसे रोशन नहीं कर सकता.

उपनिषदों में यह बात बार बार और तरह तरह से बयान की गई है. लिखा है—"आत्मा को सुनने की इच्छा हुई, उसने कान की शकल ले ली. देखने की इच्छा हुई, उसने आंख की शकल ले ली. सूँघने की इच्छा हुई, उसने नाक की शकल ले ली."

एक जगह उपनिषद में लिखा है—"जो यह समझता है कि वह आत्मा को जानता है वह उसे नहीं जानता. और जो समझता है कि वह उसे नहीं जानता वही उसे जानता है. हम

नहीं जानते कि हम जानते हैं या नहीं. हम अपने को, अपनी आत्मा को जानते हैं और फिर भी हम क्या जानते हैं ? तो क्या हम उसे नहीं जानते ? लेकिन बिला शक हम जानते हैं. हम यह कैसे कह सकते हैं कि हम अपने को नहीं जानते. सच यह है कि अगर हम कुछ भी जानते हैं तो केवल यही जानते हैं कि 'हम हैं'. बिला शक या शुबहा पूरी तरह 'हम हैं'. हम यहाँ हैं और इस समय हैं."

सूफ़ी कहता है—

ऐ बरतर अज़ ख़यालो क़यासो गुमानो वह्म
वज़ हरचे गुफ़्ताएमो शुनीदेमो ख़्वांदा एम

यानी वह अल्लाह ख़याल से, क़यास से, गुमान से, वहम से, और जो कुछ हम कहते हैं, सुनते हैं या पढ़ते हैं सब से ऊपर है.

वह आलमगीर आत्मा, विश्व आत्मा, रूहे कुल या परम आत्मा सचमुच अद्वितीय यानी लासानी है. उस जैसा कोई नहीं. बल्कि उसके सिवा (मासिवा अल्लाह), ग़ैर अज़ ख़ुदा, आत्मनः इतरत्, ब्रह्मणः अन्यत्, कुछ है ही नहीं. सब एक दूसरे के विरुद्ध दिखाई देने वाली चीजें उसी में हैं. वह मजमूअ ए-ज़िद्दैन है, वह 'सर्व विरुद्धधर्माश्रय' है.

पारसी गाथा में लिखा है—"अहुरमज्द के सिवा कोई दूसरा नहीं."

गीता में भगवान ने कहा है—"ऐ अर्जुन ! मैं ही आत्मा हूँ. मैं सब जानदारों के अन्दर की जान हूँ. मैं ही सब का शुरू हूँ, सब का बीच हूँ और मैं ही सब का आख़िर हूँ."

क़ुरान कहता है—"हुवल् अव्वल हुवल् आख़िर हुवज़ ज़ाहिर हुवल् बातिन, वहुआ बकुल्ले शैइन अलीम." यानी वही अव्वल है, वही आख़िर है, वही ज़ाहिर है, वही बातिन (गुप्त) है और वही सब चीज़ों का जानने वाला है.

इंजील में भी ठीक यही बात इन्हीं लफ़्ज़ों में कही गई है. लिखा है—"मैं ही शुरू हूँ और मैं ही आख़िर हूँ...मेरे सिवा कोई नहीं.. मैं ही 'अलिफ़' हूँ और मैं ही 'ये'.....मैं वह रोशनी हूँ जो हर आदमी को रोशन करती है, मैं न हूँ तो तुम कुछ नहीं कर सकते."

पारसी किताब में लिखा है—"पहले और पीछे वही अहुरमज्द है और कोई नहीं है.....उसने ही हम सब को रूप दिया है.....अहुरमज़्द ही शुरू है, वही आख़िर है."

वही 'अहद' है. उसकी बाबत न 'है' कहा जा सकता है न 'नहीं'. वह 'ज़ाते मुतलक़' है, 'निर्गुण' और 'निर्विशेष' है.

बौद्ध धर्म की किताबों 'असंग' और 'मध्यमिका कारिका' दोनों में लिखा है—

"वह न नहीं है, और न है. न वह इस तरह है और न किसी और तरह. वह न पैदा होता है, न बढ़ता है, न घटता है और न मरता है. उस पर कोई धब्बा नहीं जो धोया जा सके. वह सदा पाक है—यही निशानी है उसकी जिसकी कोई निशानी नहीं. वह सब के ऊपर है. उसे छिपाया नहीं जा सकता. न उसे ज़ाहिर किया जा सकता है. वह मर नहीं सकता. वह पैदा नहीं हो सकता. न उसे ख़तम किया जा सकता है. वह कोई एक चीज़ नहीं है. न वह बहुत सी चीज़ें है. न वह आता है, न जाता है. न उसका वजूद है न ग़ैर वजूद है, न दोनों बातें हैं, न वह दोनों से अलग है! यह अजीबो ग़रीब राज़ इन चारों हालतों से ऊपर है, यही हक़ है. यही सच है. जो लोग (महात्मा बुद्ध के बताए हुए) बीच के रास्ते से चलते हैं, वही इस हक़ीक़त को जान सकते और बता सकते हैं."

जैनियों की किताब 'स्याद्वाद' में कहा गया है—

"शायद वह है, शायद वह नहीं है. शायद है भी और नहीं भी है. शायद उसे बयान किया जा सकता है, शायद

नहीं बयान किया जा सकता. शायद दोनों बातें हैं. शायद तीनों बातें हैं."

उपनिषद में आता है—

"वह चलता है, वह नहीं चलता. वह सब से दूर है, वह सब से नज़दीक है. वह सबके अन्दर है, वह सब के बाहर है."

चीन के 'ताओ' धर्म की किताब 'ताओ तेह किंग' में लिखा है—

"वह अकेला क़ायम है. उसमें कोई तबदीली नहीं होती. वह घट घट में घूमता है और फिर भी वह सदा एक हालत में रहता है. उसे दुनिया की मां कहा जा सकता है."

जैन किताब में लिखा है—

"मैं उस निरंजन को नमस्कार करता हूं जो अनेक में एक और एक में अनेक है और जो न एक है न अनेक." (भूधर)

शेख़ सादी ने 'मामुक़ीमा' में लिखा है—

"ऐ तू, जिसकी कहीं कोई जगह नहीं है, फिर भी मैं हैरान हूँ कि तू हर जगह है. तू हमेशा इस जहान में ज़ाहिर होता रहता है, लेकिन फिर भी मेरी आँखें तुझे नहीं देख पातीं."

ताओ धर्म की किताब में लिखा है—

"ताओ का न कोई शुरू है और न आख़िर. ताओ कानों से नहीं सुना जा सकता. जो सुना जा सकता है वह ताओ नहीं है. ताओ दिखाई नहीं दे सकता. जो देखा जा सकता है वह ताओ नहीं है. ताओ को शब्दों में ज़ाहिर नहीं किया जा सकता. जो शब्दों में ज़ाहिर किया जा सकता है वह ताओ नहीं है. उसका कोई रूप नहीं. फिर भी वह हर रूप को रूप देता है. उसका कोई नाम नहीं. फिर भी वह सब नामों से पुकारा जा सकता है."

गुरु गोविन्द सिंह ने कहा है—

चक्र, चिन्ह, अरु वर्ण जाति
अरु पाति नहिन जिहु
रूप, रंग अरु रेखा, भेखा
कोई कहि न सकत जिहु
अचल मूर्ति, अनुभवप्रकाश
अमृत ओज कहिजै !
कोटि इन्द्र इन्द्रान
शाह शाहान गनिजै !
त्रिभुवन महीप, सुर, नर, असुर
नेति नेति वन त्रन कहत
तव सर्व नाम कथई कवन
कर्म नाम वरणत सुमत !
एक मूर्ति अनेक दर्शन
कीन रूप अनेक
खेल खेल अखेल खेलन
अन्त को फिर एक !

यानी ऐ तू, जिसकी न कोई अलामत है न निशानी, न कोई रंग है न कोई जात पाँत. न कोई रूप है न कोई सूरत, न लिबास. न कोई जिसे बयान कर सकता है. जो अचल है, जो रूह के अन्दर अनुभव से ही जाना जा सकता है. जिसे अमृत यानी आबे हयात का चश्मा कहा जा सकता है. जो करोड़ों इन्द्रों का इन्द्र और बादशाहों का बादशाह है. जो तीनों दुनियाओं का राजा है, जिसे देवता, आदमी, असुर और फूल, पत्ते तक कहते हैं कि 'वह यह भी नहीं है' 'वह यह भी नहीं है'. तेरे नाम और काम कौन बयान कर सकता है ? सब नाम तेरे नाम हैं. सब काम तेरे काम हैं. तू एक है, तेरे दर्शन अनेक हैं. तूने अनेक रूप धारण कर रखे हैं. तू तरह तरह के खेल खेलता है और आख़िर में फिर अकेला एक है.

वेदान्त की किताबों में आत्मा या ईश्वर को 'अनिर्वचनीयम्'

कहा गया है, यानी वह जिसे किसी तरह ज़बान से बयान नहीं किया जा सकता.

वह आत्मा, वह सब जानों की हक़ीक़त, वह हक़ीक़ी 'मैं' क्या चीज़ है, जिसे कोई बयान नहीं कर सकता ? दर असल यह आत्मा ही यानी सब जानों की हक़ीक़त ही वह चीज़ है जिसे बयान कर सकना नामुमकिन है. यह सब चीज़ों को साबित करती है, इसे कोई साबित नहीं कर सकता. किसी ने इसे पैदा होते या मरते नहीं देखा. जिस्म पैदा होते और मरते देखे जाते हैं, इस हक़ीक़त को पैदा होते या मरते अगर कोई देख सकता होता तो यह .ख़ुद ही देख सकती थी. पर .ख़ुद अपने को पैदा होते या मरते कैसे देखा जा सकता है ? दूसरे का 'मैं' मेरा 'मैं' कैसे हो सकता है ? वह मेरे 'मैं' को कैसे जान सकता है ? ज़ाहिर है .ख़ुद अपने शुरू या अपने अन्त को जान सकना नामुमकिन है. हक़ीक़त यह है कि हक़ीक़त एक है, जान एक है, उसमें कोई शुरू या आख़िर नहीं. उसमें कोई यहाँ या वहाँ नहीं, उसके कोई टुकड़े या हिस्से नहीं, कोई मैं या तू नहीं. यह जुदाई का ख़याल, यह अपने और पराए का ख़याल, अलग अलग जानों का ख़याल, यही तफ़रक़ा है, यही भेद है, यही जाल है, यही माया है. ठीक उसी तरह जिस तरह समन्दर के अन्दर अनगिनत बुलबुलों, झागों और लहरों का दिखाई देना महज़ एक धोका है. समन्दर एक है और वह सब भी एक हैं. ग़ैरियत कहीं है ही नहीं. हूं तो सिर्फ़ मैं हूं, दूसरा कोई नहीं. इन तमाम माद्दी जिस्मों के अन्दर एक ही जान काम कर रही है. उसके ज़हूर के ढंग, ज़हूर के दरजे, ज़हूर की क़िस्में अलग अलग और अनगिनत हैं. सूरतें बहुत हैं हक़ीक़त एक. कभी वह सोता दिखाई देता है, कभी जागता. कभी एक शकल उतार फेंकता है, कहीं दूसरी शकल अख़तियार करता है. उसका अपना शुरू या आख़िर कहीं नहीं. उसका कहीं ओर छोर नहीं. न यहाँ, न वहाँ. न जब; न तब. चन्द घड़ियाँ पहले या

करोड़ों साल आगे पीछे उसका कहीं कोई सिरा नहीं. वह इधर भी बे अन्त है और उधर भी बे अन्त. सारी जगह उसके अन्दर है, सारा काल और ज़माना उसके अन्दर समाया हुआ है. वह देश और काल दोनों को पार किये हुए है. सचमुच वह असल हक़ीक़त नाक़ाबिले बयान है. वही आत्मा है, वही परमात्मा, अल्लाह, ईश्वर है.

उसी को 'हस्तिये मुतलक़' यानी 'सत्ता सामान्य' कहा गया है. यही 'जिन्से आला' यानी 'परा जाति' है. विचार के एक सिरे पर यह है और दूसरे सिरे पर ऐटम, जर्रे, इलेक्ट्रोन, प्रोटोन, अणु, परमाणु हैं. इस फ़रक़ को 'तशख़्ख़ीसे अदना' (परविशेष) कहते हैं. लेकिन देश में या काल में, ज़मीन में या ज़मान में, न कोई ऐसी छोटी से छोटी चीज़ मिल सकती है जिसके फिर टुकड़े न हो सकें और न कोई ऐसी बड़ी से बड़ी मिल सकती है जिस से बड़ी की फिर कल्पना न की जा सके. इसलिये यह छोटी और बड़ी दोनों एक हैं. 'मैं' ही 'यह' हूं और 'मैं' ही 'वह'. 'है' का सबूत सिर्फ़ 'हूँ' ही है. मैं हर जगह हूं हर समय हूं. 'हूँ' 'है' का सबूत 'है', 'हूँ' का नहीं. सिर्फ़ एक ही ऐसा वजूद है जिसकी बाबत हमें कोई शक नहीं हो सकता. जहाँ शक का इमकान ही नहीं. और वह वजूद मेरा वजूद है. बाक़ी सब चीज़ों का वजूद उतना ही है जितना मैं उन्हें दूँ. किसी भी अलहदा वजूद का क्या सबूत हो सकता है सिवाय मेरे 'हूँ' के. इस 'हूँ' के कोई टुकड़े हो ही नहीं सकते. इसका ग़ैर कोई है ही नहीं. जिसे यह देखे या समझे वही इसके अन्दर समाया हुआ है. इसके 'अब' 'यहाँ' और 'इसी तरह' में ही 'सब जगह' 'सब कभी' और 'सब तरह' समाए हुए हैं. मै इन सबको घेरे हुए हूं.

सूफ़ी कहता है—

चूँ हक़ीक़त रा मुजव्विज़ हम तुई
ऐन हक़, ईनस्त ऐनुलहक़ तुई

यानी चूँकि तू ही हक़ीक़त को समझने वाला है इसलिये असल हक़ीक़त यही है कि तू ही हक़ यानी असलियत है.

क़ुरान कहता है—

"अल्लाह का वजूद, उसका इल्म सब चीज़ों को घेरे हुए है. सब चीजें और सब जानदार उसके अन्दर समाए हुए हैं. सब में वही है. तुम जहाँ कहीं भी हो वह तुम्हारे साथ है."

उपनिषद कहता है—"वह छोटे से भी छोटा और बड़े से भी बड़ा है."

एक दूसरी जगह उपनिषद का कहना है—

"यह आत्मा यानी मेरा आत्मा यही सब कामों का करने वाला है. सब इच्छाएँ, सब .खुशबूएँ, सब रस यानी ज़ायक़े, सब आना जाना, सब प्रेम लगाव इसी के अन्दर हैं. इसके सब तरफ़ मुँह हैं, सब तरफ़ हाथ, सब तरफ़ पैर, सब तरफ़ सर, सब तरफ़ गरदनें, सब तरफ़ आँखें और सब तरफ़ कान. यही सब जानता है, सब सुनता है, सब जानदारों के अन्दर है, सब को बनाता है, सब में रमा हुआ है, सब को क़ायम किये हुए, सब को ख़तम करने वाला है, सब की जान इसी की जान से है. यह जान ही जान है. यह बेअन्त है, यह सब को सँभाले है, सब की मौत इसका सोना है. जो कोई जो कुछ भी जानता है वह यही जानता है. यानी जो कुछ जानता हूँ मैं ही जानता हूँ. एक ही तो आत्मा है सब के अन्दर, सब से अलग, सब का ईश्वर, सब में मिला. यही एक सब है. यही मैं हूँ."

मैं जब कहता हूँ, मैं इनसान हूँ तब मैं अपने को सब इनसानों के साथ, कुल दो सौ करोड़ इनसानों के साथ एक कर लेता हूँ. जब मैं कहता हूँ मैं हिन्दुस्तानी हूँ तो मेरा आत्मा फ़ौरन सिकुड़ कर ३५ करोड़ तक रह जाता है. जब मैं कहता हूँ मैं भगवानदास उर्फ़ अब्दुल क़ादिर हूँ तो मेरा आत्मा और भी तेज़ी के साथ सिकुड़ कर मन डेढ़ मन हाड़ मांस के एक ढेर

तक महदूद हो जाता है. फिर मैं कहता हूँ मैं एक जानदार हूँ तब फिर मेरा आत्मा यकायक फैल कर सारी दुनिया को अपने अन्दर समा लेता है. क्योंकि दुनिया में कोई ज़र्रा भी बिना जान के नहीं है. कोई ज़र्रा नहीं जिसमें जान, रूह या आत्मा रमा हुआ न हो.

अगर हम तफ़रक़ों के अन्दर भी मेल की बातों को खोजें और मेल के अन्दर एकता को देखें तो हमारा आत्मा किस तरह फैल जाता है, हमारा दिमाग़ कितना वसीअ हो जाता है और दिल कितना बड़ा हो जाता है. साइन्स और फ़लसफ़ा दोनों को तरक़्क़ी करने में इससे कितनी मदद मिलती है. इसके ख़िलाफ़ अगर हम बजाय मेल की बातों के, बजाय उन बातों के जो हमें एक दूसरे के नज़दीक लाती हैं, ऐसी बातों को खोजते रहें जो हम में अलग अलग हैं, जो हमें एक दूसरे से फाड़ती हैं तो हमारी निगाह, हमारी दृष्टि कितनी सिकुड़ जाती है, हमारा दिमाग़ कितना छोटा हो जाता है, हमारी हमदर्दी कितनी घट जाती है, और सच्चे ज्ञान, सच्ची मारफत को समझ सकना हमारे लिये कितना मुशकिल हो जाता है. इसकी एक मिसाल नीचे दी जाती है.

एक बहुत बड़े और अच्छे मौलवी दोस्त ने मुझे लिखा कि इसलाम की ज़रूरी बातें यह हैं—(१) एक अल्लाह को मानना, (२) हज़रत मोहम्मद को उनका ख़ास पैग़म्बर और बाक़ी सब पैग़म्बरों को मानना, (३) क़ुरान को अल्लाह का कलाम मानना, (४) आख़िरत यानी क़यामत के दिन को मानना, (५) अल्लाह को सब चीज़ों का जानने वाला मानना, (६) नमाज़ पढ़ना, (७) रोज़े रखना, (८) ज़कात देना, (९) हज करना, (१०) जहाद करना, और (११) तीन त्यौहार ईदुलफ़ितर, ईदुज्ज़ुहा और मोहर्रम मनाना.

इसी तरह के एक बड़े विद्वान पण्डित ने मुझे बताया कि हिन्दू धर्म की ज़रूरी बातें यह हैं—(१) एक परमेश्वर को

मानना, (२) श्रीकृष्ण को उनका ख़ास अवतार और दूसरे सब अवतारों को मानना, (३) वेद को ईश्वर की वाणी मानना, (४) कर्म और पुनर्जन्म के क़ानूनों के मुताबिक़ यमराज के फ़ैसलों को मानना, (५) यमराज के मुहाफ़िज़े दफ़्तर चित्रगुप्त की बाबत यह मानना कि वह सब की बाबत सब कुछ जानते हैं और सबकी ठीक ठीक मिसलें रखते हैं, (६) संध्या करना, (७) व्रत उपवास करना, ख़ास कर एकादशी का व्रत रखना, (८) दान देना, (९) तीर्थ यात्रा करना, (१०) धर्म रक्षा करना, (११) कई मौसमी और इतिहासी त्योहार मनाना जैसे होली, निर्जला एकादशी, देवशयनी, श्रावणी, देव उठान, दिवाली, मकर स्नान, राम नवमी, कृष्ण अष्टमी वग़ैरा और (१२) वर्णाश्रम धर्म को मानना.

इस तरह दीन धर्म की ज़रूरी ज़रूरी बातों के दो सेट हमारे पास तैयार हो गए. उनके अलग अलग मतलब निकालने के भी दो तरीक़े हैं. अगर हम उन्हें फ़रक़ की आँख से देखें, उस आँख से जो ऊपरी रंग रूप में ही फँस जाती है तो सदियों के लिये एक दूसरे से लड़ने और एक दूसरे का सर फोड़ने के लिये मसाला तैयार हो जाता है. लेकिन अगर उन्हीं ज़रूरी चीज़ों को हम मेल की आँख से देखें, उस आँख से देखें जो रंग रूप से नीचे उतर कर असल हक़ीक़त तक जाने की कोशिश करती है तो हमें एक दूसरे से हाथ मिलाने, एक दूसरे को गले लगाने और एक दूसरे के दिलों को शाद और ख़ुश करने के लिये बेअन्त और बुनियादी मसाला मिल जाता है.

चरक में लिखा है—

"अगर हम सब अलग अलग भावों यानी तत्त्वों के मेल मिलाप की तरफ़ निगाह रखें तो इससे सबकी बढ़ौती और तरक़्क़ी होती है. लेकिन अगर हम उनके केवल फ़रक़ों की तरफ़ निगाह रखें तो सब सिकुड़ कर तंग और बेकार हो जाते हैं.

आदमी के अन्दर यह दोनों झुकाव मौजूद हैं. बुद्धिमान आदमी मेल और एकता की तरफ़ बढ़ता है."

हज़रत मोहम्मद सब अलग अलग मज़हब वालों से कहा करते थे कि—"आओ तुम और हम मिलकर उन चीज़ों पर मेल कर लें जो हम में और तुम में एक सी हैं."

ऊपर कही हुई ज़रूरी बातों के दोनों अलग अलग सेट अगर हम बुनियादी एकता और मेल की तरफ़ निगाह रखकर बयान करें तो उनका एकपन हमें साफ़ दिखाई दे जाता है. वह यह हैं—

(१) एक ईश्वर अल्लाह को मानना, (२) सब का भला सोचने और करने वाली इन सब ऊँची और महान आत्माओं को मानना जो अलग अलग क़ौमों में समय समय पर जन्म लेती रही हैं और जिन्हें इनसानी क़ौम के सच्चे प्रेमी और 'हादी' माना जाता है, (३) उन सब पाक किताबों को मानना जिनके अन्दर वह ज्ञान महफ़ूज़ है जो इनसान के लिये सब से मुफ़ीद ज्ञान है, (४) हर काम के कारण और कार्य, अमल और रद्दे अमल के उस क़ानून को मानना जिसके अनुसार पाप की सज़ा और नेकी का इनाम मिले बग़ैर नहीं रह सकता, चाहे समय कितना ही लगे, और इस दुनिया में मिले या दूसरी दुनिया में, (५) उस ईश्वर अल्लाह को सब चीज़ों का जानने वाला और बिला रूरिआयत सब के साथ इनसाफ़ करने वाला मानना, (६) दुआ माँगते रहना, (७) अपनी इन्द्रियों और ख़ासकर ज़बान को क़ाबू में रखना, (८) ठीक ठीक दान देना, (९) उस ईश्वर अल्लाह की क़ुदरत के सब ख़ास ख़ास ज़हूरों और स्थानों की अदब और भक्ति के साथ सैर यात्रा करना, (१०) नेकी और भलाई की बदी और बुराई से रक्षा करना, (११) एक दूसरे के साथ हमदर्दी और मोहब्बत दिखाने और बढ़ाने के लिये मिलकर ख़ुशी और रंज, त्योहार और मेले ठेले मनाना और उनमें मेल ही की ग़रज़ से अपने अपने ऊपर ज़रूरी रोक थाम

रखना और (१२) एक इस तरह का समझदारी का समाजी संगठन क़ायम करना जिसमें सब को ठीक ठीक और अपने अपने लिये मुनासिब काम मिल सके, सबको रोज़ी मिल सके और सब को ज़िन्दगी की ज़रूरतें और ऐश आराम की चीज़ें मिल सकें, इसमें अलग अलग आदमियों की अलग अलग तबीयतों और क़ाबलियतों का ध्यान रखना ज़रूरी है. हमें यह भी याद रखना चाहिये कि 'यमराज' और 'अलक़ाबिज़' दोनों के एक ही मानी हैं, 'चित्रगुप्त' और 'अलमोहसी' दोनों के एक ही मानी हैं. जो जहाँ 'चित्र' का मतलब है वही 'लोहेमहफ़ूज़' के मानी हैं. उस ईश्वर अल्लाह, परमेश्वर के हाफ़िज़े में सचमुच पिछले, अगले और हाल तीनों काल की सब बातें और सब चीज़ें सुरक्षित हैं.

हमारे अन्दर एक दूसरे से अलहदगी, .खुदी, ग़ैरियत, 'मैं मैं हूँ और तुम तुम हो' का ख़याल इतना मज़बूत है, हमारे अलग अलग जिस्मों की वजह से पैदा हुई यह भेद बुद्धि इतनी बलवान है कि पहले पहल इन सब जिस्मों के अन्दर रमी हुई एक जान और एक हक़ीक़त को देख सकना, समझ सकना और महसूस कर सकना बहुत मुशकिल मालूम होता है. लेकिन हक़ीक़त में सब मज़हबों की, सब दीन धर्म की यही जान और यही बुनियाद है. इस तरह की मुशकिल बातें सब इल्मों और सब साइन्सों में मिलती हैं. उस तरफ़ ध्यान देने, सोचने और मन को लगाने से यह मुशकिल धीरे धीरे हल हो जाती है.

मिसालों से कभी कभी समझने में बहुत आसानी होती है. मेरे हाथों और पैरों की उंगलियाँ, मेरे हाथ पैर, आँख नाक और वह करोड़ों अणु, 'सेलज़' या ज़िन्दा ज़र्रे जिन से मैं यानी मेरा जिस्म बना हुआ है, सब एक दूसरे से अलग हैं और सब अपनी अपनी जगह आज़ाद हैं. लेकिन फिर क्या सचमुच वह एक दूसरे से अलग हैं ? क्या सचमुच वह एक दूसरे से आज़ाद हैं ? मेरा 'मैं' मेरा वजूद यानी मेरी जान उन सब के अन्दर रमी

हुई है और उन सब को मिलाए और सँभाले हुए है. अगर इस ऊपरी अनेकता और दुनिया के इस रंग बिरंगेपन के अन्दर एक बुनियादी एकता इधर से उधर तक समाई हुई न होती तो 'हम', 'हमदर्दी', 'सब का भला', 'सब की मिलकियत', 'सब चीज़' जैसे फ़िक़रे ही न बन सकते और न किसी की समझ में आते. इस छिपी हुई एकता को बाहर लाना, ज़ाहिर करना और सब इनसानों को उसकी अधिक से अधिक जानकारी कराना और उसका विश्वास दिलाना, यही दीन, धर्म या मज़हब का असली मक़सद है.

मज़हब के इस असल मक़सद को पूरा करने के लिये वैराग्य यानी मुज़ानिबत, विषाद यानी बेज़ारी, करुणा यानी रहम, दिल की सफ़ाई, बेग़रज़ी, परोपकार, दुनिया से अलहदगी (सेरी अज़ दुनिया), दिल बरदाश्तगी और सब के साथ दया और मोहब्बत, इस बात की लगन कि यह सब बेकस रूहें भी हमारी तरह अँधेरे में टक्करें खाती हुई रोशनी हासिल करें और इस ख़ौफ़नाक भूल भुलैयाँ से निकल सकें—इन सब बातों के दिल में पैदा होने की ज़रूरत है. इन बातों से दिल और दिमाग़ की वह हालत पैदा होगी जिसमें आत्मा परमआत्मा के अन्दर, और अहंकार या ख़ुदी सब के भले की ख़्वाहिश के अन्दर फ़ना हो जाती है, और सिर्फ़ .ख़ुदा ही .ख़ुदा रह जाता है. कुछ लोग इसे रूहानी बेदारी कहते हैं. यही ज्ञान योग से पैदा होता है. अँधेरी दुनिया के ऊपर यह ज्ञान निकलते हुए सूरज की तरह चमकने लगता है. धीरे धीरे सुबह के हलके रंग दिन की तेज़ रोशनी में बदल जाते हैं. और यह रोशनी सारी दुनिया की ज़िन्दगी का अंश बनकर दुनिया के भले के लिये काम आती है.

एक मानी में यह बिलकुल सच है कि ऐसी हालत में इनसान के अन्दर ईश्वर उतर आता है. .ख़ुदी निकल जाती है तो .ख़ुदा उसकी जगह ले लेता है. आदमी की सारी ज़िन्दगी चमक उठती है. साथ ही यह भी सच है कि अलग अलग

साइन्सों और इल्मों के नीचे दरजे के ज्ञान में भी योग अपना असर पैदा करता है. साइन्स की हर नई खोज और हर नई ईजाद से खोज करने वाले और ईजाद करने वाले को इसी तरह का आनन्द आता है. दिल और दिमाग़ की अनेक हालतों में और नीचे ऊँचे सब दरजों पर योग का यह शग़ल जारी रहता है. योग सूत्र में लिखा है कि "कठोरता से नरमी, सारागय से वैराग्य, क्रूरता से करुणा, घमण्ड से दीनता और ग़रूर से इनकसार की तरफ़ दिल का बदलना बिलकुल ज़रूरी है. इससे पहले कि .खुदा ईश्वर दिल में आकर बैठ सके." हमदर्दी और अपनापन रूहानी प्रेम से पैदा होते हैं और इस तरह का प्रेम ही ईश्वर है.

ईश्वर अल्लाह सीधे सादे, बेगुनाह, मासूम और बच्चों की तरह भोले और प्यारे, साफ़ दिल लोगों के बहुत नज़दीक है. सच्चा बुद्धिमान आदमी दोबारा बच्चा हो जाता है. इसीलिये वह अल्लाह के बहुत नज़दीक पहुँच जाता है. वह जान बूझ कर दिल की सादगी को पसन्द करता है. क्योंकि उसने देख लिया है कि चालाक और टेढ़ें होने में कितनी बुराइयाँ हैं. उसकी आत्मा फिर अपनी .कुदरती हालत में आ जाती है. क्योंकि उसने तजरबे से मालूम कर लिया है कि ज़िन्दगी के बनावटी तरीक़े कितने ग़लत हैं. उसने उन्हें अपने से अलग करके ग़लत तरह के इल्म और ग़लत तरह की होशियारी को अपने दिल और दिमाग़ से बाहर कर दिया है.

इंजील में लिखा है—"जब तक तुम बदल कर फिर से छोटे बच्चों की तरह न हो जाओगे तब तक तुम ईश्वर के राज में दाख़िल नहीं हो सकते."

उपनिषद में लिखा है—"विद्वान ब्राह्मण को चाहिये कि बाँझ विद्या के बोझ से दिल को हटा कर दलीलों और पेचीदा कड़वी बहसों से मुँह मोड़ कर फिर बालक की तरह सरल और सादा बन जावे. इसके बाद फिर ख़ामोश होकर अपने अन्दर

सोचे, अपनी आत्मा के साथ बातें करे और फिर आख़िर में उस हालत से भी निकल कर आत्मा के .क़ुदरती रूप में आकर परम आत्मा के साथ एक हो जावे."

रूह के क़ौसे-उरूज (ऊर्ध्व मार्ग) या सफ़रे-अव्द के ज़रिये ईश्वर अल्लाह की तरफ़ फिर से जाने की यही सीढ़ियाँ हैं. सूफ़ी लोग इस सफर को इन्हीं शब्दों में बयान करते हैं. इस के ख़िलाफ़ सफ़र कौसे-नज़ूल (अधः मार्ग) है जिसे सफ़रे-हक़ भी कहते हैं. थोड़े से शब्दों में जो दिल के कठोर हैं वह .ख़ुदा को नहीं देख सकते, क्योंकि वह प्रेम को महसूस नहीं कर सकते, और प्रेम ही .ख़ुदा का सब से बड़ा रूप है, प्रेम ही .ख़ुदा है. अहंकार दिल को कठोर कर देता है. प्रेम उसे नरम करता है. इसी को बेख़ुदी, निरअहंकार और निःस्वार्थता भी कहते हैं. आत्मा के विकास में समय आने पर यह हालत सब के अन्दर पैदा होती है. हम में से हर एक को इसके अन्दर से गुज़रना है.

इसी सचाई को और तरह भी ज़ाहिर किया जा सकता है. आदमी को चाहिये कि अपने को दूसरे इनसानों से अलग न समझे, और न .ख़ुद अपने वजूद के अलग अलग पहलुओं को एक दूसरे से अलग समझे. उसे चाहिये कि अपने सारे वजूद को एक जाने. उसके विचारों, उसके शब्दों, और उसके कामों में कोई बात एक दूसरे के ख़िलाफ़ न हो. उसका दिल, उसका दिमाग़ और उसकी संकल्प शक्ति (इरादा) तीनों पूरी तरह मिले हुए बाजों की तरह एक सा राग अलाप रहे हों. उसका मज़हब यानी उसका धर्म, उसके सारे वजूद में रमा हुआ हो. विचारों, शब्दों और कामों तीनों पर उसके मज़हब का अंकुश हो. सातों दिन उसके लिये ऐसे ही पाक हों जैसे इतवार, मंगल या जुमा. उसका दिल और दिमाग़ दोनों उसके क़ाबू में हों. वह अपने भावों या जज़बात को इस तरह की ढील न दे कि ये उसके पैरों को उखाड़ दें. वह सोच समझ कर ठीक और अच्छे भाव ही अपने अन्दर पैदा होने दे. उसकी अपनी अलग

ज़िन्दगी, उसकी व्यापक आत्मा की ज़िन्दगी के साथ यानी इनसानी क़ौम बल्कि सब जानदारों की ज़िन्दगी के साथ मिलकर चले. दिल की सख़्ती और अहंकार को मिटा दे. उसकी जगह निर्वेद, विषाद, वैराग्य और महा करुणा को अपने अन्दर क़ायम करे. जिसका मतलब है सबके दुखों के साथ दुखने वाला दिल. सचमुच जो लोग दिल के सख़्त हैं वह .ख़ुदा को नहीं देख सकते. जो दिल के नरम, दीन और मुनकसिर मिज़ाज हैं वही .ख़ुदा का दीदार हासिल कर सकते हैं. वही अपने इस मिट्टी के जिस्म पर राज कर सकते हैं और फिर किसी दिन इस ज़मीन पर राज कर सकते हैं. यह तब होगा जब अधिकतर इनसान मानव विकास का यह ज़बरदस्त पाठ पढ़ चुकेंगे और स्वार्थ की जगह परमार्थ को दे चुकेंगे. वही ज़मीन के ऊपर फिर से सतजुग का आना होगा. "बुराई की जड़ अपने दिल के अन्दर खोजो—और उसे उखाड़ कर फेंको. यह वह पौधा है जो युग युग में बढ़ता रहता है. जो कोई सच्चे धर्म के पथ पर चलना चाहे उसे अपने दिल के अन्दर से इस पौधे की जड़ों को उखाड़ कर फेंकना होगा. तब एक बार दिल लहूलोहान हो जायगा. आदमी की सारी ज़िन्दगी ख़त्म दिखाई देगी. इस कठिन आज़मायश में से हमें निकलना ही है. हर आदमी .ख़ुद अपने लिये ही धर्म का रास्ता है, .ख़ुद अपने लिये ही हक़ है और अपने लिये ही ज़िन्दगी है. यह तभी हो सकता है जब अपने पूरे वजूद को मज़बूती के साथ पकड़ लो और रूहानी बेदारी की पूरी ताक़त के साथ यह समझ लो कि यह अलग वजूद मैं नहीं हूँ. मैं वह हूँ जिसने इतनी तकलीफ़ के साथ अपने को पहचाना है. अपने इस नए वजूद के ज़रिये ही मैं धीरे धीरे इस छोटी और अलग ज़िन्दगी के पार बड़ी और हक़ीक़ी ज़िन्दगी में क़दम रख सकता हूँ."

यह हालत ज़बरदस्ती किसी पर नहीं लाई जा सकती. समय आने पर यह .ख़ुद ब .ख़ुद अन्दर से पैदा होती है, फिर

आत्मा इसी तरह खिलता है जिस तरह फूल अपने समय पर खिलता है. लेकिन माली इसके खिलने के लिये हालतें पैदा कर सकता है. पुरानी पीढ़ी के लोग नई पीढ़ी के लोगों को भूगोल की रूप रेखा सिखाते हैं. लड़का बड़ा होकर पृथ्वी की नई नई जगहों को जाकर देखने का काम .खुद ही करता है. इसी तरह असल बुनियादी धर्म की तालीम बाप बेटे को दे सकता है. बेटे के दिमाग में वह चीज़ बीज की तरह पड़ी रहेगी. समय आने पर उसमें जड़ें निकलेंगी, अंकुर फूटेंगे, शाखें निकलेंगी, पत्ते, कली, फूल और फल लगेंगे, तब सुनी देखी हो जायगी.

९

ख़ुदी और ख़ुदा

इससे पहले के अध्याय में हम आत्मा और परमात्मा यानी रूह और .ख़ुदा दोनों के हक़ीक़ी वजूद के एक होने की बात कह चुके हैं. इसी का नाम अद्वैतवाद यानी वहदतुल वजूद है. आदमी का यह महसूस करना कि वह ईश्वर ही का एक अंश है, उसकी रूह उस नूरेकुल (ज्योतिर्मय) की ही एक चिनगारी है, या वजूद के उसी समुद्र की एक बूँद है, बहुत बड़ी और ऊँची बात है. और यही ऐन हक़ीक़त है, लेकिन एक दूसरी निगाह से इस विचार के साथ एक बहुत बड़ा ख़तरा लगा हुआ है. यह विचार जितना लाभदायक हो सकता है उतना ही बल्कि उससे अधिक हानिकर भी हो सकता है. हर आदमी के अन्दर दो तरह का अपनापन होता है, एक उसकी आत्मा या रूह का अपनापन और दूसरा उसके जिस्म (शरीर), इन्द्रियों और वासनाओं का अपनापन. हर आदमी के अन्दर इन दोनों में बराबर खेंचातानी होती रहती है. यही खेंचातानी .ख़ुदा और .ख़ुदी, परमार्थ और स्वार्थ के बीच की लगातार खेंचातानी है. डर इस बात का है कि आदमी .ख़ुदा के साथ अपनी एकता को महसूस करते करते कहीं जान बूझकर या अनजान में इन्द्रियों यानी नफ़्से अम्मारा के साथ अपने को एक न मान बैठे. अगर ऐसा हुआ तो वह अपने भीतर .ख़ुदा की जगह शैतान को ला बैठायगा और बरबादी के रास्ते पर चल पड़ेगा. रूहानी सचाइयों को समझने और अनुभव करने के लिये .ख़ुदी को जीत कर .ख़ुदा को उसकी जगह देना ज़रूरी है. इसके लिये इन्द्रियों यानी नफ़्स पर फ़तह हासिल करना ज़रूरी है.

आदमी के अन्दर की इसी खेंचातानी को उपनिषदों में इन्द्र और विरोचन की कहानी के रूप में बयान किया गया है. ईसाई किताबों और मुसलिम रिवायतों में इसी को अज़ाज़ील यानी शैतान की गिरावट के रूप में बयान किया गया है. अज़ाज़ील शैतान का नाम है. अज़ाज़ील सब फ़रिश्तों का उस्ताद था. अज़ाज़ील शब्द के मानी भी बहुत अच्छे हैं यानी 'अल्लाह का बड़प्पन' लेकिन चीज़ों के ज़रा सा उलट जाने से नतीजा कुछ का कुछ निकल आता है. यहूदी किताबों के अनुसार शैतान अल्लाह का ख़ास फरमाबरदार फ़रिश्ता है, और अल्लाह ने लोगों को आज़माने, मज़बूत करने और तरक़्क़ी देने का काम ख़ास तौर पर उसके सुपुर्द कर रखा है. इसी तरह का काम हिन्दू रिवायतों में नारद से लिया गया है. नारद के मानी 'मोक्ष देने वाला' है. नारद विष्णु के भक्त हैं और उनका ख़ास काम है राजाओं को एक दूसरे से लड़ाना—एक की दूसरे के सामने तारीफ करके या एक की दूसरे से बुराई करके. इन्द्र भी लोगों को और ख़ास कर ऋषियों को आज़माने और आज़माइश के ज़रिये ऊँचा ले जाने का काम करते हैं. बौद्ध-धर्म में यही काम 'मार' का है. मार का वही अर्थ है जो कामदेव का.

आदमी का यह धोका क़रीब क़रीब वैसा ही है जैसा आजकल का कोई सरकारी मुलाज़िम या अफ़सर ग़लती से अपने को जनता का नौकर और सेवक समझने की जगह अपने को उनका मालिक या आक़ा समझ बैठे. या कोई अमानतदार ट्रस्टी ट्रस्ट के माल का अपने को मालिक समझ बैठे. गुण और कर्म से अपने को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र समझने की जगह जन्म से अपनी जात मान बैठना भी इसी तरह की एक ग़लती है. इस तरह की ग़लती बड़ी से बड़ी बरकत को भी लानत बना देती है. इसीलिये पुराने ज़माने में वहदतुल वजूद यानी आत्मा और ईश्वर के एक होने की हक़ीक़त सबके सामने बयान नहीं की जाती थी. सब उसके हक़दार या पात्र

नहीं होते. यह रूहानी हक़ीक़त जिनके अन्दर प्रेम और नम्रता की जगह नफ़रत और घमंड पैदा करे वह इसके हक़दार नहीं हैं.

पर आज ज़माना बदल गया है. लोगों की सूझ बूझ आमतौर पर बढ़ी हुई है. उसके साथ .खुदी यानी अहंकार भी बढ़ता जा रहा है. इसलिये लोगों का ध्यान असलियत की तरफ़ खींचने की ज़रूरत है. मुमकिन है सोई हुई आत्माएँ जग उठें. असली धर्म का यही मक़सद है, यानी लोगों को .खुदी से हटाकर .खुदा की तरफ ले चलना. स्वार्थ से हटाकर परमार्थ की तरफ़, अँधेरे से हटाकर रोशनी की तरफ़, असत्य से हटाकर सत्य की तरफ़ और बदी से हटा कर नेकी की तरफ़ ले चलें.

पारसी धर्म की किताब 'गाथा' में लिखा है—

"ऐ अहुरमज़्द (अल्लाह) हमें इस क़ाबिल बना कि हम अपने दोनों अपनापों यानी नीचे के जिस्मानी अपनापे और ऊपर के रूहानी अपनापे में फ़रक़ कर सकें. यह दोनों अपनापे तुम्हारे ही दिये हुए हैं. इनमें पहला अपनापा बुराई की तरफ़ ले जाता है, और दूसरा सदा नेकी की तरफ़ ले जाता है. हमारे सब काम इन्हीं दो से पैदा होते हैं. इनमें से पहला आदमी को आदमी से अलग करता है और दूसरा आदमी को आदमी से मिलाता है."

यही बात उपनिषदों में तरह तरह से कही गई है. लिखा है—

"मन दो तरह का होता है, एक शुद्ध और दूसरा अशुद्ध. अशुद्ध मन काम संकल्प यानी नफ़्स की तरफ़ ले जाता है और शुद्ध मन काम यानी इन्द्रियों से हटाकर नेकी और सबकी भलाई की तरफ़ ले जाता है."

क़ुरान में हारूत और मारूत दो फ़रिश्तों का ज़िकर आता है. यहूदी किताबों में इन्हीं को होरोत और मोरोत कहा गया है. पारसी किताबों में हौरवाता और अमेरेता. वेदों में

इन्हीं को ऋतम् और अमृतम् कहा गया है. इन्हीं दोनों की खींचातानी पर आदमी का ऊपर उठना या नीचे गिरना निर्भर है.

इस ख़तरे से हमेशा बहुत होशियार रहने की ज़रूरत है. कहीं हम .ख़ुदी या अहंकार को जो सचमुच हम में शैतान का अंश और सब बुराइयों की जड़ है, अपना असली अपनापा न समझ बैठें. यही हम में लोभ लालच फ़ौजी घमंड और दूसरों के ज़र ज़मीन की चाह पैदा करता है. चोरी, डकैती, व्यभिचार, क़त्ल और एक दूसरे पर हमले राजकाजी जंग और मज़हबी कट्टरता सब इसी से पैदा होते हैं. हमारे अंदर का .ख़ुदा कहता रहता है—"ऐ भगवान! ऐ सब के दिलों में बैठे हुए परमात्मा! तेरी इच्छा पूरी हो, मेरी नहीं." हमारे अन्दर का शैतान बोलता है "मेरी इच्छा पूरी हो, तेरी नहीं." हमें लगातार इस शैतान से होशियार रहने की ज़रूरत है. .ख़ुदा और शैतान दोनों हमारे अन्दर हैं.

हम इससे पहले के एक अध्याय में दिखा चुके हैं कि साइंस अब सब के अंदर रमी हुई एक अटूट व्यापक चेतनता से इनकार नहीं करती. यही 'रूहे कुल' या 'परम आत्मा' है. साइंस का शुरू का भौतिकवाद, जड़वाद या माटीवाद ख़त्म हो चुका. चेतनता के वजूद से अब इनकार नहीं किया जाता. चेतनता ही माद्दे के और इन्द्रियों के वजूद को साबित करती है. इन्द्रियाँ माद्दे को महसूस करती हैं. इन्द्रियाँ या माद्दा चेतनता को साबित नहीं कर सकते. यह चेतनता ही सबको रोशन किये हुए है और यही .ख़ुद अपने को रोशन किये हुए है.

उपनिषद में लिखा है—"ब्रह्म सब चीज़ों को घेरे हुए है और सबसे पार है. उसी की रोशनी से यह सब चीज़ें रोशन हैं."

क़ुरान में लिखा है—"अल्लाह सब चीज़ों को घेरे हुए है. अल्लाह ही ज़मीन और आस्मानों का नूर है."

इंजील में लिखा है—"उस ईश्वर ही के अंदर सब चीज़ें रहती हैं, हरकत करती हैं और जीती हैं."

"आदमी और हर चीज़ को रोशन करनेवाली रोशनी वह ईश्वर ही है."

चीन की किताब 'शीकिंग' में लिखा है—"वह ईश्वर सब समझता है, सब देखता है और तुम्हारे सब कामों में तुम्हारे साथ है."

ज़ाहिर है यही चेतनता, ईश्वर की चेतनता, आदमी की चेतनता, आत्मा की चेतनता सब चीज़ों को अपने में लिये हुए, सबको घेरे हुए और सब को रोशन किये हुए है. जानना ही होना है.

सब नाम उसके नाम हैं. सब नामों के पीछे वही एक असलियत है. देवी भागवत में लिखा है—"शैव लोग उसको शिव कह कर पूजा करते हैं, वेदान्ती लोग उसी को ब्रह्म कहते हैं. बौद्ध उसी को बुद्ध कहते हैं, नैयायिक यानी मन्तक़ी उसी को कर्त्ता कहते हैं, जैन उसी को अरहंत कहते हैं और मीमांसा वाले उसी को कर्म कहते हैं. वही हरि तीनों लोकों का मालिक है, वही सबकी इच्छाएँ पूरी करने वाला है, कोई उसे तप कहता है कोई ज्ञान, कोई प्रकृति, कोई शक्ति; लोग उसे तरह तरह से बयान करने और समझने की कोशिश करते हैं. है वह एक ही हक़ीक़त. अलग अलग मुल्कों और अलग अलग भाषाओं में उसे अलग अलग नामों से पुकारा गया है. ब्रह्म और ब्रह्मा में वही फ़रक़ है—अगर फ़रक़ है तो—जो सूफ़ियों की बोली में अहद और अल्लाह में है. ब्रह्म नाम पारसी किताबों और बौद्ध किताबों दोनों में आता है. अरबी 'हई' और 'यहिया' इबरानी 'यहोवा' और सामवेद का 'ओहऊ' और 'ओहऊहौ' ऐसे ही फ़ीनीशियन 'ईआओ' सब एक ही शब्द हैं.

यही वह क़ुदरती आवाज़ें हैं जो शुरू के आदमी के मुँह से

निकलती हैं. इन्हीं से वह अपने अंदर के अचरज को प्रकट करता है.

ठीक इसी तरह के नाम चीनी धर्म की किताबों और जैन धर्म की किताबों में भी आते हैं. चीनी महापुरुष कान-यन-त्से ने लिखा है—"ताओ (ख़ुदा) को अपनी आत्मा के अंदर ढूँढ़ो और तुम्हें बाक़ी सब बातें अपने आप मालूम हो जायँगी. धर्मात्मा आदमी अनेक में एक और एक में अनेक, यानी कसरत में वहदत और वहदत में कसरत को देखता है. वह एक सदा एकरस है. वही हमारा आपा है, वही सब का आपा है. उससे बढ़ कर कोई जानने की चीज़ नहीं. उसे जान लिया तो सब को जान लिया".

१०

सब रास्ते उसी तक पहुँचते हैं

यह सचाई सब धर्मों की किताबों में पाई जाती है कि एक अल्लाह ईश्वर तक पहुँचने के लिए अलग अलग लोगों और अलग अलग तबियतों के अनुसार अलग अलग रास्ते हैं. सब धर्मों की किताबों और सब महापुरुषों की वाणी में यह बात भी मिलती है कि एक दूसरे के जिन रास्तों को हम ग़लत कहते रहते हैं वह भी घूम फिर कर आख़िर में एक उसी तक पहुँचते हैं. एक सूफ़ी ने कहा है—

"कुफ़्र और इसलाम दोनों उसी अल्लाह की राह में दौड़े चले जा रहे हैं. दोनों यही कहते हैं कि अल्लाह एक है. उस जैसा कोई दूसरा नहीं."

एक और सूफ़ी ने और ज़ियादा साफ़ शब्दों में कहा है :—

"मुसलमान और ईसाई और यहूदी भले और बुरे, सबका मुँह उसी एक अल्लाह की तरफ़ है."

मुहम्मद साहब ने एक हदीस में कहा है—"जितने इनसान हैं उतने ही अल्लाह तक पहुँचने के रास्ते हैं."

यह सचाई बहुत गहरी सचाई है. हर रूह उसी एक अथाह समुद्र की एक बूँद है. हर बूँद उस बेअन्त का एक छोटा सा पहलू लिये हुए है. इसलिए अल्लाह तक लौट कर जाने में भी हर रूह का रास्ता किसी न किसी दरजे तक दूसरों के रास्ते से अपना अलग पहलू लिये हुए होगा.

.कुरान में साफ कहा गया है—"हम सब अल्लाह से आए हैं और सब अल्लाह ही की तरफ़ जा रहे हैं."

इंजील में लिखा है—"आदमी के नथनों में जितने साँस आते हैं उतने ही ख़ुदा तक पहुँचने के रास्ते हैं. पर मंज़िल सबकी एक है."

संस्कृत की किताब शिव-महिम्नः स्तुति में लिखा है—

"जिस तरह बहुत सी नदियाँ तरह तरह से घूम घूम कर आख़िर सब समुद्र में जा गिरती हैं उसी तरह सब आदमी अपने अपने स्वभाव के अनुसार अलग अलग रास्तों से चल कर भी उसी एक ईश्वर तक पहुँचते हैं. किसी का रास्ता सीधा और किसी का पेचदार. किसी का सरल और किसी का कठिन."

गीता में भी श्री कृष्ण ने साफ़ कहा है—

"जो लोग श्रद्धा यानी ईमान और वफ़ादारी के साथ दूसरे देवताओं की पूजा करते हैं वह भी अनजाने में और बेतरीक़े उन सब रूपों के पीछे असल में मेरी ही पूजा करते हैं."

सच यह है कि सब नाम उसी अल्लाह के नाम हैं.

क़ुरान में लिखा है कि—"सब अच्छे नाम उसी के नाम हैं." इस आयत के अन्दर जो शब्द 'हसना' यानी अच्छे या सुन्दर आया है वह इसलिये है कि भोले भाले कमसमझ इनसान घबरा न जायँ. मुहम्मद साहब ने एक मशहूर हदीस में कहा है—"लोगों से उनकी समझ के मुताबिक़ बात करो."

यही बात गीता में कही गई है.

अंगरेज़ी की एक कहावत है—"बच्चों को दूध दो और बड़ों को खाना." पर बड़ों को यह भी चाहिये कि प्रेम और मेहनत के साथ बच्चों को दूध से खाने की तरफ़ लाने की कोशिश करते रहें. दुनिया के सब मज़हबों के पंडे, पुरोहित. मुल्ला और पादरी इस फ़िकर में रहते हैं कि ज़िंदगी भर सबको 'दूध' ही पिलाते रहें. इससे दुनिया की रूहानी शक्ति कमज़ोर होती जा रही है.

हर मज़हब में इस तरह के फ़िरक़े मौजूद हैं. जिन फ़िरक़ों के लोगों को पूरा यक़ीन है कि ईश्वर अल्लाह ने कुछ लोगों को यानी उनके अपने फ़िरक़े के लोगों को इसी लिये बनाया है कि वह हमेशा के लिये स्वर्ग या जन्नत में रहें, और कुछ लोगों को यानी दूसरे सब फ़िरक़ों और मज़हबों के लोगों को इसी लिये बनाया है कि वह हमेशा के लिए नरक यानी दोज़ख़ में रहें. बदक़िस्मती से इस हालत में से भी हर रूह को निकलना ही पड़ता है. ऐसे लोगों को प्रेम के साथ समझना चाहिये कि कि क्या सचमुच दया का सागर रहमान और रहीम अल्लाह ऐसा कठोर हो सकता है. वह धीरे धीरे सोचें कि दुनिया की सब अगली पिछली क़ौमों और सब इनसानों को एक ही ईश्वर अल्लाह ने बनाया है या अलग अलग ईश्वरों ने बनाया है? अगर एक ही ने बनाया है तो क्या सब अगले पिछले मज़हबों में ईश्वर की बाबत वही बातें, वही सचाइयाँ और सब के भले के वही उसूल और वही हुक्म नहीं होने चाहियें? हाँ, उनमें इतना फ़रक़ हो सकता है जितना अलग अलग क़ौमों के रंगों, लिबासों, बोलियों और अलग अलग मुल्कों के हवा पानी और पैदावारों में है. पर यह फ़रक़ समझनेवाले के लिये सतही फ़रक़ ही होता है, बुनियादी नहीं.

क़ुरान के शब्द 'हसना' का मतलब समझाते हुए एक सूफ़ी ने अच्छा कहा है—

बनामे आं कि ऊ नामे नदारद
बहर नामे कि ख़्वानी सर बर आरद.

यानी उसका कोई नाम नहीं है लेकिन उसे जिस नाम से भी पुकारो उसी नाम से वह सर ऊँचा करके जवाब देता है.

क़ुरान में यह भी साफ़ लिखा है कि—"ख़ैर (नेकी) और शर (बदी) दोनों अल्लाह ताला से हैं."

जलाल और तेज दोनों का एक ही मतलब है. ज़ात में

'वहदत' है 'सिफ़ात' में कसरत है. गुण अलग अलग हैं पर एक ही ईश्वर आत्मा के आधार पर सब गुण ठहरे हुए हैं जो ख़ुद निर्गुण है. सब धर्म अलग अलग हैं पर धर्मी सबका एक है जिसका कोई धर्म नहीं. जो सब अलग अलग धर्मों से ऊपर है.

श्री कृष्ण ने गीता में कहा है—"ओ अर्जुन, मुझसे ऊपर या बाहर और कोई चीज़ नहीं है. यह सब मुझ में इस तरह पिरोए हुए हैं जिस तरह सूत में माला के दाने. जितने 'सात्विक' भाव हैं और जितने 'राजस' भाव हैं और जितने 'तामस' भाव हैं वह सब मुझ से ही हैं. मैं उनमें नहीं हूं, वह मुझ में हैं. सुख दुख, होना या न होना, डर, निडरता, नेकनामी, बदनामी, तप और दान सब मुझ से ही पैदा हुए हैं. आदमी की याददाश्त, समझ और नासमझी सब मुझसे ही हैं."

शंकराचार्य ने कहा है—

"पुण्य और पाप यानी सवाब और अज़ाब दोनों आदमी को बाँधते हैं इसलिये दोनो पाप हैं." ज़ंजीर चाहे लोहे की हो और चाहे सोने की, ज़ंजीर ज़ंजीर ही है.

बात ज़रा नाज़ुक है पर नेकी बिना बदी के ठहर नहीं सकती. इसलिये आख़ीर में बदी को मिटाने के लिये नेकी को भी मिटाना ही होगा.

जैन महात्मा भाग चन्द्र ने लिखा है—

"परिणति सब जीवन की, तीन भाँति बरनी
एक पाप, एक पुण्य, एक राग हरनी
जा में शुभ अशुभ अंध, दोऊ कर कर्म बंध
वीत राग परिणति ही भव समुद्र तरनी
त्याग शुभ क्रिया कलाप करु मत कदाच पाप
शुभ में न मग्न होई शुद्धता बिसरनी

यावत शुद्ध उपयोग पावत नाहीं मनोग
तावत ही करन योग कही पुण्य करनी
ऊँच नीच दशा धार, चित प्रमाद को बिदार
ऊँचली दशा से गिरो, मत अधो धरनी
भाग चन्द्र, या प्रकार जीवन है सुख अपार
याही के अधार स्यादवाद की उचरनी."

यानी दुनिया के सब जानदारों को तीन हालतों में से निकलना पड़ता है. पहली हालत .खुदी और पाप की हालत है. दूसरी परसेवा और नेकी की हालत है. तीसरी इन दोनों से ऊपर उठकर एक रस और एकरंगी की हालत. इस आख़री हालत में पाप और पुण्य अज़ाब और सवाब दोनों के बंधन टूट जाते हैं. तब ही आदमी हलका हो कर अपने रूप को पहचान कर भव सागर यानी ज़िंदगी के समुद्र को पार कर सकता है. आदमी को चाहिये कि पुण्य या सवाब कमाने की इच्छा को छोड़ दे पर पाप या बुराई करने का ख़याल भी मन में न लाए. तब उसका मन मँज कर सच्ची पाकी उसमें पैदा होगी. धीरज के साथ ऊँच-नीच की उन सब हालतों को जो उसके जीवन में पैदा होती हैं बरदाश्त करता रहे. लेकिन साथ ही ध्यान रखे कि मन सचाई से डिगने न पाए. अपने को किसी तरह नीचे गिरने न दे, दिल को क़ाबू में रखे, बहकने न दे. यही एक रास्ता है जिससे धीरे धीरे रूहानी शान्ति मिल सकती है और ज़िन्दगी सच्चे और अपार सुख की ज़िन्दगी बन सकती है. जैन शास्त्रों में जिसे स्यादवाद धर्म कहा गया है उस का निचोड़ यही है.

ईसाइयों की इंजील में और यहूदियों की पाक किताबों में भी बार बार और तरह तरह से यही चीज़ कही गई है.

हिन्दू धर्म में ईश्वर के नामों में रुद्र और मायावी नाम भी मौजूद हैं.

इसी तरह इसलाम में अल्लाह को 'क़हहार' 'जब्बार' 'मुज़िल' 'मुमीत' भी कहा गया है, जिस के अर्थ हैं मुसीबत ढाने वाला, दंड देने वाला, आज़माने वाला और मारने वाला. सब रूप उसी के रूप हैं और वह सब रूपों से ऊपर है. वह एक रस है, एक रंग है, हर तरह एक है. अपनी अपनी समझ के अनुसार उसे ध्यान में रखते हुए और उस पर ध्यान जमाए हुए आगे बढ़ते रहना यही उस तक प्रहुँचने का रास्ता और तरीक़ा है.

११

सब कुछ खुदा है

आदमी का मन, यक़ीन और शक, विश्वास और अविश्वास के बीच टक्कर खाता रहता है. कभी कभी उसके दिल को इससे बड़ी घबराहट और तकलीफ़ होती है. एक तरफ़ उसे परमेश्वर, अल्लाह ताला के रहम, उसकी दयालुता पर भरोसा होता है. दूसरी तरफ़ अपने अन्दर के और अपने चारों तरफ़ के दुखों और मुसीबतों को देख कर उसे शक होने लगता है. यह शक या अविश्वास तब ही जाकर मिटता है जब आदमी इस बात को समझ ले और जान जाय कि मेरे अन्दर का 'मैं' ही सब के अन्दर का 'मैं' है, और यह सब में रमा हुआ 'मैं' ही ईश्वर, अल्लाह या .खुदा है. भलाई और बुराई, सुख और दुख सब उसी के अन्दर हैं. सब मेरे अन्दर हैं. सब सब के अन्दर हैं, क्योंकि सब उसी एक अल्लाह के अन्दर हैं. भलाई बुराई और सुख दुख का यह मेल ही दुनिया है. यही ज़िन्दगी है. इन दोनों तरह के गुणों की टक्कर जिसे द्वंद यानी 'ज़ोजैन' या 'ज़िद्देन' कहते हैं, उसी एक वजूद यानी एक अल्लाह में जाकर ख़त्म होती है और मिट जाती है. लेकिन मामूली आदमी जिनके दिमाग़ अभी बच्चों के दिमाग़ों की तरह हैं इस हक़ीक़त को नहीं समझ सकते. इसे समझने के लिये दिमाग़ को बालिग़ होना होगा. अपने पैरों पर खड़ा होना होगा, यानी अपने अन्दर अन्तर-दृष्टि यानी चश्मे बसीरत पैदा करनी होगी. इसी को अन्दर की आँख या तीसरी आँख भी कहा जाता है. उस आँख के खुलने पर ही मैं, तू, या 'मैं' 'तू' और 'वह' का फ़र्क़ मिट सकता है. जब तक वह आँख न खुले तब तक लोगों के दिमाग़ों को बच्चों की तरह गोदी में रखना या हाथों हाथ सँभालना होगा.

'मैं' ही से तो दुनिया है. 'मैं' नहीं यानी आत्मा नहीं तो दुनिया नहीं. फिर ज्ञान या मारफ़त कहाँ और साइन्स कहाँ? हर चीज़ के बारे में शक हो सकता है पर 'मैं हूँ' इस पर शक नहीं हो सकता. शक करने वाला ख़ुद अपने वजूद पर शक कैसे कर सकता है? दुनिया के बड़े बड़े साइन्सदानों ने अब इस बात को समझ लिया है. साइन्स की शुरू की जवानी के पागलपन में जिस माद्दीयत यानी जड़वाद की तरफ़ वह तेज़ी से बढ़ रहे थे अब वह उससे बहुत दूर हट गए हैं. हम एक पिछले अध्याय में दिखा चुके हैं कि आजकल के बड़े बड़े साइन्सदानों के अनुसार यह दुनिया रूह यानी आत्मा यानी स्पिरिट की दुनिया है, माद्दे या मिट्टी की नहीं. यह दूसरी बात है कि हम माद्दे या मिट्टी में ही वह सब गुण समझने लगें जो रूह या आत्मा में हैं, तब बहस सिर्फ़ लफ़्ज़ों की रह जाती है. जो सब के अन्दर रमी हुई आत्मा है वही मेरे अन्दर भी है, वही मैं हूं.

हज़रत ईसा ने कहा है—"मेरी इस बात पर विश्वास करो कि मैं पिता के अन्दर हूँ और पिता मेरे अन्दर है. जिसने मुझे देख लिया उसने पिता को देख लिया. अगर तुम मुझे जान जाते तो मेरे पिता को भी जान जाते." (इंजील)

मुहम्मद साहब की मशहूर हदीसें हैं—

"अहमद का मीम निकाल दो तब भी मैं ही हूँ, यानी मैं ही अहद (एक अल्लाह) हूं."

"जिस ने मुझे देख लिया उसने अल्लाह को देख लिया."

"जिसने अपने आर्य (नफ़्स) को पहचान लिया उसने अपने रब को पहचान लिया."

क़ुरान की एक आयत है—"जो अल्लाह को भूल जाता है वह अपने को भूल जाता है."

चीनी महात्मा कन्फ़ूशियस का कहना है—"अनजान आदमी दूसरों को ढूंढ़ता है, जानकार अपने को खोजता है."

एक और चीनी महात्मा ने कहा है—"आसमान ख़ामोश है. कोई आवाज़ नहीं आती. फिर मैं अल्लाह को कहाँ ढूँढूँ? दूर के आसमानों में मत ढूँढ़ो. अल्लाह यहीं आदमी के दिल के अन्दर है."

यही बात जापान के शिन्तो धर्म की किताबों में बार बार मिलती है.

वेदान्त में जो फ़र्क़ परमात्मा और जीव आत्मा में बताया गया है वही सूफ़ी किताबों में 'रूह उल अरवाह' और रूह में बताया गया है. वही फ़र्क़ '.ख़ुदा' और '.ख़ुदा के बेटे' में है. बात एक है कहने का ढंग अलग अलग.

हज़रत ईसा ने एक जगह कहा है—"मैं और मेरा पिता एक हैं. फिर भी मेरा पिता मुझसे बड़ा है. मैं अपने पिता में हूँ और तुम मुझ में हो और मैं तुम में हूँ."

स्वामी शंकराचार्य ने परमात्मा और जीव आत्मा के सम्बन्ध को समुद्र और लहर का सम्बन्ध बताया है.

उस अनन्त की हक़ीक़त को शब्दों में बयान करना बहुत कठिन है. इसी लिये उसे समझना कठिन है. इसी लिये बुद्ध जैसे बहुत से महात्मा जब उनसे असल हक़ीक़त या हक़ की बाबत सवाल किये जाते थे तो चुप हो जाते थे क्योंकि सवाल करने वाले शब्दों के पीछे की हक़ीक़त को समझने के नाक़ाबिल थे.

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—"जो .ख़ुदा को जान जाता है, उस का बोलना बन्द हो जाता है."

गुरु गीता में लिखा है—"गुरु की ख़ामोशी कभी कभी व्याख्यान का काम देती है और उसी से शागिर्दों के शक दूर हो जाते हैं."

एक सूफ़ी ने कहा है—"वह मेरे दिल के अन्दर है और मेरा

दिल उसके हाथ में है, जिस तरह आईना मेरे हाथ में होता है और मैं आईने में होता हूँ."

यहूदियों की किताबों में भी यही बात जगह जगह और बार बार और तरह तरह से कही गई है.

उपनिषद में साफ कहा गया है—"यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते, ततो न विचिकित्सते." यानी जो सब जानदारों को अपने अन्दर देखता है और सब के अन्दर अपने को देखता है, वह फिर धोका नहीं खा सकता और न किसी से द्वेष या दुशमनी रख सकता है.

हम किसी और जगह कह आए हैं कि जो आदमी किसी ख़ास मज़हब को अपने ऊपर से उतार कर किसी भी दूसरे मज़हब को उसकी जगह ओढ़ सकता है उसकी आत्मा सब अलग अलग मज़हबों से ऊपर उठ सकती है. वह सबको समझ सकता है.

एक सूफ़ी ने बहुत साफ़ साफ लफ़्ज़ों में कहा है—

"चूं हक़ीक़त रा मुहक़्क़िक़ .ख़ुद तुई
ऐन हक़ ईनस्त ऐनुलहक़ तुई
हस्तिये रब रा मुजब्बिज़ चूं तुई
बिल यक़ीं अल्लाहो अकबर .ख़ुद तुई"

यानी—चूंकि हक़ीक़त को पहचानने वाला तू ही है इसलिये असल हक़ यही है कि हक़ की असलियत भी तू ही है. रब के होने को तय करने वाला चूंकि तू ही है इसलिये इस में कोई शक नहीं कि अल्लाहो अकबर भी तू ही है.

—⊙—

१२

पुनर्जन्म यानी तनासुख़

पिछले अध्यायों में हमने यह बताने की कोशिश की है कि इस सारी ख़िलक़त यानी सृष्टि के और इन सब जानदारों के पीछे एक ही हक़ीक़त और एक ही जान है जो सब जगह मौजूद और सब जगह रमी हुई है. उसी से सब ज़िन्दा हैं. उसी से सब चलते फिरते, सोचते और बोलते हैं. वही ख़ुदा ईश्वर है, वही इस दुनिया का बनाने वाला है, वही इसका क़ायम रखने वाला और वही इसे ख़त्म करने वाला है. वही सब आत्माओं की आत्मा और सब रूहों की रूहे कुल है. सब नाम उसके नाम हैं. सब सूरतें उसकी सूरतें हैं. यह जो हमारे सब के अन्दर 'मैं' बोलता है यह वह ही है. उसके नामों में 'मैं' सब से नज़दीकी नाम है. यह 'मैं' सब जानदारों में है लेकिन इनसान में यह सब से ज़ियादा चमकता है. सब नाम उसके नाम होते हुए भी हर मज़हब और हर बोली में उसके कुछ ख़ास अलग अलग नाम भी हैं. संस्कृत में वह परमात्मा, आत्मा या ब्रह्म कहलाता है. अरबी में अल्लाह, रब, मालिक या मौला. फ़ारसी में ख़ुदा, अंगरेज़ी में 'गाड'. 'गाड' शब्द 'ख़ुदा' ही से बना है. पारसी धर्म में उसी को 'अहुरमज़्द', यहूदियों में 'यहुआ' और सिखों में 'सत्यश्री अकाल' कहा जाता है. बौद्ध धर्म वाले उसे आत्मा, ब्रह्म, शून्य या अमिताभ कह कर पुकारते हैं. जैनी उसी को 'आत्मा' 'प्रतिभा' या 'निरंजन' कहते हैं. चीन के पुराने मज़हब में उसी का नाम 'ताओ' है. उसका वजूद ही दुनिया की सब से बड़ी सचाई है. दुनिया एक लगातार घूमता हुआ चक्कर है जो सुख दुख जैसे जोड़ों के सहारे चलता है. उसमें परमात्मा इनसान के अन्दर अपने को

लगातार भूलता रहता है और इनसान परमात्मा के अन्दर अपने असली रूप को लगातार याद करता और पहचानता रहता है. यही इस दुनिया का उतार चढ़ाव है.

इस उतार चढ़ाव का नाम ही संसार चक्र है. इसी को चर्ख़े गरदूँ कहते हैं. सवाल होता है कि यह संसार चक्र क्या है. हर चक्र या पहिये के दो हिस्से होते हैं. एक उतार और एक चढ़ाव. रूह के इस उतार और चढ़ाव को संस्कृत किताबों में 'अवरोह' और 'आरोह' कहा गया है. सूफ़ी किताबों में इसे 'इज़ाल' और 'इरतक़ा' कहते हैं. साइन्स की बोली में इसे एवोल्युशन और फाइलोजेनिसिस (Phylogenesis) कहा जा सकता है. कुछ मज़हब मानते हैं कि एक ही रूह या आत्मा एक दूसरे के बाद कई जिस्म अख़्तियार करती है. दूसरे मज़हब इसी सिलसिले को दूसरी तरह बयान करते हैं. संस्कृत में इसे पुनर्जन्म और अरबी में तनासुख़ कहते हैं. हिन्दू, जैन, बौद्ध और सिख धर्मों के अनुसार रूह बहुत से निचले जिस्मों में से गुज़रने के बाद इनसान के जिस्म में आती है और फिर इनसान की शकल में भी कई मरतबा पैदा होती है. इंजील और क़ुरान में तनासुख़ की बाबत कोई साफ़ साफ़ बात शायद नहीं मिलती. लेकिन इन पाक किताबों में कहीं तनासुख़ से इनकार भी नहीं है. हज़रत ईसा ने कई जगह यह कहा है कि इलियास यानी एलीजाह नबी ही जानदि बैपटिस्ट की शकल में आये थे. इंजील में यह बात कई जगह आती है.

क़ुरान में एक जगह लिखा है—"ए इनसान ! तुझे फिर अपने रब की तरफ जाना है. वही तेरा अल्लाह है. तुझे मेहनत और तकलीफ के साथ दरजे बदरजे चढ़कर उस तक पहुँचना है."

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—"बहुत से जन्मों में से धीरे धीरे कमाल को पहुँचता हुआ इनसान परम गति को प्राप्त करता है और बहुत से जन्मों के बाद ज्ञानी ईश्वर को पाता है."

महाभारत में लिखा है—"एक दूसरे के बाद बेशुमार

दुनियाएँ बनती और बिगड़ती रहती हैं. वही एक परमेश्वर उन्हें बार बार बनाता और बिगाड़ता रहता है."

क़ुरान में बहुत सी आयतें हैं जिन से यह माने निकल सकते हैं कि इनसान बार बार पैदा होता और बार बार मरता है, उसी तरह, जिस तरह यह दुनिया बार बार बनती और बार बार बिगड़ती है—इन में से कुछ आयतें यह हैं—

"अल्लाह मख़लूक़ को बनाता है, और फिर दोबारा बनाता है ताकि वह इनसाफ़ के साथ उनको बदला दे सके जो अल्लाह के हुक्म को मानते हैं और बन्दों के साथ नेकी करते हैं. अल्लाह कहता है जिस तरह हमने पहले ख़िल्क़त बनाई थी उसी तरह हम फिर बनाते हैं. अल्लाह ही तुम्हारी माँ के पेट में तुम्हें गढ़ता है और फिर फिर गढ़ता है."

"हमने तुम्हें ज़मीन में से पैदा किया है और हम तुम्हें फिर उसी ज़मीन में भेज देंगे और फिर उसी में से तुम्हें पैदा करेंगे, फिर फिर, आख़ीर तक."

"तुम मर चुके थे और हमने फिर तुम्हें पैदा किया ताकि तुम हमें याद करो और हमारा शुक्र करो."

"अल्लाह ने तुम्हारे मरने के बाद फिर तुम्हें ज़िन्दा किया. उसने तुम्हें पहले ज़िन्दा किया था, वह तुम्हें फिर ज़िन्दा कर सकता है. वह ज़िन्दों को मुर्दा और मुर्दों को ज़िन्दा करता है."

"तुम अपने अल्लाह से कैसे इनकार कर सकते हो. तुम मर चुके थे उसने तुम्हें फिर से ज़िन्दा किया. वह तुम्हें फिर से मुर्दा कर देगा और फिर ज़िन्दा कर देगा. यहाँ तक कि आख़ीर में तुम फिर उसके पास लौट जाओगे."

जो आयतें हमने ऊपर नक़ल की हैं उन पर सब से अच्छी टीका मौलाना रूम के वह मशहूर शेर हैं जिनके लफ़्ज़ी माने हम नीचे देते हैं. मौलाना लिखते हैं—

"घास की तरह मैं बार बार पैदा हो चुका हूँ. मैं सात सौ

सत्तर जिस्म देख चुका हूँ. पहले मैं जमादात (पत्थर वग़ैरा) की शकल में था. वहाँ से मरा तो मैं नबातात (वनस्पति) बन गया. फिर मैं नबातात से मरा तो जानवर बन गया. जानवर से मैं मरा तो इनसान बन गया. इसलिये मुझे मौत से क्या डर है, मैं मरने से कभी कम नहीं हुआ. अब अगली मरतबा मैं इनसान से मरूँगा ताकि फ़रिश्तों के बाल व पर मुझ में निकल आवें. फिर फरिश्ते से भी मैं जल्दी से और ऊपर निकल जाऊँगा. सिवाए उस अल्लाह के वजूद के बाक़ी सब चीज़ें मिटती और फिर से बनती रहती हैं. फिर जब मैं फ़रिश्ते की हालत से उड़ कर बाहर निकलूँगा तो वह हो जाऊँगा जो वहम और गुमान में भी नहीं आ सकता."

मौलाना रूम की मसनवी में यह विचार बार बार आता है कि—"रूह जमादात (मिट्टी पत्थर) की हालत से निकल कर नबातात (वनस्पति) की हालत में जाती है और बरसों वहाँ गुज़ारती है जब कि वह अपनी पहली हालत को भूल जाती है. फिर नबातात से निकल कर वह जानवरों की शकल में जन्म लेती है. उस हालत में वह अपनी नबाताती हालत को भूले रहती है. इस तरह एक जिस्म से दूसरे जिस्म में गुज़रती हुई वह इनसान की शकल में अक़्लमन्द यानी बुद्धिवाली बनती है. यहाँ भी उसे पहली हालतें याद नहीं आतीं. फिर इस हालत से निकल कर उसे ऊपर जाना है ताकि इस हिर्स और तलब (लोभ और लालच) से बाहर निकल कर वह असली अक़्ल हासिल करे जो इस वक़्त इसके गुमान से भी बाहर है. यूँ वह एक दूसरे के बाद जैसे ख़्वाब से निकल कर जागी हुई हालत में आती है और फिर आख़ीर में वह अपनी सब पिछली हालतों को फिर से जान जाती है और अपने असल आपे को पा लेती है."

मसनवी के कुछ शेरों का यह क़रीब क़रीब लफ़्ज़ी तरजुमा है.

पुराणों में और भागवत में भी जगह जगह यही बात कही गई है कि "आत्मा मिट्टी पत्थर, वनस्पति, जानवर और इनसान

चारों हालतों में से एक दूसरे के बाद निकलती है और इस तरह ऊपर को जाती हुई ब्रह्म यानी अपने आपे को पाती है."

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—"रहमान यानी अल्लाह ने इनसान को अपनी शकल पर पैदा किया."

ठीक यही बात इन्हीं शब्दों में इंजील में कही गई है.

यहूदियों की किताब 'क़ब्बाला' में लिखा है—"पत्थर पौदा हो जाता है, पौदा जानवर हो जाता है, जानवर आदमी हो जाता है, आदमी रूह और रूह .खुदा."

एक और यहूदी किताब '.जुहर' में लिखा है—"सब रूहें फिर फिर जन्म लेने की आज़माइशों में से निकलती हैं. आदमी यह नहीं जानता कि कितनी अजीब अजीब आज़माइशों और नए नए जन्मों में से उसे निकलना है. सब रूहों को उसी अल्लाह में लौट कर मिल जाना है जिससे वह निकली हैं. लेकिन इस काम को पूरा करने के लिये सब रूहों को अपने अन्दर वह कमाल पैदा करने होंगे जिनके बीज उनके अन्दर मौजूद हैं. अगर यह बात एक ज़िन्दगी में नहीं होती तो उन्हें फिर दूसरी ज़िन्दगी शुरू करनी होगी और फिर तीसरी और इसी तरह सिलसिला चलता रहेगा. यहाँ तक कि वह इस क़ाबिल हो जायँ कि फिर से अल्लाह में मिल सकें."

मज़हब और साइन्स दोनों कहते हैं कि एक ही असलियत हक़ीक़त या जान सब हालतों में से निकलती है. यही बात सब मज़हबों में कही गई है.

पारसी मज़हब की किताब 'गाथा' में एक जगह लिखा है—"जो आदमी नेक काम करके अल्लाह को .खुश करता है उसे अल्लाह हर नए जन्म में ज़ियादा ज़ियादा आत्मज्ञान (मारफ़त) और अपने ऊपर ज़ियादा ज़ियादा क़ाबू देता है. पर जो आदमी नेकी की जगह बदी करता है उसे अल्लाह हर नए जन्म में ज़ियादा बुरी हालत में पैदा करता है. जो लोग .जुल्म करते हैं वह बुरी योनियों में जा कर बार बार जन्म लेते हैं जब तक कि वह फिर लौट कर नेकी की तरफ न मुड़ें."

आदमी को अरबी में 'अशरफुल मख़्लूक़ात', संस्कृत में 'श्रेष्ठतम' और अंगरेज़ी में 'क्राउन आफ़ क्रियेशन' इसीलिये कहा गया है क्योंकि आदमी की शकल में आने पर ही रूह अपने असली रूप को यानी अपने अन्दर के ईश्वर अल्लाह को पहचानना शुरू करती है.

सूफ़ी लोग आम तौर पर तनासुख़ को मानते हैं. उसे वह 'इरतक़ा' या 'रिजत' भी कहते हैं. किसी किसी बात में तो वह हिन्दुओं से भी कहीं ज़ियादा बारीकियां बयान करते हैं. मसलन रूह के इनसान के जिस्म में फिर से पैदा होने को वह 'नस्ख़' कहते हैं. जानवर के जिस्म में फिर से पैदा होने को 'मस्ख़' कहते हैं. सब्ज़ी या वनस्पति की सूरत में पैदा होने को 'फ़स्ख़' कहते हैं और मिट्टी पत्थर की सूरत में फिर से पैदा होने को 'रस्ख़' कहते हैं.

स्कूलों में ऊपर की क्लास से नीचे की क्लास में लड़के बहुत कम गिराए जाते हैं. यही हाल तनासुख़ में है. आगे की क्लास में तरक़्क़ी कुछ ज़ियादा लड़कों की रोकी जाती है. तनासुख़ में भी ऐसा ही होता है. आम सिलसिला लड़कों के नीचे से ऊपर तक तरक़्क़ी मिलते रहने का ही है. बीज इनसान में सब हालतों के मौजूद हैं क्योंकि सब हालतें भी सब जगह सबके अन्दर मौजूद हैं. अल्लाह हर जगह और हर हाल में है. इसीलिये हर हालत अल्लाह में है.

जिन सूफ़ी आलिमों ने तनासुख़ को माना है उनमें अहमद बिन साबित, अहमद बिन यबूस, अबु मुस्लिम .ख़ुरासानी और शैखुल इशराक़ के नाम ख़ास हैं. इन सबने .क़ुरान की आयतों पर ही अपनी दलीलों को क़ायम किया है. ख़ास कर सूरतुलबरक़ आयत 61 से 92 तक और सूरतुलमायदा आयत 55 वग़ैरा.

ग़रज़ यह कि पुनर्जन्म या तनासुख़ के मामले में भी किसी न किसी शकल में सब मज़हबों की तालीम मिलती जुलती है.

—∞—

१३

पुनर्जन्म और कर्मफल

ऊपर हम आत्मा (रूह) और पुनर्जन्म की बाबत कुछ विचार प्रगट कर चुके हैं. यहाँ पहले हम पुनर्जन्म ही के बारे में कुछ और कहना चाहते हैं.

योरप के कुछ विद्वानों का कहना है कि पुनर्जन्म में विश्वास पुराने मिस्रियों से शुरू हुआ. कुछ लोग इस विश्वास को यूनान के मशहूर फ़िलासफ़र पाईथागोरस और हिन्दुस्तान के महात्मा बुद्ध से भी जोड़ते हैं. पर सच यह है कि यह विश्वास इन सब से बहुत पुराना है, और दुनिया के लगभग हर मुल्क में कुछ न कुछ लोगों ने हमेशा से इसे माना है. यूनान में पाईथागोरस से बहुत पहले लोग पुनर्जन्म के मानने वाले थे. पाईथागोरस ने भी इस असूल को माना और इसे इतनी सुन्दरता के साथ दुनिया के सामने रखा कि यह असूल उसी के नाम के साथ जुड़ गया. अफ़लातून (Plato) भी पुनर्जन्म के असूल को मानता था. उसने भी अपनी किताबों में इसे .खूब समझा कर बयान किया है. यूनानी विद्वानों और कैलडिया की पुरानी फ़िलासफ़ी के असर से यहूदियों ने भी पुनर्जन्म के असूल को माना. यहूदी किताबें पुनर्जन्म के विश्वास से भरी पड़ी हैं. यहूदी भाषा में पुनर्जन्म या तनासुख़ को 'गिल गूलिम' कहते थे. यहूदी परम्परा 'क़ब्बालह' में भी इस असूल को माना गया है. उनकी किताब 'ज़ोहर' में साफ़ लिखा है कि "सब रूहों को बार बार जन्म लेना पड़ता है." इस बारे में क़ब्बालह के विचार वेदान्त के विचारों और मुसलमान सूफ़ियों के विचारों से बिलकुल मिलते हुए हैं.

ईसाई मज़हब की शुरू की सदियों में ग्रास्टिक सम्प्रदाय के लोग जिन्हें सब इतिहासकार एक राय से विद्वान, समझदार और नेक बताते हैं पुनर्जन्म को पूरी तरह मानते थे. 'ग्रास्टिक' शब्द का निकास उसी जड़ से है जिससे संस्कृत शब्द 'ज्ञान' का. ईसा की चौथी और पाँचवीं सदियों में मनीशियन फ़िरक़े के लोग भी पुनर्जन्म को मानते थे. ईसा की दूसरी सदी में ईसाई धर्म का मशहूर विद्वान ऐरीगन साफ़ लिखता है कि—"बार बार जन्म लेने पर फ़रिश्ते आदमी बन सकते हैं और आदमी फ़रिश्ते. और बुरे से बुरे लोग भी तरक़्क़ी करते करते अच्छे आदमी या फ़रिश्ते बन जाते हैं." ईसाई विद्वान जोज़ेफ़स लिखता है—"रूहें सब शुद्ध होती हैं, नेक आदमियों की रूहें फिर फिर अच्छे जिस्मों में जाती हैं. बुरे आदमियों की रूहें सज़ा भुगतती हैं. थोड़े दिनों बाद वह फिर नया जन्म लेने के लिये भेजी जाती हैं. अच्छी रूहें अच्छे जिस्मों में और बुरी रूहें बुरे जिस्मों में. पर जो लोग अपनी आत्मा का ख़ून करते हैं उनकी रूहें पाताल की अँधेरी दुनिया में भेजी जाती हैं."

जोज़ेफ़स का आख़िरी फ़िक़रा ईशोपनिषद के इस फ़िक़रे से लफ़्ज़ ब लफ़्ज़ मिलता है—"अन्धं तमः प्रविशन्ति ये के चात्महनो जनाः"—यानी जो लोग आत्महत्या करते हैं वह घोर अन्धकार में जाते हैं.

इतिहास लेखक गिबन ने अपनी मशहूर किताब 'Decline and Fall of the Roman Empire' में लिखा है कि हज़रत ईसा के चेले पुनर्जन्म को मानते थे. मशहूर ईसाई आचार्यों में आरीगन, क्लीमैन्स एलेगज़ैन्ड्रिनस, सिनेसियस, चैलसीडियस जैसे बहुत से विद्वान पुनर्जन्म के असूल को मानते थे.

बाद के योरप के मशहूर विद्वानों और फ़िलासफ़रों में गिआरडानों ब्रूनो, वान हैलमान्ट, स्वीडिनबर्ग, गेटे, लैसिंग, चार्ल्स बौनेट, हरडर, ह्यूम, शौपनहावर जैसे बड़े बड़े विचारक पुनर्जन्म के मानने वाले थे.

अब हम ज़रा अफ़रीक़ा की पुरानी क़ौमों की तरफ़ निगाह डालें. पैट्रिक बौविन 'The Ancient Wisdom in Africa' में लिखता है—"जब मेरी उम्र दस बारह बरस की थी तो मैं उत्तर ट्रान्सवाल के जंगली इलाक़ों में अपने बाप की गाड़ी के पीछे पीछे जाया करता था. इस तरह ज़ूलू क़ौम के बहुत से सियाने लोगों से मेरी जान पहचान हो गई. इनमें से एक का नाम मनकन येज़ी था. मनकन येज़ी ने एक दिन मुझे समझाया कि इस जिस्म के अन्दर एक रूह है और रूह के अन्दर 'इतोंगगो' यानी विश्वात्मा या रूहे कुल का एक अंश या उसकी एक चिंगारी रहती है. मरने के बाद रूह कुछ देर जिस्म के आस पास मँडलाती रहती है. फिर किसी दूसरी दुनिया में चली जाती है. वहाँ उसकी शकल आधी जानवर की सी और आधी आदमी की सी हो जाती है. यही आदमी का असली रूप है क्योंकि आदमी के अन्दर जानवर का स्वभाव भी मौजूद है और विश्वआत्मा की छोटी सी चिंगारी भी मौजूद है. फिर कुछ दिनों के बाद रूह के ऊपर एक तरह की नींद छा जाती है. इसके बाद उसे यह सपना सा होने लगता है कि उसे धरती पर फिर जन्म लेकर अभी कुछ करना है और सीखना है. फिर वह रूह धरती पर आती है और बच्चे के रूप में जन्म लेती है. इस तरह हर रूह बार बार जन्म लेती रहती है यहाँ तक कि आख़ीर में आदमी 'सच्चा आदमी' बन जाता है और उसी 'इतोंगगो' यानी विश्वआत्मा में जा कर मिल जाता है जिससे वह निकला था. मामूली लोग 'इतोंगगो' को अपने अपने क़बीले का ख़ुदा समझते हैं. लेकिन समझदार आदमी जानते हैं कि 'इतोंगगो' ही सबके अन्दर की जान है. सब प्राणियों और सब चीज़ों में है, और उसी के नाते से धरती के सब आदमी भाई भाई हैं." मनकन येज़ी के यह विचार सब ज़मानों और सब देशों के लोगों के बुनियादी विचारों से मिलते हुए हैं. अफ़रीका में पुरानी क़ौमों के अन्दर इस तरह के काफ़ी सियाने मिलते हैं. मैं बहुत सी अफ़रीक़ी क़ौमों के इस तरह के सियानों से मिला. मैंने उनमें

से कुछ में सैकड़ों मील दूर की चीज़ें देख लेने और अपने विचार केवल अपनी दिमाग़ी ताक़त से सैकड़ों मील दूर दूसरों तक पहुँचा देने की शक्ति भी देखी. इनमें से एक सियाने ने मुझे अच्छी तरह समझाया कि किस तरह रूह धीरे धीरे पत्थर मिट्टी से निकल कर सबज़ी में जाती है, फिर सबज़ी से निकल कर जानवरों में जाती है, जानवरों से आदमी में, और इसी तरह ऊपर चढ़ते चढ़ते वह इतोंगगो यानी रूहे कुल में जा कर मिल जाती है. उसने मुझे पुनर्जन्म का असूल भी समझाया और आदमी के तरह तरह के जिस्मों का फरक़ भी बताया."

पैट्रिक बोविन ने और आगे चल कर लिखा है कि—"अफरीक़ा के पुराने लोगों में एक बिरादरी है जो 'बोना—बाकूलू अबासे खेमू' कहलाती है. इस फ़िक़रे के मानी हैं—'मिस्र के ऊँचे लोगों की बिरादरी'. मिस्र यानी इजिप्ट का एक पुराना नाम 'खेम' भी है. इसी खेम से अंगरेज़ी लफ्ज़ 'कैमिस्ट्री' बना है, चूंकि कैमिस्ट्री या कीमिया की साइन्स सब से पहले मिस्र ही से शुरू हुई थी. इस बिरादरी के लोग मानते हैं कि आदमी जब पूरा ज्ञानी हो जाता है तो फिर उसे जन्म लेने की ज़रूरत नहीं पड़ती. लेकिन फिर भी अगर वह चाहे तो अपनी मरज़ी से जन्म ले सकता है और धरती पर रह सकता है."

यह सब कहानी हमने केवल यह दिखाने को लिखी है कि दुनिया की लगभग सब क़ौमों में इस बारे में शुरू से एक से विचार रहे हैं.

अंगरेज़ी की मशहूर किताब 'The Encyclopedia of Religions and Ethics' में पुनर्जन्म पर एक लम्बा लेख है जो एक मामूली किताब के अस्सी सफ़ों के बराबर है. उसमें दिखाया गया है कि सब अधिक पुरानी क़ौमों के अलावा हिन्दुस्तानियों, ईरानियों, ज़रथुस्त्रियों, मिस्रियों, यहूदियों, यूनानियों, रोमियों, कैलटिक और टियोटोनिक क़ौमों सबने पुनर्जन्म को माना है.

दूसरी मशहूर किताब 'The Encyclopedia of Islam' में तनासुख़ पर एक बड़ा लेख है जिसमें बताया गया है कि इसलाम के बहुत से फ़िरक़े तनासुख़ को मानते हैं. ख़ास कर शियों में इस तरह के कई फ़िरक़े हैं. इनमें बहुत से फ़िरक़े यह भी मानते हैं कि बुरे आदमी फिर से जानवरों के रूप में पैदा होते हैं. कुछ ऐसे हैं जो रूह का बार बार आदमी के जिस्म में पैदा होना तो मानते हैं पर जानवर के जिस्म में पैदा होना नहीं मानते. कुछ यह मानते हैं कि जो लोग उनके फ़िरक़े में रह कर गुनाह करते हैं वह फिर दूसरे मज़हबों में जन्म लेते हैं. कुछ मानते हैं कि जो लोग दीन से बिलकुल इनकार करते हैं वह ऊंट, ख़च्चर, गधों, कुत्तों या बन्दरों के रूप में जन्म लेते हैं वग़ैरा वग़ैरा. इसी तरह के फ़रक़ और मज़हबों के लोगों के विचारों में भी हैं. बहुत से लोग तनासुख़ से इनकार भी करते हैं. ख़ास कर इसलाम और ईसाई मज़हबों में आजकल अधिकतर लोग तनासुख़ से इनकार करते हैं. इस सम्बन्ध की क़ुरान की आयतों और कुछ मुसलमान आलिमों के क़ौलों के कुछ लोग एक तरह से मानी करते हैं और दूसरे दूसरी तरह से. पर किसी न किसी दरजे तक किसी न किसी शकल में तनासुख़ या पुनर्जन्म के मानने वाले हर मज़हब, और हर मुल्क के अन्दर रहे हैं और हैं.

अब हम कर्मों के फल के असूल की तरफ़ आते हैं.

यह बात भी सब मज़हबों में पाई जाती है कि हर आदमी को अपने अच्छे कामों के लिये अच्छा फल मिलता है और बुरे कामों के लिये वैसा ही बुरा नतीजा भोगना पड़ता है. यह फल या नतीजा इस जन्म में मिले या किसी अगले जन्म में, इस दुनिया में या किसी और दुनिया में, जल्दी मिले या देर में, इतनी बात सब मानते हैं कि जैसा हम बोते हैं वैसा हमें काटना पड़ता है. इसी को हिन्दुओं में 'कर्म का असूल' कहा जाता है. इसी असूल को साइन्स दूसरी तरह बयान करती है. हर काम

या सबब का कोई न कोई नतीजा ज़रूर होता है और हर अमल (क्रिया) का रद्दे अमल (प्रतिक्रिया) ज़रूरी है. रूह की दुनिया में यह असूल अन्दर ही अन्दर काम करता रहता है. सब के अन्दर एक ही आत्मा काम कर रही है. इसलिये जो दूसरे को दुख देगा वह कभी न कभी .ख़ुद दुख भोगेगा और जो किसी दूसरे को सुख पहुँचायगा वह कभी न कभी .ख़ुद सुख भोगेगा. यह बात इसलिये भी क़तई ज़रूरी है कि एक ही रूहे आलम, रूहे आज़म या रूहुलरूह यानी एक ही विश्व आत्मा, सूत्र आत्मा या जगत आत्मा सबके अन्दर मौजूद है, और सबको एक डोर में बाँधे हुए है. हाथ अगर पाँव को तकलीफ़ पहुँचायगा तो हाथ को भी तकलीफ होगी.

शेख़ सादी ने बहुत ठीक कहा है—

बनी आदम आज़ाए यक दीगर अन्द
कि दर आफरीनश ज़ यक जौहर अन्द
चूं उज़वे बदर्द आवरद रोज़गार
दिगर उज़्वहारा न मानद क़रार

यानी आदम की औलाद जितने हैं सब एक दूसरे के हाथ पांव हैं क्योंकि सब एक ही जौहर यानी असल से निकले हैं. अगर बदन के किसी एक हिस्से में दर्द हो तो दूसरे हिस्से भी आराम से नहीं रह सकते.

वेद में लिखा है—

सहस्रशीर्षः पुरुषः, सहस्राक्षः सहस्रपात्.

यानी उस भगवान के हज़ारों सिर हैं, हज़ारों आँखें हैं, हज़ारों पैर हैं. इसका भी वही मतलब है जो शेख़ सादी का यानी यह कि सब अनगिनत सिरों, आँखों और पैरों में उसी एक अल्लाह का नूर काम कर रहा है, सब रूप उसी के रूप हैं और सब मिला कर एक जिस्म हैं.

इंजील में लिखा है—"जिस्म के एक अंग को तकलीफ

होती है तो सब अंगों को तकलीफ़ होती है, एक को सुख पहुँचता है तो सब को सुख पहुँचता है."

गरुड़ पुराण में लिखा है—"सुख और दुख हमें कोई बाहर से नहीं पहुँचाता, जो लोग समझते हैं कि कोई दूसरा उन्हें सुख दुख पहुँचाता है वह ग़लत समझते हैं. हम ख़ुद अपने कर्मों का फल भोगते हैं, इसलिये जो बुराई हमने की है उसके लिये हमें ख़ुद अपने को ठीक करना चाहिये."

इंजील में लिखा है—"अफ़सोस है उन लोगों पर जो बुराई को भलाई और भलाई को बुराई कहते हैं.....हमें धोके में नहीं रहना चाहिये. भगवान को कोई धोका नहीं दे सकता. जैसा कोई बोता है वैसा ही उसे काटना पड़ता है. जो बुराई बोएँगे वह बुराई काटेंगे, जो नेकी बोएँगे वह नेकी काटेंगे. काँटे की झाड़ियों से कोई अंगूर की फ़सल नहीं ले सकता और न कास से अंजीर लिये जा सकते हैं. भगवान सब को उनके कर्मों का फल देते हैं. जिस नाप से तुम दूसरे को नाप कर दोगे उसी नाप से तुम्हें नप कर मिलेगा. जैसा कोई करेगा वैसा पाएगा. अल्लाह रहम करने वाला है. वह हर एक को उसके कामों का फल देता है."

क़ुरान में लिखा है—"जो कोई मुसीबत किसी पर आती है वह उसी के किये का नतीजा होती है. जो कोई एक रत्ती भर भी नेकी करेगा वह उसका उतना ही फल पायगा और जो एक रत्ती भर भी बुराई करेगा वह उसका उतना ही नतीजा भुगतेगा. किसी के साथ ज़रा सी भी बेइन्साफ़ी नहीं होती. जो जैसा करता है वैसा ही पाता है."

दुनिया की सब मज़हबी किताबों में यही विचार बार बार और तरह तरह से दोहराया गया है.

महाभारत में लिखा है—"जिसके दिल का हिसाब साफ़ है उसे कुरुक्षेत्र या गंगा जाने की कोई ज़रूरत नहीं."

पारसी धर्म की किताबों में भी यही विचार बारबार आता है.

गाथा में लिखा है—"ऐ लोगो, अहुरमज़्द के बनाए हुए सुख और दुख के इन क़ानूनों को समझो. क़ानून यह है कि जो बुराई करेगा वह तकलीफ़ उठायगा और जो नेकी करेगा वह सुख भोगेगा."

चीन के कन्फ़ूशियन मत की किताब में लिखा है—"सुख और दुख लोगों पर यूं ही नहीं आ जाते. जैसा जो करता है वैसा उसे फल मिलता है. दूसरों की मिसाल का भी असर होता है. एक कुनबे के लोग दूसरे कुनबे से प्यार करते हों तो सारे देश में प्यार फैल सकता है. एक की नेकी से सब में नेकी आती है. और एक की बुराई से सब में बुराई और गिरावट फैल सकती है. इस तरह एक का दूसरों पर असर पड़ता है."

एक दूसरी चीनी धर्म पुस्तक कोआंगत्ज़े में लिखा है—"जो लोग दिन दहाड़े बुराई करते हैं उन्हें लोग सज़ा देते हैं और जो छिप कर बुराई करते हैं उन्हें भगवान सज़ा देते हैं. जो दोनों तरह की बुराई से बचते हैं वही ठीक चाल चलते हैं."

एक और चीनी किताब शूकिंग में लिखा है—"भगवान नेकों को आशीर्वाद देते हैं और बुरों को दंड देते हैं. उनके दंड देने की ग़रज़ भी यही होती है कि नेकी बढ़े और दंड देना बन्द हो."

एक और चीनी किताब में लिखा है—"भलाई और बुराई का नतीजा ऐसे ही आदमी के पीछे पीछे आता है जैसे उसका साया."

बौद्ध ग्रन्थ महावग्ग में लिखा है—"जो कोई बुरी बात कहेगा या बुराई करेगा उसके पीछे पीछे दुख इसी तरह आयगा जिस तरह बैलो के पीछे गाड़ी का पहिया."

इंजील में लिखा है—"जो कोई ऊपर की तरफ़ पत्थर फेंकता है वह उसी के सिर पर आ कर लगता है. जो कोई गड्ढा खोदेगा वह उसी में गिरेगा. जो दूसरे के लिये जाल

बिछायगा वह उसी में फँसेगा. जो दूसरे को नुक़सान पहुँचायगा वह .खुद नुक़सान उठायगा.

इसी तरह की बातें सब धर्म ग्रंथों में भरी पड़ी हैं.

महाभारत में एक जगह बहुत अच्छा लिखा है—"कुछ लोग एक दूसरे के डर से पाप नहीं करते. कुछ लोग राजा के दंड के डर से पाप नहीं करते. कुछ इस डर से पाप नहीं करते कि मरने के बाद यमराज उन्हें दंड देंगे. पर आदमी को असली दंड देने या न देनेवाला उसके अपने अन्दर की आत्मा है. जिसकी अपनी आत्मा सन्तुष्ट है उसका कोई यमराज कुछ नहीं बिगाड़ सकता. उसे किसी दूसरे जज या न्यायाधीश से डरने की ज़रूरत नहीं है. आत्मा ही असली यमराज है."

महाभारत ही में एक दूसरी जगह लिखा है—"बड़े बड़े पुण्य और बड़े बड़े पापों का फल आदमी को यहीं इसी दुनिया में मिल जाता है. कोई फल से बच नहीं सकता, क्योंकि फल देने वाला अन्तर्यामी 'यम' सबके दिलों के अन्दर बैठा हुआ है."

अच्छे या बुरे कामों के फल से न बचने का असली कारण यही है कि आदमी किसी भी दूसरे से तो बच सकता है पर अपने दिल अपनी आत्मा से कैसे बच सकता है. इस तरह की बहसें जैसे जीव स्वतन्त्र है या परतन्त्र, क़द्र ठीक है या जब्र, ऐसे ही ईश्वर दयालु है या न्यायी, रहीम है या मुनसिफ़, इस तरह की सब बहसें केवल इसलिए होती हैं कि हम इस बात को भूल जाते हैं कि फ़ैसला करनेवाला जज कहीं बाहर नहीं बैठा, वह हमारे ही अन्दर है. जो कोई यह समझता है कि वह पाप करने पर मजबूर है तो वह नतीजा भुगतने पर भी मजबूर होगा. मासूम बच्चा भी अगर ग़लती से ज़हर पी लेगा तो बीमार पड़ेगा या मरेगा. यह सज़ा ही हमें पाक करती है. एक बड़े दरजे तक यह भी सच है कि भगवान जिसे

सबसे अधिक प्यार करते हैं उसे ही सब से अधिक आज़माते हैं, परखते हैं, कष्ट दे देकर पाक करते हैं.

कुछ लोगों में यह एक आम बीमारी है कि अपना दोष दूसरों पर डालना चाहते हैं. कोई क़िसमत या भाग्य को बुरा कहता है, कोई कहता है झगड़े की पहल दूसरे ने की थी, जंग की शुरुआत दूसरे देश की तरफ से हुई, वग़ैरा वग़ैरा. पर जब आदमी समझने लगता है तो भलाई बुराई सब की जड़ अपने ही अन्दर देखता है. सब जीवन एक है, एक ही सूत्रात्मा सब को एक डोरे में पिरोए हुए है. सब जानदार एक दूसरे का दुख सुख अनुभव करते हैं, सब एक दूसरे के विचारों पर असर डालते हैं. क़ुदरत के किसी हिस्से में कोई हरकत हो सारी सृष्टि पर उसका असर पड़ता है.

पच्छिम के बड़े से बड़े साइन्सदां जीवन की इस एकता, इस अखंडता को मानते जा रहे हैं. सर जेम्स जीन्स ने इंगलैन्ड की 'ब्रिटिश एसोसिएशन फार दि ऐडवान्समैन्ट आफ साइन्स' के सामने लेकचर देते हुए सन् 1935 में कहा था—"जब हम अपने को देश और काल यानी मकान और ज़मान के अन्दर देखते हैं तो हम साफ़ अलग अलग प्राणी मालूम होते हैं, पर जब हम देश और काल को पार कर जाते हैं तो हम सब ज़िंदगी की एक लगातार बहती हुई धार में मिलकर एक हो जाते हैं." साइन्स के विद्वान यह भी मानते है कि जान और बेजान, जड़ और चेतन कोई अलग अलग वजूद नहीं हैं. सब एक लगातार बहता हुआ दरिया है. यही वेदान्त है. यही तसव्वुफ है.

गुलशने राज में लिखा है—"हर वक़्त लिबास बदलते रहने से लिबास बदलने वाला नहीं बदलता. यह लिबास ही उस हस्ती-ए-कुल यानी विश्वात्मा से हमें थोड़ी देर के लिये जुदाई के धोखे में डाल देता है. यह लिबास यानी यह जिस्म ही 'हक़' (ईश्वर) और 'बन्दे' (जीव.) का फ़रक़ पैदा करता है."

*

१४

आत्मा की उन्नति का रास्ता

पहले के अध्यायों में हम तीन बड़े बड़े असूलों की चरचा कर चुके हैं जो सब धर्मों में पाए जाते हैं. इस अध्याय में हम इसी तरह के चौथे असूल की चरचा करना चाहते हैं. दुनिया के सब धर्म किसी न किसी रूप में यह मानते हैं कि जिस तरह यह बाहर की या माद्दी दुनिया है जिसका सम्बन्ध आदमी की पाँच बाहरी इन्द्रियों यानी उसके हवा से-ख़मसा और उसकी जाग्रत अवस्था से है उसी तरह एक दूसरी दुनिया है जिसका सम्बन्ध आदमी की सूक्ष्म (लतीफ़) इन्द्रियों से है और जिसका नाता आदमी की सपने की हालत, गहरी नींद की हालत और दूसरी अन्दरूनी हालतों से है. जिस तरह आदमी की रूह एक दिन और दूसरे दिन के बीच में रात को सपनों के अन्दर से निकलती है उसी तरह उसकी रूह मौत और पुनर्जन्म के बीच में इन अधिक सूक्ष्म (लतीफ़) दुनियाओं के अन्दर से निकलती है. आदमी से नीचे, उसके बराबर और उससे ऊपर बहुत सी दुनियाएँ हैं जिनमें तरह तरह के वजूद या तरह तरह की हस्तियाँ रहती हैं. आदमी ख़ास कोशिशें करके और ख़ास तरह की साधना (रियाज़त) करके अपने अन्दर उन सूक्ष्म इन्द्रियों को जगा सकता है और उन छिपी हुई ताक़तों को उभार सकता है, जिनके ज़रिये यह सब नीचे ऊपर की दुनियाएँ उसके लिए खुल जाएँ.

आज कल की साइन्स भी इस तरह की दुनियाओं, वजूदों और शक्तियों की सम्भावना को मानती है. साइन्स वाले इसे 'एक्सटेनशन आफ़ फ़ैकलटी' यानी 'मानसिक शक्ति का फैलाव'

कहते हैं. साइन्सदानों ने इस बारे में बड़ी बड़ी खोजें की हैं, जिन्हें 'साइकिकल रिसर्च' कहा जाता है. इस तरह की खोज करने वालों ने आदमी के अन्दर छिपी हुई दो शक्तियों को सच्चा माना है. एक यह कि आदमी ठीक तरह से कोशिश करे तो किसी एक जगह से बैठे हुए हज़ारों मील दूर की चीज़ों और घटनाओं को देख सकता है. दूसरी यह कि आदमी दूर से बैठे हुए भी दूसरों के विचारों को जान सकता है और दूसरों के दिमाग तक अपने विचार पहुँचा सकता है. इसी तरह की चीज़ो को योग सिद्धि, दिव्य शक्ति, कमाल, मोजज़ा, करामात, या रौशन ज़मारी कहा जाता है, सब देशों में और सब धर्मों के लोगों ने किसी न किसी रूप में इन बातों को माना है.

इस तरह की शक्तियों पर अचरज करने की कोई बात नहीं. यह सब शक्तियाँ केवल उन शक्तियों का विकास या फैलाव हैं जिन्हें हम रोज़मर्रा इस्तेमाल करते रहते हैं. स्वर्ग, नरक, लोक, भुवन, जन्नत, दोज़ख़, अर्श, अर्द, लौह और तबक़ यह सब हमारे अन्दर की हालतें भी हैं और बाहर की चीज़ें भी हैं, ठीक जिस तरह सुख और दुख हमारे अन्दर हैं, और बाग़ और जेल हम से बाहर हैं.

देव, उपदेव, सिद्ध, विद्याधर, अप्सरा, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, फ़रिश्ते, परी, जिन्नात, फ़रशार, अमेश स्पन्द, यज्द, शैतान, दैत्य, असुर, इसी तरह ज़मीन, पानी, आग, हवा, जंगल और पहाड़ों की अच्छी और बुरी रूहें, इस तरह की चीज़ें हैं जिन की चरचा सब धर्मों, सब देशों और सब बोलियों में पाई जाती है. जिस तरह आदमी का जिस्म ख़ास तरह के माद्दों से बना है उसी तरह इन सबके जिस्म दूसरी तरह के माद्दों से बने होते हैं. उनके जिस्म आम तौर पर हमारी मामूली आँखों से दिखाई नहीं देते. जिस तरह हवा का बवण्डर हो जाने पर हम हवा को कुछ कुछ देख पाते हैं, क्योंकि उसमें पानी, रेत या ख़ाक का मेल आ जाता है, इसी तरह ख़ास सूरतों में हम उन्हें

भी देख या छू पाते हैं. यह समझना कि सिवाय उन जिस्मों के जिन्हें हम देख या छू सकते हैं और कोई जिस्म दुनिया में हो ही नहीं सकते, न और किसी तरह के जानदार हो सकते हैं, छोटा मुँह बड़ी बात है, जो हममें से किसी को शोभा नहीं देता. दुनिया की मज़हबी किताबों में जिस तरह सब्ज़ीख़ोर और मांसख़ोर जानवरों और सभ्य असभ्य इनसानों का ज़िकर आता है वैसे ही इस तरह के भी बीसों छोटे बड़े नेक और बद वजूदों का बयान मिलता है.

यहूदी और ईसाई धर्म ग्रन्थों में नौ तरह के फ़रिश्तों का ज़िकर आता है. इसलाम में पाँच तरह के जिन्नात के अलावा चार और ख़ास फ़रिश्तों का ज़िकर है : जिबराईल, मिकाईल, अज़राईल और इसराफ़ील. इसी तरह पुराणों में चार लोकपालों और आठ दिक्पालों का ज़िकर है. यहूदी धर्म में रहमील दया का फ़रिश्ता है, तहरील पाकी का, फ़िदाईल निजात का, सदक़ील न्याय का और राज़ील अल्लाह के रहस्यों का फ़रिश्ता है. अरबी ज़बान में भी 'रहम' दया को कहते हैं, 'तहर' पाकी को, 'फ़िदा' निजात को, 'सिदक़' न्याय या सचाई को और 'राज़' रहस्य को. अरबी और यहूदी भाषाएँ दोनों एक दूसरे की चचेरी बहनें हैं. कहावत है कि अरब और यहूदी हज़रत इबराहीम के दो लड़कों की अलग अलग औलाद हैं. बौद्ध धर्म और पारसी धर्म में भी इन सब वजूदों को इसी तरह माना गया है.

इन के अलावा आदमियों की वह रूहें हैं जो इस दुनिया के बीच में एक अनोखे ढंग से तैरती या फिरती रहती हैं. और जो लगभग वैसे ही हैं जैसे किसी क़ौम में मजज़ूब या पागल. यह वह लोग हैं जो मर चुके हैं और जिनकी कुछ बड़ी बड़ी ख़ाहिशें इस जिस्म में बिना पूरी हुए रह गईं. इनकी यह ख़ाहिशें ही इन्हें हमारी ज़मीन से बाँधे रखती हैं, किसी को कम देर तक और किसी को ज़ियादा देर तक. उस मियाद के

ख़तम हो जाने के बाद यह रूहें दूसरी दुनिया को चली जाती हैं. इन रूहों में जैसा जैसा इनका वहम, ख़ब्त या पागलपन होता है उसी के अनुसार कोई नेक और कमज़ोर होती हैं, और कोई ज़ोरदार और बदनियत होती हैं. हिन्दू धर्म में इन्हें प्रेत और पिशाच कहते हैं, और इनकी बहुत सी क़िस्में बताई गई हैं. इसलाम में इन्हीं को आसेब और ग़ूल कहा गया है. ईसाई धर्म में इनके और और नाम हैं.

इस तरह की रूहों से न इनकार करने की कोई वजह है और न इन्हें पूजने की कोई ज़रूरत है. इनमें जो अच्छी रूहें हैं जो आदमी का भला करना चाहती हैं उनसे आदमी अपनी साधना (रियाज़त) में मदद ले सकता है. इसके ख़िलाफ़ अगर तान्त्रिक उपायों से या 'जादू' से जिसे संस्कृत में 'यातु' कहते हैं बुरी रूहों को सिद्ध किया जाता है तो उनसे आदमी की जिसमानी और इख़लाक़ी बरबादी ही होती है. हर मज़हब में आदमी का यह फ़र्ज़ बताया गया है कि इस तरह की रूहों के लिये यह दुआ प्रार्थना करता रहे कि जल्दी से जल्दी हमारी ज़मीन के साथ उनके बन्धन टूटें और वह अपने सफ़र में आगे बढ़ें. सच यह है कि यह दुआ तो हमें सब मनुष्यों और सब प्राणियों के लिये ही करनी चाहिये. इस काम के लिये सब धर्मों में कुछ तरीक़े भी बताए गए हैं जिनमें सब से बड़ी और ज़रूरी चीज़ है अपने दिल और दिमाग़ को पाक रखना, अपनी आत्मा को मज़बूत बनाना और अपने अन्दर सब के साथ प्रेम पैदा करना. दिल की पाकी, सचाई और प्रेम से हमारे अन्दर की रूहानी फ़िज़ा उसी तरह महक उठती है जिस तरह बाहर की हवा सुगन्ध और ख़ुशबू जलाने से. हमारे ऐसा करने से आस पास की बुरी रूहों की बुराई कम होती है और नेक रूहों की नेकी बढ़ती और फलती है.

हिन्दू धर्म में जिसे 'योग' कहा गया है इसलाम में उसी को 'सलूक' कहा गया है. योग की बहुत सी 'भूमियाँ' हैं. सलूक

के बहुत से 'मुक़ामात' हैं. सब मज़हब रूह की इस तरक़्क़ी के लिये तीन तरह के जिस्म मानते हैं. हिन्दू धर्म में इन्हें स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर कहते हैं. जैन धर्म में इन्हीं को औदारिक, तैजस और कारमान शरीर कहते हैं. बौद्ध इन्हीं को निर्माणकाय, समभोगकाय और धर्मकाय कहते हैं. ईसाई इन्हें बाडी, सोल और स्पिरिट कहते हैं. पुराने ज़ूल्यू धर्म, मिस्री धर्म और यूनानी धर्म में भी इनके इसी तरह अलग अलग नाम हैं. यहूदी इन्हें 'नेफ़ेश', 'रुअह' और 'नूसमा' कहते हैं. मुसलमान सूफ़ी इन्हें नफ़्स, दिल और रूह के नाम से पुकारते हैं. यह तीनों जिस तरह पिंड यानी आलमे सग़ीर में हैं उसी तरह ब्रह्मांड यानी आलमे कबीर में हैं. आलमे सग़ीर और आलमे कबीर ही को क्षुद्रविराट और महाविराट भी कहा जाता है. ऐसे ही इनके ओर और भी नाम हैं. आलमे कबीर को सूफ़ी लोग जिस्मे कुल, शकले कुल, रूहे कुल, नफ़्से कुल, और अक़्ले कुल भी कहते हैं. यह अलग अलग नाम उसी एक वजूद के अलग अलग रूप दरशाने के लिये इस्तेमाल किये जाते हैं.

हिन्दू साधना में जिन तीन हालतों का नाम जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति है उन्हीं को मुसलमान सूफ़ी आलमे नासूत, आलमे मलकूत और आलमे जबरूत कहते हैं. इन तीन हालतों से भी ऊपर पहुँच कर हिन्दू योगी तुरीया अवस्था और तुरीयातीत अवस्था में जाते हैं. सूफ़ी इन्हें आलमे लाहूत और आलमे हाहूत कह कर पुकारते हैं. यह आलमे जबरूत से ऊपर की हालतें हैं. मुसलमान सूफ़ी सात अर्द और सात अर्श गिनाते हैं. हिन्दू योगी इन्हीं को चौदह भुवन या चौदह लोक कहते हैं. इनमें सात अर्द यानी पाताल के लोक हैं और सात अर्श यानी ऊपर के लोक हैं जिन्हें भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्यम् भी कहा जाता है. हर मुक़ाम के बहुत से अलग अलग दरजे हैं. वेदान्ती पाँच कोशों की चरचा करते हैं. बौद्ध उन्हें पाँच स्कन्ध कहते हैं. सूफ़ी उन्हीं को पाँच तरह का नफ़्स कहते हैं—

नफ़्से अम्मारा, नफ़्से लव्वामा, नफ़्से मुतमइन्ना, नफ़्से मुलहिमा और नफ़्से रहमानी. वेदान्ती इन दो तरह के जिस्मों को अतिवाहिक और आधिभौतिक कहते हैं. सूफ़ी उन्हीं को नफ़्से जारी और नफ़्से मुक़ीम, या जिस्मे लतीफ़ और जिस्मे कसीफ़ कहते हैं.

मशहूर सूफ़ी सन्त जामी ने योगी यानी सालिक के इन हालतों में से गुज़रने को बड़े सुन्दर शब्दों में बयान किया है, और लिखा है कि—

"और लोग सब एक मरतबा मरते हैं और बेचारा जामी बार बार मरता है."

इस बार बार मरने में स्थूल शरीर यानी जिस्मे कसीफ़ के सूक्ष्म शरीर यानी जिस्मे लतीफ़ से जुदा होने ही की तरफ़ इशारा है. सूफ़ी जामी ने अपनी वाणी में यह भी दिखाया है कि अलग अलग धर्मों के लोग इस रास्ते पर चलते हुए एक ही सी हालतों में से गुज़रते हैं, एक दूसरे से मिलते रहते हैं, और उनके अपने अपने पीर, पैग़म्बर, गुरु या अवतार उन्हें प्रेम के साथ मदद देते रहते हैं, और जितना जितना वह आगे बढ़ते जाते हैं उनके आपसी फ़रक़ मिटते जाते हैं.

मोहम्मद साहब अपने ख़ास चेलों को उपदेश दिया करते थे—"मूतू क़बलुल मूतू" यानी "मरने से पहले मरना सीखो."

उपनिषदों में लिखा है—"अपनी आत्मा को अपने शरीर से धीरज के साथ इस तरह खेंच कर अलग करना सीखो जिस तरह मूंज का रेशा या गूदा मूंज से धीरे धीरे अलग किया जाता है."

इंजील में भी इस तरह के तजरबों, प्रयोगों और अनुभवों का कई जगह बड़ा सुन्दर बयान मिलता है. जैन ग्रन्थों में योगी अपने गुरु से प्रार्थना करता है कि "मुझे अपनी आत्मा को शरीर में से इस तरह खींच कर अलग करना सिखा दो जिस तरह

तलवार मियान में से खींच कर अलग की जाती है." योग सूत्रों में सूक्ष्म शरीर को स्थूल शरीर में से खेंच कर अलग कर लेने की इस शक्ति को 'महा विदेहा' नाम दिया गया है. इस तरह इस माद्दी जिस्म से अलग होकर सूक्ष्म शरीर को साथ लिये हुए आत्मा जहाँ चाहे विचरती है.

इस हालत तक पहुँचने के लिये बड़े बड़े उपवास करने पड़ते हैं, रतजगे रखने पड़ते हैं, भीतर और बाहर की बड़ी बड़ी साधनाएँ करनी पड़ती हैं, और ध्यान और शग़ल की ज़रूरत होती है. इसके लिये किसी ऐसे गुरु, मुरशिद या पीर की ज़रूरत होती है जिसे .खुद इन हालतों का तजरबा हो चुका हो. इस मुक़ाम पर पहुँच कर योगी या सालिक इस जिस्म को इसी तरह इस्तेमाल करता है जिस तरह आदमी पहरने के कपड़ों को इस्तेमाल करता है, जब चाहे उतार कर धर देता है और जब चाहे फिर पहर लेता है. इसी तरह धीरे धीरे उन्नति करता हुआ वह कर्मों के बन्धन से छूट जाता है. फिर उसे दोबारा पैदा होने और मरने की ज़रूरत नहीं होती. इस लोक में इसी का नाम निजात या मुक्ति है. फिर वह सबमें अपने को और अपने में सबको देखने लगता है. वह अमर हो जाता है.

१५

एक ही ख़याल सब जगह

एक और सचाई जिसकी तरफ दुनिया के सब मज़हब हमारा ध्यान दिलाते हैं यह है कि जो कुछ इस सारे आलम में है वही सब हर छोटे से छोटे ज़र्रे में भी है. हिन्दू धर्म में इनसान के जिस्म को पिंड और इस सारे विश्व या आलम को ब्रह्मांड कहा जाता है. वेदान्त की एक मशहूर कहावत है—

यथा पिंडे तथा ब्रह्मांडे

यानी—जो कुछ पिंड के अन्दर है वही ब्रह्मांड के अन्दर है. पिंड और ब्रह्मांड ही को 'क्षुद्र विराट' और 'महा विराट' भी कहते हैं. मुसलमान सूफी इन्हीं को 'आलमे सग़ीर' और 'आलमे कबीर' कहते हैं. अंगरेज़ी में इन्हीं को 'माइक्रो काज़म' और 'मैकरो काज़म' कहते हैं.

ज़ाहिर है कि जब जो कुछ पिंड में है वही ब्रह्मांड में है तो जो कुछ एक पिंड में है वही सब पिंडों में होना चाहिये. इसीलिये श्री कृष्ण ने भगवद् गीता में कहा है—

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पंडिताः समदर्शिनः॥

यानी—जो लोग पंडित यानी सच्चे जानकार हैं वह उस ब्राह्मण को जो विद्या और विनय (इज्ज़) से सम्पन्न है, गाय को, हाथी को, कुत्ते को और चांडाल को सब को एक निगाह से देखते हैं.

सूफ़ी कहता है कि—

मोहक़्क़िक़ हमीं बीनद अन्दर एबिल
कि दर .खूबरूयाने चीन-ओ-चगिल

यानी—जो सचाई को जानने वाला है वह ऊंट के टेढ़े मेढ़े जिस्म के अन्दर भी उसी चीज़ को देखता है जिसे वह चीन या चगिल के .खूबसूरत लोगों के अन्दर देखता है.

इसी का नाम समदर्शिता है. यही सच्चा ज्ञान है, यही असलियत को देखना है. दुनिया की सारी साइन्सें अपने अपने ढंग से इसी समदर्शिता के असूल से निकली हैं. मन्तक़ या लाजिक में इसी का नाम इंडक्शन है. यह इंडक्शन ही साइन्स की बुनियाद है. साइन्सदां हमें बताते हैं कि जो कुछ इस सारे सोलर सिस्टम (सौर जगत) यानी निज़ामे शमसी में है वही हर ऐटम, अणु या ज़र्रे में है.

यही बात तरह तरह से यहूदी मज़हब, ईसाई मज़हब और इसलाम तीनों में बार बार कही गई है.

यहूदी मज़हब की किताब ज़ोहर में लिखा है—"बुद्धिमान आदमी इस सृष्टि यानी आलम के सारे रहस्यों (राज़ों) को किसी भी एक आदमी के चेहरे में पढ़ सकता है." यहूदी क़ब्बाला की मशहूर कहावत है—"जो ऊपर है वही नीचे है."

तलमूद में लिखा है—"ठीक जिस तरह रूह इस जिस्म के अन्दर रमी हुई है उसी तरह .खुदा सारे आलम के अन्दर रमा हुआ है, जिस तरह रूह जिस्म को सँभाले हुए है उसी तरह .खुदा आलम को सँभाले हुए है, जिस तरह रूह देखती है लेकिन देखी नहीं जा सकती, उसी तरह .खुदा देखता है लेकिन देखा नहीं जाता."

मुसलमान सूफ़ी इनसान के जिस्म और सारे आलम की इस उपमा को बहुत अधिक बढ़ा कर ले गए हैं और उन्होंने बड़ी तफ़सील के साथ इसको बयान किया है, यहाँ तक कि पढ़ने वाले को बिलकुल ऐसा लगने लगता है कि यह सारा आलम

एक जीता जागता जिस्म है जिसके हम सब अंग या ज़र्रे हैं. ख़ाजा ख़ां ने अपनी अंगरेज़ी किताब 'दि फ़िलासफ़ी आफ़ इसलाम' में मुसलमान सूफ़ियों के इस तरह के बयानों और वेद, पुराणों और उपनिषदों के बयानों को ख़ूब तफ़सील के साथ मिला कर दिखाया है. ख़ास कर दक्खिन के मुसलमान सूफ़ियों के बयानों और हिन्दू पुराणों के बयानों में तो फ़रक़ निकाल सकना ना मुमकिन है.

कुछ साइन्स वालों ने यह राय भी ज़ाहिर की है कि आसमान के सूरज, चांद, तारे और नक्षत्र सब अलग अलग जीती जागती जानदार हस्तियां हैं. एक जरमन साइन्सदां फ़ैकनर ने ख़याल ज़ाहिर किया है कि हमारी यह ज़मीन एक जानदार हस्ती है. मशहूर अमरीकी दार्शनिक विलयम जेम्स ने भी अपनी एक किताब 'ए प्लुरैलिस्टिक यूनिवर्स' में बड़ी विद्वत्ता के साथ इस ख़याल की ताईद की है. इसी तरह के ख़याल इसलाम और दूसरे धर्मों में भी मिलते हैं.

यह सब बात क़ुदरती है. जब ईश्वर अल्लाह एक है, एक ही आत्मा सब के अन्दर रमा हुआ है तो सब के अन्दर इस एकता का होना भी लाज़मी है. ऊपरी नाम रूपों की अलहदगी हमें इस एकता को देखने के लिये और भी बेचैन कर देती है. इसीलिये राजकाज यानी सियासत में आदमी 'बराबरी ! बराबरी !' का नारा ऊँचा करने पर मजबूर हो जाता है, और धार्मिक आदमी कहता है—'सर्वम् सर्वत्र सर्वदा' यानी सब सब जगह और हमेशा है.

सूफ़ी इसी को 'इन्दराजे कुल फिलकुल' कहता है. दोनों के एक ही मानी हैं.

इंजील में लिखा है—"भर पूरता उसकी है जो सबको सब में भरे हुए है."

यहूदी किताब तलमूद में लिखा है—"इस इतने बड़े आलम

के अन्दर कोई ज़र्रा नष्ट नहीं होता. आदमी की आत्मा के अन्दर सारा आलम छिपा हुआ है. वह नष्ट कैसे हो सकती है ?"

ओस की हर बूँद के अन्दर पूरा सूरज दिखाई देता है और हर अक्स सूरज से है. हर छोटे से छोटे बीज के अन्दर पूरा दरख़्त छिपा हुआ है, और बीज की हस्ती दरख़्त से है.

साइन्स हमें बताती है कि हर बीज और हर ज़र्रे के अन्दर बेअन्त फैल जाने की शक्ति है. हर ऐटम अनगिनत चक्कर लगा रहा है, हर ऐटम दूसरे सब ऐटमों के ऊपर असर डाल रहा है, रोशनी की बेअन्त किरनें हर ज़र्रे पर सब ज़र्रों के अनगिनत अक्स या फ़ोटो फेंक रही हैं. यह अनगिनत फ़ोटो चारों तरफ़ से पड़ रहे हैं और दूर दूर के सितारों से भी आ रहे हैं. यही हाल आवाज़ों का है. जो चीज़ जहाँ असर डालती है वह लाज़मी तौर पर वहाँ है. ग़रज़ यह कि सब सब जगह है. मशहूर विद्वान् बर्गसन ने अपनी किताब 'क्रीएटिव एवोल्यूशन' में लिखा है—"कोई माद्दी नुक़्ता ऐसा नहीं है जो हर दूसरे माद्दी नुक़्ते पर असर न डालता हो. जब हम देखते हैं कि जो चीज़ जहाँ असर डालती है वहाँ वह ज़रूर .ख़ुद भी है तो हमें क़ैरेडे की तरह यह मानना पड़ता है कि सृष्टि के सब ऐटम एक दूसरे में घुसे हुए हैं और उनमें से हर एक सारे आलम में रमा हुआ है."

इसलिये किसी एक ज़र्रे को पूरी तरह देख लेना और समझ लेना सारी दुनिया को देख लेना और समझ लेना है, .ख़ुदा को देख लेना और समझ लेना है.

इसी तरह का एक और ख़याल है जो सब मज़हबों में एक सा पाया जाता है. वह यह है कि जिस तरह आदमी से नीचे वजूदों या हस्तियों का एक सिलसिला है जैसे जानवर, दरख़्त, सोना, चाँदी, मिट्टी, पत्थर वग़ैरा, उसी तरह आदमी से ऊपर भी वजूदों का एक सिलसिला है. इन ऊपर के वजूदों में इस तरह की रूहें भी हैं जो आदमी की उसी तरह देख रेख

करती रहती हैं, उसे रास्ता दिखाती रहती हैं, उसे भटकने से बचाती रहती हैं जिस तरह माँ बाप या उस्ताद अपने बच्चों या शागिरदों को बचाते रहते हैं. योरप के बड़े बड़े मशहूर साइन्सदां खुले इस ख़याल की ताईद कर चुके हैं. सब मज़हब इसे मानते हैं. वैदिक धर्म में इन्हें ऋषि, मुनि, मनु, कुमार और अवतार नामों से पुकारा गया है. इनके अपने अपने दरजे हैं. बौद्ध धर्म में इन्हें बोधिसत्त्व, प्रत्येकबुद्ध और बुद्ध नाम दिया गया है. जैन धर्म इन्हें अरहत और तीरथंकर कहता है. इसलाम में इन्हीं को क़ुतुब, ग़ौस, अबरार, अख़ियार, बली, नबी और रसूल कहा गया है. ईसाई धर्म में इन्हें सेन्ट, मसीह और 'ख़ुदा का बेटा' कहा गया है. इंजील में इसी तरह के और भी बहुत से नाम हैं. यहूदियों में इन्हें सेज, प्राफ़ेट और पैट्रिआर्क कहते हैं. पारसी धर्म में इन्हें सोश्यन्त, और नरोइश नरो कहा गया है. सोश्यन्त का मतलब है 'प्रेमी' यानी इनसानी समाज के प्रेमी. नरोइश नरो का मतलब है 'आदमियों के आदमी', 'ऊँचे आदमी'. इन सब में बड़े छोटे दरजे हैं.

यह ऊँची रूहें ज़मीन पर आदमी की शकल में भी आती रहती हैं.

चीन के ताओ धर्म की किताब में लिखा है—

"ऊँचे आसमानों का बड़ा सम्राट् ज़मीन पर उतरता है, सैकड़ों बार उतरता है, इसलिये कि आम लोगों के साथ रहे और उन्हें सचाई सिखावे, रोगियों को अच्छा करे, ख़ुद सब के साथ कष्ट भोगे और बार बार अपने प्राण दे, ताकि उसके कष्टों से बहुत से दिलों के लिये ख़ुशी और नेकी का चशमा फूट निकले".

कृष्ण ने गीता में साफ़ कहा है—

"ऐ अर्जुन ! जब जब धर्म में गिरावट आती है और अधर्म फैलता है तब तब मैं पैदा होता हूँ ताकि नेक लोगों को बचाऊँ और बुराई करने वालों को ख़तम करूँ, और धर्म को फिर से

क़ायम करूँ. इस काम के लिये मैं युग युग में पैदा होता रहता हूँ."

यही बात दुर्गा सप्तशती और दूसरी हिन्दू किताबों में बार बार और तरह तरह से कही गई है.

फ़ैज़ी ने गीता की ऊपर की मशहूर लाइनों का बड़ा सुन्दर फ़ारसी तरजुमा किया है—

चुं बुनियादे दीं सुस्त गरदद बसे
नुमायेम .खुद रा ब शकले कसे

यानी—जब दीन की बुनियाद बहुत सुस्त हो जाती है तब हम आदमी की शकल में अपने को ज़ाहिर करते हैं.

क़ुरान में यही बात दूसरी तरह कही गई है. लिखा है कि—

"लेकुल्ले क़ौमिन हाद" यानी—हर क़ौम में हादी यानी रास्ता दिखाने वाले भेजे गए हैं.

इसी तरह की बहुत सी आयतें हैं जैसे यह कि—

"कोई ऐसी क़ौम नहीं जिसमें लोगों को बुराई से डराने और बचाने वाले न आते रहे हों.

"हर क़ौम में रसूल भेजे जाते रहे हैं" वग़ैरा वग़ैरा.

अबु दाऊद ने एक हदीस नक़ल की है जिसमें लिखा है कि—".खुदा हर सौ साल के बाद हर क़ौम में एक राह दिखाने वाला भेजता है जो दुनिया में दीन को फिर से ताज़ा करता है."

एक और हदीस कुछ लोग नक़ल करते हैं जिसमें कहा गया है कि—

"हिन्दुस्तान में एक नबी हुआ था जिसका रंग साँवला और जिसका नाम 'कहिन' था."

ज़ाहिर है कहिन से मतलब कान्ह या कृष्ण से है. कृष्ण के मानी भी साँवले के हैं.

पारसी किताब गाथा में लिखा है—

"इनसान की क़ौम से प्रेम करने वाले सोश्यन्तों के बताए हुए असूलों को ले लो, उनसे तुम्हारी आत्मा का भला होगा. मन से, वचन से और अमल से उन पर चलो. हर देश में, यहाँ तक कि असभ्य देशों में भी सोश्यन्त हुए हैं जिन्होंने परमात्मा की परम शान्ति को हासिल किया है. इस आलम के सम्राट् ने जो सबके अन्दर रमा हुआ है हम सबके पास सोश्यन्त भेजे हैं ताकि वह हमें ठीक रास्ता दिखावें."

बुद्ध ने कहा है—

"समय बीतने पर दूसरा बुद्ध आएगा. उसे लोग मैत्रेय कहेंगे."

मैत्रेय का मतलब है जो सब का मित्र यानी भला चाहने वाला हो.

हज़रत ईसा ने इंजील में कहा है—

"मैं फिर आऊँगा और तुम्हें अपने साथ ले चलूँगा ताकि जहाँ मैं जाता हूँ तुम भी जा सको."

इंजील में इसी तरह की बातें बार बार कही गई हैं, और यह साफ़ लिखा है कि—

"इस तरह की राह दिखाने वाले शुरू ज़माने से आज तक हमेशा आते रहे हैं."

क़ुरान में बार बार इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि मोहम्मद के मुँह से अल्लाह बोलता है.

हज़रत ईसा ने भी इंजील में यही बात कही है.

हम अगर केवल इन महान आत्माओं का ख़याल रखें और यह समझें कि यह सब हमारे प्रेमी और मददगार थे तो हम अपने अन्दर रूहानी और इख़लाक़ी शक्ति पैदा कर सकते हैं और अपने अन्दर की शक्तियों को जगा कर रूहानी उन्नति की आगे की मंज़िलें तय कर सकते हैं.

ज़िन्दगी की बुनियादी सचाइयाँ और धर्म के असूल सब जगह एक ही से हैं और सदा एक ही से रहेंगे. केवल वह ऊपर के ढाँचे, वह रीत रिवाज, वह तरीक़े, वह शब्द जिनमें वह सचाइयाँ ज़ाहिर की गई थीं पुराने पड़ जाते हैं. उनका असर कम हो जाता है. इसलिये उन्हीं सचाइयों को फिर से दोहराने की ज़रूरत पड़ती है. यही काम इन महापुरुषों का है. यह लोग सच्चे प्रेम यानी इश्क़े हक़ीक़ी से भरे होते हैं. वह सदा सब का भला चेतते हैं. इस प्रेम की आग में ही वह अपने को जला डालते हैं. अपने इस बलिदान से वह दूसरों में प्रेम की आग सुलगाते हैं, और जब जब वह आग फिर धीमी पड़ जाती है उसे बार बार आ कर जगाते रहते हैं. उनके बाद फिर और उनसे छोटे दरजे के लोग आते हैं जो उनके उपदेशों पर टीका करते हैं, उनका मतलब समझाते हैं. यह टीका करने वाले जब तक इनसानी समाज का सच्चा भला चेतने वाले होते हैं तब तक दीन धर्म फलता फूलता और फैलता है. जब यह लोग ख़ुदग़रज़, झूठे और घमंडी हो जाते हैं तो दीन धर्म गिरने लगता है, मिलाने की जगह वह फाड़ने का काम करने लगता है. बहुत से अलग अलग फ़िरक़े खड़े होने लगते हैं. दीन धर्म मुरझाने लगता है. फिर नए सिरे से किसी राह दिखाने वाले की ज़रूरत पड़ती है.

साइन्स भी इनसानी समाज के इस तरह के रास्ता दिखाने वालों के वजूद को मानती है. साइन्स के मशहूर अंगरेज़ पण्डित प्रोफ़ेसर टी. एच. हक्सले ने अपनी किताब 'ऐसेज़ आन सम कनट्रोवरटेड क्वेशचन्स' में लिखा है—

"इस सारे मामले को अगर बहुत ही कड़ी साइन्सी निगाह से देखा जाय तो मुझे ऐसा मालूम होता है कि यह समझ लेना कि इस अनन्त आकाश में जो लाखों दुनियाएँ बिखरी हुई हैं उनमें कहीं कोई ऐसा समझदार वजूद नहीं हो सकता जिसकी समझ आदमी की समझ से उतनी ही ऊँची हो जितनी

आदमी की समझ एक काले भौंरे की समझ से ऊँची है, या यह समझ लेना कि कोई वजूद ऐसा नहीं हो सकता जिसमें क़ुदरत के धारे को मोड़ देने की शक्ति आदमी से उतनी ही अधिक हो जितनी यह शक्ति आदमी में एक केचुए से अधिक है, इस तरह की बातें समझ लेना न केवल बे बुनियाद ही है बल्कि गुसताख़ी भी है. जो बातें हमें मालूम हैं उनकी हद के अन्दर रहते हुए भी हम आसानी से इस बड़े आलम को इस तरह के वजूदों से आबाद समझ सकते हैं जो दरजे ब दरजे ऊपर जाते हुए किसी ऐसे वजूद तक पहुँच जायँ कि अमली तौर पर हम उस वजूद में और सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ, यानी क़ादिरे मुतलक़, सब जगह हाज़िर नाज़िर और आलमे कुल में कोई फ़रक़ न कर सकें."

हाल में दूसरे मशहूर योरोपियन विद्वान् साइन्सदां सर ओलिवर लाज ने इसी बात को इन शब्दों में लिखा है—

"दो बातों का मेरे दिल पर गहरा असर है—पहली यह कि सचमुच हमारे इस तरह के शक्तिशाली मददगार मौजूद हैं जो किसी न किसी सीधे और नज़दीकी तरीक़े पर हमें रास्ता दिखाते हैं, हमारा प्रबन्ध करते हैं और एक मुनासिब हद के अन्दर हमें बस में रखते हैं, और जो अपने काम में लगे हुए हैं, पर जो सर्वशक्तिमान यानी क़ादिरे मुतलक़ नहीं हैं; दूसरी बात यह कि इस आलम (विश्व) के इससे भी ऊँचे पहलू हैं जिनकी प्रतिभा (शान) का ख़याल करके दिल डरने लगता है और जो आख़ीर में जा कर इस तरह के एक वजूद में ख़तम होते हैं जो सबको घेरे हुए है और जो हमारे ख़याल की दूर से दूर की पहुँच से भी परे है."

१६

जीवन का लक्ष्य—सबके अन्दर एक ही आत्मा को देखना

हमारे जीवन की आख़िरी सबसे बड़ी सचाई ही हमारे जीवन का लक्ष्य है. आत्मा लौट कर अपने असल आपे में जा मिलती है, अपने उस अनन्त रूप में जा मिलती है जिसे वह भूल गई थी और जो उसे अब फिर से याद आ जाता है. भटका हुआ मुसाफ़िर अपने घर लौट आता है. दूसरे शब्दों में ज्ञान यानी मारफ़त का साँप ख़ुद अपनी दुम निगल लेता है. आत्मा का एक चक्कर ख़तम हो जाता है. दोनों सिरे एक दूसरे से जा मिलते हैं. तब दिखाई देता है कि छोटे से छोटा महदूद ज़र्रा ही बेअन्त लामहदूद भी है, ज़र्रा ही आफ़ताब है, बूँद ही समन्दर है, जीव आत्मा और परमात्मा, रूहे शख़्सी और रूहे कुल एक हैं.

ज़िन्दगी का अन्त, उसका लक्ष्य यानी उसका मक़सद दो तरह का है. पहला मक़सद है 'अभ्युदय' जिसे 'इक़बाल मन्दी' या 'नेमते दुनियावी' कहा जाता है, यानी इस दुनिया के अन्दर की ख़ुशहाली और कामयाबी, या इन्द्रियों और हाथ पैरों के ज़रिये दुनिया के जायज़ सुखों का भोग करना. हिन्दू शास्त्रों में इसके तीन हिस्से किये गए हैं—धर्म, अर्थ और काम. सूफ़ी इस्तलाह में इन तीनों को 'दयानत', 'दौलत' और 'लज्ज़ते दुनिया' कहा जाता है. इन तीनों को उलट कर और मिला कर समझना चाहिये. मतलब यह है कि दुनिया की लज्ज़तों यानी गृहस्थी की ज़िन्दगी को धन दौलत, सम्पत्ति और

मिलकियत के साथ मिलाकर 'धार्मिक नियमों' (क़ानूने इलाही) की रोशनी में अपने फ़र्ज़ (कर्तव्य) को निगाह के सामने रखते हुए, बरतना चाहिये. यह है ज़िन्दगी के शुरू के आधे हिस्से के लिये. ज़िन्दगी का दूसरा और आख़िरी हिस्सा दूसरे और आख़िरी मक़सद को हासिल करने में ख़र्च करना चाहिये. वह असल मक़सद है मोक्ष यानी नजात, सब तरह के दुखों से छुटकारा. इसी को 'निःश्रेयस' कहते हैं. यही 'परमानन्द' है. इससे बढ़ कर कोई आनन्द नहीं, कोई सुख नहीं. यह है परमात्मा की तरह हो जाना, परमात्मा में लीन या फ़ना हो जाना, स्वयं परमात्मा हो जाना.

हर आदमी के दिल के अन्दर जाने या अनजाने ज़िन्दगी का यही मक़सद हिलोरें लेता रहता है. अपने जिस हाल से हम भटक गए थे उसी में फिर लौट जावें. हमें पूरी तरह पता चल जावे कि यह सारा संसार चक्र हमारी अपनी ही लीला है, इसमें कोई ग़ैर नहीं. तब आत्मा डर, शक और दुख के बन्धनों से आज़ाद हो जाता है. फिर न पाप रहता है न पुण्य, न कोई वहम या अन्धविश्वास. किसी न किसी समय, जल्दी या देर में यह मुक्ति, यह नजात हर जीव आत्मा को हासिल होती है. तरह तरह के सुख दुखों, पाप पुण्यों और ज़िन्दगी की ऊँच नीच में से निकलते हुए सब इस मंज़िल पर जा पहुँचते हैं, क्योंकि सब रूहें आख़िर उसी एक रूहे कुल का अंश हैं.

वैदिक धर्म, बौद्ध धर्म और जैन धर्म में इसे मुक्ति या निर्वाण और इसलाम में इसे नजात या फनाफ़िल्लाह कहते हैं. फनाफिल्लाह के ठीक वही मानी हैं जो निर्वाण के हैं यानी अपनी अलहदगी का फ़ना या ख़तम हो जाना. क़ुरान की मशहूर आयत है—

"इन्ना लिल्लाहे व इन्ना इलैहे राजेऊन".

यानी हम सब अल्लाह से आए हैं और लौट कर अल्लाह ही में जा मिलेंगे.

यहूदी इस आख़िरी हालत को 'प्रेम का महल' कहते हैं. ग्नोस्टिक सम्प्रदाय के लोग इसे 'अनन्त ज्योति (अबदी नूर) का भंडार' कहा करते थे. ईसाई इसे 'किंगडम आफ़ हैविन' यानी स्वर्ग का राज कहते हैं. अलग अलग धर्मों के सन्तों, सूफ़ियों और महात्माओं ने इसे और भी तरह तरह से बयान किया है. सेंट पाल ने लिखा है कि—

"सचाई (यह सचाई कि आत्मा और परमात्मा एक हैं) तुम्हें सब बन्धनों से आज़ाद कर देगी."

इस हालत को पहुँच कर फिर कोई 'इतरता' यानी 'ग़ैरियत' नहीं रह जाती. 'अंश' 'पूर्ण' हो जाता है. 'अनानियते अदना' 'अनानियते आला' हो जाती है. 'शख़सियते अदना' 'शख़सियते आला' हो जाती है. .ख़ुद या .ख़ुदी .ख़ुदा हो जाती है. बूँद समन्दर हो जाती है. यहाँ पहुँच कर रूह को इश्क़े मजाज़ी और इश्क़े हक़ीक़ी का फ़र्क़ समझ में आता है. इसी हालत का नाम सच्चिदानन्द है.

ऋग्वेद में एक प्रार्थना आती है—

"यद् अग्ने स्याम् अहम् त्वं, त्वंवाधा स्या अहम्"

यानी ऐ अग्नि मैं तू हो जाऊँ और तू मैं हो जाय.

'अग्नि' आत्मा के अन्दर की उस रोशनी का नाम है जो आदमी को आगे का रास्ता दिखाती है.

सूफ़ी ने इसी हालत को बयान करते हुए कहा है—

"मन तू शुदम तू मन शुदी मन तन शुदम तू जां शुदी
ता कस न गोयद बाद अज़ीं मन दीगरम तू दीगरी"

यानी मैं तू हो गया और तू मैं हो गया, मैं जिस्म हो गया और तू जान हो गया. ताकि इसके बाद कोई यह न कहे कि मैं और हूँ और तू और है.

उपनिषद में लिखा है—

"परमात्मा इस सृष्टि को रच कर उसमें इसी तरह रम जाता है जिस तरह जिस्म के अन्दर रूह. यह विश्व ही उसका

जिस्म है. जो इस बात को समझ ले और इस एकता को देख ले उसके लिये फिर न कोई मोह है और न कोई शोक."

मुसलमान सूफ़ी लिखता है—

"हक़ यानी परमेश्वर सारे जहान की जान है, और यह सारा जहान उसका जिस्म है, यही तौहीद है, और सब रोज़गार और खेल हैं."

इसी हालत को 'सरूरे जावेदानी', 'आत्म लाभ', 'विसाल' या 'कैवल्य' 'एकी भाव' या 'वहदत' कहते हैं.

अपने अपने रास्तों से, अलग अलग और तरह तरह के रास्तों से, सब लोग, सब जानदार, उसी तरफ़ जा रहे हैं. यह मंज़िल सब के अन्दर है, इसीलिए सब अन्दर की तरफ़ मुड़ रहे हैं. दुनिया के सब धर्म, मज़हब और फ़िलासफ़ियाँ केवल अपने घर वापिस जाने की बेचैनी हैं. इसीलिये कृष्ण ने गीता में कहा है—

"ऐ अर्जुन ! लोग सब तरफ से चल कर मुझ तक ही पहुँचते हैं. जो जिस रास्ते से आता है उसे उसी रास्ते से मैं मिलता हूँ."

पारसी गाथा में लिखा है—

"ज्ञान और बढ़ते हुए विचारों के ज़ोर से, ऐ अहुर मज्द ! हम तुझमें आ मिलेंगे. वही हमारी शुरू की जिन्दगी थी."

जैन ग्रन्थ 'ज्ञानार्णव' में लिखा है—

यही सब से बड़ा ज्ञान है, यही विज्ञान है, यही ध्यान है, यही परम तप है कि यह आत्मा फिर से अपने को पहचान ले और फिर से अपने रूप में लीन हो जाय."

यहूदी किताब ज़ोहर में लिखा है—

"दुनिया की सब चीज़ें, सब रूहें और उनके सब जिस्म अपने जिस असल से निकले थे उसी में जा मिलेंगे."

गीता में भगवान ने कहा है—

"बहुत से जन्मों के बाद ज्ञानी मुझे आ मिलता है."

चीनी ताओ धर्म की किताब 'ताओ तेह किंग' में लिखा है—
"ज़िन्दगी बाहर निकलना है, मौत घर लौटना है."

शेख़ सादी ने एक बहुत ही प्यारी, सुन्दर छोटी सी किताब लिखी है जिसका नाम है 'मा मुक़ीमां'. उसकी शुरू की और आख़िरी लाइनें यह हैं—

"मा मुक़ीमाने कूए दिल दारेम्
रुख़ बदुनिया व दीं नमी आरेम्
बुलबुला नेम, कि अज़ कज़ा व क़दर
ओफ़्तादा जुदा ज़ गुलज़ारेम
मन न दानम कि अन्दरईं हैरत
बं विसाले कि दाद पैग़ामेम
कि ब चश्माने दिल मबीं जुज़ दोस्त
हरचे बीनी बिदां कि मज़हरे ओस्त."

यानी—हम अपने प्रीतम परमात्मा के कूचे के रहने वाले हैं. इस दुनिया की तरफ़ या रीत रिवाज वाले दीनों की तरफ़ हम मुँह नहीं करते. हम उस बाग़ की बुलबुलें हैं जहाँ से क़ज़ा और क़द्र ने यानी भाग्य ने हमें बाहर फेंक दिया है. अब हैरत है कि उस प्रीतम के विसाल यानी फिर से मिलने ने हमें यह सँदेशा दिया है कि अपने दिल की आँखों से जिस किसी को देखो उसे सिवाय अपने दोस्त के और कुछ न समझो, जान लो कि जो कुछ तुम देख रहे हो सब उसी प्रीतम का ज़हूर है, उसी का रूप है.

वेद का कहना है—
"मित्रस्य चक्षुषा पश्येम"
यानी सारी दुनिया को मित्र यानी दोस्त की आँख से देखो.

सूफ़ी लिखता है—
"कुफ़्रो इसलाम दर रहत पोयां
वहदहू लाशरीक लह गोयां"

"हमा कस तालिबे यारन्द चे हुशियारो चे मस्त
हमा जा ख़ानए इश्क़ अस्त, चे मस्जिद चे कनिश्त"
"तू ही मक़सूद है काबा व बुतख़ाना बहाना है."

यानी—कुफ़्र और इसलाम दोनों उसी अल्लाह की राह में दौड़े जा रहे हैं, दोनों यही कहते हैं—वह एक है, उसका कोई शरीक नहीं, हर आदमी उसी प्रीतम को खोज रहा है, क्या समझदार और क्या मस्त. सब घर उसी के प्रेम के घर हैं, क्या मसजिद और क्या गिरजा. असली मक़सद या लक्ष्य वही ईश्वर अल्लाह है, काबा और बुतख़ाना उसी तक पहुँचने के रास्ते हैं.

हिन्दुस्तान के मशहूर सन्त शायर नज़ीर अकबराबादी ने कहा है—

"जिस सिम्त नज़र कर देखे है
उस दिलबर की फुलवारी है
कहीं सबज़ी की हरियाली है
कहीं फूलों की गुल कारी है
दिन रात मगन .ख़ुश बैठे हैं
और आस उसी की भारी है
बस आप ही वह दातारी है
और आप ही वह भंडारी है
हर आन हँसी, हर आन .ख़ुशी
हर वक़्त अमीरी है बाबा
जब आशिक़े मस्त फ़क़ीर हुए
फिर क्या दिलगीरी है बाबा".

इसलाम का मशहूर मक़ूला है—"जिसने अपने आपको जान लिया उसने अपने रब को पहचान लिया."

दुनिया के सब सन्त महात्माओं, अवतारों, पैग़म्बरों और तीर्थंकरों ने, सब बड़े बड़े धर्मों ने और सब धर्म ग्रंथों ने तरह तरह से इसी एक सचाई को दुनिया के लोगों के दिलों पर जमाने की कोशिश की है.

पारसी गाथा में लिखा है—

"मेरी अन्तर आत्मा मेरे अन्दर जागी. उसने हिलाकर मुझ से पूछा 'सोच तू कौन है ? किसका है ? यहाँ क्यों है ? क्या कर रहा है ? इस ज़िन्दगी का मक़सद तू कब समझेगा ? उस समय मैंने समझा कि मैं ही सब कुछ हूँ, मैं ही अहुरमज्द हूँ, मैं ही सब की आत्मा हूँ, सब में मैं ही रमा हुआ हूँ."

उपनिषद् में लिखा है—

"अपनी आत्मा को जानो. आत्मा ही एक जानने की चीज़ है. आत्मा ही को ढूंढ़ो, अपनी आत्मा को जान लिया तो सारी दुनिया को जान लिया. आत्मा ही देखने की, सुनने की, समझने की और ध्यान करने की चीज़ है. और कुछ है ही नहीं."

मशहूर यूनानी सन्त सोलोन कहा करता था—

"अपने आप को जानो."

कुरान में लिखा है—

"जो अल्लाह को भूल जाता है वह अपने को भूल जाता है."

एक हिन्दू सन्त ने इसी बात को दूसरी तरह कहा है—

"जाके घर सुख का भण्डारा
सो क्यों भरमे दर दर मारा".

सूफ़ी कहता है—

"हो के सुलताने हक़ीक़त इसी आब ओगिल (पानी और मिट्टी) में दर बदर मिस्ले गदा (भिकारी) था, मुझे मालूम न था."

उपनिषदों में यह ख़याल जगह जगह बहुत ही गहराई और तफ़सील के साथ ज़ाहिर किया गया है.

अपने में भगवान को देखना तब ही मुमकिन है जब आदमी पहले दूसरों में अपने को देखे. इसीलिये सूफ़ी ने कहा है —

"कुफ्र काफ़िर रा व दीं दींदार रा
ज़र्रए वर्दे दिले अत्तार रा

यानी—काफ़िर को कुफ़्र मुबारक रहे, और दीनदार को दीन मुबारक रहे. अत्तार (नाम सन्त) के दिल के लिये प्रेम रूपी गुलाब की पंखड़ी का एक ज़र्रा काफ़ी है."

इसी को दूसरे सूफ़ी ने इन शब्दों में कहा है—

"दर्दे दिल के वास्ते पैदा किया इनसान को,
वरना ताअत के लिये कुछ कम न थे करोंबियां (फ़रिश्ते)"

इंजील में भी यह ख़याल बार बार तरह तरह से आता है. लिखा है—

"हम इस बात को अच्छी तरह समझकर कि असल में रूह और .ख़ुदा एक हैं .ख़ुदा के साथ मिल सकते हैं और एक हो सकते हैं. जिनके दिल पाक हैं वही .ख़ुदा को देख सकते हैं."

यह बात भी सब मज़हबों में मिलती है कि जब आदमी इस हालत को पहुँच जाता है तो फिर उसे धर्म और मज़हबों के इस तरह के हुकमों की ज़रूरत नहीं रहती—यह करो और यह न करो. वह इन नियमो से ऊपर उठ जाता है. उसी को 'धर्मात्मा' या 'सलीम' कहते हैं.

शंकराचार्य ने लिखा है—

"जो आदमी तीनों गुणों से ऊपर उठ जाता है उसके लिये फिर न कोई विधि रह जाती है और न कोई निषेध."

जो रूहें इस बात को अनुभव कर लेती हैं कि सबके अन्दर एक ही आत्मा है, कोई ग़ैर नहीं, कोई अलग नही, कोई दूसरा नहीं, वही पूर्ण पुरुष, दिव्य पुरुष, जीवनमुक्त, अवतार, बुद्ध, बोधिसत्त्व, अर्हत, तीर्थंकर, मसीह, क्राइस्ट, इनसाने कामिल, मज़हरे अतम्म, वग़ैरा वग़ैरा नामो से पुकारी जाती हैं.

इंजील में लिखा है—

"जिस तरह स्वर्ग में तुम्हारा पिता (यानी परमेश्वर) कामिल है उसी तरह तुम भी कामिल हो जाओ, और तुम सचाई को जान लोगे, और सचाई तुम्हें आज़ाद कर देगी, तुम देवता हो."

मोहम्मद साहब की एक हदीस है—

"अल्लाह कहता है ऐ आदमी ! तू मेरे क़ानूनों पर चल, बिला शुबह तू मेरी ही तरह हो जायगा, फिर अगर तू किसी बात के लिये भी कहेगा यह हो जाय तो वह बात फ़ौरन हो जायगी !"

गीता में लिखा है—

"वह ऋषि लोग जिनके सब पाप धुल गए हैं, जिनकी दुबिधा मिट गई है, जिन्होंने आत्मा को जीत लिया है, जो सब प्राणियों के भले में लगे रहते हैं, जिनकी इन्द्रियाँ यानी नफ़्स उनके क़ाबू में हैं, जो सब को एक निगाह से देखते हैं वही भगवान को पाते हैं."

सूफ़ी कहता है—

"जो आदमी मर्दे कामिल हो जाता है वह सब का मालिक होते हुए भी सब की ग़ुलामी यानी ख़िदमत में लगा रहता है."

इसीलिये ईश्वर अल्लाह के नामों में से एक नाम दासानुदास यानी 'दासों का दास' भी है.

१७

जो सब के अन्दर एक ही आत्मा को देखे वही दुनिया का सच्चा सेवक हो सकता है.

ईश्वर अल्लाह के निकट पहुँचने के भी बहुत से दरजे हैं. योग और वेदान्त में इन दरजों को सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य, आवेश, कलावतार, अंशावतार और पूर्णावतार कहा गया है. तसव्वुफ में इन्हें वज्द, जज़बा, वस्ल, क़ुरबे फ़रायज़, क़ुरबे नवाफ़िल, बुरूज़, हुलूल और मज़हरे अतम्म नामों से पुकारा गया है. यही कमाल यानी पूर्णता की सीढ़ियाँ हैं. रूह की इस चढ़ाई को संस्कृत में 'आरोह' और अरबी में 'उरूज' कहते हैं. इसके तीन ख़ास दरजे हैं. पहला दरजा 'द्वैत' यानी 'ईजादिया' है. दूसरा 'विशिष्टाद्वैत' यानी 'शुहूदिया' है. तीसरा 'अद्वैत' यानी 'वजूदिया' है. पहला सबसे कम समझ वाले लोगों के लिये है. दूसरा विद्वानों और साइन्सदारों के लिये. तीसरा आरिफ़ों यानी ज्ञानियों के लिये. हिन्दू फ़िलासफ़ी में इन्हें आरम्भवाद, परिणामवाद और विवर्तवाद भी कहा गया है. सूफ़ी इन तीनों हालतों को 'हमा अज़ ऊस्त', 'हमाबाऊस्त' और 'हमाऊस्त' कह कर भी ज़ाहिर करते हैं.

यही बात इंजील में यूं लिखी है —
"सब चीज़ें उसी से निकली हैं, उसी से हैं, उसी में हैं."

यह तीनों बातें एक दूसरे के विरुद्ध नहीं हैं. बजाय एक दूसरे को काटने के यह एक दूसरे को पूरा करती हैं. कामिल होकर ही इनसान महसूस करता है कि सच्ची ख़िदमते ख़ल्क़ यानी दुनिया की सेवा, सच्चा इश्क़ यानी प्रेम, और सच्ची मारफ़त यानी ज्ञान तीनों एक हैं.

तब समझ में आता है कि वह निरंजननिरविशेष (ज़ाते लासिफ़ात), वह ग़ायबउल ग़यूब यानी परम अव्यक्त केवल 'नेति नेति' (यह भी नहीं, यह भी नहीं) कह कर यानी केवल 'तन-ज़ीह' से ही बयान किया जा सकता है. उसकी कोई उपमा नहीं, उसकी कोई मिसाल नहीं. नाम रूप का वहाँ कोई काम नहीं.

बौद्ध और जैन दोनों धर्म इस बात पर ज़ोर देते हैं कि उस असल हक़ीक़त को कोई शब्द बयान नहीं कर सकते. उसे 'यह भी नहीं' 'यह भी नहीं' कह कर ही बताया जा सकता है. यहूदी ज्ञानियों ने भी यही कहा है. यहूदी किताब ज़ोहर में लिखा है—

"अल्लाह 'अन-सोफ़' यानी अनन्त है. वह सब प्राणियों और सब गुणों से ऊपर है. जब यह चीज़ें हट जाती हैं तो न कोई गुण रह जाता है न कोई रूप. उसे केवल 'यह भी नहीं' 'यह भी नहीं' कह कर ही बयान किया जा सकता है. हम यह नहीं बता सकते कि अल्लाह क्या है. हम केवल यह बता सकते हैं कि वह क्या नहीं है. दुनिया उसी से निकली है. इसके लिये उस अनन्त में कुछ गुण या सिफ़तें भी आ गईं. कोई गुण या सिफ़तें अनन्त नहीं हो सकतीं. उनका असल वजूद कुछ नहीं. इसी से दुनिया में अँधेरा और बुराई पैदा हुए. यह वह परदे हैं जो सचाई को ढके रखते हैं. दुनिया में जो कुछ बुराई है वह धोका यानी माया है, फ़रेब है, पर है कुछ नहीं. आदमी का फ़र्ज़ है कि उस अनन्त के साथ फिर से मिलने की कोशिश करे. अनन्त को छोड़ कर आदमी का महदूद यानी असत्य चीजों की तरफ़ जाना ही बुराई है. असलियत की खोज में चलकर ही आदमी असलियत तक पहुँच सकता है. वही उसका घर है, वही उसकी असल है."

ऊपर जो इबरानी भाषा का शब्द 'अन-सोफ़' आया है वह शायद अरबी 'ऐनसूफ़' (सीन के साथ), या 'ऐन साफ़' (स्वाद के साथ) पढ़ा जाय तो उसके मानी वही होंगे जो संस्कृत में 'शुद्ध चैतन्य' के हैं.

मिस्र में एक कहावत मशहूर है जिसका मतलब है —"मैं तुम से साफ़ कहता हूँ कि तुम्हारे दिमाग़ में जो कुछ भी ख़याल आ सकता है अल्लाह वह नहीं है."

दुनिया के प्रेमी राह दिखाने वाले हमें यही बताते रहे हैं कि बुराई का अपना कोई वजूद नहीं. दुनिया के दुख दर्द सब सपने की तरह आने जाने हैं. धीरे धीरे खोजी आत्मा को पता चलता है कि जिस तरह बुराई और दुख कोई चीज़ नहीं उसी तरह दुनिया की भलाई और सुख भी कोई चीज़ नहीं. यहाँ की भलाई केवल यहाँ की बुराई के मुक़ाबले में वजूद रखती है. ऐसे ही यहाँ के सुख केवल यहाँ के दुखों के मुक़ाबले में अपना वजूद रखते हैं. संसार की इस लीला में खोजी का फ़र्ज़ भलाई की तरफ़ रहना है. पर अन्त में उस अनन्त से मिलने का सुख कुछ और ही है. वह इन सब सुख दुखों से ऊपर है. वहाँ न बुराई रहती है और न भलाई. जल्दी या देर में सब को उसी रास्ते पर चलना है. वही परमानन्द है.

इंजील में लिखा है—

"वह अकेला है. उससा कोई दूसरा नहीं. उसके न कोई बच्चा है, न भाई."

भलाई भलाई है. बुराई बुराई है. समझ समझ है. ना समझी नासमझी है. पर यह सब एक ही नाटक के खेल हैं. आत्मा को फिर से 'ख़ुदा का बेटा' बनने के लिये, 'जीवनमुक्त' या 'इनसाने कामिल' होने के लिये बुराई से भलाई की तरफ़ और ना समझी से सच्ची समझ की तरफ़ जाना है. तभी वह अपने खोए हुए बल्कि भूले हुए अमरत्व यानी अबदी ज़िन्दगी को फिर से हासिल कर सकता है.

सब मज़हब हमें यही बताते हैं कि यह जगत 'असत्' यानी 'अदम' है, माया है, लीला है, क्रीडा है, सपना है, नश्वर है, फ़साना है, फ़ितना है, जाल है, ख़याल है और बातिल यानी झूठ है. दुनिया की ठोस ठोस चीज़ें देख कर कम समझ आदमी

के लिये इस बात को समझना मुशकिल हो जाता है. पर यह सब ठोस समझी जाने वाली चीज़ें पल पल पर बदल रही हैं. जो बदलता है उसका वजूद ज़ाहिर है आरज़ी ही हो सकता है, नित्य और टिकाऊ केवल वही आत्मा है जो दुनिया के इस बदलते रहने को देखता और समझता है.

इस विषय पर मोहम्मद साहब की कुछ हदीसें नीचे दी जाती हैं—

"जो इन सब चीज़ों की असलियत है वही टिकने वाली चीज़ है, और बाक़ी यह सब आलम फ़ानी यानी नाशमान है."

"यह सारी दुनिया केवल एक ख़याल है—यह उसका ख़याल है जो ख़ुद ही अकेला हक़ीक़त है."

"दुनिया में जितने लोग हैं वह सब एक सपना देख रहे हैं, जब वह मरेंगे तब इस सपने से जागेंगे."

"सिवाय अल्लाह के बाक़ी सब चीज़ें बातिल यानी झूठ हैं."

क़ुरान की एक आयत है—

"सिवाय उस अल्लाह के दीदार के बाक़ी सब चीज़ें नाश होने वाली हैं."

इस झूठ, इस माया और इस धोके को जो चीज़ क़ायम रखे हुए है वह है तृष्णा, वासना, काम संकल्प और अविद्या. इन ही चारों को हिर्स, हवस, आरज़ू और ख़याल कहते हैं.

सूफ़ी कहता है—

"यह सब एक जाल है, आरज़ू यानी इच्छा इस जाल के अन्दर का दाना है. इसलिये जितनी जल्दी तुझ से हो सके तू आरज़ू यानी हिर्स के इस जाल से निकल जा."

महाभारत में लिखा है—

"यह सारा जगत कल्पना (ख़याल) का बना हुआ है. जो इस सचाई को नहीं समझता उसके कामों का ठीक ठीक नतीजा पैदा नहीं हो सकता."

गीता में लिखा है—

"सब प्राणियों के लिये जो रात है अपने आपे को बस में रखने वाले आदमी के लिये वही जागने की चीज़ है. और जिस चीज़ की तरफ़ से और सब प्राणी जागे हुए हैं, देखने वाले मुनि के लिये वह सोने की रात है."

सूफ़ी कहता है—

"जो दुनिया से बेहोश नहीं है वह उस असली होश के राज़ को नहीं जान सकता. सिवाय बेज़बान कान के और कोई ज़बान की बात नहीं सुन सकता. जो जाग रहा है वह असलियत में स्वप्न की हालत में है, उसका जागना उसके सोने से बदतर है, और जो इस दुनिया की तरफ़ से सोया हुआ है वही असल में जागता है. उसकी ग़फ़लत ही ऐन होशियारी है."

एक और सूफ़ी ने कहा है—

"अयां ऐसा कि हर शै में निहां है.
निहां ऐसा कि हर शै में अयां है"

यानी—वह असल हक़ीक़त इस क़दर खुली है कि हर चीज़ के अन्दर छिपी हुई है, और इतनी छिपी हुई है कि हर चीज़ के अन्दर से चमक रही है.

हर खोजी के दिल में बार बार सवालों और शकों का पैदा होना कुदरती और लाज़मी है, चाहे वह किसी भी धर्म का मानने वाला क्यों न हो. यह सवाल और शक लम्बे लम्बे ज़िक्र, फ़िक्र, ध्यान और मनन से ही हल हो सकते हैं.

एक पुरानी चीनी कहावत है—

"दिल में उम्मीद लिये सफ़र करना मंज़िल पर पहुँच जाने से कहीं अच्छा है."

शेख़ सादी ने 'मामुक़ीमां' में कहा है—

"जो दुनिया में हमेशा हर जगह ज़ाहिर हो रहा है, वह मेरी आँखों में नहीं समाता! जिसकी अपनी कहीं कोई जगह नहीं है, मैं हैरान हूँ कि वह हर समय हर जगह मौजूद है!

अन्दर और बाहर, आगे और पीछे, दाएँ और बाएँ, नीचे और ऊपर ! वह दुई के लिबास में नहीं समाता, चूँकि वह अपनी यकताई के लिए मशहूर है. रात को एक कहने वाले ने दर्द भरे दिल से और प्रेम में भर कर मुझ से कहा—'ऐ आदमी ! दिल की आँखों से किसी को भी सिवाय दोस्त के और कुछ मत देख, यह जान ले कि जो कुछ तू देखता है सब उसी प्रीतम का ज़हूर है' !"

इस सवाल का जवाब भी कि जो परिपूर्ण है उसमें इच्छा क्यों और कैसे पैदा हुई और 'अहद', 'ब्रह्म' से 'ख़ालिक़', 'ब्रह्मा' कैसे बन गया अपने अन्तर में सोचने से ही मिल सकता है. उपनिषदों में इसे इशारों में बयान किया गया है. मोहम्मद साहब की एक हदीस है—

"ऐ नफ़्से मुतमइन्ना ! यानी ऐ वह रूह जिसे अल्लाह में इतमिनान हासिल हो गया है ! अपने रब की तरफ़ मुड़. वह तुझसे खुश और तू उससे खुश. फिर अल्लाह के इन बन्दों में जा कर मिल. जन्नत में दाख़िल हो ! जो रूहें सब के अन्दर मौजूद उस अल्लाह को नहीं देखतीं वह एक दूसरे से लड़ती झगड़ती हैं और जो रूहें एक दूसरे के अन्दर अपने रब को देखती हैं, वह इश्क़ यानी प्रेम में नहाती हैं, और प्रेम ही जन्नत है."

हिन्दू धर्म में जिन तीन गुणों को सत, आनन्द और चित नाम दिया गया है उन्हीं को इसलाम में वजूद, शुहूद और इल्म कहा गया है. सत, आनन्द और चित तीनों चैतन्य में जा मिलते हैं. इसलाम में चैतन्य को नूर कहा गया है. वही 'परम ज्योति' या 'नूरे क़ाहिर' भी है. उसी नूर से सारा जहान रौशन है. चीनी ताओ धर्म में इन तीनों का नाम शिंग, चीह और ची है. यही ब्रह्मा, शिव और विष्णु हैं. यही अल मालिक, अल रज्ज़ाक़ और अल अलीम हैं. इसी तरह यहूदी, ईसाई, बौद्ध और पारसी धर्मों में भी इनके अलग अलग नाम हैं. इनके अलावा हिन्दू धर्म में

विष्णु के हज़ार नाम हैं. क़ुरान में अल्लाह के सौ बड़े नाम गिनाए गए हैं. इसी तरह और धर्मों में.

नामों से हट कर जिन रूपों में वह बेनाम और बेरूप अपने को ज़ाहिर करता है वह भी अनन्त और बेशुमार हैं. ऊपर कहा जा चुका है कि पहुँची हुई रूहें भी अवतारों, मसीहों और रसूलों के रूप में सब प्राणियों के भले के लिये जन्म लेती रहती हैं.

महाभारत में कृष्ण ने कहा है—

"दास्यमैश्वर्यवादेन ज्ञातीनां तु करोम्यहम्"

यानी—सब का ईश्वर होते हुए भी मैं सब प्राणियों के लिए दास यानी ग़ुलाम का काम करता हूँ.

यही बात सूफ़ी ने इन शब्दों में कही है—

"कसे मर्दे तमाम अस्त अज़ तमामी
कुनद, बा ख्वाजगी कारे ग़ुलामी"

यानी—"जो मर्दे कामिल है वह अपने कामिल होने ही की वजह से सबका मालिक होते हुए सबकी ग़ुलामी यानी ख़िदमत करता है."

मोहम्मद साहब की एक हदीस है—

"सय्यदुल क़ौम ख़ादिमहुम"

यानी—"जो क़ौम का लीडर है वही क़ौम का सब से बड़ा ख़ादिम है."

सूफ़ी ने कहा है—

"आं कि ख़िदमत कर्दऊ मख़दूम शुद
आं कि ख़ुदरा दीदऊ महरूम शुद"

यानी—"जिस किसी ने ख़िदमत यानी सेवा की वह मख़दूम यानी मालिक बन गया. और जिसने केवल अपनी तरफ़ देखा वह अलग उठा कर फेंक दिया गया."

इंजील में लिखा है—

"तुम में जो सबसे बड़ा है वही तुम्हारा सेवक होगा."

सोच समझ कर सबसे अच्छा सेवक वही बन सकता है जो सबसे ज़ियादा आज़ाद हो, और यह वही हो सकता है जिसने पूरी तरह इस बात को देख लिया, जान लिया और समझ लिया हो कि एक ही आत्मा हम सबके अन्दर काम कर रही है. यही सब मज़हबों के अन्दर ज़िन्दगी का आख़री मक़सद है. यही ईश्वर अल्लाह को पाना है.

१८

भक्ति यानी इश्क़ का रास्ता

भक्ति मार्ग यानी इश्क़ की राह कोई अलग या अनोखी राह नहीं है. आदमी की ज़िन्दगी में ज्ञान यानी मारफ़त, इच्छा यानी ख़्वाहिश, और काम यानी अमल, तीनों साथ साथ चलते हैं. उन्हें एक दूसरे से बिलकुल अलग नहीं किया जा सकता. केवल समझने की आसानी के लिये हम इन्हें अलग अलग बयान करते हैं. भक्ति का सम्बन्ध आदमी की इच्छा, उसके दिल के भावों (जज़बों) से है. भक्ति, प्रेम यानी इश्क़ एक तरफ़ आत्मा को ऊँचा उठाता है और दूसरी तरफ़ दिल की गहराइयों को साफ़ कर के उनमें उजाला पैदा करता है. इसी से आदमी का चरित्र मंझता और उभरता है.

ज्ञान को अगर हम आदमी का सिर कहें तो प्रेम आदमी का दिल है, और अमल आदमी के हाथ पैर हैं. इन तीनों को मिला कर ही पूरा आदमी बनता है. साधारण दुनिया का प्रेम जिसे इश्क़ मजाज़ी कहते हैं, जीवन में आनन्द देता है. भगवद् भक्ति का जिसे ब्रह्मानंद या इश्क़े हक़ीक़ी कहा जाता है यह मामूली प्रेम केवल एक अक्स है. इसलिये भगवद् भक्ति या इश्क़े इलाही ही सुख का असली स्रोत है.

दुनिया भर की साइन्स और इल्म, अगर उसके साथ दिल की ऊँचाई और गहराई न हो तो, ऐसे ही हैं जैसा बेपानी का रेगिस्तान या वह रूखे नंगे पहाड़ जिन पर कोई हरियाली न हो. साइन्स बिना प्रेम के केवल एक मुरदा लाश है, या मिट्टी का एक सुन्दर शरीर जिसमें रूह या जान नदारद. ज्ञान का जब प्रेम के साथ गठजोड़ रचा जाता है तभी वे दोनों मिल कर एक

शरीर बनते हैं, तभी उनसे अच्छे अच्छे कामों के बच्चे पैदा होते हैं. इन दोनों में से हर एक दूसरे के बिना अधूरा है. साइन्स के साथ जब तक प्रेम और परोपकार का मेल न हो तब तक सच्ची बुद्धि (अक़्ले सलीम) पैदा नहीं हो सकती. इनका मेल होने पर ही आदमी में अक़्ल सलीम जागती है. इस मेल से ही असली मानव धर्म, यानी मज़हबे इनसानियत जनम लेता है. इस धर्म को हम अपने अन्दर जगा लें तो दुनिया भर की नेमतें अपने आप हमारे पैरों पर आ गिरें. इसके बिना ज़िन्दगी बेकार और बाँझ है.

सब धर्म मज़हबों में आदमी के लिए इख़लाक़ या सदाचार के जो नियम बताए गए हैं वह सब इसीलिये एक से हैं क्योंकि वह सब ज्ञान और प्रेम के इसी मेल से निकले हैं और इसी पर क़ायम हैं.

हिन्दू धर्म में मनु को सब से पहला राह दिखाने वाला माना जाता है. मनु ने जिसे आदमी का 'सामासिक धर्म' बताया है वह वही है जिसे योगशास्त्र में 'पाँच यम' कह कर बयान किया गया है. उसी को बुद्ध ने 'पंच शील' कहा है. यही पाँच असूल मूसा की दस आज्ञाओं में हैं. इन्हीं को हज़रत ईसा ने दोहराया. यही हमें क़ुरान में मिलते हैं. मनुस्मृति में लिखा है—

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन् मनुः ॥

यानी, "अहिंसा (किसी को दुख या ईज़ा न पहुँचाना), सचाई, चोरी न करना यानी ईमानदारी, सफ़ाई और अपनी इन्द्रियों यानी नफ़्स को क़ाबू में रखना, यही थोड़े से शब्दों में मनु के अनुसार मनुष्य मात्र का धर्म है, चाहे वह किसी भी पेशे का हो."

बुद्ध ने हर आदमी के लिये धर्म के पाँच असूल गिनाए हैं जिन्हें सर एडविन आरनाल्ड ने अपनी मशहूर, सुन्दर और

अमर किताब 'दी लाइट आफ़ एशिया' में इस तरह अनुवाद कर के बताया है—

(१) "किसी की जान मत लो ताकि ऐसा न हो कि किसी छोटी से छोटी चीज़ की उन्नति में भी तुम से रुकावट पड़ जावे, (२) झूठी गवाही मत दो, झूठ मत बोलो, सचाई ही अन्दर की पवित्रता को ज़ाहिर करती है, किसी की निन्दा न करो, (३) लोगों से लेन देन करो पर लोभ, ज़बरदस्ती, या छल से किसी की चीज़ मत लो, (४) शराब और नशे की चीज़ों से बचो. इन से अक़्ल ख़राब होती है, जिन लोगों के मन और तन साफ़ हैं उन्हें सोमरस की कोई ज़रूरत नहीं, (५) किसी स्त्री की तरफ़ बुरी निगाह से न देखो. आत्मा को ऊँचा रखने के यह ही पाँच उपाय हैं."

जैन शास्त्रों में लिखा है—

आदमी के लिए पाँच व्रत यह हैं—"किसी की जान न लेना, झूठ न बोलना, ज़बरदस्ती किसी की चीज़ न लेना, व्यभिचार यानी बदचलनी न करना, और अपनी असली आवश्यकता से अधिक माल अपने पास न रखना."

जैन ग्रन्थों में कहीं कहीं इनके साथ मांस, शराब, और शहद का त्याग भी बताया गया है.

ज्ञानार्णव में लिखा है—

"किसी को मारना, झूठ बोलना, चोरी करना, बदचलनी और लोभ, इन पाँचों को छोड़ देना और सबका भला चाहना, यही धर्म का सार है."

हज़रत मूसा की दस आज्ञाओं में से पाँच यह हैं—

"किसी की जान मत लो, झूठी गवाही मत दो, चोरी मत करो, बदचलनी मत करो, अपने पड़ोसी के माल का लोभ मत करो."

हज़रत ईसा ने भी इन्हीं आज्ञाओं को दोहराया और बढ़ाया है.

इंजील में लिखा है—"लानत है उन पर जो सुबह उठते हैं और दिन में शराब पीते हैं (बाइबिल, इसाया)."

एक दूसरी जगह इंजील में लिखा है—

"मुसीबत किन पर आती है ? रंज किन्हें होता है ? झगड़े किन्हें करने पड़ते हैं ? बड़बड़ाना किन्हें पड़ता है ? बेकार घाव किन्हें लगते हैं ? आँखें लाल किनकी होती हैं ? यह वह लोग हैं जो बैठ कर शराबें पीते हैं. इसलिये तुम शराब की लाली पर मत जाओ और शराब के प्याले से दिल न लगाओ. आख़िर में शराब साँप की तरह आदमी को डँस लेती है और उसे अपने ज़हर से मार डालती है. (Bible Proverbs, 23-29-32)."

क़ुरान में लिखा है—

"अल्लाह के बन्दों में से किसी को क़त्ल न करो, अल्लाह ने इसे मना किया है, सिवाय इन्साफ़ के लिए. झूठ मत बोलो, जो आदमी या औरत चोरी करे उसके हाथ काट लेने चाहियें, शराब और नशे की चीज़ें शैतान की चालों में से हैं. जो लोग अपनी इंद्रियों पर क़ाबू रखते हैं और बदचलनी नहीं करते वही जीवन में सफल होते हैं."

यह पाँच असूल, जिन्हें मनु, बुद्ध, मूसा, ईसा, और मोहम्मद सबने ज़रूरी ठहराया है, मामूली गृहस्थों के लिए हैं. संन्यासियों, भिक्षुओं, योगियों, सालिकों, और फ़क़ीरों के लिए जो ऊँची रूहानी ज़िन्दगी बसर करना चाहते हैं, इससे और कड़े यम और नियम हैं ताकि वह लोगों की और अच्छी तरह सेवा कर सकें. इन्हें हिन्दू धर्म में यम, नियम, और इसलाम में ज़ोहद और रियाज़त कहा गया है. और और धर्मों में इनके दूसरे नाम हैं. असल में यह ऊपर के पाँच नियमों के ही बढ़े हुए रूप हैं.

बौद्ध भिक्षुओं या श्रमणों के लिये यह पाँच बातें भी ज़रूरी हैं—

(१) सिवाय नियत समय के और कभी खाना नहीं खाना, (२) नाच, गाना, बजाना, और नाटक नहीं देखना, (३) फूल

माला, इत्र फुलेल, और सजावट की चीज़ों से बचना, (४) ऊँचे आसन और गद्देदार जगहों पर नहीं बैठना और (५) सोना, चाँदी नहीं बरतना. यह पाँच और ऊपर के पाँच मिला कर दस शील हो जाते हैं. आगे चल कर इनमें और भी अधिक कड़ाई होती जाती है. बौद्ध ग्रन्थों में लिखा है—

"दान ऐसा दो कि यदि कोई प्राण भी माँगे तो उसे दे दो. शील यानी नेकी ऐसी हो कि बड़ी से बड़ी पीड़ा दी जाने पर भी आदमी नेकी से न हटे. इच्छा या कामना किसी छोटी से छोटी चीज़ की भी न रह गई हो, बुद्धि इतनी साफ़ हो कि सबके अन्दर की हक़ीक़त (यानी एक ही आत्मा) दिखाई देती हो, सबके भले के लिये सदा तन मन लगा रहे, मौत के सामने भी आदमी सचाई पर डटा रहे, बड़ी से बड़ी तकलीफ़ों में भी मन की शान्ति बनी रहे, धीरज कभी भी हाथ से न जाय, सब पर दया और प्रेम रहे और निश्चल मन से आदमी दुनिया के चलते हुए चक्र को देखे.

इस तरह के नियमों की ग़रज़ यह होती है कि आदमी बाहर से हट कर अपने अन्दर की तरफ़ मुड़े. इससे धीरे धीरे अन्दर की सोई हुई शक्तियाँ जागती हैं. दुनिया का सफ़र और फिर यहाँ से कूच का रास्ता आसान हो जाता है, अहंकार यानी ख़ुदी मिटती है, और आदमी धीरे धीरे अपने असली रूप को पहचान कर उसी में जा मिलता है. हर मज़हब की किताबों में इस तरह की ऊँची आत्माओं और इस तरह के कामिल लोगों के बयान मिलते हैं जिन्होंने धीरे धीरे इस रास्ते को तय किया था.

पतंजलि ने अपने योग सूत्रों में ऐसे खोजियों के लिये पाँच यम और पाँच नियम गिनाए हैं. लिखा है कि—

"अहिंसा सत्यमस्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः ।"—यमाः

"शौच-संतोष-तपः-स्वाध्याय-ईश्वरप्रणिधानानि ।"—नियमाः

अहिंसा यानी किसी जानदार को दुख या ईज़ा न पहुँचाना, सचाई, चोरी न करना यानी किसी तरह भी दूसरे का हक़ न

लेना, ब्रह्मचर्य यानी नेक चलनी, अपरिग्रह यानी अपनी ज़रूरत से अधिक माल न जमा करना, ये पाँच नियम हैं. और शौच यानी पाकी, संतोष यानी क़नाअत, तप यानी अपने ऊपर क़ाबू, स्वाध्याय यानी अच्छी चीज़ें पढ़ना, और ईश्वर प्रणिधान यानी अपने आप को पूरी तरह अल्लाह की मरज़ी पर छोड़ देना, ये पाँच नियम हैं.

'ईश्वर प्रणिधान' का ही ठीक ठीक अनुवाद 'इसलाम' शब्द है. 'मुसलिम' के लफ़्ज़ी मानी हैं वह आदमी जिसने अपने आपको पूरी तरह ईश्वर की मरज़ी पर छोड़ दिया हो.

ईसा से जब किसी ने पूछा कि "अमर जीवन हासिल करने के लिए मैं और क्या करूँ" तो उन्होंने जवाब दिया—"अगर तू कामिल होना चाहता है तो जो कुछ तेरे पास है सब ग़रीबों को दे डाल और फिर मेरे पीछे चल" (बाइबिल). ठीक यही 'अपरिग्रह' का मतलब है.

हिन्दू धर्म में इस रास्ते को योग, इसलाम में सलूक, और ईसाई धर्म में 'कम्युनियन विद गौड' कहा गया है.

ऐसे लोगों को हुकुम है कि सब प्राणियों को अभयदान दें. ईसा ने कहा है—"बुराई का मुक़ाबला मत करो" (रिज़िस्ट नाट ईविल), और मन, बचन, और कर्म तीनों को पाक रखो. ईसा ने कहा है कि अमर जीवन हासिल करने के लिए यानी कामिल बनने के लिए सब पुराने राह दिखाने वाले यही उपदेश देते आए हैं.

मोहम्मद साहब ने भी इस तरह के खोजियों के लिए 'फ़ुक़' और 'मुक़' यानी अपरिग्रह और संतोष का उपदेश दिया है. एक मशहूर हदीस है—

"अल फ़ुक़्रो फ़ख़री."

यानी—मुझे अपनी फ़क़ीरी का अभिमान है.

वैदिक धर्म में संन्यासियों के लिए हुकुम है कि वह रुपये पैसे या धन को हाथ न लगावें.

हज़रत ईसा ने अपने चेलों को हुक्म दिया था कि वे "अपने थैलों में सोना, चाँदी, या पीतल न रखें." लिखा है कि—"ईसा के पास कोई चीज़ या कोई जगह ऐसी नहीं थी जहाँ सिर धर कर लेट सकें."

सेंट पीटर को जब किसी ने ईसाई धर्म के प्रचार के लिए धन देना चाहा तो उन्होंने यह कह कर लेने से इनकार कर दिया—"तेरा धन तेरे साथ ही नष्ट हो, क्योंकि तू समझता है कि ईश्वर का वरदान धन से ख़रीदा जा सकता है." (बाइबिल).

यह सब रास्ता अपनी खुदी को मिटाने और सबके अन्दर रमे हुए ख़ुदा को पहचानने का रास्ता है.

इस रास्ते में एक बड़ा डर यह है कि इसके बीच में आदमी को अनोखी शक्तियाँ, करामात और ऋद्धि सिद्धि लुभाने लगती हैं और बहुत से लोग उन्हीं में फँस कर रह जाते हैं. इसके लिए एक सूफ़ी ने लिखा है—

दरां मंज़िल बुअद कस्फ़ो करामात,
वले बायद गुज़श्तन ज़ां मुक़ामात
अगर दुनिया व उक़्बा पेश आयद,
नज़र करदन दरां हरगिज़ न शायद
अगर गरदी तू दर तौहीद फ़ानी
बहक़ याबी बक़ाए ज़िन्दगानी.

अर्थात्—"इस रास्ते में कस्फ़ और करामात यानी ऋद्धि सिद्धि मिलती हैं, लेकिन आदमी को चाहिए कि उनको छोड़ कर आगे बढ़ जाय. अगर लोक और परलोक दोनों उसके सामने आ जावें तब भी उसे चाहिये कि उनकी तरफ़ आँख उठाकर भी न देखे. अगर तू तौहीद यानी एक ईश्वर के अन्दर अपने को मिटा दे तो हक़ (अल्लाह) के अन्दर हमेशा के लिये अमर हो जाय."

योगसूत्र में, शंकराचार्य के शारीरक भाष्य में, और भागवत, तीनों में जगह जगह साफ़ साफ लिखा है कि योगी को अलौकिक

शक्तियों के फेर में नहीं पड़ना चाहिए, ये शक्तियां आदमी को रास्ते से भटका देती हैं. उसे चाहिये कि सब प्राणियों के अन्दर उसी एक ईश्वर को देखने की कोशिश में लगा रहे. यह सब अलौकिक शक्तियाँ नए नए ढंग का अहंकार पैदा करके आदमी को फँसाए रखती हैं, इसलिए चाहिये कि वह सब के अन्दर के भगवान को देखने की कोशिश में लगा रहे. यही अमर ज़ीवन हासिल करने का रास्ता है.

बिना इस परोपकार भाव और इस त्याग भाव के भी आदमी बड़ी बड़ी शक्तियाँ हासिल कर सकता है और बाहर की प्रकृति पर क़ाबू पा सकता है. पच्छिम के साइन्स वालों ने ऐसा किया भी है. लेकिन इससे आत्मा को शांति नहीं मिलती. अपने अपने दिलों की खोज करने पर सब को अपने अन्दर अशांति और असंतोष ही दिखाई देते हैं. इस असंतोष में भी एक तरह का सुख है, नशा है, तेज़ी है, टीप टाप है, तड़क भड़क है, गैस बिजली और महल हैं, युद्ध के मैदान और लाखों और करोड़ों की तड़प तड़प कर मौत है. जिन लोगों की आत्माएँ अभी इसी दरजे तक पहुँची हैं, और जो इस बुख़ार में मुबतला हैं उन पर इन 'उपदेशों' का कोई असर नहीं हो सकता. उन्हें उस समय तक उन्हीं के रास्ते पर चलने देना चाहिये जब तक कि उनके अन्दर से आवाज़ न आवे, और कड़वे तजरबे के बाद वह इस अधोमार्ग यानी क़ौसे नज़ूल से मुड़ कर ऊर्ध्व मार्ग यानी क़ौसे उरूज पर न चलने लगें. ऊर्ध्व मार्ग यानी ऊपर की चढ़ाई में भी बड़े बड़े तजरबे होते हैं, बड़ी बड़ी शक्तियाँ खुलती हैं. बाहर की प्रकृति यानी क़ुदरत के ऊपर भी और अपनी आत्मा के ऊपर भी वो वो शक्तियाँ खुलती हैं जो उतार के रास्ते की शक्तियों से कहीं बढ़ कर होती हैं. फ़रक़ केवल यह होता है कि साइन्स फिर आत्मा की दासी बन कर काम करती है, मनुष्य उन शक्तियों का उपयोग दूसरों के यानी सब के भले के लिए ही करता है और पग पग पर यह देखता परखता रहता है कि कहीं अपने झूठे स्वार्थ या

ख़ुदी के असर में आकर वह उन शक्तियों का ग़लत इस्तेमाल तो नहीं कर रहा है. इस मार्ग पर हर आदमी अपने तन मन धन और अपनी सारी शक्तियों को सब की अमानत समझता है. यही इनसानी तरक़्क़ी यानी मानव उन्नति की असली राह है. यह इस लोक और परलोक दोनों की भलाई, ख़ुशहाली और बढ़ोती की राह है.

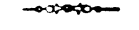

१९

ज़बान पर क़ाबू

आदमी की इन्द्रियों में ज़बान को क़ाबू में करना सबसे ज़रूरी और सब से कठिन है. ज़बान से जो निकलता है उसे बस में रखना और ज़बान के रास्ते जो कुछ अंदर जाता है उसे बस में रखना दोनों मुशकिल हैं. आदमी को सबसे बड़ा ख़तरा ज़बान से रहता है.

हज़रत ईसा ने इंजील में कहा है—

"आदमी के मुँह में जो कुछ जाता है वह उसे नापाक नहीं करता, पर जो कुछ आदमी के मुँह से निकलता है वह आदमी को नापाक कर सकता है, जो बातें आदमी के मुँह से निकलती हैं वह दिल से निकलती हैं और वही आदमी को नापाक कर सकती हैं। दिल में से बुरे विचार, हिंसा, व्यभिचार, बदचलनी, चोरी, भगवान की निन्दा निकलती हैं, यही वह चीज़ें हैं जो आदमी को नापाक करती हैं."

एक और जगह इंजील में लिखा है—

"अगर तुम किसी भरी हुई मेज़ पर खाने को बैठो तो खाने का लोभ मत करो. इस तरह खाओ जिस तरह आदमी को खाना चाहिए. ठूँसो मत, ताकि तुम से किसी को नफ़रत न हो. नदीदे की तरह खाने पर मत टूटो. इससे दूसरों को बुरा लगता है. जिस आदमी का पालन पोषण अच्छी तरह हुआ है उसके लिए बहुत थोड़ा खाना काफ़ी हो जाता है. ठीक ठीक और थोड़ा खाने से नींद गहरी आती है. आदमी फिर सुबह को जलदी उठता है और उसके होश हवास ठीक रहते हैं. शराब पीने में अपनी बहादुरी न दिखाओ, क्योंकि शराब ने बहुत सों को बरबाद कर दिया. तलवार की धार से कट कर बहुत लोग

मरे हैं, पर ज़बान की धार से कट कर जितने मरे हैं उतने तलवार की धार से नहीं मरे." (Ecclesiasticus).

एक और जगह इंजील में लिखा है—

"आदमी हर तरह के दरिंदों, परिंदों, साँपों, समन्दरी जानवरों को पाल और साध सकता है और साधता रहा है, पर अपनी ज़बान को साधना कठिन है. ज़बान एक निरंकुश चीज़ है. इसके अन्दर घातक विष भरा हुआ है." (St. James).

भागवत में लिखा है कि—

"इन्द्रियाणि जयन्त्याशु, निराहारा मनीषिणः।
वर्जयित्वा तु रसनं, तन्निरन्नस्य वर्द्धते ॥
तावज्जितेन्द्रियो न स्याद्, विजितान्येन्द्रियः पुमान्।
न जयेद् रसनं यावत्, जितं सर्वं जिते रसे ॥"

यानी—विचारवान आदमी जब अपनी इन्द्रियों को उनकी ख़ूराक देना बंद कर देता है तो जल्दी से इन्द्रियों को जीत लेता है, पर इन्द्रियसुखों में रस बना रहता है, बल्कि ख़ूराक न मिलने से रस और बढ़ता है. सब इन्द्रियों को जीत लेने पर भी मनुष्य उस समय तक जितेन्द्रिय नहीं कहला सकता जब तक रस यानी हविस (चाह) को न जीत ले. जब आदमी ने अपनी हविस को जीत लिया तो सब कुछ जीत लिया.

यही बात गीता में श्री कृष्ण ने कही है और यह भी कहा है कि इन्द्रिय सुखों के अंदर रस तब जा कर मिटता है जब आदमी सबके अंदर रमी हुई आत्मा को साक्षात् कर लेता है.

मोहम्मद साहब से एक बार पूछा गया कि सब नेकियों से बढ़ कर नेकी क्या है. मोहम्मद साहब ने अपनी ज़बान पर उँगली रख कर कहा कि—"इसे अपने बस में रखो, लोग अपनी ज़बानों से जो बुराइयों का बोझ अपने ऊपर लाद लेते हैं वह बोझ ही उन्हें जहन्नुम की आग में ढकेल देता है."

पारसी धर्म के संस्थापक ज़रथुस्थ ने कहा है—

"ऐ अहुरमज्द ! तुम उस बहादुर को रोशनी देते हो और सब अच्छी चीज़ें देते हो जो धर्मयुद्ध में वीरता दिखाता है, सदा सच सोचता है, सच सुनता है, और सच बोलता है, जो आत्मा को जानता है, बुद्धिमान है, अपनी ज़बान को क़ाबू में रखता है और मीठे प्यारे शब्दों में सच्ची बात समझा कर कहता है." (गाथा 31-19)

एक और जगह ज़रथुस्थ ने कहा है कि—

"जो लोग देखते हुए भी अंधे हैं और अपनी बेलगाम ज़बानों से बुरे शब्द निकाल कर चारों तरफ़ अनुदारता, धृष्टता, कलह और नफ़रत फैलाते हैं, वे ही इस धरती पर शैतान हैं, और लोगों में एक दूसरे से दुशमनी फैलाते हैं." (गाथा 49-4)

मनुस्मृति में लिखा है कि—

"अधिक भोजन करने से आदमी की तन्दुरुस्ती बिगड़ती है, उमर घटती है, और वह स्वर्ग से दूर पड़ जाता है, उसका पुण्य नष्ट होता है, दुनिया में उसकी इज्ज़त घटती है, इसलिये आदमी को अधिक भोजन कभी नहीं करना चाहिये. आदमी के सब विचार और भाव शब्दों में छिपे होते हैं, शब्दों के ज़रिये वह उन्हें दूसरों तक पहुँचाता है, इसलिये जो शब्दों का ग़लत इस्तेमाल करता है वह सबमें ज़हर फैलाता है, इसलिये बुद्धिमान आदमी को चाहिये कि अपनी ज़बान को पूरी तरह क़ाबू में रखे. अगर किसी पर शासन करना हो, हुकुम देना हो तो भी मीठे और नरम शब्दों में ही देना चाहिये. सत्य को वही पा सकता है जिसका मन और वचन शुद्ध हैं और उसके क़ाबू में हैं. तुम्हें कोई दुख भी पहुँचाए तब भी किसी का दिल न दुखाओ, किसी की दुशमनी से कोई काम न करो, घमण्ड की कोई बात मुँह से न निकालो. कोई बात ऐसी न कहो जो लोगों में फूट डाले, जिससे लोग तुमसे दुखी हों."

एक और जगह लिखा है—

"सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियञ्च नानृतं ब्रूयाद् एष धर्मः सनातनः॥"

यानी—सच बोले, प्यारा बोले. जो सच प्यारा न हो वह न बोले, और जो प्यारी बात सच न हो वह न बोले, यही सनातन धर्म है.

एक मशहूर कहावत है—

"अगर तू भूक से एक लुक़मा (कौर) कम खावे, तो तू ही लुक़मान यानी सबसे बड़ा बुद्धिमान है."

ईश्वर को अरबी में रज्ज़ाक़ कहा गया है जिसके मानी हैं रिज़्क़ यानी रोज़ी देने वाला. हज़रत ईसा दुआ माँगा करते थे—"ऐ ईश्वर ! हमें रोज़ का खाना दे." इसमें शरीर के लिये खाना और आत्मा के लिये खाना दोनों शामिल हैं. वैदिक ऋषि ईश्वर को 'अन्नपति' कह कर पुकारा करते थे और ईश्वर से ऐसे अन्न यानी खूराक़ की प्रार्थना करते थे जिससे शरीर और मन दोनों तन्दुरुस्त रहें. वेद के अन्दर 'अन्न' को 'ब्रह्म' भी कहा गया है. इसलिये अन्न और भोजन बड़ी पाक ज़िम्मेदारियाँ हैं. अन्न का ग़लत इस्तेमाल सब दुखों का कारण है. अन्न का ठीक इस्तेमाल सब सुखों का देने वाला है.

राजनीति में अकसर ठीक शब्दों के चुनने पर ही युद्ध या शांति, दुनिया की बरबादी या सुख समृद्धि निर्भर होती है.

दुनिया के नब्बे फी सदी दुखों, रोगों और युद्धों का कारण ज़बान और काम वासना का ग़लत इस्तेमाल होता है. इन दोनों में भी ज़बान का ग़लत इस्तेमाल आदमी की सबसे से अधिक मुसीबतों का कारण होता है. अहंकार और ख़ुदी की सारी बुराइयाँ इन्हीं से पैदा होती हैं. खाना या खूराक दुनिया की सबसे बड़ी शक्ति है. हथियारों की शक्ति और साइन्स की शक्ति भी इसके सामने कोई चीज़ नहीं. आदमी को अपने खाने पर क़ाबू हो.

और सब को ठीक ठीक खाना मिल सके तो दुनिया स्वर्ग है. इसमें ख़राबी हो तो दुनिया नरक है.

छांदोग्य उपनिषद में लिखा है कि—

"आदमी का आहार शुद्ध हो तो उसका मन भी शुद्ध और साफ़ रहता है. उसकी याददाश्त ठीक रहती है, और वह अपनी सब मुशकिलों को हल कर लेता है, उसकी आत्मा संतुष्ट रहती है, और वह अंधकार से ज्योति की तरफ़, अँधेरे से रोशनी की तरफ़ बढ़ता रहता है."

२०

माँ बाप और घर

बाप, गुरु और इनसे बढ़ कर माँ का आदर मान करने की आज्ञा सब धर्मों की पुस्तकों में मिलती है. माँ बाप को यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि वह बच्चों से प्रेम करें. क़ुदरत अपने आप माँ बाप को मजबूर करती है कि वह बच्चों से प्रेम करें और उन्हें पालें. इसी से बच्चे सब देशों में बढ़ते और फलते फूलते हैं.

माँ बाप का प्रेम उसी तरह सन्तानों की ओर जाता है जिस तरह नदी का जल बहता रहता है. दुनिया में ऐसे जानवर भी हैं जो अपने बच्चों को खा जाते हैं, पर वे ऐसे ही हैं जैसे हर नियम का कोई न कोई अपवाद या काट भी होता ही है. शेर, भेड़िया और नागन माएँ तक अपने बच्चो को प्रेम से पालती हैं यह क़ुदरती है. दूसरी तरफ़ बच्चे माँ बाप से प्यार अपनी ज़रूरत और ग़रज़ से करते हैं. इसीलिये बच्चो के दिलों में माँ बाप के लिये प्रेम बनाए रखने के लिये उन्हें समझाने बुझाने की आवश्यकता होती है. इसीलिये सब धर्मों ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि बच्चे माँ बाप का आदर करें. वैदिक धर्म में यह भी हिदायत है कि माँ बाप को चाहिये कि अपने बच्चों को इस तरह पालें और उन्हें इस तरह रखें कि बच्चे बड़े होकर नेक और धर्मात्मा बनें.

माँ के अन्दर बच्चे का प्रेम इतना अधिक होता है कि मादा जानवर अकसर अपने बच्चों को बचाने के लिये अपनी जान पर खेल जाते हैं. हज़रत ईसा ने जब किसी को बच्चों को तकलीफ़ देते हुए देखा तो वह चिल्ला पड़े—"जो कोई इन छोटे बच्चों में से एक को भी कष्ट पहुँचाएगा उसके लिये अच्छा है कि चक्की

का पाट उसकी गरदन में बाँध कर उसे समन्दर में ढकेल दिया जावे. यह बच्चे मेरी बात सुनते हैं." (इंजील)

शंकराचार्य ने कहा है—"पुत्र कुपुत्र हो सकता है लेकिन माता कभी कुमाता नहीं होती."

मनुस्मृति में लिखा है—"बच्चे के पैदा करने और पालने में माँ बाप जो कष्ट उठाते हैं बच्चा सौ बरस तक माँ बाप की सेवा कर के भी उसका बदला नहीं दे सकता."

चीनी महात्मा कनफ़ूशियस ने कहा है—"माँ बाप से प्रेम करना और बड़ों की इज्ज़त करना यही निस्वार्थ जीवन की नींव होती है."

मूसा और ईसा दोनों की आज्ञा है—"अपने बाप और अपनी माँ दोनों का आदर करो."

मोहम्मद साहब ने कहा है—"अपने माँ बाप की इज्ज़त करो और उनकी सेवा करो, जन्नत हमेशा माँओं के पैरों के नीचे रहती है. अल्लाह कहता है कि जिस तरह तुम मेरे शुक्रगुज़ार हो उसी तरह अपने माँ बाप के शुक्रगुज़ार बनो. याद करो कि तुम्हारी माँ ने कितने दरदों के साथ और ग़श खा खा कर तुम्हें नौ महीने अपने पेट में रखा था और फिर कितनी तकलीफ़ से तुम्हें पैदा किया, तुम्हें पाला और बरसों अपना दूध पिला पिला कर तुम्हें बड़ा किया." (हदीस)

अल्लाह के नामों में अल रहमान, अल रज्ज़ाक और अल ग़फ़्फ़ार उसके सब से प्यारे नाम हैं यानी दया करने वाला, रोज़ी देने वाला और माफ़ करने वाला. बच्चे के लिये माँ से बढ़ कर रहमान, रज्ज़ाक और ग़फ़्फ़ार और कौन है ? इसीलिये जहाँ माँ का दिल है वहीं भगवान हैं. वहीं जन्नत है.

वेद में लिखा है—

"आचार्यदेवो भव, पितृदेवो भव, मातृदेवो भव ।
प्रजातन्तुम् मा व्यवच्छेत्सीः ।"

यानी—अपने उस्ताद को देवता की तरह समझो, अपने बाप को देवता की तरह समझो और सब से बढ़ कर अपनी माँ को देवता की तरह समझो, इस तरह एक नसल से दूसरी नसल तक इस लगातार सिलसिले को टूटने न दो.

जिस लड़के या लड़की के दिल के अन्दर माँ की तसवीर बैठी हुई है उस दिल को वह तसवीर बुराई और गुनाह की तरफ़ जाने से रोकती रहेगी और उसे सैकड़ों ख़तरों से बचा लेगी. जिस नसल के लोग अपने दिलों में अपने से पहले की नसल की इज्ज़त नहीं करते और उनके शुक्रगुज़ार नहीं होते वह कभी इस क़ाबिल भी न हो सकेंगे कि उनके बाद की नसल वाले ख़ुद उनकी इज्ज़त कर सकें. इस तरह उस क़ौम में पिछले ज़माने, हाल के ज़माने और आगे के ज़माने में नाता टूट जायगा और सारी क़ौम गिरावट की तरफ़ बढ़ने लगेगी. बहुत सी किताबों के पढ़ने से इतना लाभ नहीं होता और इतनी समझ नहीं आती जितनी सतसंग यानी नेक लोगो के पास बैठने से, उनकी बातें सुनने और तजरबेकार बज़ुर्गों की सेवा करने और उनके पास बैठने से आती है.

एक सूफ़ी ने कहा है—

"जवांरा सोहबते पीरां हिसारे आफ़ियत बाशद"

यानी—जवान लोगों के लिये बज़ुर्गों की सोहबत में बैठना हिफ़ाज़त के क़िले में बैठना है.

मौलाना रूम ने कहा है—

"सोहबत स्वालेह तुरा स्वालेह कुनद"

यानी—नेकों की सोहबत आदमी को नेक बनाती है.

महाभारत में, मनुस्मृति में और वेदों में गुरु, बाप और इन दोनों से कहीं ज़ियादा माँ के बड़प्पन की जगह जगह चरचा की गई है.

ईश्वर के प्यारे नामों में अंगरेज़ी में 'फ़ादर इन हैवन' अरबी में बादी, ख़ालिक़, ईरानी में अब्बा, अम्मा, इसी तरह संस्कृत

में लोकमाता वग़ैरा नाम भी हैं. इस तरह के नाम पुराने मिस्री धर्म और दुनिया के सब धर्मों में मिलते हैं.

बुद्ध का सबसे सुन्दर और सबसे ऊँचा उपदेश 'महा मंगल सुत्त' कहलाता है जिसके मानी हैं सबसे अधिक मंगल यानी फ़लाह का गीत. इस गीत में लिखा है—

"गुमराही में पड़े हुए बुरे लोगों से बचना, विद्वानों की सेवा करना, जो इज्ज़त के क़ाबिल हैं उनकी इज्ज़त करना, नेक काम करना, माँ बाप का आदर करना, अपनी स्त्री और बाल बच्चों की प्रेम के साथ देख रेख करना, अपनी आत्मा पर क़ाबू रखना, अपनी इच्छाओं को कम करना, ब्रह्मचर्य रखना, चार बड़ी सचाइयों यानी दुख, दुख का कारण, दुख को जीतना और दुख को जीतने का रास्ता, इन्हें निगाह में रख कर अपने रोज़ का जीवन बिताना और इस सीधे रास्ते पर चल कर अन्त में निर्वाण यानी निजात हासिल करना, यही सब से बड़ी बहबूदी यानी कल्याण का रास्ता है."

गीता में भगवान ने कहा है—

"इस जगत का मैं ही पिता हूँ, मैं ही माता हूँ, मैं ही दादा हूँ, मैं ही मालिक हूँ, मैं ही सँभालने वाला हूँ, मैं ही पालने वाला हूँ, मुझ से ही यह दुनिया चल रही है, मैं ही इसे चलते देख रहा हूँ, मैं ही इसका सहारा हूँ, मेरे अन्दर ही यह ठहरी हुई है, मैं ही इसका पैदा करने वाला और मैं ही ख़तम करने वाला हूँ, मैं ही इसका भला चाहने वाला हूँ, मैं ही इसका शुरू और मैं ही इसका अख़ीर हूँ, मैं ही इसका वह बीज हूँ जो कभी नष्ट नहीं होता."

पारसी धर्म की किताब गाथा में लिखा है—

"वह ईश्वर ही सबका पिता, सबका पति, सबका सेवक, सबका मालिक, और वही सबका सखा है, वही सब कुछ है."

मुहम्मद साहब का मशहूर उपदेश है—

"यह सारी सृष्टि (ख़िलक़त) अल्लाह का कुनबा है और

इन सब में अल्लाह को सब से प्यारा वह है जो अल्लाह के इस कुनबे के साथ सब से ज़ियादा नेकी करता है."

हर धर्म के अन्दर इस बात पर भी ज़ोर दिया गया है कि पति और पत्नी को एक दूसरे के साथ प्रेम का बरताव करना चाहिये और एक दूसरे से सच्चा रहना चाहिये. किसी दूसरी स्त्री या किसी दूसरे पुरुष की तरफ़ अपनी शारीरिक इच्छा पूरी करने की निगाह से नहीं देखना चाहिए. तभी लोग अपनी सन्तान के लिए सच्चे माँ बाप बन सकते हैं.

इंजील में लिखा है—"पति और पत्नी शादी के बाद दो नहीं रह जाते बल्कि एक जिस्म हो जाते हैं. इसलिये जिन्हें अल्लाह ने मिला कर एक किया है उन्हें कोई आदमी एक दूसरे से अलग न करे."

मनु ने लिखा है कि—"पति और पत्नी सहधर्मचारी हों यानी ज़िन्दगी के सारे काम मिल कर करें और मरते समय तक और मरने के बाद भी एक दूसरे से सच्चे और वफ़ादार रहें."

क़ुरान ख़ास सूरतों में एक आदमी को अधिक से अधिक चार शादी की इजाज़त देता है. लेकिन क़ुरान का साफ़ हुकुम है कि—

"अगर तुम्हें यह डर है कि तुम अपनी सब बीबियों के साथ एक सा इनसाफ का बरताव नहीं कर सकोगे. और एक से अधिक बीबियों के साथ ठीक ठीक इनसाफ़ कर सकना तुम्हारी अपनी ताक़त से बाहर है, चाहे तुम कितना भी चाहो, तो सिर्फ़ एक ही के साथ शादी करो, यही तुम्हारे लिए अधिक ठीक है ताकि तुम नेकी से डिगने न पाओ." (4-3 etc.)

वेदान्त में और सांख्य शास्त्र में बताया गया है कि दुनिया की सारी रिश्तेदारियाँ ब्रह्म और माया यानी पुरुष और प्रकृति के शुरू के गठबंधन से शुरू होती हैं. इसलाम में इसी शुरू के गठबंधन को 'ज़ात और सिफ़ात' या 'आबाए उलवी' और 'उम्महात सिफ़ली' का गठबंधन कहा गया है. दुनिया के सब जिसमानी और रूहानी रिश्ते इन्हीं शुरू के रिश्तों से निकले हैं.

पुरुष और स्त्री या पति और पत्नी का नाता इस तरह का है जिस तरह नदियाँ समन्दर में जा कर गिरती हैं, उन सबका पानी खारी हो जाता है. फिर समन्दर का पानी ऊपर उठता है. आसमान की धूप से नाता जोड़ता है, उसका खारीपन जाता रहता है और वह फिर मीठा हो कर ज़मीन पर बरसने लगता है और उन्हीं नदियों को फिर भर देता है. एक नेक और सच्ची पत्नी अपने प्रेम से अपने गिरे हुए पति को नरक या दोज़ख़ में से भी खींच कर उसी तरह बाहर निकाल लेती है जिस तरह सपेरा साँप को बिल में से ज़बरदस्ती खींच कर बाहर निकाल लेता है.

इसमें शक नहीं कि शादी की एक ग़रज़ यह भी है कि दोनों एक दूसरे से सुख भोगें. लेकिन इससे कहीं बढ़ कर ग़रज़ शादी की यह है कि दोनों मिल कर अपने अन्दर के ख़ालिक़ या ईश्वर को पहचानें और आगे की नसलों के लिये दोनों सच्चे बाप और सच्ची माँ बनें. इसी ग़रज़ के लिये आदमी को आदमी और औरत को औरत बनाया गया है.

मोहम्मद साहब की एक हदीस है—

"शादी का हुकुम इसलिये दिया गया है ताकि दोनों बुराई से बचे रहें. दोनों में से किसी की ताक़त ज़ाया न जाय और दोनों का चरित्र पवित्र रहे."

चीनी महात्मा कनफ़ूशियस ने कहा है कि—

"जहाँ कहीं पति और पत्नी में सच्चा मेल होता है वहाँ माँ बाप और बच्चों सब में प्रेम रहता है. वहाँ भाइयों और बहनों में मिठास और मुहब्बत रहती है. सारा घर ख़ुश रहता है. इस तरह के एक घर की मिसाल से सारे पास पड़ोस में प्रेम बढ़ता है. इसका असर सारे देश पर पड़ता है."

कलचर और मज़हब दोनों के लिये चीनी शब्द चियाओ (Chiao) है. यह 'चियाओ' जिस शब्द से निकला है उसके

मानी हैं 'माता पिता से प्रेम और उनकी सेवा'. कनफ़ूशियस ने इस बारे में लिखा है—

"हर शरीफ़ आदमी माँ बाप की सेवा की इसलिये सलाह देता है ताकि आदमी उन सब लोगों की इज्ज़त करें जो दुनिया में किसी के बाप हैं. छोटे भाइयों को बड़े भाई का मान रखने की इसीलिये आज्ञा दी जाती है ताकि दुनिया के सब भाइयों का मान हो, उनमें प्रेम हो. जो लोग अपने माँ बाप से प्रेम करते हैं और उनकी इज्ज़त करते हैं वह दूसरों के साथ नफ़रत या गुशताख़ी नहीं कर सकते. माँ बाप के साथ अच्छा बरताव सारी नेकी की जड़ है. यही कलचर की बुनियाद है. माँ बाप के साथ अच्छे बरताव का ही आख़री नतीजा यह है कि आदमी ठीक काम करे और ठीक सदाचार से रहे जिससे आगे आने वाली नसलों के लिये एक मिसाल क़ायम रहे और दुनिया के बज़ुर्गों का सच्चा मक़सद पूरा हो."

सन् १६१४-१८ की बड़ी जंग के बाद दुनिया में बेशरमी का एक ख़ौफ़नाक तूफ़ान आया. जिन्सी ख़ाहिशें यानी कामवासनाएँ नंगा नाच नाचने लगीं, लोग शादी की असल ज़िम्मेदारी से बचने और साथ ही अपनी कामवासनाओं को पूरा करने के लिये दवाओं और बनावटी तरीक़ों का खुले इस्तेमाल करने लगे. यह तूफ़ान एक नापाक और ज़हरीला तूफ़ान है. लेकिन पच्छिम के अच्छे विचारकों और नेक अदीबों ने भी इस बात को अच्छी तरह समझा है कि शादी का सबसे मीठा और रूहानी फल यही है कि आदमी अपने ऊपर आगे की नसलों की ज़िम्मेदारी को समझे और उसे पूरा करे. अंगरेज़ कवि ब्राउनिंग ने कहा है—"स्त्री होने के मानी ही माँ होना है. दुनिया का सारा प्रेम माँ के साथ ही शुरू होता है और आख़ीर में चारों तरफ़ घूम कर यहीं ख़तम होता है. इनसानी प्रेम दुनिया भर का चक्कर काट कर आख़िर घर के अन्दर आ कर आराम लेता है."

२१

नेकी का सुनहरा असूल

हज़रत ईसा का एक मशहूर उपदेश है—"तुम दूसरे लोगों से जो बरताव चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ करें ठीक उसी तरह का बरताव तुम दूसरों के साथ करो." इसी को हज़रत ईसा का सुनहरा असूल कहा जाता है.

यह सुनहरा असूल सब धर्मों की किताबों में मिलता है. इसके दो पहलू हैं. एक यह कि दूसरों के साथ कोई ऐसा बरताव न करो जो तुम चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ न करें. और दूसरा यह कि दूसरों के साथ वही बरताव करो जो तुम चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ करें. राज या सरकार की तरफ़ से रोक थाम (निग्रह) के जितने हुकुम जारी होते हैं वह सब ऊपर के पहले पहलू से सम्बन्ध रखते हैं, और करने धरने (संग्रह) के जितने हुकुम जारी होते हैं वह सब दूसरे पहलू से संबन्ध रखते हैं.

महर्षि व्यास ने महाभारत में कहा है—

"दूसरों के साथ कोई ऐसा काम न करो जो तुम चाहते हो कि तुम्हारे साथ न किया जाय. किसी दूसरे के साथ कोई ऐसा बरताव नहीं करना चाहिये जो अपने साथ किया जाय तो हमें अच्छा न लगे. जो जो हम अपने लिये चाहें वही दूसरों के लिये चाहें, यही धर्म का निचोड़ है. यही पूरा धर्म है. इसे ध्यान से सुनना चाहिये और सुन कर इसे दिल में जगह देनी चाहिए."

मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है—

"सब से बढ़ कर ईमान यही है कि तुम जो चीज़ अपने लिए पसन्द करो वही सब के लिए पसन्द करो, और जिससे

तुम्हें तकलीफ़ होती हो उसे और सब के लिए भी तकलीफ़ की चीज़ मानो."

महर्षि व्यास ने जिसे "धर्मसर्वस्वम्" यानी 'पूरा धर्म' कहा है उसी को मुहम्मद साहब ने "अफ़ज़ुलुल ईमान" यानी 'सब से बढ़ कर ईमान' बताया है.

भागवत पुराण में लिखा है—

"यह धर्म कभी नहीं बदल सकता और अच्छे लोग हमेशा इस पर अमल करते हैं कि हमें दूसरे लोगों के दुख में दुख और उनके सुख में सुख महसूस करना चाहिये."

चीनी महात्मा कनफ्यूशियस से किसी ने पूछा कि कोई ऐसा एक शब्द बताइये जिस पर आदमी ज़िन्दगी भर अपने सदाचार को ढाल सके. कनफ्यूशियस ने एक चीनी शब्द में जवाब दिया जिसका मतलब है 'अपनी तरह सबको' और फिर समझाया कि—"दूसरों के साथ कोई ऐसा बरताव न करो जो तुम नहीं चाहते कि वह तुम्हारे साथ करें. तुम इस पर अमल करोगे तो घर में या बाहर तुम्हारे कामों से कोई तुम्हारा दुशमन न होगा."

महात्मा बुद्ध ने इसी असूल को 'समान आत्मता' का नाम दिया है. सब गृहस्थों के लिए बुद्ध ने चार बातों को ज़रूरी बताया है. अव्वल 'दान' यानी ख़ैरात. दूसरे 'प्रिय वचन' यानी प्यारा बोलना. तीसरे 'अर्थ चर्या' यानी मेहनत और ईमानदारी से रोज़ी कमाना, और चौथे सब भलाइयों की जड़ 'समान आत्मता' यानी सब को अपनी तरह समझना और सबके अन्दर एक ही आत्मा को देखना.

गीता में यही बात तरह तरह से कही गई है. लिखा है कि—

"ऐ अर्जुन ! जो आदमी अपनी ही तरह सब के दुख और सुख को एक बराबर देखता है वही सब से बड़ा योगी है. जो सब जानदारों के अन्दर अपने को और अपने अन्दर सब जानदारों को देखता है, जो सबके अन्दर ईश्वर को और

ईश्वर के अन्दर सबको देखता है वह कभी ईश्वर से अलग नहीं हो सकता है और न ईश्वर उससे अलग हो सकता है. जो सब के घट घट में बैठे हुए एक ईश्वर की पूजा करता है वह कहीं भी रहे ईश्वर उसके साथ है."

मनुस्मृति में भी यही बात ठीक इन्हीं शब्दों में कही गई है और लिखा है कि—"जिसे यह बात हासिल है उसे ही सच्चा स्वराज हासिल है."

हितोपदेश में लिखा है—

"आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पंडितः।"

यानी—जो सब प्राणियों को अपनी ही तरह देखता है वही पंडित है.

चीन के ताओ धर्म की एक किताब में लिखा है—

"दूसरों की मुसीबतों में उन पर दया करो. दूसरे की .खुशहाली से .खुश हो. जिन्हें तुम्हारी मदद की जरूरत हो उन्हें मदद दो. जो ख़तरे में हों उन्हें ख़तरे से बचाओ. दूसरों की कामयाबी में .खुश हो और उनकी नाकामी में उन से हमदरदी करो. यह सब इस तरह समझ कर करो कि मानो उनकी जगह तुम ही हो."

एक मुसलमान सूफ़ी कहता है—

"हरचे बर .खुद मपसन्दी बर दीगरां मपसन्द."

यानी—जो तू अपने लिए पसन्द नहीं करता वह दूसरों के लिये भी पसन्द न कर.

एक और मशहूर सूफ़ी शायर ने 'मर्दुम आज़ारी' यानी 'किसी दूसरे का दिल दुखाने' को सबसे बड़ा गुनाह बताया है.

बुद्ध धर्म की मशहूर किताब 'धम्मपद' में लिखा है कि—

"तकलीफ़ से सब लोग बचना चाहते हैं, ज़िन्दगी सब को प्यारी है, उन सबकी तरह ही तू भी है. इसलिए अपने से दूसरे का हाल समझ कर न किसी की जान ले और न किसी को नुक़सान पहुँचा."

इंजील में लिखा है—"अपने पड़ौसी के साथ वैसा ही प्यार करो जैसा तुम अपने साथ करते हो."

यह बात ग़ौर करने की है कि इस सुनहरे असूल में .ख़ुदी को या अपने को मिटाने के लिये नहीं कहा गया. इसमें सिर्फ़ यह कहा गया है कि दूसरों को भी यानी सब को अपनी ही तरह समझो.

पारसी धर्म की किताब 'गाथा' में लिखा है—"जो बात सब के लिए और हर किसी के लिए अच्छी है वही मेरे लिये अच्छी है. इसलिए जो मैं अपने लिए चाहूँ वही सब के लिए चाहूं. यही सच्चा धर्म है."

इसी सुनहरे असूल से कुछ और छोटे छोटे असूल भी नतीजों के तौर पर निकलते हैं. मिसाल के लिए महाभारत में लिखा है कि—

"आदमी अपने जिस काम के बारे में यह चाहे कि दूसरे उसे न जानें और जिस काम को करते हुए उसका अपना दिल शरमावे वह काम आदमी को कभी नहीं करना चाहिये."

इसी तरह मनुस्मृति में लिखा है—

"जिस काम के बारे में आदमी यह चाहता है कि सब उसे जान जावें, जिसके करते हुए उसका दिल बिलकुल शरमाता नहीं, जिससे उसकी अन्तरात्मा को संतोष मिलता है, वही काम सच्चा, सात्विक यानी 'अफ़ज़ल' काम है, वही धर्म है."

महाभारत के अनुशासन पर्व में एक जगह कहा गया है कि—

"कोई मुझे ऐसा तरीक़ा बता दे जिससे मैं दुखिया लोगों और दुखिया प्राणियों के अन्दर घुस कर हमेशा उनके दुख को अपने दुख की तरह अनुभव कर सकूँ."

इंजील में हज़रत ईसा ने कहा है—

"जिस किसी को भूखा रखा गया है उसके अन्दर मेरी ही आत्मा थी, जिसे प्यासा रखा गया उसके अन्दर भी मैं ही था,

जिसे तन ढकने को कपड़े नहीं दिए गए उसके घट में भी मैं बैठा था, सब बीमारों के अन्दर मेरी ही आत्मा है, जो जेल ख़ानों में डाले गए उनके अन्दर भी मैं बैठा हुआ था. इसलिये जिस दरजे तक भी तुमने मेरे किसी छोटे से छोटे भाई, किसी भी इनसान के साथ इस तरह का सलूक किया उस दरजे तक तुमने मेरे साथ यही सलूक किया."

इसी सुनहरे असूल से यह नतीजा निकलता है कि हमें दूसरों की बुराई करना, दूसरों के दोष निकालना, दूसरों पर ताना कसना, किसी की पीठ पीछे बुराई करना, बुरी नियत से टीका टिप्पणी करना, बुरी बातें कहते फिरना, किसी को बदनाम करना, जैसे कामों से हमेशा बचना चाहिये. बदक़िसमती से यह सब आदतें चारों तरफ़ दिखाई देती हैं. आपस की मित्रता के लिये और मानव समाज के सुख के लिये इस तरह की आदतें बहुत ही बुरी हैं.

चीनी महात्मा मैनशियस लिखता है कि—

"लोगों में यह एक बीमारी है कि वह अपने खेत की तो परवाह नहीं करते और दूसरों के खेतों में जा जा कर वहाँ से ख़राब घास उखाड़ते फिरते हैं. इस तरह के लोग दूसरों से तो बड़ी बड़ी बातें चाहते हैं और ख़ुद अपना फ़र्ज़ बहुत कम समझते हैं."

एक दूसरा चीनी महात्मा क्वांगत्ज़े लिखता है कि—

"दूसरों को सुधारने की कोशिश करना जब कि हमारी अपनी नेकी पर बादल छाए हुए हों अपनी नेकी के ऊपर एक ऐसे काम का बार डालना है जो उसके बूते से बाहर है."

बुद्ध धर्म की पुस्तक 'धम्मपद' में लिखा है—

"नफ़रतों से नफ़रतें कभी नहीं बुझ सकतीं. नफ़रत न करने से ही नफ़रतें बुझ सकती हैं, और प्रेम में बदल सकती हैं. यही सनातन धर्म है."

महाभारत में कहा गया है—

"ऐ राजा ! दूसरों के सरसों के दाने के बराबर दोषों को

भी तुम देख लेते हो ओर अपने बेल के फल के बराबर दोषों को देखते हुए भी तुम नहीं देखते."

इंजील में लिखा है—

"तुम अपने भाई की आँख के अन्दर का तिल भी क्यों देख लेते हो और .खुद अपनी आँख के अन्दर की शहतीर भी क्यों नहीं देख पाते ?"

धम्मपद में लिखा है—

"दूसरों के दोष हम आसानी से देख लेते हैं, अपने दोष बहुत मुशकिल से दिखाई देते हैं. अपसे पड़ोसी के दोषों को हम बड़े शौक़ से इस तरह पछोड़ते हैं जिस तरह दाने से भूसा पछोड़ा जाता है, और अपने दोषों को इस तरह छिपाते फिरते हैं जिस तरह जुआचोर लोग अपने उलटे पासे को छिपाने की कोशिश करते हैं. करना चाहिये हमें यह कि दूसरों के दोषों को खोजने में न पड़ कर अपने दोषों को बड़ी सावधानी से फटक फटक कर अलग करें."

यह 'सुनहरा असूल' एक गहरी रूहानी सचाई से पैदा होता है. वह सचाई ही सब सचाइयों की एक सचाई है. आदमी दूसरों के साथ वह सलूक क्यों करे जो वह चाहता है कि दूसरे उसके साथ न करें ? इसलिये क्योंकि 'वह' और 'दूसरे' हक़ीक़त में एक हैं. सब के अन्दर एक ही आत्मा रमी हुई है. सब एक ही के अनेक रूप हैं. जो कुछ मैं दूसरों के साथ करता हूँ वह वास्तव में अपने ही साथ करता हूँ. हमारे भले और बुरे काम सब हम पर उसी तरह लौट कर आते हैं जिस तरह चिड़ियाँ दिन भर हवा में उड़ कर रात को लौट कर सब अपने बसेरे में आ जाती हैं. जलदी या देर में जो सलूक कोई किसी दूसरे के साथ करता है वही अटल रूप में उसके साथ होता है.

उपनिषद् में लिखा है—

"यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषु चात्मानम् ततो न विजुगुप्सते ॥"

यानी जो आदमी सब प्राणियों को अपने अन्दर ही देखता है और सब प्राणियों के अन्दर अपनी आत्मा को देखता है वह फिर न किसी से नफ़रत करता है, न किसी से डरता है, न किसी का बुरा करता है और न कभी धोका खाता है.

भागवत पुराण में और भी साफ़ लिखा है कि—

"किसी तरह किसी एक प्राणी को भी जो समझदार आदमी संतोष या तसल्ली देता है उसका ऐसा करना ही ईश्वर की पूजा करना है. नेक आदमी दूसरों के दुख से दुखी होते हैं. उनका यह दुखी होना ही सब से बड़ी आराधना यानी इबादत है. सब का भला चाहना यही सबका सब से बड़ा धर्म है. जो ज्योति यानी नूर आदमी के अपने अन्दर है वही ज्योति सब के अन्दर है और सब में बराबर है."

आदमी के इस सब से बड़े धर्म या फ़र्ज़ की शकलें देश, काल और परिस्थिति के अनुसार बदलती रहती हैं. इन शकलों को तय करने में आदमी को कभी कभी काफ़ी कठिनाई भी पड़ती है. अलग अलग हालतों में अपने ठीक फ़र्ज़ को समझने के लिए आवश्यकता केवल यह है कि आदमी का दिल साफ़ और पक्षपात से ख़ाली हो. यानी वह किसी तरह की धर्मान्धता, कट्टरता और केवल ऊपरी रीत रिवाज़ या दिखावे में फँसा हुआ न हो.

हज़रत ईसा ने कहा है—

"बुराई से टक्कर न लो, अगर कोई तुम्हारे दाहिने गाल पर चाँटा मारे तो बायाँ गाल भी उसके सामने कर दो, जो तुम्हें बददुआ दे उसे तुम आशीर्वाद दो, अपने दुशमनों से प्रेम करो, जो तुम्हें तकलीफ़ पहुँचाएँ उनके लिए भलाई की दुआ करो."

बुद्ध भगवान ने कहा है—

"नफ़रत को मुहब्बत से जीतो."

क़ुरान में लिखा है—

"इदफ़अ बिल्लति हियअहसन." (२३–९६)

यानी बुराई का बदला भलाई से दो—

मनुस्मृति में लिखा है—

"जो तुम पर क्रोध करे उस पर तुम क्रोध न करो और जो तुम से कड़ाई से बोले उसके साथ तुम मिठाई से बात करो."

महाभारत में लिखा है—

"क्रोध को ग़ुस्सा न करके यानी मेहरबानी करके जीतो, बदी को नेकी से जीतो, ओछेपन को दान से जीतो और झूठ को सच से जीतो."

बुद्ध ने अपनी किताब 'धम्मपद' में ठीक महाभारत के ऊपर के शब्दों को दुहराया है.

जैन धर्म की किताब में इसी असूल को ज़रा बदल कर यूँ लिखा है—

"अपने ग़ुस्से को मीठी क्षमा से जीतो, अपने घमण्ड को नम्रता से क़ाबू में करो, हर तरह के छल कपट को सीधी सचाई से जीतो, और लोभ को शान्ति और संतोष से क़ाबू में करो."

चीन के महात्मा क्वांगत्ज़े ने लिखा है—

"अच्छे लोग आदर सत्कार से फूलते नहीं और कोई उनका निरादर करे तो नाराज़ नहीं होते. यह वही कर सकते हैं जो भगवान की अनन्त एकरूपता को समझ चुके हैं."

गीता में यही बात बार बार आती है.

इंजील में लिखा है—

"अगर तुम्हारा दुश्मन भूका हो तो उसे खाना दो, अगर वह प्यासा हो तो उसे पानी दो."

एक दूसरी जगह इंजील में लिखा है—

"जो आदमी जलदी से ग़ुस्सा नहीं करता वह बड़े से बड़े बलवान आदमी से ज़ियादा बलवान है, और जो अपनी आत्मा पर क़ाबू रखता है वह उस आदमी से बढ़ कर है जो एक शहर जीत लेता है···नफ़रत से नफ़रत और झगड़ा बढ़ता है लेकिन

प्रेम से सब पाप दब जाते हैं···नरम जवाब ग़ुस्से को मोड़ देता है, लेकिन कड़वे शब्द ग़ुस्से को और भड़का देते हैं."

एक और जगह इंजील में लिखा है—

"पूरा प्रेम डर को निकाल कर बाहर कर देता है."

यही बात 'धम्मपद' और महाभारत में भी इन्हीं शब्दों में कही गई है. महाभारत में लिखा है कि "जो आदमी अपने उभरते हुए क्रोध को जीत कर शान्त करे वही सच्चा बहादुर है, न कि वह जो लड़ाई के मैदान में बहुत से दुशमनों को पछाड़ ले."

सामवेद में लिखा है कि—

"दो ऐसे पुल हैं जिन्हें पार करना ज़रा मुशकिल है. उन्हें होशयारी से पार करना चाहिए. एक क्रोध और शान्ति के बीच का पुल और दूसरा झूठ और सच के बीच का पुल."

ऋग्वेद में लिखा है कि—

"हिंसा का बदला हिंसा से मत दो और न शाप यानी बददुआ का बदला शाप से दो. दूसरे के छल कपट का बदला चालों से मत दो. इन सब के बदले में लोगों को आशीर्वाद दो." (१-४१,६)

गीता में लिखा है कि—

"जो अपने क्रोध को जीत लेता है वही ईश्वर तक पहुँचता है."

सुक़रात को यूनान का सब से अधिक बुद्धिमान मनुष्य माना जाता है. उसने एक जगह लिखा है कि—

"हमें किसी की बुराई का बदला बुराई से नहीं देना चाहिये और न किसी के साथ बुराई करनी चाहिये चाहे उसने हमारे साथ कितनी भी बुराई क्यों न की हो."

सुक़रात की एक और मशहूर कहावत है—

"किसी के साथ बुराई करने से बुराई सह लेना ज़ियादा अच्छा है."

चीनी महात्मा लाओत्ज़े ने कहा है कि—

"बुराई का बदला मेहरबानी से दो."

लाओत्ज़े के मशहूर चेले महात्मा क्वांगत्ज़े ने कहा है कि—

"नेकों के साथ मैं नेकी करूँगा और जो नेक नहीं हैं उनके साथ भी नेकी करूँगा ताकि वह नेक बन सकें. जो लोग सच्चे हैं उनके साथ मैं भी सच्चा रहूँगा और जो लोग सच्चे नहीं हैं उनके साथ भी मैं सच्चा रहूँगा ताकि इस तरह सब सच्चे बन सकें."

लगभग इन्हीं सब महापुरुषों ने और लगभग सब धर्मों के क़ायम करने वालों ने समय समय पर अन्याय या ज़ुल्म के ख़िलाफ लड़ने की इजाज़त भी दी है. हर आदमी का धर्म समय समय पर, देश, काल और परिस्थिति के अनुसार और उसकी अपनी तबियत, विकास और क़ाबलियत के अनुसार बदलता रहता है. पर दुनिया के सब धर्मग्रन्थों के अनुसार सब से ऊँचा और सब से अधिक काम का धर्म यही है कि आदमी बुराई का बदला नेकी से दे और किसी दूसरे को दुख पहुँचाने के बजाय ख़ुद दुःख सह लेने को अधिक अच्छा समझे.

२२

पुण्य और पाप

ईसाई धर्म में 'सात अमर अच्छाइयाँ' यानी सात ख़ास 'पुण्य के काम' गिनाए गए हैं. वह सात यह हैं—श्रद्धा (एतक़ाद), आशा (उम्मीद), दया (रवादारी), न्याय (इनसाफ़), समझदारी, बुरी चीज़ों से परहेज़, और धीरज. वेदान्त में छै साधन बताए गए हैं. साधन का मतलब है वह बातें जो आदमी को ऊपर उठने में मदद दें. वह छै यह हैं. एक दया भरी शान्ति, दूसरे अपने ऊपर क़ाबू रख कर बुराइयों से बचना, तीसरे वैराग्य यानी बेलाग रहना, चौथे बरदाश्त (सब्र) या धीरज, पाँचवें श्रद्धा और छठे सब से मेल रखते हुए एकाग्रता यानी यकसूई. ईसाई धर्म में सात घातक पाप माने जाते हैं. वह यह हैं—ग़रूर, लालच, शहवत यानी काम, ग़ुस्सा, बहुत खाना, हसद यानी ईर्ष्या और काहिली. वेदान्त में आदमी के छै दुशमन गिनाए गए हैं. वह छै यह हैं—काम यानी शहवत, क्रोध यानी ग़ुस्सा, लोभ, मोह, घमंड, और ईर्ष्या यानी दूसरों से जलना. मोह के अन्दर ज़ियादा खाना, सुस्ती और डर तीनों शामिल हैं.

मौलाना रूम ने आज से सात सौ बरस पहले इन सात या छै बुराइयों की जगह दो गुनाह सब गुनाहों की जड़ बताए हैं. उनका कहना है कि—"ख़श्म और शहवत यानी क्रोध और काम आदमी को अन्धा कर देते हैं और उसकी रूह को सीधे रास्ते से भटका कर ग़लत रास्ते पर ले जाते हैं."

श्री कृष्ण ने गीता में आज से पाँच हज़ार बरस पहले कहा था कि—"राग और द्वेष यानी कुछ चीज़ों से बेजा लगाव और

कुछ चीज़ों से बेजा अलगाव आदमी के तरक़्क़ी के रास्ते की सब से बड़ी रुकावटें हैं." एक दूसरी जगह गीता में कहा गया है—"काम और क्रोध ही इस दुनिया में आदमी के सब से बड़े दुशमन हैं." श्री कृष्ण के शब्द और मौलाना रूम के शब्द दोनों एक दूसरे की गूंज मालूम होते हैं.

योग शास्त्र के मुताबिक़ अहंकार यानी .खुदी ही इन सब बुराइयों की जड़ है. काम और क्रोध दोनों इसी से पैदा होते हैं. अहंकार की जड़ अविद्या है. अविद्या इस वहम या धोके को कहते हैं कि यह हाड़ मांस का छोटा सा जिस्म ही मैं हूँ, और मैं और दूसरे सब अलग अलग हैं और हम सब का असल असलियत से या हक़ (ईश्वर) से अलहदा कोई अलग अस्तित्व (वजूद) है. हमारे इस वहम या अविद्या से ही हमारी सब बुराइयाँ पैदा होती हैं. यह अविद्या ही असली 'कुफ़्र' है. सूफ़ियों के मुताबिक़ 'कुफ़्र' के भी अलग अलग दरजे हैं. शरीअत (कर्म) के मैदान में गुनाह में फँसना ही कुफ़्र या 'शिर्क' है. तरीक़त (भक्ति) के मैदान में दुनिया से मोहब्बत करना 'कुफ़्र' या 'शिर्क' है. हक़ीक़त (ज्ञान) के मैदान में ग़ैर यानी 'मा सिवा अल्लाह' के वजूद (अस्तित्व) को मानना ही कुफ़्र और शिर्क है. शिर्क का अर्थ है एक अल्लाह के सिवा दूसरे को न पूजना. इसीलिये सूफ़ी किताब 'गुलशनेराज़' में लिखा है—

"कि रा कुफ़्र हक़ीक़ी शुद पदीदार
ज़ इसलामे मजाज़ी गश्त बेज़ार."

यानी—जिस किसी ने असली कुफ़्र को समझ लिया वह फिर इस इसलामे मजाज़ी से बेज़ार यानी अलग हो गया.

इसलामे मजाज़ी से मतलब ऊपर के इसलाम यानी रीत रिवाज के इसलाम से है, क्योंकि असल इसलाम अपनी .खुदी को मिटाना है. इसीलिये एक सूफ़ी ने कहा है—

"नमाज़े ज़ाहिदां क़द्दो सजूद अस्त
नमाज़े आशिक़ां तरके वजूद अस्त,"

यानी—ज़ाहिद यानी रीत रिवाज में फँसे हुए मुसलमानों की नमाज़ कभी सीधे खड़े होना और कभी सजदे में झुकना है (जो नमाज़ में किया जाता है) और आशिक़ों यानी प्रेमियों की नमाज़ अपनी .खुदी यानी अहंकार को मिटाना है.

ब्रह्म माया के, यानी .खुदा .खुदी के, असर में आ कर ही 'जीव' यानी एक अलग वजूद हो जाता है. परमात्मा ही अविद्या के असर से जीव आत्मा दिखाई देने लगता है. आज़ाद क़ैदी हो जाता है. इसीलिये फ़रिश्ते और शैतान के मेल का नाम इनसान है. हममें से हर एक को अपने अन्दर फ़रिश्ता और शैतान दोनों एक साथ दिखाई दे सकते हैं. वही चेहरा कभी मुसकराता है और कभी गुर्राता है. एक सूफ़ी ने कहा है कि—

"दरिन्दों से भी तुझे हिस्सा मिला है और फ़रिश्तों से भी. दरिन्दों की हद से निकल जा तो तू फ़रिश्तों की हद से भी ऊपर उठ जायगा."

यही बात गीता में दूसरी तरह कही गई है.

अंगरेज़ शायर टेनीसन ने कहा है—"हम अपनी छोटी छोटी .खुदियों को मार कर उनकी सीढ़ी बना कर धीरे धीरे ऊपर की रूहानी मनज़िलों तक पहुँच सकते हैं."

यह अहंकार (.खुदी) अपने को तीन शकलों में ज़ाहिर करती है. यह तीन ख़ाहिशें हैं. वेदान्त में इनके नाम हैं—एक 'स्याम' यानी मैं हमेशा रहूँ, दूसरे 'बहु स्याम' यानी मैं बहुत हो जाऊँ, तीसरे 'बहुधा स्याम' यानी मैं बहुत तरह हो जाऊँ. वेदान्त में ही इनके नाम लोकेषणा, वित्तेषणा और दारेषणा भी हैं. बौद्ध धर्म में इन्हें भू-तृष्णा, विभू-तृष्णा और काम-तृष्णा कहा गया है. जैन धर्म में इन्हें आहार संज्ञा, परिग्रह संज्ञा और मैथुन संज्ञा कहते हैं. सूफ़ी लोग इसी को ज़मीन, ज़र और ज़न की ख़ाहिश कहते हैं. इन्हीं को आहार इच्छा, धन इच्छा और रति इच्छा भी कहा जाता है. इन्हीं से क़ानून, मिलकियत और विवाह का जन्म होता है. इनमें से हर एक के अच्छे और परोपकारी पहलू

भी हैं जिन्हें अहिंसा, अपरिग्रह, और ब्रह्मचर्य कहा जाता है. सूफ़ी इन्हें 'तर्के ईज़ा रसानी', 'तर्के दौलत' और 'तर्के शहवत' कहते हैं. 'सत्' यानी 'हक़' इन सबके ऊपर है.

जिस तरह अहंकार यानी .खुदी से सब बुराइयाँ पैदा होती हैं उसी तरह निरअहंकारता यानी बेखुदी से सब भलाइयाँ पैदा होती हैं. हज़रत ईसा ने कहा है—"अपने पूरे दिल से ईश्वर से प्यार कर." उन्होंने यह भी कहा है—"अपने पड़ोसी से उसी तरह प्यार कर जैसा अपने साथ." वजह साफ़ है. ईश्वर ही हमारे अन्दर की असल हक़ीक़त है और वही हमारे पड़ोसी के अन्दर की हक़ीक़त है. इसलिए असलियत दोनों की एक ही है.

जिस तरह .खुदी से काम और क्रोध पैदा होते हैं उसी तरह सच्ची बेखुदी से भक्ति यानी इश्क़े हक़ीक़ी और करुणा यानी रहम पैदा होते हैं. एक हमें अविद्या और जहालत की तरफ़ ले जाता है और दूसरा विद्या यानी इरफ़ान की तरफ़. वेदान्त के मुताबिक़ अविद्या की ख़ास शकलें आवरण और विक्षेप हैं. इन्हीं दोनो को सूफ़ी हिजाब और ईज़ाल कहते हैं. विद्या यानी इरफ़ान से ही काम और क्रोध को जीता जा सकता है. इसके लिये रास्ता त्याग यानी तर्क और व्यवसाय यानी मुजाहिदा का रास्ता है. इन्हीं को वैराग्य और अभ्यास भी कहते हैं, यानी दुनिया से हट कर आत्मा यानी हक़ की तरफ दिल को लगाना. यह दुनिया से हटना दुनिया के फ़रायज़ से भागना नहीं है, क्योंकि सच्चे त्याग (तर्क) से ही 'सर्वभूतहित' यानी 'खिदमते ख़ल्क' की लगन पैदा होती है.

मनुस्मृति में लिखा है—

"अपनी आत्मा के अन्दर सबको देखो. सच और झूठ, ठीक और ग़लत सब उसी के अन्दर हैं. जो कोई अपनी आत्मा के अन्दर सबको देखता है उसका मन फिर पाप की तरफ़ नहीं जा सकता."

इंजील में लिखा है—

"अपने पूरे दिल, पूरी आत्मा और पूरे मन से ईश्वर से प्रेम करो और अपने पड़ौसी के साथ वैसा ही प्रेम करो जैसा अपने साथ. इन दोनों आज्ञाओं पर ही सारा धर्म और पुराने सब पैग़म्बरों के उपदेश निर्भर हैं." (मैथ्यू)

इंजील में और लिखा है—

"जो तुम्हें तकलीफ़ पहुँचाएँ उन्हें आशीर्वाद दो, किसी को बद्दुआ न दो. जो .खुश हैं उनके साथ .खुशी मनाओ और जो रोते हैं उनके साथ रोओ. एक दूसरे के साथ हम ख़याल हो. जहाँ तक तुम्हारी शक्ति में है सब लोगों के साथ अमन से रहो. सब तुम्हारे प्यारे हैं. किसी से बदला न लो. अगर तुम्हारा दुशमन भूका है तो उसे खाना खिलाओ. अगर वह प्यासा है तो उसे पानी पिलाओ. इस तरह करने से दुशमन की हैसियत से तुम उसके सर पर जलते हुए कोयले डाल दोगे. बुराई तुम्हें न जीतने पाए. तुम बुराई को भलाई से जीतो. सच्चे हाकिम वह हैं जिन से कोई नेकी करने वाला नहीं डरता और जिन से केवल बुराई करने वाले डरते हैं. इसलिए जो चीज़ जिसकी है वह उसे दो···किसी का उधार अपने ऊपर न रखो, सिवाय इसके कि प्यार बराबर सब एक दूसरे को लेते देते रहो.

"जो दूसरे को प्यार करता है वह सच्चे धर्म का पालन करता है. इसलिए बदचलनी न करो, किसी की जान न लो, चोरी न करो, झूठी गवाही न दो, दूसरे के चीज़ का लोभ न करो. और अगर कोई और हुकुम है तो यह है, और इसमें सब आ जाते हैं, कि अपने पड़ौसी के साथ वैसा ही प्रेम करो जैसा अपने साथ. प्रेम कभी पड़ौसी को नुक़सान नहीं पहुँचा सकता. प्रेम ही पूरा धर्म है. सचाई यानी यह सचाई कि सबके अन्दर एक ही आत्मा है तुम्हें सब बुराइयों से बचा लेगी और तुम्हें आज़ाद कर देगी." (इंजील रोमन्स और जान)

गीता में श्री कृष्ण ने कहा है—"ऐ अर्जुन! इसमें कोई शक नहीं कि मन को रोक कर क़ाबू में करना बहुत मुशकिल है लेकिन अभ्यास से यानी बार बार मश्क़ करने से और वैराग्य यानी दुनिया से अपने दिल को हटाने से मन क़ाबू में आ जाता है."

गीता में और उपनिषदों में जगह जगह कहा गया है कि मन को बाहर की चीज़ों से हटा कर धीरे धीरे अपने अन्दर की तरफ़ लगाना चाहिये.

मौलाना रूम ने इसी बात को इन शब्दों में अदा किया है—

"अपनी आँखों को बन्द कर, अपने कानों को बन्द कर, अपने होठों को बन्द कर. फिर भी अगर हक़ीक़त का राज़ तुझे दिखाई न दे तो हम पर हँस लेना."

यही बात दूसरे सूफ़ियों ने तरह तरह से और बहुत तफ़सील के साथ कही है.

वेदान्त में कहा गया है—"पुण्य और पाप दोनों पाप हैं, क्योंकि दोनों आत्मा को इस जिस्म और इस दुनिया के साथ बाँधते हैं."

एक सूफ़ी ने इसी चीज़ को इस तरह कहा है—"चूंकि नेकी और बदी दोनों ख़ुदा ही से हैं इसलिए समझदार आदमी दोनों से दिल को हटा कर उसे अपने अन्दर के ख़ुदा की तरफ़ लगाता है."

योरप की एक कहावत है—"सब को समझ लेना सब को माफ़ कर देना है."

आदमी सब को तभी समझ सकता है जब पहले अपने को यानी अपने दिल को ठीक ठीक समझ ले. हम दूसरों की तरफ़ दयावान या हमदर्द तभी हो सकते हैं जब हम अपने अन्दर निगाह डाल कर अन्तर्दृष्टि, यानी (सैरे नफ़सी) के ज़रिये यह अच्छी तरह देख लें कि हमारी अपनी ज़िन्दगी के और हमारे दिल के अन्दर कितनी कमज़ोरियाँ, बुराइयाँ और बद-ख़यालियाँ छुपी हुई हैं.

महाभारत के शान्ति पर्व में लिखा है—"तेरह नेकियाँ सब एक 'सचाई' के अलग अलग रूप हैं. और तेरह बुराइयाँ सब 'झूठ' की अलग अलग शकलें हैं."

पारसी धर्म की किताब गाथा में अहुरमज्द (ईश्वर) से बार बार सचाई के दीदार की ही प्रार्थना की गई है.

महाभारत में कहा है कि—"सचाई से बढ़ कर कोई धर्म है ही नहीं."

एक सूफ़ी कहता है—"सूफ़ी के लिये सिवाय सचाई के मज़हब के और कोई मज़हब है ही नहीं. वह और कोई मज़हब जानता ही नहीं."

सब सचाइयों की यह सचाई कि सबके अन्दर एक ही आत्मा है अपने को 'प्रेम' की शकल में ज़ाहिर करती है. प्रेम के अलग अलग रूप हैं. बड़ों के साथ वह आदर, इज्ज़त, पूजा और एहतराम की शकल अख़्तियार करता है. छोटों के साथ क्षमा, नरमी, मुहब्बत और दया की शकल लेता है. बराबर वालों के साथ दोस्ती और प्रेम की शकल. इन सब भावनाओं के साथ आदमी के अलग अलग फ़र्ज़ जुड़े हुए हैं. जब आदमी सब के अन्दर एक आत्मा देखता है तो .ख़ुशदिली उसका फ़र्ज़ हो जाता है, प्रेम उसका मज़हब हो जाता है, बाक़ी सब नेकियाँ .ख़ुद बख़ुद पीछे पीछे दौड़ती हैं, और जहाँ सब झूठों का झूठ यानी जुदाई (ग़ैरियत) का ख़्याल ज़ोर करता है वहाँ प्रेम की जगह नफ़रतें पैदा होती हैं यानी अपने से बड़ों का डर, बराबर वालों पर ग़ुस्सा, और कमज़ोरों पर ज़ुल्म.

इंजील में कहा गया है कि—"नेकी हर क़ौम को ऊँचा उठाती है."

इसी असूल को पूरा करने के लिये कहा जा सकता है कि शहनशाहियत, .ख़ुद ग़रज़ी, दूसरों पर ज़ुल्म, ज़ियादती और दूसरी क़ौमों के जान व माल से बेजा फ़ायदा उठाने की ख़ाहिश, या कमज़ोर क़ौमों को चूसने की इच्छा, बड़ी से बड़ी

क़ौम को नीचे गिरा देती है. केवल सब को अपनी तरह समझ कर ही आदमी इन सब बुराइयों और मुसीबतों से बच सकता है.

चीनी कनफ़्यूशियन धर्म की किताब 'शू किंग' में लिखा है—

"बात साफ़ साफ़ कहो, लेकिन मिठास के साथ, दूसरों से नरमी से बरताव करो लेकिन .ख़ुद्दारी के साथ, ताक़तवर बनो पर किसी पर ज़ुल्म न करो, काम ज़ोरों के साथ करो लेकिन किसी के साथ गुसताख़ी न करो, सब के साथ रवादारी बरतो लेकिन अपनी जगह अडिग रहो, नरम रहो लेकिन पक्के, हिम्मत न हारो लेकिन नेकी का आदर मान बराबर दिल में बनाए रखो. दूसरों की कमज़ोरियाँ सच सच बताओ लेकिन इस तरह कि उसके दिल को चोट न पहुँचे, सब के सामने झुक कर चलो, लेकिन सचाई के लिए अपने को ख़तरे में डालने से कभी संकोच न करो. खुले दिल से दान दो लेकिन पात्र और कुपात्र देख कर, अपने इरादे में पक्के रहो लेकिन दिल हमेशा साफ़ और सच्चा रहे. बहादुर बनो लेकिन इनसाफ़ से न हटो." यह बीच का रास्ता ही सच्चे दीन धर्म का रास्ता है.

२३

हमारे अन्दर का परमात्मा

दुनिया के सब धर्म इस बात पर ज़ोर देते हैं कि परमात्मा सब के अन्दर है. गीता में लिखा है—"ऐ अर्जुन, ईश्वर सब प्राणियों के दिल के अन्दर रहते हैं." .कुरान में लिखा है—"इनसान का दिल रहमान का घर है." इससे साफ़ नतीजा निकलता है कि सब के अन्दर एक ही नूर मौजूद है, एक ही जान है, एक ही आत्मा है. किसी भी हालत में अगर हम अपनी अन्तरात्मा यानी अपने अन्दर के उस .खुदा से सलाह लेते रहें, रास्ता पूछते रहें और उसी की सलाह पर उसी के बताए रास्ते पर चलते रहें तो हम कभी धोका नहीं खा सकते. कठिनाई केवल यह है कि इनसान के अन्दर की .खुदी .खुदा की आवाज़ को दबा देने की कोशिश करती रहती है. यही खेंचातानी हर आदमी के अन्दर की खेंचातानी है. कम या ज़ियादा यह हर एक के अन्दर हर समय होती रहती है. आदमी का धर्म है कि हर समय अपनी .खुदी को दबाता और .खुदा की आवाज़ को उभारता रहे. इसी खेंचातानी को सूफ़ी लोग 'नफ़से रहमानी' और 'नफ़से अम्मारा' के बीच की खेंचातानी कहते हैं. नफ़से रहमानी को वेदान्त में 'ब्रह्मभूत' और नफ़से अम्मारा को 'अहंकार' कहा गया है. इन्हीं को 'शुभवासना' और 'अशुभ वासना' 'एकता' और 'भेद बुद्धि' कहते हैं. इस 'भेद बुद्धि' को ही 'तफ़रक़ा' 'इनफ़िसाल' और 'ग़ैरियत' भी कहते हैं, यानी जुदाई का ख़याल. एकता को 'अभेद बुद्धि' 'वहदत', 'इत्तिसाल' और 'ऐनियत' भी कहा जाता है. ग़ैरियत ही स्वार्थ है. एकता परार्थ और परमार्थ है. इन्हीं दोनों हालतों को .खुद

ग़रज़ी और बेग़रज़ी, दोष और गुण, 'रज़ायल' और 'फ़ज़ायल' नाम भी दिये जाते हैं. अंगरेज़ी में इसी से होते होते एक तरफ़ 'कम्पिटीटिवनैस' यानी प्रतिस्पर्धा और रक़ाबत है और दूसरी तरफ़ 'कोआपरेटिवनैस' यानी सहयोग और मिल कर काम करने की भावना है. एक तरफ़ 'इनडिविजुएलिज्म' यानी अपनी अपनी आपाधापी है और दूसरी तरफ़ अच्छे से अच्छे मानी में 'सोशलिज्म' और 'कम्युनिज़्म' यानी समाजवाद और साम्यवाद हैं. 'कम्युनिज़्म' यानी साम्यवाद का असली रूप यही है कि हम सब के अन्दर एक आत्मा को देखें. सच्ची मानव एकता इसी से पैदा हो सकती है. इसी से एक दरजे तक आर्थिक यानी माली बराबरी समाज में आ सकती है. यह सारी बात आदमी बराबर सोचते रहने और उस पर अमल करते रहने से ही धीरे धीरे समझता है. दिमाग़ से समझना, दिल से अनुभव करना और उसी के अनुसार अमल करने की पूरी कोशिश करते रहना यही वह रास्ता है जिससे धीरे धीरे आदमी केवल दिमाग़ी ज्ञान से साक्षात्कार तक यानी 'शुनीदा' से 'दीदा' तक पहुँच जाता है.

चीन के कनफ़ूशियन मत में कहा गया है—

"जेन (अपनापन) सब नेकियों की बुनियाद है. यही हमदर्दी है, यही दूसरों के साथ अपनी एकता अनुभव करना है, इसी से यह सुनहरा असूल निकला है कि दूसरों के साथ कोई ऐसा सलूक न करो जो तुम नहीं चाहते कि वह तुम्हारे साथ करें. इसी का नाम 'ताओ' है. हर आदमी को इस रास्ते पर चलना पड़ता है. दूसरों के साथ अपनी एकता अनुभव करना ही 'ताओ' है और 'ताओ' ही यह एकता है. बिना इसके कोई सुनहरे असूल पर डट कर नहीं चल सकता. दुनिया की सब नेकियाँ 'जेन' से पैदा होती हैं, जैसे वफ़ादारी, माँ बाप और बड़ों का आदर, बहादुरी, ठीक समझ, मुनासिब बरताव, वचन पूरा करना, नेकी और इनसाफ़, बरदाश्त, दया, प्रेम और परोपकार. दुनिया में नैतिक असूल दो ही हैं—एक हमदर्दी यानी सब का भला चेतना और दूसरा इसके ख़िलाफ़ ख़ुदग़रज़ी यानी अहंकार.

हमदर्दी ही 'जेन' है. यही असली मनुष्य है. इसी से प्रेम पैदा होता है. इसी से सच्ची .खुशहाली, दयालुता, उदारता, रवादारी, सचाई और आत्मत्याग जनम लेते हैं. जब आदमी अपने दिल की ऊँची आवाज़ पर चलता हैं लेकिन कभी इनसाफ़ या एतदाल से इधर उधर नहीं जाता तब वह अपने अन्दर एक सच्चा तवाज़ुन (समतोल) पैदा करता है. तब वह .खुद 'जेन' हो जाता है. तब उसे 'सेंग जेन' कहने लगते हैं, जिसका अर्थ है 'पाक आदमी' या 'साधू'. तब वह इतनी आज़ादी और बेगुनाही के साथ चलने फिरने लगता है जिस तरह कल का पैदा हुआ बच्चा. फिर वह जो-कुछ भी करता है वह कभी 'चुंगताओ' यानी मध्यम मार्ग से नहीं भटकता."

ऊपर के वाक्यों में वही बात कही गई है जो वेदान्त और तसव्वुफ़ में कही गई है. 'ताओ' ही असली दीन और धर्म है, और 'सेंग जेन' का वही मतलब है जो 'ब्रह्मभूत' या 'जीवन्मुक्त', या 'इनसाने कामिल' का है.

सूफ़ी कहता है—

"नेस्त अन्दरजुब्ब अम ग़ैर अज़ .खुदा"

यानी—मेरे चोग़े के अन्दर सिवाय .खुदा के और कोई है ही नहीं.

उपनिषद् में लिखा है—

"ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति
तद् ब्रह्मास्मि अहम् अद्वयम्"

यानी—"ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है, वही ब्रह्म मैं हूँ, कोई ग़ैर है ही नही."

सूफ़ी ने कहा है—

"आरिफ़ो मारूफ़ बमानी यकस्त
आंकि .खुदारा बेशनासद .खुदास्त"

यानी—"जानने वाला और जो जाना जाय दोनों एक ही हैं, जिस किसी ने .खुदा को पहचान लिया वही .खुदा है."

पुराणों में लिखा है कि "अपनी बुरी वासनाओं के काँटे को अच्छी वासनाओं के काँटों से निकाल कर बाहर फेंक देना चाहिये और फिर उस अच्छी वासनाओं वाले हाथ के काँटे को भी फेंक देना चाहिये. आदमी मामूली ज़िन्दगी में भी जब एक काँटे से अपने पैर के काँटे को निकाल कर फेंक देता है तो फिर उस हाथ के काँटे को भी अपने से उतनी ही दूर फेंक देता है."

इसी ख़याल को सूफी ने बड़ी अच्छी तरह ज़ाहिर किया है. वह कहता है—

"सर बिरहना नेस्तम, दारम कुलाहे चार तर्क
तरके दुनिया, तरके उक़बा, तरके मौला, तरके तर्क"

यानी—"मेरा सिर नंगा नहीं है, चार तरह के त्याग की टोपी मेरे सिर पर है—पहले उस दुनिया के लिए इस दुनिया का त्याग, फिर मौला यानी अल्लाह के लिये उस दुनिया का त्याग, फिर त्याग के लिए मौला का भी त्याग यानी कोई ग़ैर रहे ही न और फिर आख़िर में इस त्याग का भी त्याग."

महाभारत में लिखा है—

"अधर्म से अपने लगाव को हटा कर अधर्म को छोड़ देना चाहिये. उसके बाद अपने संकल्प यानी इच्छा मात्र को मिटा कर धर्म को भी छोड़ देना चाहिये. इसी तरह अपनी बुद्धि को चमका कर सच और झूठ दोनों को छोड़ देना चाहिये. और जब भगवान का निश्चय हो जावे तो बुद्धि को भी छोड़ देना चाहिए. इन सब से ऊपर उठ कर जिस त्याग भावना से इन सब को त्यागा है उसको भी दूर फेंक देना चाहिये."

जब आदमी इस हालत को पहुँच जाता है तब उसके लिये बन्धन और मोक्ष, सुख और दुख, पाप और पुण्य कोई चीज़ नहीं रह जाते. उपनिषदों ने इस हालत को तरह तरह से बयान किया है. यही असली मुक्ति यानी निजात है. सूफ़ियों ने भी

इसे इसी तरह के शब्दों में बयान किया है. एक सूफ़ी का यह कहना बड़े महत्व का है—

"जब तक नफ़्स यानी मन रूह यानी आत्मा के क़ाबू में नहीं होगा तब तक आदमी का ज़ख़मी दिल न अच्छा हो सकता है और न आराम पा सकता है."

एक ईसाई महात्मा ने इसे और भी अच्छी तरह यों कहा है—

"बैथलहम (वह शहर जहाँ हज़रत ईसा पैदा हुए थे) में ईसा अगर हज़ार बार भी पैदा हों लेकिन तुम्हारे अपने अन्दर उनका जन्म न हो तो तुम्हारी आत्मा सूनी की सूनी ही रहेगी. तुम 'गालगोथा' (हज़रत ईसा के सूली चढ़ने की जगह) में क्रास को फ़ज़ूल ढूँढते फिरते हो. क्रास गाड़ना है तो अपने अन्दर गाड़ो."

एक और सूफ़ी ने हज़रत नूह से नक़्ल किया है—

"ऐ अविश्वासी लोगो ! अब मैं मैं नहीं हूँ. मैं अपनी छोटी जान से मर चुका. अब मैं अपने प्रीतम, सब जानों की जान, से ज़िन्दा हूँ. अब मेरे अन्दर सारे इनसानी हवास यानी इन्द्रियाँ जो मुझे दूसरों से अलग करती थीं मर गईं तो हक़ (सत्य) यानी ईश्वर मेरे अन्दर रहने लगा और वह ही मेरे लिये मेरी आँख, कान और मेरी समझ बन गया. जब मैं मैं नहीं हूँ तो मेरी ज़िन्दगी अब उसी 'हक़' से है. इस से पहले जो कुछ मेरे अन्दर जी रहा था वह काफ़िर यानी अविश्वासी 'मैं' था. वह अब ख़तम हो चुका."

महात्मा बुद्ध जिनका पहला नाम गौतम था कहा करते थे कि "मेरे अन्दर का गौतम मर चुका, जो मुझे वही गौतम समझते हैं वह अविश्वासी हैं. जिन्हें विश्वास है वह मुझे अब 'बुद्ध' जानते हैं. इस जीवन के अन्दर मैं निर्वाण प्राप्त कर चुका."

इंजील में बार बार आता है—

"जो कोई अपनी ज़िन्दगी को बचा कर रखेगा वह ज़िन्दगी खो देगा, और जो कोई ईश्वर के लिये यानी प्राणीमात्र के

लिये अपनी ज़िन्दगी को मिटा देगा वह ज़िन्दगी हासिल कर लेगा."

"जो कोई इस ज़िन्दगी से प्यार करता है वह ज़िन्दगी खो देगा और जो इस दुनिया की ज़िन्दगी से नफ़रत करता है वह अनन्त ज़िन्दगी हासिल कर लेगा."

कबीर साहब ने कहा है—

"सिर राखे सिर जात है
सिर काटे सिर होए
जैसे बाती दीप की
कटि उजियारा होए,
सीस उतारै भुई धरै
ता पर राखै पाँव
दास कबीरा यों कहे
ऐसा होए तो आओ"

कबीर साहब के इस पद में भी ख़ुदी, अहंकार यानी अपने इस अलग 'आपे' को ही वह सिर कहा गया है जिसे काटने या उतार देने की ज़रूरत है.

हज़रत ईसा ने कहा है—

"क्या तुम इस बात पर विश्वास नहीं करते कि मैं अपने पिता ईश्वर के अन्दर हूँ और मेरा पिता ईश्वर मेरे अन्दर है ? जो शब्द मैं तुम से कहता हूँ वह मैं अपने आप नहीं कहता, बल्कि वह पिता जो मेरे अन्दर रहता है वही सब कुछ कहता रहता है."

सेन्ट पाल ने कहा है—

"मैं ज़िन्दा हूँ लेकिन मैं 'मैं' नहीं हूँ, बल्कि मेरे अन्दर ईसा ज़िन्दा हैं."

इन्हीं मानों में एक सूफ़ी ने कहा है—

"अगरचे क़ुरान पैग़म्बर मोहम्मद के होंठों से निकला फिर

भी जो कोई यह कहे कि यह अल्लाह ने नहीं कहा वह काफ़िर यानी अविश्वासी है."

गीता में लिखा है कि—"ईश्वर ही सब प्राणियों के दिल के अन्दर बैठा हुआ अपनी माया से सब को इस तरह चला रहा है जिस तरह कुम्हार अपने चाक पर चढ़े हुए बरतनों को घुमाता है."

उपनिषदों में यह बात बहुत अच्छी तरह तफ़सील से बयान की गई है. जो आत्मा या रूह सबके साथ प्रेम में डूब कर सबकी अन्तरात्मा यानी ईश्वर के लिये अपने अन्दर के पटों को खोल देती है ईश्वर उसके अन्दर भर जाता है और फूल की तरह खिल पड़ता है. ईश्वर और ईश्वर का प्रेमी दोनों एक हैं.

गीता में लिखा है—

"जो कोई भक्ति के साथ मेरा भजन करते हैं वह मुझमें रहते हैं और मैं उनमें रहता हूँ."

भागवत में ईश्वर ने अपने को 'दासों का दास' यानी अपने सेवकों का सेवक कहा है.

मोहम्मद साहब की एक हदीस है—

"अल्लाह कहता है कि जो कोई एक बालिश्त मेरी तरफ़ बढ़ता है मैं एक हाथ उसकी तरफ़ बढ़ता हूँ."

गीता में लिखा है—

"जो कोई सबके अन्दर मुझे देखता है और सबको मेरे अन्दर देखता है वह न फिर कभी मुझे खो सकता है और न मैं उसे खो सकता हूँ."

इश्क़ यानी प्रेम का मतलब ही मिलन है. यही भक्ति यानी इबादत का मक़सद है. जीव का ईश्वर में मिल जाना रूह का रूह-उल-अरवाह में मिल जाना यही निजात यानी मोक्ष है.

संस्कृत शब्द 'नमः' या नमस्कार के मानी होते हैं 'मैं नहीं'. वेद की बहुत सी प्रार्थनाओं के आख़िर में आता है 'न मम' यानी 'मेरा नहीं'. ईश्वर के सामने झुकने (सिजदा करने) या सलाम करने के भी यही मानी हैं—"तेरे मरज़ी हो मेरी नहीं."

आदमी जो सोचता है वही हो जाता है. जिससे प्यार करता है वही बन जाता है. जो मिट्टी से प्यार करता है मिट्टी बन जाता है. जो ईश्वर से प्यार करता है ईश्वर बन जाता है.

सूफ़ी कहता है—

"जिस चीज़ की भी तू दिल से ख़ाहिश करता है वही तू हो जाता है. तेरे दिल में अगर गुलाब बसा होगा तो तू गुलाब हो जायगा और अगर बुलबुल बसा होगा तो तू बुलबुल हो जायगा. तू जुज़्ब यानी हिस्सा है. ईश्वर कुल है. अगर तू कुछ रोज़ कुल का ख़याल अपने सामने रखे तो तू कुल हो जायगा."

गीता में भी कहा गया है कि—"जिसकी जैसी श्रद्धा होती है वैसा ही वह ख़ुद हो जाता है."

इसीलिये हर धर्म वाले इस बात पर ज़ोर देते हैं कि मरते समय आदमी के सामने आख़ीर वक़्त में सिवाय 'सत्य' यानी ईश्वर के ख़याल के और कुछ नहीं होना चाहिये. वेद और क़ुरान का पढ़ना तक उस समय मना किया जाता है. इसीलिये बच्चों को सुलाते समय उन्हें अच्छी अच्छी प्यारी बातों की लोरियाँ दी जाती हैं. बड़े लोगों को भी सोते वक़्त इसका ध्यान रखना चाहिये. सोते समय मन शान्त और सन्तुष्ट रहना चाहिये.

मरते हुए आदमी के सामने हमेशा बहुत धीरे से बोलना चाहिये. ज़ाहिरा जान निकल जाने के बाद भी कभी कभी मस्तिष्क काम करता रहता है. सिनेमा की सी तसवीरें अधिकतर पिछली ज़िन्दगी की दिमाग़ के सामने से निकलती रहती हैं. कभी कभी मरने वाला अपनी सारी ज़िन्दगी दोहरा जाता है. उस समय कमरे में सिवाय शान्ति, संतोष और सकून के और कोई चीज़

नहीं होनी चाहिये ताकि आगे की मंज़िलें तय करने में रूह को रुकावट न हो.

सूफ़ी ने कहा है—

"'ख़ासाने .ख़ुदा' यानी ईश्वर के सच्चे भक्त .ख़ुदा नहीं होते, लेकिन .ख़ुदा से जुदा भी नहीं होते."

इसके बाद दरजे और मंज़िलें हैं. योग शास्त्र में जिन्हें 'सिद्ध' कहा है वेदान्त में उन्हें 'ऋषि' कहा जाता है. सूफ़ी उन्हें 'कामिल' और 'अकमल' कहते हैं. बौद्ध उन्हें 'चोहन', 'ध्यान चोहन', 'बोधिसत्व' और 'बुद्ध' कहते हैं. जैनी उन्हें 'अरहत', 'सिद्ध', 'मुनि' और 'तीर्थंकर' कहते हैं. इसी तरह के नाम ईसाइयों में भी हैं. यह सब वह मंज़िलें हैं जहाँ पहुँच कर हमारी इस धरती के मज़हबों का कोई फ़रक़ नहीं रह जाता. वहाँ हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, सिख, बौद्ध और जैन सब एक राह के राही दिखाई देते हैं. हमारे यहाँ के फ़रक़ फिर उन्हें गुज़रे हुए बचपन के खेल मालूम होते हैं.

२४

ख़ुदी को मिटाना ख़ुदा को जानना है

जिस तरह ज्ञान यानी मारफ़त की राह में इसी तरह भक्ति यानी इश्क़ की राह में भी एक बहुत बड़ा ख़तरा है. ख़तरा यह है कि आदमी अपने अन्दर के .ख़ुदा को .ख़ुदी से अलग नहीं कर पाता, यहाँ तक कि वह अकसर .ख़ुदी को ही .ख़ुदा समझ बैठता है. किसी एक आदमी या देवी देवता के प्रेम को वह पूरी ईश्वर भक्ति समझ लेता है. इश्क़े मजाज़ी को वह इश्क़े हक़ीक़ी मान बैठता है. काम और राग एक तरह की चीज़ें हैं, प्रेम और भक्ति दूसरी तरह की. इनके फ़रक़ को ठीक ठीक समझ सकना कभी कभी बहुत कठिन हो जाता है. सूफ़ी लोग आदमी के अन्दर पाँच तरह का नफ़्स यानी आपा मानते हैं. एक—'नफ़से लव्वामा' यानी आदमी के आपे का वह पहलू जो उसे बुराई से आगाह करता रहता है. दूसरे—'नफ़से मुतमइन्ना' यानी वह नफ़्स जिसने इतमिनान, सकून यानी शान्ति हासिल कर ली है. तीसरे—'नफ़से मुलहिमा' यानी वह नफ़्स जिसे ईश्वर से इलहाम यानी प्रतिभा हासिल होती है. चौथे—'नफ़से रहमानी' यानी वह नफ़्स जिसमें अल्लाह की तरह रहम या दया भर जाती है. पाँचवें—'नफ़से अम्मारा' यानी वह नफ़्स जो इस दुनिया के खेल कूद, ऐश आराम में फँसा हुआ है.

संस्कृत में नफ़्स का अनुवाद 'चित्तम्' भी किया जा सकता है. इस तरह नफ़से लव्वामा हुआ 'निषेध चित्तम्'. नफ़से मुतमइन्ना हुआ 'प्रशम चित्तम्'. नफ़से मुलहिमा हुआ 'प्रतिभा चित्तम्' या 'योग चित्तम्.' नफ़्से रहमानी 'करुणा चित्तम्' और नफ़से अम्मारा 'तृष्णा चित्तम्'.

इन में पहले चार 'शुद्धम् मनस्' में शामिल हैं और पाँचवाँ 'अशुद्धम् मनस्'. एक ऊपर का 'स्व' यानी आपा है दूसरा नीचे का 'स्व'. इन दोनों में फ़रक़ न कर सकने की वजह से ही 'स्वराज' 'शैतानी राज' हो जाता है.

उपनिषद् में लिखा है—

"इस जिसमानी ज़िंदगी रूपी दरख़्त के ऊपर दो पंछी दो तरह के बैठे हुए हैं. दोनों के पर बड़े सुन्दर हैं. दोनों साथ साथ पैदा हुए हैं और एक दूसरे के साथ साथ रहते हैं. इन में से एक दरख़्त के खट्टे मीठे फलों को खाता रहता है और उनका सुख-दुख भोगता रहता है, और दूसरा बिना कुछ खाए दया और करुणा से भरा हुआ अपने साथी की तरफ़ देखता रहता है."

सचमुच अपने अन्दर के इस धोके से बच सकना बहुत ही कठिन है. स्वर्ग और नरक, जन्नत और दोज़ख़ के बीच केवल एक बाल की चौड़ाई के बराबर फ़ासला है. दोनों हर वक़्त हमारे अन्दर हैं. कभी एक हावी हो जाती है, कभी दूसरी. जब हम किसी को दुख से बचाना चाहते हैं तो हम स्वर्ग की तरफ़ बढ़ते हैं. जब हम अपने को बचाने वाला मान कर नेकनामी लेना चाहते हैं तो हम नरक की तरफ़ झुक जाते हैं.

क़ुरान में लिखा है—

"जहन्नुम के ऊपर से एक पुल जाता है जो बाल की बराबर चौड़ा और तलवार की तरह पैना है. सब रूहों को इस पुल पर से जाना पड़ता है. केवल वह रूहें इसे पार कर सकती हैं जो नेक हैं."

उपनिषद् में लिखा है—

"बुद्धिमान लोगों ने हमें बताया है कि वह पुराना रास्ता छुरे की धार की तरह पैना है. इस पर चल सकना बहुत कठिन है."

पारसी धर्म की किताब गाथा में लिखा है—

"चिनवत नाम के पुल को हम तभी पार कर सकते हैं जब हमारी अन्तरात्मा (ज़मीर), नेकी, और आत्मसंयम (अपनी

नफ़्स पर क़ाबू) यह तीनों हमें उँगली पकड़ कर ले चलें. वह अभागी आत्माएँ जिन के अन्दर से उन पर लानत होती रहती है, जब उस पुल पर आती हैं जो बुरे और भले को अलग अलग करता है, तो असत्य (नाहक़) के घर में ढकेल दी जाती हैं जहाँ उन्हें बहुत दिनों तक कष्ट भोगने पड़ते हैं."

एक और पारसी किताब विषतास्प में लिखा है—

"नेक आदमी की रूह, नेकी की .खुशी में, मशहूर, साफ़ और लम्बे 'चिनवत' पुल पर से, अपनी नेकी और सचाई की मदद से, साफ़ और सलामती के साथ पार निकल जाती है."

इंजील में लिखा है—

"जो रास्ता सच्ची ज़िंदगी तक जाता है वह बहुत तंग रास्ता है. उसका दरवाज़ा बहुत छोटा सा दरवाज़ा है. बहुत कम उसे पाते हैं. लेकिन ईश्वर का राज कहीं बाहर नहीं है, वह तुम्हारे ही अन्दर है."

यानी यह कि हमारा 'शुद्धम् मनस्' भी हमारे अन्दर है, और 'अशुद्धम् मनस्' भी हमारे अन्दर है. 'नफ़से रहमानी' भी हमारे अन्दर है और 'नफ़से अम्मारा' भी हमारे अन्दर है. एक ऐसी बारीक रेखा जो दिखाई न दे इन दोनों को एक दूसरे से अलग करती है. इनमें से एक से हट कर दूसरे की तरफ़ जाना बहुत कठिन भी है और बहुत आसान भी.

वेदों और पुराणों में बार बार कथाएँ आती हैं कि ब्रह्मा के एक मानसपुत्र कश्यप ने धरती माता की दो बेटियों—अदिति और दिति—से शादी की. अदिति रूहानी और 'नूरी' है. दिति माद्दी और 'नारी' है. पहली से उसके आदित्य और देवता पैदा हुए. दूसरी से दैत्य यानी शैतान पैदा हुए. दुनिया के अन्दर यह सौतेले भाई हमेशा एक दूसरे से लड़ते रहते हैं. कभी जीत एक की होती है, कभी दूसरे की.

यहूदी, ईसाई और इसलामी रिवायतों में .खुदा ने फ़रिश्तों को बनाया. उनमें सब से बड़ा अज़ाज़ील एक दम .खुदी,

अहंकार यानी ग़रूर में आ कर बग़ावत कर बैठा और फिर शैतानों का सरदार बन गया. फिर अल्लाह ने जन्नत का बाग़ बनाया जिसे सतयुग कहा जा सकता है. उसमें आदम को बैठाया जो उस समय निष्कलंक था. उस में मर्द औरत का फ़रक़ न था. फिर अल्लाह ने आदम की एक पसली निकाल कर उससे हव्वा को बनाया. इस तरह आदमी धीरे धीरे एक से दो यानी आदमी से मर्द और औरत हुआ. फिर अल्लाह ने उन दोनों से कह दिया कि ज्ञान के दरख़्त का फल न खाना. पर शैतान ने बाग़ में घुस कर उन्हें बहकाया. उन्होंने वह फल खा लिया. वह एक दूसरे को अपने से अलग समझने लगे. बाग़ से निकाल दिए गये. उन्होंने अपने जिस्मों को ढका. फ़िर नीचे नीचे माद्दी दुनिया में गिरते चले गए. यह शुरू का गुनाह ही अविद्या यानी माया थी. धीरे धीरे 'ईसा' यानी रूहानी ज्ञान आदमी में पैदा हुआ. वह फिर बच्चे की तरह मासूम और बेगुनाह बना. यह उसका दूसरा जन्म और दूसरा बचपन था. यूं वह अवनति से उन्नति की तरफ़ यानी तनज़्ज़ुल से तरक़्क़ी की तरफ़ मुड़ा और धीरे धीरे फिर से जन्नत यानी स्वर्ग का हक़दार हुआ.

योग शास्त्र में लिखा है कि अविद्या से ही अहंकार, राग, द्वेष और अभिनिवेश पैदा हुए. इसी से सुख-दुख पैदा हुए. योग और वेदान्त के अनुसार सुख और दुख दोनों क्लेश हैं.

पारसी किताबों में भी यह गहरी रूहानी सचाई अपने ढंग से 'स्पैन्तमैन्यू' और 'अंग्रमैन्यू' की लगातार लड़ाइयों के पैराए में बयान की गई है.

दुनिया में कोई चीज़ भलाई या बुराई से बिलकुल ख़ाली नहीं होती. ये दोनों साथ साथ चलती हैं.

महाभारत में लिखा है—

"दुनिया में न कोई चीज़ ऐसी है जिसमें केवल गुण ही गुण यानी भलाई ही भलाई हो, और न कोई चीज़ ऐसी है जिसमें केवल दोष ही दोष यानी बुराई ही बुराई हो."

यही ज़िन्दगी का वह तंग रास्ता है जो बाल के बराबर चौड़ा है.

जो रूहें यह चाहती हैं कि इस बारीक रास्ते पर से, इस तलवार की धार के बराबर पैने रास्ते पर से, सलामती के साथ निकल जायँ, उन्हें चाहिये कि लगातार कोशिश करके और अभ्यास कर के सब के अन्दर एक ही आत्मा को देखें और अपनी छोटी सी ख़ुदी को मार कर सब के साथ अपनी एकता को अनुभव करें और सबके लिए अपने दिल में प्रेम पैदा करें.

वेद में लिखा है—

"मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि पश्येमम्"

यानी ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि—"हम सब प्राणियों को मित्र यानी दोस्त की आँख से ही देखें."

फ़ारसी की मशहूर किताब 'मामुक़िमां' का सूफ़ी लेखक अपनी किताब में बार बार नीचे के शेर को दोहराता है—

"ऐ ! बचश्माने दिल मबीं जुज़ दोस्त
हर कि बीनी बिदां कि मज़हरे ओस्त"

यानी—"ऐ भाई ! अपने दिल की आँखों से किसी को सिवाय दोस्त के और कुछ मत देख, क्योंकि जो कुछ तू देखता है जान ले कि वह सब उसी एक अल्लाह का ज़हूर है."

हिन्दुस्तान के मशहूर संत कवि सूरदास ने कहा है—

"अब हौं कासौं बैर करौं,
कहत पुकारत प्रभु निज मुख ते
घट घट हौं बिहरौं."

विष्णु पुराण में लिखा है—

"बुद्धिमान लोगों से यह जान कर कि ईश्वर सब प्राणियों के रूप में है सब प्राणियों से दिल से प्यार और सबकी सेवा करनी चाहिये."

उपनिषद में लिखा है—

"जो कोई अपनी आत्मा के अन्दर सब प्राणियों को देखता है और अपनी आत्मा को सब प्राणियों के अन्दर देखता है वह फिर कभी धोका नहीं खा सकता, कभी किसी से द्वेष नहीं कर सकता."

'हमा ओस्त' (सब वही है) के ठीक वही मानी हैं जो 'सर्वम् खलु इदं ब्रह्म' (यह सब ब्रह्म है) के हैं. 'हमा ओस्त' से ही क़ुदरती नतीजा निकलता है. 'हमा दोस्त' यानी सब दोस्त ही दोस्त हैं.

यही असली भक्ति का मार्ग है. सूफ़ी इसे 'तसफ़ीयए दिल' यानी दिल को पाक साफ़ करना कहते हैं. इसी से लफ़्ज़ 'सूफ़ी' और 'तसव्वुफ़' बने हैं. योग शास्त्र में इसे 'चित्त प्रसादनम्' और 'चित्त परिकर्म' कहा गया है. दोनों के वही मानी हैं जो 'तसफ़ीयए दिल' के. सूफ़ी किताबों में और योग शास्त्र में दोनों में इस दरजे तक पहुँचने के लिये तरह तरह के अभ्यास, मश्क़, यम, नियम, व्रत, रोज़े और मजाहिदे बताए गए हैं. आहिस्ता आहिस्ता इस रास्ते पर चल कर आदमी .ख़ुदी से पाक साफ़ हो कर पूर्ण पुरुष यानी 'मर्दे कामिल' बनता है. .ख़ुदी का मिटना ही अन्दर के .ख़ुदा का जागना है.

२५

एक ही जान सब की जान है

दीनता (इनकिसार) को सब मज़हबों ने मनुष्य के व्यवहार में ऊँची जगह दी है. मज़हब हमें सिखाता है कि अनायास हम पर जो मुसीबतें पड़ें या आफ़तें आवें उनका हमें यह समझ कर स्वागत करना चाहिये कि वह हमें भगवान की देन हैं. भगवान कोई हम से अलग चीज़ नहीं हैं. वह हमारे अन्दर से अन्दर की आत्मा हैं. इन मुसीबतों के ज़रिये वह हमें और हमारे मन को पाक साफ़ करना चाहते हैं, ताकि हम हलके फुलके हो कर अधोगति (क़ौसे नज़ूल) के रास्ते से हट कर ऊर्ध्वगति (क़ौसे उरूज) के रास्ते पर तेज़ी से बढ़ सकें.

इंजील में लिखा है—

"ईश्वर जिसे प्यार करते हैं उसे वह रगड़ कर साफ करते हैं."

भागवत में लिखा है कि भगवान कहते हैं—"जिस किसी पर मैं अनुग्रह (मेहर) करना चाहता हूं एक बार मैं उसका सब कुछ छीन लेता हूं."

मोहम्मद साहब की एक हदीस है—"अल्लाह जब किसी बन्दे से मोहब्बत करता है तो उसे आज़माने के लिये उस पर चारों तरफ से बलाएँ भेजता है."

क़ुरान में लिखा है—

"ऐ ईमान वालो ! सब्र (धैर्य) और दुआ (प्रार्थना) के साथ अल्लाह की मदद चाहो, सचमुच अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है और जो लोग अल्लाह की राह में मारे जायें उन्हें मरा हुआ मत कहो. नहीं नहीं, वह ज़िन्दा हैं, अगरचे तुम उन्हें

देखते. और इसमें शक नहीं कि अल्लाह तुम्हें ख़ौफ़ (डर) और भूक और माल और जान और फलों के नुक़सान के ज़रिये आज़माएगा. और जो लोग सब्र करने वाले हैं उन्हें .ख़ुशख़बरी दो. उन लोगों को .ख़ुशख़बरी दो जिन पर जब कभी कोई मुसीबत आती है तो वह कहते हैं सचमुच हम अल्लाह ही से हैं और हम अल्लाह ही की तरफ़ लौट कर जायँगे. यही वह लोग हैं जिन पर अल्लाह की दया और उसकी बरकतें उतरती हैं और उन्हीं का रास्ता ठीक रास्ता है."

एक सूफ़ी लिखता है—

".ख़ुदी और अक़्ल को तेज़ करने से अल्लाह नहीं मिलता. अल्लाह की मेहर सिवाय टूटे हुए दिल वालों यानी दीन (आजिज़) लोगों के दूसरे को नहीं मिलती."

शंकराचार्य ने लिखा है कि—

"बच्चे खेद कूद में माँ को भूल जाते हैं. भूक और प्यास में उन्हें माँ याद आती है."

चीनी कन्फ़ूशियन धर्म की किताब 'शीकिंग' में लिखा है कि—

"ईश्वर आदमी के विश्वास को कड़ाई के साथ परखता है."

चीन के ताओ धर्म में कहा गया है कि—

"दीनता मान की जड़ है. अपने को छोटा समझना ही ऊँचा जाने की बुनियाद है. दुनिया के सब से दीन हीन लोग दुनिया के सब से बलवान लोगों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं."

इंजील में लिखा है—

"घमन्ड नाश का पेशख़ेमा होता है और ग़रूर करने वाला गिरता है·····ईश्वर का डर ज्ञान की शुरूआत है."

इंजील में एक दूसरी जगह लिखा है—

"जो आदमी लोभ को क़ाबू में कर लेता है वह मुबारक है, क्योंकि जब वह परखा जाएगा तो उसे जीवन का वह मुकुट

मिलेगा जिसका वादा ईश्वर ने उन लोगों के साथ किया है जो ईश्वर से प्यार करते हैं."

वेद के शतपथ ब्राह्मण में लिखा है—

"जो बहुत घमंड करते थे वही अपने घमंड के कारण गिरे, इसलिये किसी को बहुत घमंड नहीं करना चाहिये. घमंड ही हार का दरवाज़ा है."

पारसी धर्म की किताब गाथा में लिखा है—

"ऐ मज़द ! (ईश्वर) मुझे आज़मा और परख, तू मुझ पर जो भी मुसीबतें डालेगा मैं उन सब को तेरा अनुग्रह और तेरी बरकतें समझूँगा."

इंजील में लिखा है—

"मुबारक हैं वह जो अपनी आत्मा से गरीब हैं क्योंकि स्वर्ग का राज उन्हीं को मिलेगा. मुबारक हैं वह लोग जो दीन हैं, क्योंकि यह धरती उन्हीं को विरसे में मिलेगी. मुबारक हैं वह लोग जिनके दिल पाक साफ हैं, क्योंकि उन्हें ही ईश्वर का दीदार देखने को मिलेगा. मुबारक हो तुम, जब लोग तुम्हारी बुराई करें और तुम्हें कष्ट पहुँचाएँ क्योंकि स्वर्ग में तुम्हें इसका बड़ा इनाम मिलेगा."

इंजील में यह भी लिखा है—

"ईश्वर का राज बाहर ढूँढने से नहीं मिलेगा, न कोई यह कह सकेगा कि लो यहाँ ईश्वर का राज है ! लो वहाँ ईश्वर का राज है ! क्योंकि देखो ईश्वर का राज सचमुच तुम्हारे अन्दर है."

एक और जगह इंजील में लिखा है—

"मूर्खों से तारीफ के राग सुनने की निस्बत बुद्धिमान आदमी की फटकार सुनना ज़ियादा अच्छा है."

वाल्मीकि-रामायण में लिखा है—

"जिस आदमी की जुआरी लोग, भाट और बदचलन औरतें तारीफ़ करती हैं वह आदमी जीते हुए भी मुर्दा है. हे राजा ! ऐसे आदमी जो हमेशा मीठी मीठी बातें कहते रहें बहुत

मिल सकते हैं लेकिन कड़ुवी और फ़ायदे की बात के कहने वाले और सुनने वाले मुशकिल से मिलते हैं."

मशहूर ईसाई संत सेन्ट फ्रांसिस ऐलीसी ने एक जगह कहा है—

अगर हम सारी दुनिया के अन्दर पवित्रता और ईश्वर भक्ति की अच्छी से अच्छी मिसालें सब के सामने रखें तब भी उससे हमें परम आनन्द नहीं मिल सकता. अगर हम दुनिया की सब भाषाएँ बोल सकें, सारा ज्ञान हासिल कर लें, सब धर्म ग्रंथों को पढ़ लें और भविष्य की बातें और लोगों के दिलों में छुपी हुई बातें बता सकें, अगर हम फ़रिश्तों की बोलियाँ बोल सकें और तारों की गति और सब जड़ी बूटियों की ख़ासियतें जान जाएँ, और अगर ज़मीन के सारे ख़ज़ाने भी हमें मालूम हो जाएँ, और परिन्दों, दरिन्दों और मछलियों के सब गुण और उनकी शक्तियाँ हम जान जाएँ, और मनुष्य जाति, दरख़्तों, पत्थरों, जड़ों और जल की सब ख़ासियतें हम जान लें, तब भी इस सब से भी हमें परम आनन्द नहीं मिल सकता. पर जब हम लोगों की गालियाँ और अपने साथ उनके बुरे से बुरे सलूक को बरदाश्त कर लें और हमें ग़ुस्सा न आए, और ग़ुस्सा आने के बजाय हम दीनता के साथ यह सोचें कि हम सचमुच उन सब गालियों और बदसुलूकियों के हक़दार हैं, तब इस में हमें परम आनन्द मिल सकता है. अगर हम भूक और सरदी और मार और सब तरह के कष्टों, अन्याय, नफ़रत और सख्ती को सब्र के साथ बरदाश्त कर लें और इन्हें अपने लिये कसौटी और आज़माइश समझें और यह सोचें कि हमें अभी कितना और कष्ट भोगना चाहिये—तो इस में परम आनन्द है."

इंजील में लिखा है कि—

"क़हक़हा मार कर हँसने से रंज करना ज़ियादा अच्छा है, क्योंकि रंज से दिल पाक होता है. बुद्धिमान आदमी का

दिल हमेशा रंज या मातम के घर में रहता है, और मूर्खों का दिल ख़ुशी और ठठोलबाज़ी के महल में रहता है."

जिस बच्चे के चोट लग जाती है उसे माँ सबसे अधिक अपनी छाती से चिपटाती है.

"अभ्यास को सूफ़ी लोग 'मुनाज़िलत' कहते हैं और वैराग्य को 'मुजानिबत' कहते हैं. अभ्यास यानी मुनाज़िलत के लिए वैराग्य यानी मुजानिबत ज़रूरी है. अभ्यास का मतलब है आत्मा की तरफ़ मुड़ना. वैराग्य का मतलब है दुनिया की लज्ज़तों से मुँह मोड़ना और दुनिया में जितने लोग दुख और मुसीबत में हैं उनके लिए दिल को दया, प्रेम और सेवा की इच्छा से लबरेज़ रखना."

इंजील में लिखा है कि—"ईश्वर अक़्ल की खोज से नहीं मिलता, बल्कि दिल की बेताबी और उसके उमड़ने से मिलता है."

जब आदमी आत्मा को पा लेता है तब यह मिट्टी की दुनिया उसकी निगाह में ठीक जगह ले लेती है और जो मेहनत और रियाज़त उसे आत्मा की खोज में करनी पड़ती थी उसके सफल हो जाने पर वह अपने नए नए फ़र्ज़ों को समझने लगता है. तब वह इस दुनिया और उस दुनिया दोनों को ठीक ठीक समझ जाता है और दोनों के फ़र्ज़ ठीक ठीक अदा करने लगता है.

उपनिषद् में लिखा है—

"यह आत्मा बहुत अच्छी अच्छी बातें करने से नहीं मिलता, न बहुत पढ़ने लिखने से और न अक़्ल की तेज़ी से. पर जो कोई सच्चे दिल से आत्मा से लौ लगाता है उससे आत्मा को भी प्रेम पैदा होता है और उसे आत्मा के सुन्दर रूप के दर्शन होते हैं. जब तक आदमी बुरे कामों से मुँह नहीं मोड़ता, जब तक वह अपने अन्दर शान्ति पैदा नहीं करता, जब तक कि दुनिया की चीज़ों का लोभ उसमें से नहीं जाता, उसका मन

शान्त नहीं होता और उसमें आत्मा को पाने की लगन नहीं जागती तब तक वह आत्मा को नहीं पा सकता."

गीता में लिखा है कि—

"जब आदमी हमेशा आत्मा की तरफ़ ध्यान लगाए रहता है, काम और क्रोध से ऊपर उठ कर अपने अन्दर देखने की कोशिश करता है, तब उसे ब्रह्म के दर्शन होते हैं. और तब वह सारी दुनिया को ठीक ठीक समझ कर .खुद ब्रह्म हो जाता है."

क़ुरान में लिखा है कि—

"अल्लाह जिस रूह से प्यार करता है उसे अपनी तरफ़ खींचता है."

कन्फ़ूशियन धर्म की किताब में लिखा है कि—

"दुनिया में बहुत कम आदमी हैं जो जिस से प्यार करते हैं उसके दोषों को भी जानते हैं, या जो जिससे नफ़रत करते हैं उसके गुणों को भी समझते हैं, लेकिन ईश्वर सब के गुणों और दोषों को अच्छी तरह जानता है, और सब को प्रेम के साथ बराबर ठीक रास्ता बताता रहता है."

ईश्वर अनन्त यानी लामहदूद है. आदमी का वजूद सान्त यानी महदूद है. इसीलिये आदमी का ईश्वर के लिये प्रेम, आदमी के लिये ईश्वर के प्रेम का कभी मुक़ाबिला नहीं कर सकता. लेकिन दुनियावी माँ बाप का प्रेम अपने बच्चों के लिये अन्धा होता है. ईश्वर का प्रेम अपने बन्दों के लिये अन्धा नहीं होता. बच्चा खेल में माँ को भूल सकता है पर माँ कुछ भी करती रहे उसका दिल और ध्यान बराबर बच्चे में लगा रहता है. जब भी बच्चा लड़खड़ाता है माँ उसकी तरफ़ दौड़ पड़ती है. इसी तरह ईश्वर यानी हमारे घट के अन्दर बैठी हुई 'रूह कुल' यानी हमारी ही अपनी अस्ल आत्मा हमेशा हमारे छोटे आपे को देखती रहती है और उसे गिरने से बचाने की कोशिश करती रहती है. इसी को 'ईश्वर प्रसाद' या 'तवज्जहे इलाही' कहते हैं. इसी को 'गुरुकृपा' या 'मेहरेशेख़' भी कहते हैं. यह ठीक है कि

खोजी को .खुद अपने पैरों से चलना और अपनी आँखों से देखना पड़ता है. लेकिन यह भी उतना ही सच है कि रास्ते को रोशन करने के लिये एक सच्चे राह दिखाने वाले गुरु या शेख़ की ज़रूरत होती है. गुरु या शेख़ की मदद खुले तौर पर हासिल करने के लिये खोजी का काम है कि उसे .खुद खोजे. आदमी को अपना मुँह दूसरी तरफ़ यानी अन्दर की तरफ़ मोड़ने की ज़रूरत होती है.

सूफ़ी कहता है कि—

"तू .खुदा को भी चाहता है और इस दुनिया को भी. यह बात नामुमकिन है और यह इच्छा पागलपन है. जिस किसी ने अपना मुँह दुनिया से फेरा वह फिर खोया नहीं जा सकता. वही .खुदा को पा सकता है और अपने खोए हुए आपे को फिर से हासिल कर सकता है."

इंजील में भी लिखा है कि—

"तुम .खुदा को और दुनिया की दौलत दोनों को एक साथ पाने की आशा नहीं कर सकते."

एक सूफ़ी कहता है कि—

"काबा काबा है, सनमख़ाना (बुतख़ाना) सनमख़ाना
लेक (लेकिन) टूटा दिल ही अस्ली मंज़िले जानाना है."

इंजील में लिखा है कि—

"दुनिया से प्रेम न करो और न दुनिया की चीज़ों से. जो कोई दुनिया से प्रेम करता है वह पिता ईश्वर से प्रेम नहीं करता. दुनिया में जो कुछ है, जैसे शरीर का मोह, आँखों का सुख और अपनी इस ज़िन्दगी का घमण्ड, यह सब दुनिया की बदलती तसवीरें हैं, यह ईश्वर की तरफ़ ले जाने वाली नहीं हैं. दुनिया एक दिन मिट जायगी. दुनिया के सुख भी मिट जायेंगे. लेकिन वह जो ईश्वर की इच्छा पूरी करेगा हमेशा के लिये ज़िन्दा रहेगा."

उपनिषद में लिखा है कि—

"जब आदमी दुनिया के सुख दुखों को पूरी तरह परख चुके, मीठा और कड़ुवा सब देख चुके, उसका जी भर जाय, उन कड़ुवी मिठाइयों से अपना मुँह जला लेने की उसे और अधिक इच्छा न रहे, और उसे शान्ति न मिल सके, तब उसे चाहिये कि दीनता और नम्रता के साथ ऐसे गुरु की खोज में लगे जो आगे के रास्ते का जानकार हो और जिसकी लौ ब्रह्म में लगी हो. फिर खोजी अपने दिल को ईंधन बना कर उसे गुरु के चरणों में रख दे, ताकि गुरु उस ईंधन को रोशन कर के खोजी के अन्दर वह जोत जगा सके जिस के उजाले में खोजी फिर से अपने भूले हुए आपे को पहचान ले और यह देख ले कि उसकी आत्मा और परमात्मा दोनों एक ही हैं."

पारसी धर्म की किताब 'यसना' में लिखा है—

"ऐ मरदो और औरतो ! जिस्मानी लज्ज़तों की इच्छा तुम में क़ुदरती जड़ किये हुए है. जब यह इच्छा ढीली पड़ जायगी और ख़त्म हो जायगी और पाप के ख़याल दिल से जाते रहेंगे तब तुम्हें वह असली बड़ी सफलता इनाम में मिलेगी. इसलिये इस ऊँचे काम के लिए अभी से कमर कसे रखो नहीं तो अन्त में तुम्हें अफ़सोस होगा."

इंजील में हज़रत ईसा को 'सन आफ़ मैन' और 'सन आफ़ गाड' दोनों नामों से पुकारा गया है. 'सन आफ़ मैन' के मानी हैं आदमी का बेटा और 'सन आफ़ गाड' के मानी हैं .ख़ुदा का बेटा. सच यह है कि आदमी जब हर तरह के परिग्रह को छोड़ कर किसी तरह के माल असबाब को अपनी सम्पत्ति न मानते हुए अहङ्कार और .ख़ुदी से ऊपर उठ कर दरिद्रता, ग़रीबी, फ़क़्र और मुक्त (शान्ति) के साथ अपना नाता जोड़ लेता है तब वह आदमी के बेटे से .ख़ुदा का बेटा बन जाता है. जो आत्मा किसी ख़ास चीज़ से अपना सम्बन्ध नहीं रखती उसका सम्बन्ध

सचमुच फिर सारी दुनिया के साथ जुड़ जाता है. सब उसके और वह सब का.

कबीर साहब ने इसी ख़याल को यों ज़ाहिर किया है—

"साहेब को मिहीं होय सो पावे"
शक्कर बिखरी रेत में सन्तो ! कुंजर (हाथी) मुख नहीं आवे
मान बड़ाई छोड़ दे बन्दे ! च्यूंटी हो बिनि लावे
साहेब को मिहीं होय सो पावे."

हिन्दी की मशहूर कहावत—'निर्बल के बल राम' का भी यही मतलब है. नजात यानी मोक्ष का केवल यही रास्ता है कि आदमी में पहले अपनी ग़लतियों के लिये पछतावा हो, दीनता हो, फिर वह ग़लतियों से मुँह मोड़े और पूरे विश्वास यानी सच्चे ईमान के साथ ईश्वर अल्लाह की मरज़ी पर अपने को छोड़ दे. हर आदमी का ईश्वर शुरू में साकार होता है यानी कुछ ख़ास ख़ास सिफतों से मौसूफ़ होता है. इसी को सगुण कहते हैं. फिर वह निराकार और निर्गुण यानी सब सिफ़तों से बालातर हो जाता है और फिर सगुण और निर्गुण दोनों से ऊपर उठ कर सब कुछ अपने अन्दर लिये हुए केवल वही वह रह जाता है. इस मुक़ाम पर पहुँच कर भक्त या आबिद की अपनी हस्ती भी ईश्वर ही के अन्दर फ़ना हो जाती है.

इसीलिए भागवत माहात्म्य में कहा है कि—

"कलियुग में व्रत, तीर्थ, योग, शास्त्रों का पढ़ना पढ़ाना, रतजगे, यज्ञ, हवन, कथा और ज्ञान विज्ञान की बातें सब बेकार हैं. इस युग में आदमी अगर मुक्ति चाहता है तो केवल एक भक्ति ही मुक्ति की देने वाली है यानी यह कि आदमी अपना सब कुछ ईश्वर के अर्पण कर दे. इसी तरह आदमी सच्चे मानी में बेख़ौफ़ हो सकता है और सब के साथ अपनी एकता को अनुभव कर सकता है."

सूफ़ी ने कहा है कि—

"सद किताबो सद वरक़ दर नार कुन
जानो दिल रा जानिबे दिलदार कुन"

यानी किताबों के ढेर को और इन सैकड़ों वरक़ों को आग में डाल दे, और अपनी जान और अपने दिल को अपने प्रीतम यानी ईश्वर की तरफ़ लगा दे.

कलियुग के इस ज़माने में जब चारों तरफ़ .खुदी, अहंकार, लड़ाई झगड़ों और लूट खसोट का ज़ोर है, जब बलवान निर्बलों पर अत्याचार करते हैं और आदमी की शकलों में भेड़िये और चीते निहत्थे बेगुनाह लोगों को तरह तरह के कष्ट पहुँचाते हैं तो कमज़ोर और नाज़ुकदिल आदमी क़ुदरती तौर पर इस सब से घबरा कर दुनिया से भाग कर मठों और खानक़ाहों में बैठ कर अपने को ईश्वर की मरज़ी पर छोड़ देना अधिक आसान और अच्छा समझते हैं. पर दुनिया और दुनिया की कमज़ोरियाँ उनका पीछा वहाँ भी नहीं छोड़तीं. .खुदा के इन घरों में जो बदमाशियाँ, बदचलनियाँ, बालहत्याएँ और तरह तरह के पाप होते हैं वह आज की दुनिया से छिपे नहीं हैं. धर्म के नाम पर, योरप में क्या और एशिया में क्या, लोगों ने जो जो अत्याचार एक दूसरे पर किये हैं, मार काट, ज़िन्दा जला देना, औरतों और बच्चों पर तरह तरह के ज़ुल्म, उन्हें पढ़ कर और सुन कर दिल काँप उठता है. भगवान इन अत्याचारों को क्यों होने देते हैं! अन्दर से जवाब यही मिलता है कि शायद मज़लूमों और पीड़ितों के रूप में भगवान यह सब आफ़तें .खुद अपने ऊपर लेते हैं. मालूम होता है कि बेगुनाहों और शहीदों का ख़ून ही धर्म और नेकी की सच्ची बुनियाद होता है. उनकी मिसालें लोगों में सचाई और बहादुरी पैदा करती हैं. इसी तरह मनुष्य जाति के पाप धुलते हैं. भगवान पर उनका भरोसा ताज़ा होता है. भगवान उन्हें और अधिक अपनी छाती से चिपटाते हैं. इसी तरह धीरे धीरे ज़ालिमों और अत्याचारियों

का दिल बदलता है. इसी तरह मुसीबतों की आग में से निकल कर लोग सत्य, अहिंसा, त्याग, ब्रह्मचर्य और निरहंकारता यानी .खुदी को मिटाने का सबक़ सीखते हैं. .खुदी के मिटने से ही और सब गुण पैदा होते हैं, जिन में सब से बड़ा गुण ईश्वरप्रणिधान यानी तवक्कुल है. इसी से दीनता आती है. सब्र और दीनता सब नेकियों की जड़ है. इसी से आदमी अपने को दूसरों से अलग और दूसरों को ग़ैर समझना बन्द कर देता है और मंझते मंझते सब के साथ और ईश्वर के साथ अपनी एकता को महसूस करता है.

.खुदी को मारना और दीनता दोनों एक ही चीज़ के दो नाम हैं. यह बात सत्य यानी हक़ से पैदा होती है. सत्य का मतलब केवल सच बोलना ही नहीं बल्कि इस सब सचाइयों की एक सचाई को समझना है कि सब के अन्दर एक ही आत्मा है और वही परम आत्मा है. इस एक बात को समझ लेने से आदमी में सब अच्छाइयाँ खिल उठती हैं, जिस तरह लोकेषणा यानी दुनिया की हिर्स से क्रोध, दूसरों से नफ़रत, शहवत और धन दौलत का लोभ जैसी बुराइयाँ एक एक कर पैदा होती हैं, उसी तरह दीनता से अहिंसा, नफ़्स पर क़ाबू, ब्रह्मचर्य, पाक-दामनी, अपरिग्रह, त्याग, फ़क़ और सकून पैदा होते हैं. इस तरह सचाई सब नेकियों की जड़ है और दीनता उन सब का मुकुट है.

आख़ीर में दीनता के सम्बन्ध में लोगों को एक और चेतावनी देने की जरूरत है. आदमी का धर्म या फ़र्ज़ देश, काल और मौक़े के अनुसार बदलता रहता है. यों तो अपने दिल से सब ही को दीन रहना चाहिये. परमात्मा के सामने भी सब को दीनता का व्यवहार करना चाहिये. पर हर भले बुरे आदमी के सामने मौक़ा बे मौक़ा दीनता दिखाने से नुक़सान भी बहुत हो सकता है. आदमी की उन्नति इसी में है कि वह

जब जो करे सोच समझ कर, मौक़े को देख कर और अपने विवेक से पूरा काम लेकर करे.

सीधे सादे आदमी क़ुदरती तौर पर यह भी चाहते हैं कि उन्हें कोई एक सीधा सा असूल बता दिया जावे. मोहम्मद साहब से उनके एक साथी ने एक बार पूछा कि मुझे कोई एक ऐसी बात बता दीजिये जिसे मैं आसानी से कर सकूँ और जिसमें सब कुछ आ जावे. मोहम्मद साहब ने उसे जवाब दिया था कि—"केवल सच बोला करो और बस." इसी तरह का सवाल चीनी महात्मा कन्फ़ूशियस से उनके किसी चेले ने किया था. यही सवाल गीता में एक जगह अर्जुन ने कृष्ण से भी किया है. भागवत में भी शौनक ने उग्रश्रवा से इसी तरह का सवाल बहुत तफ़सील के साथ किया है.

दुनिया के बड़े बड़े महापुरुषों ने भी सब ने इस बात की आवश्यकता अनुभव की है कि कुछ थोड़े से शब्दों में दीन धर्म का सारा निचोड़ लोगों के सामने रख दें जिस पर लोग आसानी से अमल कर सकें. इसी से वह 'सुनहरा असूल' बना है जो सब धर्मों और सब पुस्तकों में मिलता है—"दूसरों के साथ वैसा ही सलूक करो जैसा तुम चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ करें. किसी के साथ कोई ऐसी बात न करो जो तुम नहीं चाहते कि वह तुम्हारे साथ करे."

दीनता दिखाने के मामले में भी हमें इस असूल को ध्यान में रखना चाहिये.

हम पहले एक अध्याय में बता चुके हैं कि मनु, मूसा, बुद्ध, ईसा और मोहम्मद सबने आदमी के फ़र्ज़ों में पाँच बातों पर ज़ियादा ज़ोर दिया है. यह पाँचों अच्छी बातें केवल दूसरी दुनिया के लिये नहीं हैं. यह सब इस दुनिया में हमारे भले के लिये सब से ज़ियादा ज़रूरी हैं. यह इस ज़िन्दगी के लिये और दुनिया के लिये अमली चीज़ें हैं. यही वह मसाला है जो इनसानी समाज को मिलाए रखता है. इन्हीं पर अमल करने

से समाज बनता है और समाज रह सकता है. जब कभी किसी समाज में इन पाँच चीज़ों की कमी होने लगती है तब वह समाज गिरने और बरबाद होने लगता है. यह बात बिलकुल ज़ाहिर है कि जब कभी 'अहिंसा' के असूल के ख़िलाफ़ लोग अपने स्वार्थ और अपनी ख़ुदग़रजियों के लिये दूसरों को तकलीफ़ें पहुँचाने लगते हैं और उसके लिये नफ़रतें फैलाते हैं, जब कभी लोग 'सत्य' के असूल के ख़िलाफ़ जान बूझ कर झूठ बोलते हैं, लोगों को धोका देते हैं, झूठा प्रोपैगेन्डा करते हैं, बड़े बड़े पैमाने पर झूठे इश्तहार निकालते हैं और दुनिया में डर और बेऐतबारी बढ़ाते हैं, जब कभी 'अस्तेय' (चोरी न करना) के असूल के ख़िलाफ़ लोग हलाल हराम का ख़याल न करके दूसरों का हक़ छीन कर अपना पेट भरने लगते हैं, जब कभी लोग 'ब्रह्मचर्य' के असूल को तोड़ कर ऐयाशियों और बदचलनियों में डूब जाते हैं, और जब जब लोग 'अपरिग्रह' के सिद्धांत के ख़िलाफ़ लोभ, लालच में पड़ कर दुनिया भर को लूट खसोट कर अपने घर भरने लगते हैं और कमज़ोरों को चूसना, उनकी मेहनत से फायदा उठाना, अपने लिये जाइज़ समझते हैं तब तब इनसानी समाज में फूट और गिरावट बढ़ती है. दुनिया की सब ख़ानाजंगियों, आर्थिक लड़ाइयों, महायुद्धों और उन सब आफ़तों की यही जड़ें हैं जिनमें आदमी दरिन्दों से बदतर हो जाता है और सारी मानव सभ्यता ख़तरे में पड़ जाती है. यह बात हमें आज दुनिया में हमारी आँखों के सामने दिखाई दे रही है. तो क्या समय नहीं आया कि हम रुक कर ज़रा सोचें ? क्या दुनिया के दीन धर्म का यह पहलू, सब धर्मों का यह निचोड़, यह पाँच नेकियाँ– अहिंसा यानी किसी को तकलीफ़ मत दो, सत्य यानी सच बोलो, अस्तेय यानी चोरी न करो, ब्रह्मचर्य यानी नेकचलन रहो और अपरिग्रह यानी ज़रूरत से ज़ियादा माल अपने पास न रखो—क्या यह पाँचों नेकियाँ इसी दुनिया में हमारे लिये

सब से ज़ियादा अमली, सब से ज़ियादा ज़रूरी, सब से ज़ियादा काम की और सब से ज़ियादा मुफ़ीद नहीं हैं ? दुनिया को बचाने का इस समय यही एक तरीक़ा है. यह बात अलग है कि इन पाँचों नेकियों की असली जड़ और इनकी असली वजह उसी एक रूहानी सचाई में है कि सब के अन्दर एक ही आत्मा रमी हुई है, एक ही जान सब की जान है.

महाभारत में लिखा है—

"अर्थ और काम यानी धन और सुख सब धर्म ही से मिलते है. इसलिये आदमी धर्म का पालन क्यों न करे."

सूफ़ी ने अपने ढंग से कहा है—

".खुदा को पाया तो क्या न पाया
.खुदा मिला तो सब ही मिला है."

इंजील में लिखा है—

"धर्म यानी नेकी पर चलो तो बाक़ी सब चीज़ें तुम्हें अपने आप मिल जावेंगी."

२६

सुख, दुख और आदमी का फ़र्ज़

दुनिया के लोग आम तौर पर दुख से बचना और सुख भोगना चाहते हैं. यही सब जानदार चाहते हैं. यह इच्छा क़ुदरती है. पर दुनिया न केवल सुखों की दुनिया हो सकती है और न केवल दुखों की. सुख और दुख, भलाई और बुराई, उन जुड़वाँ चीज़ों, द्वन्द्वों, ज़िद्दों या 'ज़ौजेन' में से हैं जिन में से कोई एक दूसरे के बिना नहीं रह सकती. रूहानियत में, फ़लसफ़े और साइंस में, यहाँ तक कि हिसाब और अर्थशास्त्र में भी, यह एक अटल क़ानून है कि ज़िन्दगी, बग़ैर इन दो दो के जोड़ों के, क़ायम नहीं रह सकती. हर चीज़ की अपनी जगह और अपनी क़ीमत है. यह सच है कि आदमी आदमी के ऊपर वह बड़े से बड़े ज़ुल्म करता है जिन्हें देख कर और सुन कर आदमी का दिल काँप उठता है. पर जब इन घोर से घोर ज़ुल्मों को कोई आदमी किसी सचाई या असूल के लिए ख़ुशी ख़ुशी बरदाश्त करने में अपना बड़प्पन समझता है तो उन्हीं नज़ारों को देख कर दुनिया फूली नहीं समाती और इनसान के ऊँचे से ऊँचे जीवन और उसकी पाक से पाक उमंगों को चार चाँद लग जाते हैं. झूठ और सच, ज़ुल्म और बहादुरी, बदी और नेकी, नफ़रत और मोहब्बत, बदला और सब्र, एक ही तसवीर के दो पहलू हैं. बुराई नेकी के चमकने के लिए ज़रूरी है. इसी का नाम दुनिया है. यही रूहानी तरक़्क़ी का भेद है. आज का मज़लूम शायद कभी पहले ज़ालिम रह चुका है. आज के ज़ालिम को भी शायद कभी न कभी मज़लूम बनना होगा. दोनों की आत्माओं के लिये यह कड़ुआ तजर्बा ज़रूरी है. दोनों की मुक्ति या नजात का यही रास्ता है, और दोनों को नजात मिलना

लाज़मी है. प्रकृति की आँधियाँ, तूफ़ान, बाढ़ें, भूचाल, क़ुदरती आगें और ख़ौफ़नाक जानवर रोज़ इनसानों और जानवरों दोनों को बड़ी से बड़ी तकलीफ़ें पहुँचाते रहते हैं. इन सब से आदमी को सीखना यह है कि वह केवल सुख की तरफ़ दौड़ने की जगह सुख दुख दोनों में अपने मन को एक सा रखना सीखे. यह ज़िन्दगी आज़माइश की ज़िन्दगी है. इस में 'मीठा मीठा गप और कड़ुआ कड़ुआ थू' का हमें कोई हक़ नहीं. सुख और दुख दोनों से ऊपर उठ जाना ही असली नजात है.

भागवत में लिखा है—

"हमारे अन्दर ही स्वर्ग है और हमारे अन्दर ही नरक है."

यही बात सूफ़ियों ने भी बार बार कही है.

गीता में बहुत अच्छा और साफ़ कहा गया है कि—

"जिस का मन दुखों के अन्दर परेशान न हो और सुखों के लिये जिसे चाह न हो, जो मोह, डर और क्रोध तीनों से ऊपर ऊठ चुका हो वही सच्चा मुनि और 'स्थित धी' यानी 'सलीमुलअक़्ल' है."

पुराणों में लिखा है—

"आदमी दुख में अपने से अधिक दुखी को देखे और सुख में अपने से अधिक सुखी को देखे. यह जीवन सुख और दुख का संगम है. इस बात को जान कर ही आदमी 'ताप' यानी अपने अन्दर की तकलीफ़ से आज़ाद हो कर शान्ति पा सकता है."

अपनी रूह को रूहेकुल में यानी .ख़ुदी को .ख़ुदा में और अपने छोटे छोटे आपों को इनसानी समाज के बड़े आपे में लीन कर देने का यही रास्ता है. यही 'रूहानी कम्युनिज़्म' और 'रूहानी सोशलिज़्म' है.

हर आदमी को अपनी ड्यूटी, अपना कर्तव्य या अपना फ़र्ज़ पूरा करना चाहिये. पर अपना फ़र्ज़ पूरा करने के लिये यह ज़रूरी है कि पहले हर आदमी यह जाने और समझे कि उस का फ़र्ज़ है क्या. पारसियों के धर्म ग्रंथ गाथा में लिखा है—

"हर आदमी को बड़ी सावधानी और अहतियात के साथ यह तय करना चाहिये कि जीवन में उसे क्या करना है. उस का क्या फ़र्ज़ है, उसके लिये क्या करना ठीक और अच्छा है."

अब ज़रा देखें कि यह कैसे किया जाय.

अंगरेज़ी शब्द 'ड्यूटी' ड्यू शब्द से निकला है जिसके मानी हैं किसी का क़र्ज़ा या किसी का देना. वही मानी संस्कृत शब्द 'देय', फारसी 'दाद' और पुराने पारसी शब्द 'दाथ' के हैं, 'किसी का कुछ देना'. यही संस्कृत 'उचित' और पारसी 'उश्ता' के मानी हैं. इस से पता चला कि हमारी ड्यूटी या फ़र्ज़ जो कुछ भी हो दूसरों की तरफ़ और दूसरों के नाते से है. यह भी ज़ाहिर है कि हर आदमी का फ़र्ज़ देश, काल और हालात के अनुसार बदलता रहेगा. बच्चे का फ़र्ज़ अलग, जवान का अलग, बूढ़े का अलग, विद्यार्थी का अलग, गृहस्थ का अलग, पढ़ानेवाले का अलग, पबलिक नेता और सम्पादक का अलग, शासक का अलग, सौदागर का अलग, मज़दूर का अलग, तन्दुरुस्त का अलग, बीमार का अलग, सब के अपने अलग अलग फ़र्ज़ या कर्तव्य होते हैं. जिस आदमी के सुपुर्द देश के बच्चों और नौजवानों को तालीम देना है उस का काम है कि सारे समाज को एक कुटुम्ब मान कर माँ की तरह अपना फ़र्ज़ पूरा करे, बच्चों और नौजवानों के दिलों और दिमाग़ों को ठीक ठीक ख़ूराक पहुँचावे. दिल और दिमाग़ की ख़ूराक उतनी ही ज़रूरी और नाज़ुक चीज़ है जितनी जिस्म की ख़ूराक. शासक का काम है कि कुन्बे के बाप की तरह सब के साथ इन्साफ़ करे, सब की रक्षा करे. व्यापारी का काम है कि सगे भाई की तरह सब की अपने धन से मदद करे. मज़दूर का काम है कि प्रेम और नम्रता के साथ समाज की सेवा करे.

असूल फिर यही निकला कि हर आदमी दूसरे सब आदमियों को निगाह में रख कर उन की तरफ़ अपने फ़र्ज़ को पूरा करे. इसमें हद दरजे की 'बराबरी' और 'उदारता' की ज़रूरत है.

हर आदमी सबका एक बराबर भला चेते और सब का भला करना अपना फ़र्ज़ और धर्म समझे. ग़रीब हो या अमीर, तन्दुरुस्त हो या बीमार, हर हाल में निस्वार्थ भाव से बिना सुस्ती, शक या डर मन में लाए, अपने ऊपर कष्टों की परवाह न करते हुए, इस यज्ञ यानी क़ुरबानी से जो कुछ बचे, उस से अपना गुज़ारा करते हुए और अगर कुछ न बचे तो उसी में सन्तोष और सुख मानते हुए श्रद्धा और विश्वास के साथ ईश्वरार्पण (फ़ी सबीलिल्लाह) समाज यानी इनसानी क़ौम के लिये काम करे और अपने फ़र्ज़ को पूरा करे. यही सब धर्मों और मज़हबों का निचोड़ है.

चीन के मशहूर महात्मा मैनशियस ने कहा है—

"ताओ (ईश्वर, अल्लाह) हमारे पास है, लोग उसे दूर दूर ढूंढते फिरते हैं. आदमी का फ़र्ज़ छोटे और आसान कामों में है, लोग उसे मुशकिल और बड़े बड़े कामों में ढूँढते फिरते हैं. हर आदमी अपने माँ बाप से प्रेम करे, बड़ों की इज़्ज़त करे, सब की सेवा करे, सब का भला करे, तब ही दुनिया में शान्ति रह सकती है."

कबीर ने कहा है—

"मोको कहाँ खोजता बन्दे, मैं तो तेरे पास में,
न मैं मन्दिर न मैं मसजिद न काबे कैलास में,
खोजी होय तुरत ही मिलिहौं पल भर की तालास में,
कहें कबीर सुनो हो साधो ! सब स्वांसों की स्वांस में."

इंजील में लिखा है कि—

"कल की चिन्ता मत करो.....लेकिन तुम्हारा जो भी फ़र्ज़ तुम्हारे हाथ के सामने है उसे अपनी पूरी शक्ति से पूरा करो."

गीता में अर्जुन को उपदेश दिया गया है कि—

"ऐ अर्जुन ! ईश्वर सब प्राणियों के दिलों के अन्दर बैठा हुआ है, वही अपनी अनन्त शक्ति से सब प्राणियों को इस तरह

चला रहा है मानो वह सब किसी मशीन पर चढ़े हुए हों. इसलिये हमेशा बेलाग भाव से अपने फ़र्ज़ों को ठीक ठीक पूरा करते रहो. बेलाग हो कर काम करने वाला ही उस परम पुरुष ईश्वर को प्राप्त करता है. तुम्हारा अधिकार अपना कर्तव्य पूरा करने तक ही है. उसके नतीजे पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं. इसलिये तुम काम करने में न फल की इच्छा को सामने रखो और न अपना कर्तव्य पूरा करते रहने से चूको. वह नेक लोग जो दूसरों की तरफ़ अपने फ़र्ज़ों को यज्ञ समझ कर पूरा करते रहते हैं और उस यज्ञ से अपने लिये जो कुछ बच जावे उसे खा कर अपना काम चला लेते हैं वह सब पापों से छूट जाते हैं, और जो केवल अपने लिये खाते कमाते हैं वह पापी हैं और पाप खाते हैं."

मोहम्मद साहब की एक मशहूर कहावत है—

"अल कासिब हबीबुल्लाह" यानी "हाथ से काम करने वाला अल्लाह को प्यारा है." इस पर एक सूफ़ी ने कहा है—

"रसूल की इस कहावत के मतलब को अच्छी तरह समझो. अपने कामों के नतीजे को अल्लाह पर छोड़ दो. इसी का नाम 'तवक्कुल' है. लेकिन इस तवक्कुल की वजह से तुम उन नतीजों के सबब पैदा करने में ग़फ़लत मत करो. जाओ, अल्लाह पर तवक्कुल करो और अपना काम यानी फ़र्ज भी पूरा करो, अन्धे मत बनो, कोशिश करो, मेहनत करो और अपना फ़र्ज़ पूरा करने में बाल भर भी इधर उधर मत हो."

क़ुरान, हदीसों और सूफ़ियों के कलाम में बार बार आता है कि अल्लाह पर सच्चे ईमान का सबूत अल्लाह के बन्दों की तरफ़ अपने सब फ़र्ज़ों को मेहनत और सचाई के साथ पूरा करने में ही है.

इनसान काम करने में कहाँ तक आज़ाद है और कहाँ तक उसकी क़िस्मत अल्लाह के हाथों में है इस पर आलिमों और विद्वानों ने बड़ी बड़ी बहसें की हैं. यह बहसें अधिकतर बेमानी

और नासमझी का नतीजा हैं. एक तरफ़ ईश्वर की अनन्त शक्ति में और दूसरी तरफ़ आदमी के फ़र्ज़ों में कोई विरोध नहीं है. अनन्त अनन्त की जगह है. आदमी का काम पूरी मेहनत के साथ अपने फ़र्ज़ों को पूरा करना है. इसमें ग़फ़लत, कोताही या सुस्ती माफ़ नहीं की जा सकती. ख़ल्क़ की ख़िदमत ही अल्लाह की इबादत है. सच यह है कि ख़ल्क़ की तरफ़ या दूसरों की तरफ़ आदमी अपने फ़र्ज़ों को तभी अच्छी तरह निबाह सकता है जब वह अपनी मरज़ी को कुल की मरज़ी में यानी समाज की मरज़ी में यानी अल्लाह की मरज़ी में मिला दे.

अपनी मरज़ी को इस तरह सब की मरज़ी में मिला देने से बढ़ कर आनन्द या बरकत दुनिया में दूसरी नहीं हो सकती.

हमारी इस छोटी सी ज़िन्दगी में भी जब कभी दो साथी, दो दोस्त, दो भाई, या मर्द और औरत अपनी अपनी मरज़ी को दूसरों की मरज़ी में मिला देते हैं या फ़ना कर देते हैं तो आदमी की काम करने की ताक़त सैकड़ों गुना बढ़ जाती है और जीवन में वह आनन्द मिलता है जो किसी दूसरी चीज़ से नहीं मिल सकता. फिर अगर छोटा सा इनसान अपनी मरज़ी को सब की मरज़ी में यानी समाज की मरज़ी में मिला सके और यह समझ सके कि सब के अन्दर वही एक रूहेकुल है जो उसके अन्दर है और सब रूप उसी के रूप हैं, तो काम करने और दुनिया की ख़िदमत करने की जो ताक़त उसके अन्दर पैदा होगी उसका अन्दाज़ा हर कोई नहीं लगा सकता. जो आनन्द इस तरह इनसान को नसीब होता है, जो बरकत उसके कामों में मिलती है वह अन्दाज़े से बाहर है. दुनिया के पैग़म्बरों और महात्माओं की कामयाबी का यही एक राज़ है. उस शक्ति और उस आनन्द को पा कर ही आदमी चिल्ला उठता है—"ईश्वर प्रेम है ! इश्क़ के सिवा और कोई ख़ुदा है ही नहीं !" एक का अपने को अनेक के लिये यानी सब के लिये क़ुरबान कर देना ही भक्ति मार्ग यानी मज़हबे इश्क़ की आख़िरी मंज़िल है. इस मंज़िल पर पहुँच कर

ही आदमी समझता है कि मैं ही सब हूँ, मेरा अलग वजूद कोई चीज़ नहीं.

उपनिषद में लिखा है कि—

"जो आदमी सब रूपों और रसों में उसी एक ब्रह्म को देखता है जो सब रसों का रस है वही पूर्णानन्द को हासिल करता है. वही सब का प्यारा होता है. फिर उसे किसी से कोई डर नहीं, क्योंकि उसके लिये कोई ग़ैर नहीं."

इंजील में लिखा है—

"तुम ही ईश्वर का मन्दिर हो. तुम ही इस धरती का नमक हो. अगर नमक अपना मज़ा खो बैठे तो फिर स्वाद उस में किस चीज़ से पैदा किया जा सकता है ? उस आदमी को क्या फ़ायदा जो सारी दुनिया हासिल कर ले लेकिन अपनी आत्मा को खो दे."

नार्विच की महिला मदर जूलियन ने अपनी किताब 'रिविलेशन आफ डिवाइन लव' में लिखा है—

"ईश्वर कहता है कि 'ऐ बन्दे, मैं ही तेरी सारी खोज का मैदान हूं', क्या तुम इस बात में अपने ईश्वर का मतलब जानना चाहते हो ? तो अच्छी तरह जानो. उसका मतलब 'प्रेम' है. तुम्हें यह किस ने दिखाया ? प्रेम ने. उसने तुम्हें क्या दिखाया ? प्रेम. किस के लिये ? प्रेम के लिये."

इंजील में लिखा है—

"ऐ प्यारो ! आओ ! हम सब एक दूसरे से प्रेम करें, क्योंकि प्रेम ईश्वर है, और जो कोई प्रेम करता है वह ईश्वर से पैदा हुआ है और ईश्वर को जानता है. जो प्रेम नहीं करता वह ईश्वर को नहीं जानता क्योंकि ईश्वर प्रेम है."

सूफ़ी कहता है—

"कोई दिल ऐसा नहीं होना चाहिये जिसमें इश्क़ न हो, फिर चाहे वह इश्क़ हक़ीक़ी (ईश्वरीय) हो या मजाज़ी (मानवीय). इश्क़े मजाज़ी शीशे की तरह इश्क़े हक़ीक़ी का चेहरा अपने अन्दर

दिखाता रहता है. इश्क़े मजाज़ी की रोशनी आदमी को अल्लाह की गली तक पहुँचा देती है."

एक अंगरेज़ शायर कहता है—

"प्यार करना और खो देना ज़ियादा अच्छा है बजाय इसके कि कभी प्यार किया ही न हो.

"अच्छा यह है कि आदमी अक़लमन्दी यानी समझदारी के साथ प्यार करे, क्योंकि ऐसा करना ईश्वर की सब जानदार चीज़ों से प्यार करना है, और हर एक को प्यार भरे इन्साफ़ के साथ उसका हक़ पहुँचाना है, लेकिन अगर तुम ऐसा नहीं कर सकते तो बेवक़ूफ़ी और नासमझी के साथ ही प्यार करो, क्योंकि प्यार न करने की निस्बत नासमझी से प्यार करना कहीं ज़ियादा अच्छा है."

यूरप के एक लेखक ने बहुत अच्छा कहा है—

"ईश्वर 'प्रेम' का खिंचा हुआ इत्र है, और प्रेम वह मसाला या ख़ूराक है जिस में वह इत्र घुला हुआ है. जिस दरजे तक हम प्यार करते हैं उस दरजे तक हम ईश्वर में हैं और ईश्वर हम में है. और जिस दरजे तक हम प्यार नहीं करते उस दरजे तक हम इस दुनिया में या किसी भी 'दूसरी दुनिया में बिना ईश्वर के हैं. सब धर्म मज़हबों और तरह तरह की फ़िलासफ़ियों की आदर्श चर्च, जमाअत या सम्प्रदाय एक ही है. यह चर्च या जमाअत या सम्प्रदाय उन सब लोगों का मेल या संगम है जो दूसरों से प्यार करते हैं और जो उन सब की सेवा में लगे हुए हैं जो दुखी हैं."

हम सब की दो आत्माएँ या दो आपे होते हैं, एक हमारा छोटा निचला आत्मा हमारी ख़ुदी हमारा अहंकार, और दूसरा हमारा बड़ा, ऊँचा आपा जिस में सबके आपे शामिल हैं. हमारा पहला यानी छोटा आपा जब प्यार करता है तो कुछ लेना चाहता है. हमारा बड़ा आपा जब प्यार करता है तो देना चाहता है. यह कशमकश बराबर जारी रहती है. वैदिक धर्म में

इस कशमकश को 'प्रेय' और 'श्रेय' यानी स्वार्थ और परमार्थ के बीच की कशमकश कहते हैं. बौद्ध धर्म में इसे लाभ और 'निब्बान' के बीच की कशमकश कहते हैं. पारसी धर्म में इसे 'दुरुज' और 'आशा' के बीच की कशमकश कहते हैं, और सूफी इस्तलाह में इसे 'ग़रज़' और 'फ़र्ज़' के बीच की कशमकश कहा जाता है. यही दिल और दिमाग़, ख़ुदग़रज़ी और ख़ुद-निसारी, परपीड़न और परोपकार, अपना भला और सब का भला, के बीच की कशमकश है. यह कशमकश उस वक़्त ख़त्म होती है जब हमारा छोटा आपा और हमारा बड़ा आपा, अपना और पराया, मेरा आपा और सब का आपा, एक हो जाता है. मैं सब हूँ और सब मैं ही हूँ. सब मेरे ही रूप हैं. तब भोग और त्याग, सुख और फ़र्ज़ दोनों एक हो जाते हैं. सुख फ़र्ज़ हो जाता है और फ़र्ज़ सुख, धर्म प्रेम हो जाता है और प्रेम धर्म. माँ अपने बच्चे में और बच्चे के लिये जीती है. बच्चे की देख रेख में उसे अपने सुख दुख का ध्यान भी नहीं रहता. उसके लिये सुख और फ़र्ज़ एक हो जाते हैं. उसी में उसके जीवन का सब से बड़ा आनन्द होता है. प्रेम की यही पहेली है, यही इसकी ऊँच नीच है. माँ का प्यार! ईश्वर का प्यार! जो रूह अभी तक प्रवृत्ति यानी नज़ूल के रास्ते पर अटकी हुई है वह क़ुदरती तौर पर अपने छोटे आपे से चिपटती है और जो रूह प्रवृत्ति और निवृत्ति यानी नज़ूल और उरूज के जन्कशन से ऊपर को मुड़ चुकी है वह क़ुदरती तौर पर अपने बड़े आपे यानी अनन्त आपे को चिपटती है.

यूनान में ऐपीक्यूरस एक मशहूर फ़िलासफ़र हुआ है. अकसर लोग यह समझते हैं कि उसने दुनिया को 'खाओ, पिओ और ख़ुश रहो' की तालीम दी है. लेकिन ऐपीक्यूरस ने एक जगह कहा है—

"अगर तुम किसी आदमी को सुखी बनाना चाहते हो तो उसकी दौलत को मत बढ़ाओ बल्कि उसकी ख़्वाहिशों को कम

करो. हम तब तक सुख की ज़िन्दगी बसर नहीं कर सकते जब तक समझदारी, सम्मान और इन्साफ़ की ज़िन्दगी बसर न करें, और हम तब तक समझदारी, सम्मान और इन्साफ़ की ज़िन्दगी बसर नहीं कर सकते जब तक वह ज़िन्दगी हमारे लिये सुख की ज़िन्दगी भी न हो."

यही असल वेदान्त है. यही वैदिक धर्म है.

उपनिषद् में लिखा है—

"अमृत यानी आबेहयात को वही आदमी चख सकता है जो शरीर के सुखों को त्याग सकता हो."

भागवत में लिखा है—

"दुनियवी ख़्वाहिशों के पूरा होने से जो सुख मिलता है वह उस ज़बरदस्त सुख का सोलहवाँ हिस्सा भी नहीं होता जो ख़्वाहिशों के ख़त्म हो जाने से आदमी को हासिल होता है."

कठ उपनिषद् में लिखा है—

"आदमी केवल दुनियवी दौलत से संतोष हासिल नहीं कर सकता और न दौलत उसे ज़िन्दा रख सकती है. बड़ी से बड़ी दौलत आत्मा को तसल्ली नहीं दे सकती. जब तक हम जीते हैं तब तक हम मौत को नहीं देख पाते. जब यह जिस्म ख़त्म हो जाता है तो दुनियवी दौलत सब उसके साथ साथ ख़त्म हो जाती है. आत्मा यानी रूह अमरत्व यानी अबदी ज़िन्दगी चाहती है, दौलत नहीं चाहती."

लेकिन ख़्वाहिश और बेख़्वाहिशी दोनों का अलग अलग वक़्त होता है. उपनिषद् में लिखा है—

"श्रेय और प्रेय यानी आदमी का वह फ़र्ज़ जिस से उसकी रूह का भला हो और उसकी वह ग़रज़ जिस के पूरा होने से उसके जिस्म को सुख मिले दोनों आदमी को अपनी अपनी तरफ़ खींचते हैं. धीर और समझदार आदमी दोनों का अच्छी तरह मुक़ाबला कर के उनमें से फ़र्ज़ को अपनाता है, ग़रज़ या

ख़ुदग़रज़ी को नहीं, और कमसमझ आदमी थोड़ी देर का फ़ायदा देख कर बच्चे की तरह ग़रज़ की तरफ़ दौड़ता है.

"श्रेय एक चीज़ है प्रेय दूसरी चीज़ है. आत्मा दोनों के अन्दर और दोनों को लिये हुए है. अधिक से अधिक भला, सबका भला—यही सनातन धर्म है और यही असली श्रेय और यही असली प्रेय है. धन दौलत, बाल बच्चों और राज पाट से यह ज़ियादा क़ीमती है. जो आत्मा के लिये क़ीमती है वही सचमुच क़ीमती है."

बौद्ध धर्म का कहना है—

"दुनियवी लाभ का एक रास्ता है और निर्वाण यानी परम सुख का दूसरा रास्ता है."

आदमी का कब क्या फ़र्ज़ है यह सवाल हर एक के सामने बार बार उठता रहता है. आदमी पहले पास की एक ग़रज़ अपने सामने रखता है. फिर उसकी निगाह कुछ दूर जाती है, वहाँ उसे दूसरी ग़रज़ दिखाई देती है. अब पास की ग़रज़ दूर की ग़रज़ के सामने मिट जाती है या उसके अधीन हो जाती है. यह सिलसिला बराबर जारी रहता है जब तक कि आदमी अपने वजूद की असली और आख़िरी ग़रज़ तक न पहुँच जावे. यह आख़िरी ग़रज़ सब धर्मों में आत्मा का परमात्मा को यानी रूह का रूहेकुल को पाना और उसमें फ़ना हो जाना है. इस तरह एक सवाल के बाद दूसरा सवाल आदमी के सामने आता रहता है. यहाँ तक कि आख़िरी सवाल यह आता है कि मैं कौन हूं और यह सब क्या है और मेरा और इन सब का क्या नाता है ? इस सवाल के जवाब में सब सवालों का जवाब आ जाता है. श्रेय और प्रेय का झगड़ा फिर ख़त्म हो जाता है. अपनी आत्मा यानी अपने आपे को समझना, यह समझ लेना कि मेरा आपा और सब के आपे एक ही आपा है, सब का भला मेरा भला है—इस चीज़ को दिल में जमा लेने में ही सब दुखों का

अन्त और परम आनन्द की शुरूआत है. भक्ति मार्ग यानी मज़हबे इश्क़ का यही असल मक़सद है.

सूफ़ी कहता है कि—

"एक अल्लाह के वजूद के सिवा और सब चीज़ें फ़ानी हैं, अगर अल्लाह के वजूद में तू भी शामिल है तो फिर अपने अलग वजूद को मत ढूँढ़, और अगर अल्लाह के वजूद में तू शामिल नहीं है तो अपने इस अलग वजूद को ढूँढ़ना बेमानी है."

इस तरह 'फ़ना फ़िल्लाह' हो कर यानी 'ईश्वर में लीन' हो कर दुनिया के सब दुख ख़त्म हो जाते हैं. जाने अनजाने सब उसी तरफ़ को जा रहे हैं. सब की वही एक मंज़िल है.

सूफ़ी कहता है—

"टूट जाय वह हाथ जो यार की गरदन के चारों तरफ़ मुड़ा न हो और वह आँख अन्धी अच्छी जिसे यार का दीदार नसीब न हुआ हो."

एक सन्त का कहना है—

"अब हौं का सौं बैर करौं,
कहत पुकारत प्रभु निज मुख ते घट घट हौं बिहरौं,
आप समान सबै जग लेख्यो, भगतन अधिक डरौं."

सच्चे प्रेमी के लिये ईश्वर बन्दों से अलग कोई चीज़ नहीं है—

"शक्ले इनसाँ में ख़ुदा था मुझे मालूम न था,
चाँद बादल में छिपा था मुझे मालूम न था."

ईश्वर और बन्दे के प्रेम की मिसाल अक्सर पुरुष और स्त्री के प्रेम से भी दी जाती है.

कार्डिनेल न्यूमैन ने लिखा है—

"अगर आत्मा को ऊँची रूहानी बरकतों की तरफ़ बढ़ना है तो उसे औरत बनना होगा—हाँ! चाहे आदमियों में तुम कितने भी मर्द क्यों न हो."

इंजील के 'सांग आफ़ सांग्स' में ईश्वर को मुख़ातिब करके लिखा है—

"आओ और अपने होंठों से मुझे बोसा दो ! क्योंकि तुम्हारा प्रेम शराब से बढ़ कर है ! देखो ऐ मेरे प्रीतम ! तुम कितने सुन्दर हो ! हाँ कितने प्यारे हो ! और हमारा बिछौना हरा है. प्रीतम का बाँया हाथ मेरे सिर के नीचे है और उसका दाहना हाथ मुझे लिपटाए हुए है."

"मीरा के प्रभु गहर गम्भीरा, हृदय रहो जी धीरा,
आधि रात प्रभु दरशन दैहैं, प्रेम नदी के तीरा."

मशहूर ईसाई सन्त सेन्ट जान का एक सुन्दर गीत है—

"एक अँधेरी रात को,
"वियोग की आग में जलता हुआ,
"—कैसी बदक़िस्मत और कैसी ख़ुशक़िस्मत हालत थी !—
"मैं चल दिया, कोई मुझे देखने वाला न था,
"रात के वक़्त, सब आँखों से ओझल,
"छिपी हुई सीढ़ियों से, भेस बदले हुए,
"राह दिखाने के लिये कोई दिया न था,
"सिवाय उस रोशनी के जो मेरे दिल में, मेरे पहलू में जल रही थी.

"वही रोशनी मुझे अपने पीछे ले चली,
"भरी दोपहरी भी इतना पक्का रास्ता न दिखाती,
"किधर ! मैं जानता था कि उधर ही मेरा प्रीतम,
"मेरे आने का छिप कर इन्तज़ार कर रहा था,
"मैंने अपनी फूलों जैसी छाती के ऊपर,
"जो केवल उसी के लिये थी, किसी दूसरे को उस पर अधिकार न था,
"वहाँ मैंने उसे प्यार से आराम कराया,
"अपने प्रीतम को.
"देवदार के दरख़्तों की ठंडी हवा पंखा झल रही थी,
"उस समय मैं और सब चीज़ें भूल गया.
"मेरा गाल उसके गाल पर, मेरे बुलाने से वह आया.

"सब चीज़ें गुम हो गईं, मैं भी खो गया,
"मेरी सब चिन्ताएँ और शर्म जाती रहीं,
"जंगल के फूलों में, और उनकी भी याद न रही थी."

हिन्दू मुसलिम और सब धर्म मज़हबों के भक्तों, फ़क़ीरों और अल्लाह वालों की बाणी इस तरह के गानों से भरी पड़ी है.

२७

मज़हब में धोखे से बचने की ज़रूरत

हर आदमी का फ़र्ज़ है कि अपने जीवन में ईश्वर अल्लाह की मरज़ी को पूरा करे. यह मरज़ी आदमी की अपनी अन्दर की आत्मा की ही मरज़ी है. सब मज़हबों की किताबें हमें बताती हैं और अगर हम ध्यान से समझने की कोशिश करें तो यही तालीम साइन्स हमें देती है कि रूह पहले इस दुनिया की चार दिन की फ़ानी ज़िन्दगी में दाख़िल होती है और फिर इस जिस्म की मौत के दरवाज़े से निकल कर अमर ज़िन्दगी में दाख़िल होती है. उस अमर ज़िन्दगी का नाम ही अंगरेज़ी में 'सम्मम बोनम' यानी सब से बड़ी नेकी, और संस्कृत में परम श्रेयस् या निःश्रेयस है. इसलाम में उसी को वाजिबुल्वजूद या ख़ैरमहज़ या सरूरे जाविदानी कहा गया है. इस मंज़िल तक पहुँचने का रास्ता यह है कि हर आदमी अपनी ज़िन्दगी के चार क़ुदरती हिस्सों में ईमानदारी के साथ हर हिस्से के अलग अलग फ़र्ज़ों को पूरा करे, और ज़िन्दगी के दूसरे हिस्से में उन चार तरह के पेशों या रोज़गारों में से किसी एक का ठीक ठीक पालन करे जो हर देश, हर धर्म और हर ज़माने के आदमियों के लिये क़ुदरती और ज़रूरी हैं. इन चार तरह के रोज़गारों में से हर एक की बहुत सी शाखें हैं. हर इनसान को इनमें से निकलना पड़ता है. हिन्दू धर्म में इन चारों को अलग अलग बयान किया गया है. पेशों या रोज़गारों की इन चार क़ुदरती क़िस्मों से ही बाद के लोगों और पण्डे पुरोहितों ने सैकड़ों और हज़ारों जन्म की बातें बना डालीं. यह ग़लती असलियत को न समझ सकने से और हमारे अन्दर की ख़ुदी के कारण हुई है.

हिन्दू धर्म ग्रन्थों के अनुसार हर इनसान तीन क़रज़े (यानी ऋण) अपने साथ लेकर पैदा होता है. पहला क़रज़ा देव ऋण कहलाता है, दूसरा पितृ ऋण और तीसरा ऋषि ऋण. देव ऋण आदमी के ज़िम्मे उन देवताओं या फ़रिश्तों का क़रज़ा है जिन्होंने ईश्वर के हुकुम से इस दुनिया को बनाया. पितृ ऋण आदमी के ज़िम्मे उन पुरखों या पूर्वजों का क़रज़ा है जिन से आदमी को यह जिस्म मिला है. ऋषि ऋण उन ऋषियों, विद्वानों, ज्ञानियों आलिमों और आरिफ़ों का क़रज़ा है जिन्होंने हर ज़माने में आने वाली नसलों के लिये ज्ञान और इल्म का भंडार जमा कर के रखा है. पहला क़रज़ा आदमी इनसानी समाज की और सब प्राणियों की बेलाग सेवा करके अदा करता है. दूसरा क़रज़ा वह नेक औलाद पैदा करके अदा करता है और तीसरा क़रज़ा वह अब तक के दुनिया के ज्ञान को आगे की नसलों तक पहुँचा कर अदा करता है. मनुस्मृति के अनुसार जो आदमी इन तीन बड़े क़रज़ों को अदा किये बग़ैर मोक्ष यानी निजात की कोशिश करता है वह मोक्ष की इच्छा रखते हुए भी और अधिक बन्धनों में फँसता जाता है.

जिस आदमी ने अपनी ज़िन्दगी के पहले हिस्से में विद्या और ज्ञान हासिल नहीं किया, दूसरे हिस्से में जिस ने ईमानदारी की रोज़ी नहीं कमाई और बाल बच्चों की सेवा नहीं की, और तीसरे हिस्से में जिस ने सब के भले के लिये त्याग और क़ुरबानी के काम नहीं किये, वह चौथे हिस्से यानी बुढ़ापे में अपनी आत्मा या परमात्मा की खोज में लग ही नहीं सकता. मौत के बाद अमर जीवन को वही इनसान हासिल कर सकता है और वही नूर की दुनिया में दाख़िल हो सकता है जिसने जीते जी इन तीनों क़रज़ों को ईमानदारी के साथ अदा किया हो.

यह चढ़ाई पहाड़ की चढ़ाई की तरह है. इसमें एक एक क़दम सँभाल कर रखना होता है. इसमें सब से बड़ी ज़रूरत

दिल के अन्दर प्रेम यानी इश्क़ की है. प्रेम यानी इश्क़ दो तरह का होता है, एक ईश्वर प्रेम या इश्क़े हक़ीक़ी जिसमें 'बनी नौह' यानी तमाम इनसानी क़ौम बल्कि प्राणी मात्र से प्रेम शामिल है और दूसरा किसी एक ख़ास इनसान से प्रेम जिसे सूफ़ियों की बोली में 'इश्क़े मजाज़ी' कहते हैं. एक हद तक यह दोनों एक दूसरे के लिये ज़रूरी हैं. इश्क़े मजाज़ी से ही तरक़्क़ी करते करते आदमी इश्क़े हक़ीक़ी तक पहुँचता है. गुरु भक्ति या पीर भक्ति भी इश्क़े मजाज़ी है. लेकिन ईश्वर भक्ति तक पहुँचने के लिये गुरु भक्ति अकसर ज़रूरी होती है. इसी जगह एक बहुत बड़ा धोका और बहुत बड़ा ख़तरा आदमी के सामने आता है. इस ख़तरे में फँस कर कभी कभी आदमी ऊपर चढ़ने की जगह और नीचे को फिसलने और गिरने लगता है. नीचे को फिसलना ऊपर को चढ़ने के मुक़ाबले में बहुत आसान होता है. ईश्वर भक्ति यानी इश्क़े हक़ीक़ी के बड़े बड़े सच्चे खोजी भी अकसर इस जाल में फँस जाते हैं.

पिछले ज़माने की बहुत सी धार्मिक सम्प्रदायों का इतिहास और आजकल के बहुत से मज़हबी गिरोहों का हाल इस गिरावट की मिसालों से भरा पड़ा है. हिन्दू भक्ति मार्ग की सम्प्रदायों और सूफ़ियों दोनों में इस तरह की मिसालें मिल सकती हैं. अब भी इस तरह के मज़हबी गिरोह दुनिया भर में आए दिन बनते रहते हैं. इन में कुछ लोग तो सीधे और भोले होते हैं जो दूसरों के जाल में फँस जाते हैं और कुछ जान बूझ कर दूसरों को जाल में फाँसते हैं. धर्म या मज़हब के नाम पर यह बुरा और ख़ौफ़नाक व्यापार हमारे चारों तरफ़ बराबर चलता रहता है. ख़ुदा और ख़ुदी, भलाई और बुराई, हर एक के दिल के अन्दर मौजूद है. मौक़ा पाकर कभी एक तरह के बीज और कभी दूसरी तरह के बीज हमारे अन्दर से फूट निकलते हैं. इसी से कोई नेक बन जाता है और कोई बद, कोई संत और कोई डाकू. हमारे जिस्म के अन्दर भी हमारी रीढ़ की हड्डी

से मिले हुए नीचे से ऊपर तक बहुत से चक्र हैं जिनमें सब से ऊपर हमारे मस्तक का 'ब्रह्म रन्ध्र' है और सब से नीचे हमारा जिन्सी चक्र. ऊपर को जाने वाली आत्मा 'ब्रह्म रन्ध्र' की तरफ़ चढ़ती है और नीचे को जाने वाली आत्माएँ नीचे की तरफ़ फिसलती हैं. इनकी बहुत सी शाखें दर शाखें हैं. कभी कभी आत्मा ऊपर को चढ़ने की कोशिश में .खुद बख़ुद नीचे को फिसल पड़ती है और लोक भ्रष्ट हो कर नष्ट हो जाती है. ईसाइयों में 'ईसा की दुलहनों', हिन्दुओं में 'कृष्ण की गोपियों' और इसलाम में 'मुहम्मद के शैदाइयों' और इसी तरह बहुत से गुरुओं, पीरों और मुरशिदों के चेलों और मुरीदों में अकसर निहायत गंदी कामवासना यानी शहवत परस्ती की तरफ़ वह गिरावट देखने में आती है जिसे देख कर दुनिया शर्म से पानी पानी हो जाती है. यही हालत हिन्दुओं में वाम मार्ग और शक्ति पूजा की हुई है. प्रेम या इश्क़ जब जिस्मानी हालत से नूरी हालत तक चढ़ने की कोशिश करता है तो कभी कभी और ज़ोर के साथ नीचे गिरता है.

इश्क़े हक़ीक़ी में भी वह सब हालतें विरह और विसाल, तड़प, सोज़ और इन्तज़ार की पैदा होती हैं जो इश्क़े मजाज़ी में. इससे उस गिरावट का ख़तरा और भी बढ़ जाता है. इस गिरावट ही की वजह से कभी कभी एक ही गुरु के दो चेलों में या दो जमाअतों में जो अपने को एक ही गुरू के चेले मानती हैं, वह आपसी लड़ाई झगड़े, ईर्ष्या द्वेष, मुक़दमाबाज़ी और .खूंरेज़ी तक देखने में आती है जिसे देख कर इनसानियत शरमा जाती है. इसी से वह जलन, दुशमनियां और रक़ाबतें पैदा होती हैं जिनसे हर मुल्क की तारीख़ भरी पड़ी है. चन्दन की लकड़ी बड़ी अच्छी चीज़ है अगर उसे घिस कर माथे पर या बदन पर लगाया जाय. वही चन्दन की लकड़ी बड़ी बुरी चीज़ है अगर उसे जला कर उस से अपना या दूसरे का घर या बदन फूँका जाय. प्रेम के इन दोनों पहलुओं को निगाह में रखते हुए ही एक हिन्दुस्तानी संत ने कहा है—

"फ़ुक़रा फ़क़ीरी दूर है—जैसी कि ऊंची खजूर है,
चढ़ जाय चूसे प्रेम रस—गिर जाय चकनाचूर है."

अच्छे और बुरे दोनों अर्थों में प्रेम से ही दुनिया पैदा हुई, प्रेम ही दुनिया है, प्रेम ही ईश्वर है, प्रेम ही से दुनिया क़ायम है. प्रेम ही आत्मा है और प्रेम ही के ज़रिये रूह अपने मालिक ईश्वर अल्लाह को जान कर फिर से उसमें समा सकती है. यह रास्ता कठिन और दुशवार गुज़ार है. लेकिन रास्ते की इस सारी दुशवारी में ही उस का सारा आनन्द और उल्लास है. पग पग पर सावधानी, क़दम क़दम पर अहतियात ज़रूरी है. इस अहतियात का यही तरीक़ा है कि हर वक़्त हर पल आदमी अपने को परखता रहे, अपने को कसौटी पर कसता रहे, अपने मन को तौलता रहे. इसी को हिन्दू योगियों ने 'स्वचित परीक्षा' कहा है. सूफी इसे '.खुद हिसाबी' कहते हैं.

हिन्दू भक्ति शास्त्र में इस चीज़ को तरह तरह से समझाया गया है—जैसे प्रेम के अलग अलग रूप, नौकर का मालिक से प्रेम जैसे हनुमान का राम से, मित्र का मित्र से प्रेम जैसे अर्जुन का कृष्ण से, माँ बाप का बच्चे से प्रेम जैसे दशरथ और कौशल्या का राम से, मरियम का ईसा से, फ़ातमा का हसन और हुसैन से, और फिर बच्चे का माँ और बाप से प्रेम. यह आख़िरी प्रेम सब से आसान है. पर ईश्वर को माँ या बाप के रूप में देखने वाले भी कभी कभी अपने ऊपर भरोसा बहुत ज़ियादा खो बैठते हैं. आख़िर सब रास्ते एक ही मरकज़ पर जा कर मिल जाते हैं.

एक आदमी के एक आदमी से प्रेम के भी बहुत से दरजे हैं. यह दरजे जितने ऊपर चढ़ते जाते हैं उतना उतना आशिक़ अपने माशूक़ से लेता कम है और उसे देता ज़ियादा है. आदमी बच्चे की शकल में पैदा होता है. बच्चे का प्रेम माँ से सोलह आना खुदग़रज़ी का होता है. बच्चा माँ से लेना ही लेना जानता है, देना नहीं जानता. बढ़ते बढ़ते आख़िर में आदमी माँ या

बाप बनता है. तब बच्चे से उसका प्रेम बिलकुल बेलाग हो जाता है. ख़ासकर माँ के प्रेम में सब देना ही देना होता है, लेना नहीं होता. माँ हर तरह की गुस्ताख़ियों को माफ़ कर देती है. माँ ईश्वर का 'जमाली' (यानी करुणा का) रूप है. बाप ईश्वर का 'जलाली' रूप है, उसका ऐश्वर्य है. बच्चों के लिये माँ का प्रेम बेलाग और बे लौस होते हुए भी अकसर अपने बच्चों तक ही महदूद रहता है. पास पड़ोस तक के बच्चे इस से बाहर रखे जाते हैं. पर अल्लाह का कुन्बा सारी दुनिया है.

जो हालत एक कुन्बे की है वही सारी ज़िन्दगी की है. इस ज़िन्दगी में मौत के बाद की ज़िन्दगी भी शामिल है. इस सारे समाज की ज़िन्दगी, अपनी क़ौम की ज़िन्दगी, सारी इनसानी क़ौम की ज़िन्दगी, यहाँ तक कि और सब प्राणियों और जानदारों की ज़िन्दगी भी इस में शामिल है. रूह इन सब हालतों में से गुज़रती है. इस बड़ी ज़िन्दगी में गुरु, पीर, मुरशिद या 'आरिफ़े हक़ शनास' ही माँ बाप का काम दे सकता है. इस दुनिया में कभी कभी बाप या माँ भी गुरु का काम दे देते हैं. यह होता तो अच्छा है पर है बहुत मुशकिल. सब माँ बाप रूहानी रहबर का काम नहीं दे सकते. इसीलिये मज़हबों में मामूली लोगों के लिये पुरोहितों, पादरियों और मुल्लाओं की एक जमाअत बनाई गई है. इसमें काफ़ी अहतियात रखी गई है. हिन्दू धर्म में ब्राह्मण पुरोहित के लिये विद्या और तप दोनों ज़रूरी हैं. इसलाम में सच्चे मुल्ला के लिये इरफ़ान (ज्ञान) और ज़ुहद (तपस्या) ज़रूरी है. बौद्ध और जैन धर्मों में भिक्षु, श्रमण और यती होते हैं. इसलाम में, इमाम और ख़लीफ़ा, ईसाई धर्म में पादरी और महन्त.

यह सब एक हद तक बहुत अच्छे होते हैं. लेकिन उस हद को पार करते ही इन ही में से रक्षक भक्षक बन जाते हैं. गडरिया ख़ुद अपनी भेड़ों को खाने लगता है. आदमी का इतिहास इस तरह के रक्षकों के हाथों उनकी प्यारी बेगुनाह भेड़ों की क़ुरबानी

और बरबादी से भरा पड़ा है. दुनिया को एक हद के बाद जो तजरबा राजाओं और हाकिमों से होता है वही मज़हबी पंडे पुरोहितों से होता है. ख़ासकर जब यह पंडे पुरोहित अपना एक गिरोह बना कर बैठ जाते हैं और पुरोहिताई इन्हें बाप दादा से विरसे में मिलने लगती है, तब समाज को इनसे फ़ायदा गोबर का और नुकसान भैंस का होने लगता है. समाज के लिये यह एक मुसीबत हो जाते हैं. इसलिए मज़हब की दुनिया में भी बार बार झाड़ू देने और सफ़ाई करते रहने की ज़रूरत होती है. पुरानी क़ीमती शराब को बार बार नई बोतलों में रखना होता है.

ग़लत क़िस्म के मज़हबी और राजकाजी लीडरों से दुनिया के लोगों को आगाह करते हुए महाभारत में कहा गया है—

"जिसके घुटने पर सिर रखकर आदमी निडर हो कर सो जाता है वही अगर उस सिर को काटने लगे तो सिर रखने वाला किस से जा कर शिकायत करे."

बृहदारण्यक उपनिषद् में लोगों की इस ग़लती का कारण और गहराई में जाकर समझाया गया है. लिखा है कि—

"जिस किसी ने बिना देखे भाले अपनी आत्मा से बाहर किसी दूसरे पर पूरा भरोसा किया, फिर चाहे वह भरोसा किसी ब्राह्मण पर हो या क्षत्री पर, या देवताओं पर या किसी भी प्राणी या प्राणियों पर, वह कभी न कभी उस से धोखा खाए बिना नहीं रह सकता. भरोसा और सहारा सदा केवल अपनी आत्मा पर ही रखना चाहिये."

सवाल होता है कि अगर दुनिया के मज़हबी रहनुमा और राजकाजी नेता ही लोगों के साथ दग़ा कर बैठें तो फिर लोगों को उन से कौन बचा सकता है ? इस सवाल का एक ही जवाब है और वह यह है कि लोग ख़ुद अपने हृदय के अन्दर बैठे

हुए ईश्वर की प्रेरणा से अपने दुख को दूर कर सकते हैं. नए और अच्छे नेता उन्हें अपने आप मिल जावेंगे.

सूफ़ी कहता है—

"ऐ बसा इबलीस आदम रूए अस्त
पस बहर दस्ते न बायद दाद दस्त."

यानी—"आदमी की शकल में बहुत से शैतान मिलते हैं. इसलिए हर किसी के हाथ में अपना हाथ देकर उस पर बैत नहीं करनी चाहिये."

गुरु गीता में लिखा है—

"गुरवो बहवस्तात ! शिष्यवित्तापहारकाः,
विरला गुरवस्ते ये शिष्यसंतापहारकाः"

यानी—"ऐ भाई ! ऐसे गुरु बहुत मिलते हैं जो चेलों का धन हर लें, लेकिन ऐसे गुरु बहुत कम मिलते हैं जो चेले के दिल का दुख हर लें."

सब मज़हबों की किताबों में हमें झूठे पुरोहितों और झूठे नबियों से आगाह किया गया है. मनुस्मृति में लिखा है—

"बुरे चलन वाले पाखण्डी पुरोहित जो बिल्ली की तरह अपने शिकार की ताक में रहें और उस पर झपट्टा मारने को सदा तैयार रहें और बहुत बहसें करें या जो बगुले की तरह नीची निगाह किये शिकार की तलाश में बैठे रहें काफ़ी मिलते हैं, उन से बचना चाहिये. जो आदमी धर्म को पहचानता है उसे चाहिये कि ऐसे पंडे, पुरोहितों से बात तक न करे और न उन्हें पानी तक दे."

क़ुरान में लोगों को झूठे पैग़म्बरों से आगाह करते हुए लिखा है कि—

"यह लोग अपने हाथ से किताबें लिख कर लोगों से कहते हैं कि यह अल्लाह की लिखी हुई है. सचमुच वह अल्लाह से नहीं होती."

इंजील में लिखा है—

"झूठे नबियों से होशियार रहो. यह लोग भेड़ की खाल ओढ़ कर तुम्हारे सामने आते हैं, अन्दर से वह खूंखार भेड़िये होते हैं. इन्हें तुम उनके कामों के नतीजों से जान जाओगे.

"यहूदियों के पंडे पुरोहित हज़रत मूसा की गद्दी पर बैठते हैं. यह लोग जो कुछ करते हैं दिखावे के लिए करते हैं. गले में बड़े बड़े तावीज़ डालते हैं, उन में धर्म ग्रन्थों से फ़िक़रे नक़ल कर के भर देते हैं, लम्बे चौड़े कपड़े पहनते हैं. ऊँची जगह बैठना पसन्द करते हैं, चाहते हैं कि लोग इन्हें सलामें करें और 'रब्बी ! रब्बी !' कह कर पुकारें, पर लानत है इन पाखण्डियों पर जो बेवाओं का माल खा जाते हैं और टके लेकर पूजा करते फिरते हैं. यह लोग उन लिपी पुती क़बरों की तरह हैं जो ऊपर से साफ सुथरी लगती हैं और जिनके अन्दर सड़ा हुआ मांस और हड्डियाँ भरी हुई हैं. इसी तरह यह लोग ऊपर से तो सीधे और नेक लगते हैं लेकिन इनके अन्दर पाप और पाखंड भरा होता है."

इस तरह के बुरे पुरोहितों और बुरे हाकिमों को हटाकर लोगों को चाहिये कि उनकी जगह दूसरे नेक आदमियों को बैठावें. यह काम ख़ुद लोगों को करना चाहिये. महाभारत के शान्ति पर्व में लिखा है—

"निर्बलों के आँसू ज़ालिमों और पाखंडियों को जितनी जलदी फूँक डालते हैं उतनी जलदी तेज़ से तेज़ आग उन्हें नहीं फूँक सकती. राजा या हाकिम के हाथ में शक्ति जनता के भले के लिये दी जाती है. अगर हव उस शक्ति का ग़लत इस्तेमाल करे तो वह उसी के खिलाफ़ लौट पड़ती है और उसे मिटा डालती है. जो ब्राह्मण या पुरोहित ऐसे ज़ालिम राजा या हाकिम को ठीक करे बिना उससे दान लेता है वह उस राजा या हाकिम के साथ साथ नरक में गिरता है."

ऐसे पंडे, पुरोहितों या हाकिमों के ख़िलाफ़ बग़ावत करना धर्म ग्रन्थों में जनता का फ़र्ज़ बताया गया है. दुनिया की तारीख़ में इस तरह की बग़ावतें बार बार होती रही हैं.

दुनिया के लोगों को इस तरह की दग़ा के जो कड़ुवे तजरबे होते हैं उससे एक बड़ा लाभ भी होता है. जिसके साथ दग़ा की जाती है उसकी आत्मा को एक बड़ा धक्का लगता है. उस धक्के से उसकी आत्मा जाग उठती है, चमक उठती है. उसे .ख़ुद अपने अन्दर की कमज़ोरी और .ख़ुदग़रज़ी दिखाई देने लगती है. उसे पता चलता है कि उसने .ख़ुद सदाचार और नेकी के मुक़ाबले में दुनिया के नफ़ा नुक़सान को ज़ियादा अहमियत दी थी. अब उसे अपने अन्दर नेकी और ईमानदारी को ऊँची जगह देनी पड़ती है. इस तरह जनता गहरे से गहरे और ऊँचे से ऊँचे जाती है. यह सब गहराइयाँ और ऊँचाइयाँ जनता की आत्मा के अन्दर ही होती हैं. जनता में नम्रता आती है, हिम्मत पैदा होती है, एकता और प्रेम बढ़ता है. सब की आत्मा अपनी आत्मा दिखाई देने लगती है. यों भेद भाव मिटते हैं, ग़ैरियत के परदे टूटते हैं और आम लोगों के लिए दुनियवी आज़ादी और धार्मिक आज़ादी, रूहानी आज़ादी और आत्मा की आज़ादी, दोनों की राहें खुलती हैं. इस तरह सच्ची, ज़रूरी और जायज़ बग़ावतों के ज़रिये ही आदमी की ज़िन्दगी का असली मक़सद धीरे धीरे पूरा होता है.

२८

हमारी खुदी ही हमारे और अल्लाह के बीच का परदा है

सब धर्म मज़हब आदमी को आगाह करते हैं कि झूठे मसीहों, झूठे नबियों और झूठे गुरुओं से बचना चाहिए. सवाल होता है कि कौन पहचाने कि कौन झूठा है और कौन सच्चा ? इस सवाल का एक ही जवाब हो सकता है, वह यह कि हर आदमी .खुद अपने लिए पहचाने. झूठे और सच्चे की कसौटी आदमी .खुद ही है.

एक सूफी ने कहा है—

"चूंकि हक़ीक़त यानी सचाई को पहचानने वाला तू ही है इसलिए असल सचाई भी यही है कि तू ही सचाई की असल है, तू ही सब किताबों की माँ यानी वह असल किताब है जो अल्लाह के पास है."

एक और सूफी ने कहा है—

"है अपने सीने में उस से ज़ाइद
जो बात वाइज़ किताब में है."

कौन मज़हब सच्चा है और कौन झूठा इसका आख़िरी फैसला भी इनसान का अपना दिल ही करता है. वही कर सकता है. वही जिस को चाहे माने जिस को चाहे न माने. ईश्वर तक पहुँचने के लिये कौन उसे सच्ची राह दिखा सकता है और कौन उसे बहका कर शैतान के पंजे में फँसा सकता है, इस का फ़ैसला आख़ीर में हर आदमी, हर छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा आदमी, अपने लिए .खुद ही कर सकता है. किसी एक आदमी में बहुत अधिक श्रद्धा रखने से जो धोका होता है

और मुसीबतें आती हैं वही आदमी की उस सोई हुई अक़्लेकुल को जगाती हैं जिसके जागने के बाद वह उपनिषदों की इस सचाई को पूरी तरह समझ जाता है—

"जो कोई अपने सिवा किसी दूसरे को, वह दूसरा चाहे ब्राह्मण हो चाहे क्षत्री, चाहे दुनिया हो, चाहे देवता, चाहे दूसरे प्राणी हों, किसी पर भी आँख बन्द कर के भरोसा करता है, उसे वह दूसरा कभी न कभी धोका ज़रूर देगा, उसके साथ दग़ा करेगा, जब तक कि वह भरोसा करने वाला यह न समझ ले कि यह सब उसी के अन्दर हैं, उसी का रूप हैं और वह .ख़ुद ही यह सब कुछ है."

धोका देने वाले की ज़मीर (आत्मा) भी आख़िर किसी न किसी दिन जागती है. उसे भी पछतावा होता है. इस तरह समय पाकर उसमें भी वही नम्रता आती है और अपने गुनाह का प्रायश्चित्त (क़फ़्फ़ारा) करके वह भी पाक होता है.

अल्लाह की यह क़ुदरत बड़ी निष्ठुर लेकिन बड़ी सुन्दर और सच्ची है. .श्रद्धा, विश्वास, प्रेम कितने सुन्दर हैं. धोका, दग़ा, बेगुनाहों का क़त्ल कितने निष्ठुर हैं. फिर भी क़ुरान में लिखा है—

"हम अल्लाह से आए हैं और दरजे दरजे, मेहनत और तकलीफ़ों के साथ अल्लाह ही के पास लौट के जायँगे."

गीता में लिखा है—

"अनेक जन्मों में धीरे धीरे सिद्धि हासिल करता हुआ आदमी परम गति को प्राप्त होता है."

आत्मा के जागने, खुलने और .ख़ुद अपने रूप को पहचानने का यही रास्ता है.

आदमी पहले अपने घर के अन्दर प्रेम और दूसरों के लिए त्याग (ईसार) का सबक़ सीखता है. घर उसके लिए शुरू का मदरसा होता है. फिर बढ़ते बढ़ते वह किसी गुरु, पीर, पैग़म्बर, नबी, रसूल, बरज़ख़ या अवतार, इनसाने कामिल या इष्ट देव

में अक़ीदत और उससे प्रेम पैदा करता है. यह सब अल्लाह के मज़ाहिरे हैं. इनके ज़रिये आदमी ईश्वर अल्लाह तक पहुँचने की कोशिश करता है. यह अल्लाह वाले यानी ईश्वर भक्त सचमुच अल्लाह के बहुत पास होते हैं, चाहे वह किसी भी मज़हब के क्यों न हों. सूफ़ी ने कहा है—

"ख़ासाने .खुदा .खुदा न बाशन्द
लेकिन ज़ .खुदा जुदा न बाशन्द."

यानी—.खुदा के ख़ास भक्त .खुदा नहीं होते लेकिन वह .खुदा से जुदा भी नहीं होते.

भागवत में कहा गया है—

"दासानामनुदासोऽहम्."

यानी—ईश्वर कहता है कि मैं अपने सेवकों का सेवक हूँ.

इंजील में हज़रत ईसा ने कहा है—

"जो कोई मुझ पर विश्वास करता है वह वह सब काम कर सकेगा जो मैं करता हूँ. वह उनसे भी बड़े काम कर सकेगा क्योंकि मैं पिता परमेश्वर के पास जा रहा हूँ. मेरे नाम पर तुम जो कुछ माँगोगे वह मैं दूँगा. ताकि मेरा पिता परमेश्वर अपने पुत्र के अन्दर जाग उठे. पिता की जय हो! मेरी यही इच्छा है कि तुम सब एक दूसरे के साथ वैसा ही प्रेम करो जैसा मैं तुम्हारे साथ करता हूँ. इससे बढ़ कर प्रेम कोई आदमी नहीं कर सकता कि अपने प्यारों के लिए जान दे दे. तुम मेरे प्यारे हो. मैं तुम्हें अपने सेवक नहीं कहता, क्योंकि सेवक नहीं जानता कि उसका मालिक क्या करता है. मैं तुम्हें अपने प्यारे कह रहा हूँ."

जब तक कोई रूह अपनी छोटी .खुदी अपने इस आपे, इस जिस्म से ऊपर नहीं उठ सकती और अपनी इस दुनियवी ज़िन्दगी को बनाए रखने के लिये बेचैन रहती है तब तक उसे किसी न किसी अपने से बड़ी और पाक रूह के साथ अपने को जोड़े रखना ज़रूरी होता है. ठीक उसी तरह जिस तरह बच्चे जब तक बालिग़ नहीं हो जाते तब तक माँ बाप की

उँगली पकड़े रहना और उनका सहारा लिये रहना ज़रूरी समझते हैं. उनके लिये यह ज़रूरी भी होता है. उन्हें दूसरों की यह मदद, प्रेम, भक्ति, सेवा और पूरे दिल से दुआ, प्रार्थना करके हासिल करनी पड़ती है. इसके बाद जब उस अव्यक्त ईश्वर यानी उस लामकां और लाज़मां, निरंकार की थोड़ी बहुत झलक उन्हें अपने अन्दर मिल जाती है, और वह भी उस मदद की बदौलत मिलती है, तब अपने गुरु या पीर, पैग़म्बर या अवतार के लिये भक्ति (अक़ीदत) उनके अन्दर और भी गहरी हो जाती है. इस तरह जागी हुई रूह शुक्रगुज़ारी से भर जाती है. ठीक उसी तरह जिस तरह एक नेक लड़का या लड़की जिसे माँ बाप ने प्रेम से पाला पोसा हो बालिग़ होकर अपने माँ बाप की और भी ज़ियादा इज्ज़त करने लगता है और शुक्रगुज़ारी से भर जाता है. तब वह उनकी पूरी क़दर कर सकता है. दुनिया की सब सच्ची आत्माओं को मज़हब से यह तसल्ली मिलती है. यहाँ दिल और दिमाग़ का कोई फ़र्क़ नहीं रह जाता. इस मुक़ाम पर पहुँच कर ही वह .ख़ुशी वह आनन्द हासिल होता है जो रूह की आगे की तरक़्क़ी का रास्ता साफ़ करता है.

अगर मुख़तलिफ़ मज़हबों के मानने वाले एक दूसरे से झगड़ते हैं—एक कहता है कि केवल कृष्ण जी का ही कहा करना चाहिये और केवल उन्हीं की इज्ज़त करनी चाहिये, दूसरा कहता है कि केवल ज़रतुश्त ही के पीछे चलना चाहिये, और कोई तीसरा, चौथा, पाँचवाँ, छठा या सातवाँ कहता है कि सिर्फ़ हज़रत मूसा या हज़रत बुद्ध या हज़रत जिन या हज़रत ईसा या हज़रत मोहम्मद का ही सहारा लेकर आदमी बच सकता है, तब उनके ऐसा समझने और कहने की वजह यह होती है कि वह सच्चे आशिक़, सच्चे भक्त (अल्लाह वाले) नहीं होते, बल्कि जाने या अनजाने अपनी .ख़ुदी में डूबे हुए और बहके हुए होते हैं. वह जिस महापुरुष या इनसाने कामिल

का नाम लेते हैं और जिसके नाम लेवा होने का दावा करते हैं उसकी वह सच्ची इज्ज़त नहीं करते और न उसे समझते ही हैं. वह अपनी छोटी सी .खुदी में फँसे होते हैं और वही अपनी .खुदी और तंगनज़री सारी दुनिया पर लादना चाहते हैं. अपनी रास्ती और अपने बड़प्पन का उन्हें एक झूठा ख़याल हो जाता है जिसे वह अनजाने अपने मज़हबी रहनुमा की आड़ में पालना और पोसना चाहते हैं. अपने छोटेपन से वह अपने गुरु, पैग़म्बर, तीर्थंकर या अवतार की सच्ची बड़ाई और उसकी सच्ची महानता को भी कीचड़ में घसीटते हैं. पर धीरे धीरे इस तरह की सब रूहों को भी समझ आएगी. वक़्त आने पर वह भी जागेंगे, समझेंगे और अल्लाह की सच्ची राह पर चलेंगे.

दूसरी तरफ़ इन्हीं महापुरुषों, तीर्थंकरों, पैग़म्बरों और अवतारों के नाम पर उन्हीं के लिये और उनकी मिसाल से सबक लेकर दुनिया में बार बार और जगह जगह ऐसे मर्द, औरत और बच्चे तक हुए हैं और होते रहते हैं जो अपने दुनिया के सब भाई इनसानों और दूसरे प्राणियों के लिये हद दरजे की तकलीफों और मौत तक का प्याला पीकर आत्मत्याग (.क़ुरबानी) की बड़ी से बड़ी ऊँचाइयों तक पहुँच चुके हैं और पहुँचते रहते हैं. यही लोग सच्चे ईमान वाले होते हैं. यही धर्मशूर और शहीद कहलाते हैं. इस तरह के शूरों, शहीदों और सच्चे आशिक़ों को देखकर फरिश्ते भी शरमा जाते हैं.

.क़ुदरती तौर पर मैं .खुद अपने माँ बाप से जितना प्यार करता हूं और उनकी जितनी इज्ज़त करता हूँ उतनी दूसरों के माँ बाप की नहीं करता. इसका यह मतलब नहीं कि मैं दूसरों से भी यह चाहू और ज़िद करूँ कि वह भी मेरे माँ बाप की उतनी ही इज्ज़त करें जितनी मैं करता हूं और अपने माँ बाप से मेरे माँ बाप की ज़ियादा इज्ज़त करें. मैं अगर समझ से काम लेता हूं और मेरा दिमाग़ अगर ठीक है तो मुझे .खुद

अपने पड़ौसी से यह कहना चाहिये कि—"जिस तरह मैं अपने माँ बाप की सबसे ज़ियादा इज्ज़त करता हूँ उसी तरह तुम्हें अपने माँ बाप की सब से ज़ियादा इज्ज़त करनी चाहिये. लेकिन चूँकि मैं तुम्हें अपना भाई समझता हूं और तुमसे प्यार करता हूँ और तुम्हारे माँ बाप को अपने माँ बाप के बहन और भाई समझता हूँ इसलिये अपने माँ बाप की इज्ज़त से उतर कर मैं तुम्हारे माँ बाप की इज्ज़त करूँगा. इसी तरह मेरे माँ बाप तुम्हारे चचा और चची हैं. मेरे माँ बाप ने मेरे लिये जो कुछ किया है वही सब कुछ तुम्हारे माँ बाप ने तुम्हारे लिये किया है. उन्होंने तुम्हारी गन्दगी और बुराइयों को धोया है, तुम्हें दूध पिलाया है, खिला खिला कर पाला है, रातों और दिनों तुम्हारी देख रेख की है, तुम्हें ख़तरों, बीमारियों और गुनाहों से बचाया है, और बड़ी मेहनत से तुम्हें वही रूहानी मार्फ़त, वही आत्मज्ञान सिखाया है जो मेरे माँ बाप ने मुझे सिखाया है. उन्होंने पाल पोस कर तुम्हें बड़ा किया है और रूहानी मानी में बालिग़ बनाया है, यहाँ तक कि जिस तरह उन्होंने तुम्हारी ख़बरगीरी की है और तुम्हें मदद दी है उसी तरह अब तुम .ख़ुद अपने पैरों पर खड़े होकर दूसरों की ख़बरगीरी कर सकते हो और दूसरों को मदद दे सकते हो. इसलिये जिस तरह मेरा पहला फ़र्ज़ मेरे माँ बाप की तरफ़ है उसी तरह तुम्हारा पहला फ़र्ज़ तुम्हारे माँ बाप की तरफ़ है."

दुनिया के जितने बड़े बड़े राह दिखाने वाले हुए हैं उन सब ने भी हमें यही हिदायत की है. वह हमें यही हुकुम दे गए हैं कि हम उनकी तरफ़ नहीं बल्कि उनकी तालीम की तरफ़ ध्यान दें.

हज़रत अली ने कहा है —

"यह मत देखो कि कौन कहता है, देखो यह कि क्या कहता है."

मोहम्मद साहब की एक हदीस है —

"सब अच्छी बातों को जमा करते जाओ और सब बुरी बातों को फेंकते रहो चाहे वह कहीं से आई हों."

योगवासिष्ठ में लिखा है—

"जो बात दलील से ठीक मालूम हो उसे फ़ौरन मान लेना चाहिये चाहे वह किसी बच्चे ही के मुँह से क्यों न निकली हो."

मनुस्मृति में लिखा है—

"सच्ची बात दुशमन की भी मान लेनी चाहिये और ठीक बात बच्चे की भी सुननी चाहिये."

संस्कृत की एक कहावत है—

"यह दुनिया ही दुनिया की गुरु है."

मोहम्मद साहब की एक हदीस है—

"ज़माना सबसे बड़ा सिखाने वाला है."

अगर अलग अलग मज़हबों के मानने वाले यानी उन सब महापुरुषों के नाम लेवा जिन्होंने, अपने अपने ज़माने, अपने अपने देश और अपनी अपनी ज़बान में, उसी एक सत्य सनातन धर्म, उसी एक इसलामे हक़ीक़ी का बार बार ऐलान किया है, इस तरह सीधे, सच्चे, प्रेमी, दिल के साफ और थोड़े से समझदार बन जावें तो वह अपने घरों को और सारी दुनिया के सब घरों को प्यार और ख़ुशी से भर देंगे. सब एक दूसरे की ख़िदमत करेंगे और धर्म मज़हब की बरकत सब पर बरसने लगेगी. बजाय इसके सदियों से उन्होंने अपने घरों को और दूसरों के घरों को नफरतों और लड़ाइयों, खूंरेज़ियों और मुसीबतों से भर रखा है, जिसकी बदौलत धर्म मज़हब आज दुनिया के लिये सब से बड़ी बरकत होने की जगह सब से बड़ी लानत बना हुआ है.

सब से अधिक दुख की बात यह है कि यह सब झगड़े केवल शब्दों और नामों पर होते हैं, केवल ऊपर के रीत रिवाजों और ग़ैर ज़रूरी और छोटी छोटी बातों पर होते

हैं. हम जोश, गरमा गरमी,, जल्दी और घबराहट में एक दूसरे को समझ नहीं पाते. ज़रा से ठंडे दिल और शांति से काम लें तो हम एक दूसरे को आसानी से समझ सकते हैं. तब हम दूसरे धर्मों के क़ायम करने वालों और महापुरुषों से नफ़रत करने के बजाय उनकी इज्ज़त करने लगेंगे. बाप और चचा का फ़र्क़ फिर भी रहे तो रहे, पर फिर हमें कोई दुशमन या ग़ैर दिखाई न देगा. इस तरह हम सब का सुख बढ़ेगा. हम सब एक दूसरे के दुख दर्द के साथी होंगे, ख़ास ख़ास मौक़ों पर, हर धर्म के त्योहारों पर, एक दूसरे को बधाई देंगे. आज हम दंगे, लूट मार, ख़ूंरेज़ी और बरबादी करके एक दूसरे के त्योहारों और ख़ुद अपने त्योहारों और अपनी ज़िन्दगी के सुख को मिटा रहे हैं. ज़रा सी समझ और ज़रा सी मोहब्बत की ज़रूरत है और हम इस तसवीर को उलट सकते हैं.

यूरोप के एक ईसाई पादरी डाक्टर वेस्टकाट ने बहुत अच्छा कहा है कि—

"सच्ची और अमली हमदरदी के साथ किसी दूसरे आदमी या दूसरी जमाअत या दूसरी तरह के विचारों को ठीक ठीक गहराई में जाकर समझ सकना बहुत मुशकिल है. इस के लिए बड़ी कोशिश करनी पड़ती है. हमें अपने बड़प्पन के घमण्ड में दूसरे पर दया करके नहीं बल्कि श्रद्धा और शुक्रगुज़ारी के साथ यह महसूस करना चाहिये कि दुनिया में जगह जगह वह सामान जमा है जो हम दुनिया को नहीं दे सकते थे, हमें यह मानना पड़ता है कि अलग अलग गिरोहों के ख़ास हालात या उनके ख़ास गुणों या उनकी ज़बरदस्त कोशिशों या ख़ास तरह की शिक्षा दीक्षा और तालीम व तरबियत की वजह से दूसरे लोग वह वह चीज़ें देख सके जो हम नहीं देख सके."

बात बहुत ही अच्छी और सच्ची है. अगर दुनिया के लोगों की शुरू से तालीम ठीक हो तो इसके लिये बहुत बड़ी कोशिश की ज़रूरत नहीं होनी चाहिये. दूसरों की अच्छी बातों

को समझ सकना और उनकी क़दर करना हमारे सब के लिये क़ुदरती बात होनी चाहिये. हमारी तालीम ऐसी होनी चाहिये जिससे आदमी अपने को दूसरों की आँखों से देख सके. अगर बचपन ही से हम सबको यह सिखाया जाय कि हम जिस तरह अपने को ख़ुद देखते हैं उसी तरह दूसरों की आँखों से भी अपने को देख सकें तो हम बहुत ज़ियादा देख सकें और हमारा जीवन उतना ही अधिक मालामाल हो जाय. अपने तजरबे और अपनी नेकियां और अपनी समझ जिस तरह हमारी हैं उसी तरह दूसरों के तजरबे, दूसरों की नेकियाँ और दूसरों की समझ भी हमारे जीवन का एक हिस्सा हो जायँ.

जब तक रूह इस ज़िस्म के अन्दर है तब तक 'मैं' और 'तू' बिलकुल मिट तो नहीं सकते, पर जिस किसी ने सब के अन्दर अपने को और अपने अन्दर सबको देख लिया है उसके लिये फिर अपना और पराया, 'मैं' और 'तू' बहुत ही कम रह जाते हैं. ऐसे आदमी के लिये फिर बहुवचन में यानी जमा के सीग़े में 'मज़ाहिब' मिट जाते हैं. उसके लिये फिर केवल एक वचन में यानी वाहिद के सीग़े में 'एक मज़हब' या 'धर्म' रह जाता है.

सूफ़ी कहता है—

"गुफ़्तोगू ए कुफ़्रोदीं आख़िर बयक जा मी कशद
ख़्वाब यक ख़्वाब अस्त अम्मा मुख़्तलिफ़ ताबीरहा."

यानी—"कुफ़्र और दीन दोनों का चरचा आख़िर आदमी को एक ही जगह जा पहुँचाता है. सपना एक सपना है सिर्फ़ उसके मानी अलग अलग तरह किये जाते हैं."

एक दूसरा सूफ़ी कहता है—
"हमा कस तालिबे यार अन्द चे हुशयारो चे मस्त
हमा जा ख़ानए इश्क़ अस्त चे मसजिद चे कनिश्त."

यानी—"सब लोग एक अल्लाह के खोजी हैं, क्या होशयार

और क्या मस्त, सब जगह प्रेम ही का घर है क्या मसजिद और क्या गिरजा."

गीता में लिखा है—

"येप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः,
तेपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्.
ये यथा माम् प्रपद्यन्ते ताँस्तथैव भजाम्यहम्,
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः."

यानी—"जो लोग दूसरे देवताओं के भक्त हैं और श्रद्धा के साथ उन देवताओं की पूजा करते हैं वह भी मेरी ही पूजा करते हैं. सिर्फ़ उनके तरीक़े में कुछ फ़र्क़ है. ऐ अर्जुन! जो जिस तरीक़े से भी और जिस राह से भी मुझ तक पहुँचना चाहते हैं मैं उस राह से ही उन्हें मिलता हूँ. लोग सब तरफ़ से चलकर आख़िर मुझ तक ही पहुँचते हैं."

स्वामी शंकराचार्य ने लिखा है—

"वेदों के रीत रिवाजों में आदमियों के अलग अलग विचारों, उनकी इच्छाओं और उनके इरादों के पूरा होने के ढंग बताए गए हैं. समझदार आदमी को चाहिये कि इन सब रीत रिवाजों से ऊपर उठ कर एक भगवान में अपने दिल को लगाए. जो आदमी इस तरह ऊपर उठ जाता है उसके लिए फिर न किसी रीत रिवाज की ज़रूरत रहती है और न उसे कोई यह कह सकता है कि यह करो और वह न करो. उसके लिए न कोई जात पाँत, न वर्ण, न आश्रम, न उसके लिए धारणा, न ध्यान, न योग, न सुख, न दुख, न बन्धन, न मोक्ष, उसके लिए इनमें से कोई चीज़ नहीं रह जाती. वह फिर अपनी आत्मा के अन्दर पूरी शान्ति अनुभव करके सब में अपने को देखने लगता है, सब को अपना पाता है, और महसूस करता है कि मैं ही शिव यानी परमात्मा हूँ."

मशहूर सूफ़ी संत मुईनुद्दीन चिश्ती ने कहा है—

"मैंने अपने प्रीतम अल्लाह से कहा कि तू कब तक अपने

आप को मुझ से परदे में छिपाए रखेगा, अब वक्त आ गया है कि तू इस परदे से बाहर मुझे अपना दर्शन दे. प्रीतम ने जवाब दिया मेरे दीदार पर कोई परदा नहीं है. अगर तुझे परदा दिखाई देता है तो वह परदा .खुद तू ही है. जब तक तू है तब तक ही तू मुझसे हजारों परदों में छिपा हुआ है. तेरी .खुदी ही मेरे तेरे बीच का परदा है."

एक और फ़क़ीर ने कहा है—

"न कोई परदा है उसके दर पै न रूए रोशन नक़ाब में है,
तू आप अपनी .खुदी से ग़ाफिल हिजाब में है हिजाब में है."

शम्स तबरेज़ ने लिखा है—

"चे तदबीर ऐ मुसलमानां ! कि मन .खुद रा नमी दानम्
न तरसा न यहूदी अम न गब्रम न मुसलमानम्."

यानी—"ऐ मुसलमानो ! मैं क्या करूँ. मैं .खुद अपने को नहीं जानता. मैं न ईसाई हूं, न यहूदी, न पारसी हूं, न मुसलमान."

एक और सूफ़ी कहता है—

"सूफ़ी की .खुदी जब मिट गई तो फिर उसका कोई मज़हब नहीं रह जाता. जो अपने यार तक पहुँच गया उसे फिर किसी दूसरी चीज़ से मतलब नहीं रहता. रब तक पहुँचा हुआ रब हो जाता है, जो रब ही रब है उसके लिये कोई अलग रब नहीं रहता. जहाँ सूरज ही सूरज है वहाँ रात नहीं रहती."

एक और सूफ़ी ने कहा है—

"शौक़ है जब तक पसे परदा जमाले यार है
हट गया परदा तो फिर दीदार ही दीदार है."

एक सूफ़ी कहता है—

"ज़माने के राज़ यानी रहस्य को जानने की कोशिश मत कर. सारंगी और शराब की बात कर. इस पहेली को किसी ने आज तक हिकमत यानी दिमाग़ से नहीं हल किया और न यह पहेली इस तरह .खुल सकती है. अज़ल यानी अनन्त के भेदों को न तू जानता है और न मैं, इस पहेली को न तू पढ़ सकता

है और न मैं. मैं और तू की बातचीत ही परदे के इस तरफ़ है, जब यह परदा उठ गया तो न तू है और न मैं."

ऊपर के कलाम में 'सारंगी' और 'शराब' का ज़िक्र आया है. यह वही सारंगी है जिसे हिन्दू योग की किताबों में 'दैवी वीणा' यानी ईश्वर की बीन कहा गया है. जो राग इस सारंगी पर बजता है और सुनाई देता है उसे योग की किताबों में 'अनाहत नाद' कहा गया है. यह आवाज़ उस राह पर चलने वाले को अपने अन्दर सुनाई देती है. यह एक अजीब ख़ामोशी की आवाज़ है. बाहर से आँख, नाक, कान बन्द किये जावें तब यह अन्दर सुनने में आती है.

जिस शराब का सूफ़ी ने ज़िक्र किया है उसे योग की किताबों में 'अमर वारुणी' यानी इश्क़े इलाही की शराब कहा गया है. जब अनाहत नाद सुनाई देने लगता है तब ही आदमी के अन्दर यह अमर वारुणी तैयार होनी शुरू होती है. जिन सूफ़ियों, सन्तों, योगियों, फ़क़ीरों और सालिकों ने इस रास्ते को तय किया है उन्होंने इसका पूरा पूरा हाल बताया है.

इस मज़मून को ख़त्म करते हुए मशहूर सूफ़ी संत और सच्चे ईश्वर भक्त सरमद की कुछ वाणी देना ठीक मालूम होता है. सरमद उस मनसूर का रूहानी वारिस था जिसे सन् ९२० ई० में बग़दाद के ख़लीफ़ा ने इसलिये सूली पर चढ़वा दिया था चूँकि मनसूर गली गली में "अनलहक़ ! अनलहक़ !" कहता फिरता था. अनलहक़ के मानी हैं 'अहम् ब्रह्म'. अल्लाह की खोज में पच्छिम के एशियाई देशों में घूमने के बाद सरमद दिल्ली आया. उन दिनों औरंगज़ेब दिल्ली की गद्दी पर था. सरमद दिल्ली में एक सूफ़ी वेदान्ती की हैसियत से रहता था. इश्क़े इलाही के नशे में चूर वह दिल्ली की गलियों में "अनलहक़ ! अनलहक़ !" कहता हुआ घूमता था. उसे अपने तन बदन का होश न था. बदन पर अकसर कोई कपड़ा न होता था. औरंगज़ेब ने उसको फाँसी का हुकुम दिया. सरमद शहीद हो

गया. आख़ीर वक़्त तक उसके चेहरे पर मुसकराहट थी और उन लोगों के लिये दया थी जो "बेचारे यह नहीं जानते कि वह क्या कर रहे हैं." वह मौत को जीत चुका था. मरते वक़्त सरमद के मुँह से निकला—

"अरसा बूद आवाज़ए मनसूर कोहन शुद
मन जल्वा देहम बारे दिगर दारो रसन रा."

यानी—"बहुत दिन हो गए जब मनसूर ने अपनी आवाज़ दुनिया को सुनाई थी. उसी आवाज़ को लेकर अब मैं फिर से फाँसी की लकड़ी और रस्सी के टुकड़े को रौनक़ दे रहा हूं."

सरमद ईश्वर के सच्चे भक्तों और इनसानी क़ौम के सच्चे प्रेमियों में से था. उसके कुछ मशहूर शेरों का तरजुमा यह है—

"सरमद ने कभी किसी का गिला नहीं किया. अच्छा किया कि नहीं किया. सरमद के लबों से कभी कोई बेहूदा बात नहीं निकली. अच्छा हुआ कि नहीं निकली. सरमद ने आख़ीर वक़्त तक आसमान की भी मिन्नत ख़ुशामद नहीं की. जो काम कि अच्छा नहीं था नहीं किया. अच्छा किया कि नहीं किया. सरमद इश्क़ के कूचे में बदनाम हुआ! यहूदी मज़हब से वह इसलाम की तरफ गया. मालूम नहीं कब ख़ुदा और मोहम्मद से लक्ष्मण और राम की तरफ गया! ऐ सरमद! इश्क़ का ग़म दुनिया की हविस रखने वालों को नहीं मिलता! परवाने के दिल का सोज़ मक्खी को नहीं मिलता! यार के पास पहुँचने तक एक उम्र लग गई! यह हमेशा रहनेवाली दौलत हर किसी को नहीं मिलती!"

२९

मानव जीवन में प्रार्थना (दुआ) का स्थान

आदमी की चेतना (उसके होश) की तीन हालतें होती हैं. एक हालत भावना (जज़बे) की हालत है, इच्छा या ख़्वाहिश, सुख या दुख का महसूस करना, क्रोध, दया, प्रेम, नफ़रत, जोश, डर सब इसी हालत के अलग अलग रूप हैं. दूसरी हालत कोई इरादा करने या काम करने की हालत है. तीसरी हालत सोचने या विचार करने की हालत होती है. अंग्रेज़ी में इन ही तीनों को 'फ़ीलिंग,' 'विलिंग' और 'थिंकिंग' कहते हैं. संस्कृत में इन्हें इच्छा, क्रिया और ज्ञान भी कह सकते हैं. फ़ारसी में इन्हें ख़्वाहिश, फ़ेल और इल्म कहा जा सकता है. आदमी हर वक़्त जब होश में होता है, इन तीनों में से किसी न किसी एक हालत में ज़रूर होता है. यह हालतें बदलती रहती हैं. कभी कभी इनमें से दो दो हालतें साथ साथ चलती हुई भी मालूम होती हैं. फिर भी हम हमेशा इन्हें एक दूसरे से अलग करके समझ सकते हैं. हम किसी चीज़ को पाने की या अपने से अलग करने की इच्छा करते हैं. कभी इसके लिये इरादा, हरकत या काम करते हैं. कभी कुछ देखते, सुनते या समझते हैं. हमारे हर काम और हर हरकत से हमें नई जानकारी मिलती है. उससे फिर नई ख़्वाहिशें पैदा होती हैं. ख़्वाहिशों से फिर नये इरादे और नई हरकतें होती हैं. यह चक्कर इसी तरह हमेशा चलता रहता है.

बच्चा जब पैदा होता है तो उसमें पहले इच्छा का ज़ोर होता है. वह दूध चाहता है, खाना माँगता है. जब ज़रा बड़ा होता है तो ख़ूब चलता, फिरता, कूदता, फाँदता दिखाई

देता है. यहाँ तक कि कभी कभी उसकी हरकतें बेमानी मालूम होती हैं. फिर धीरे धीरे उसमें जानकारी और समझ पैदा होती है. वह इल्म जमा करता है. धीरे धीरे वह अपनी जानकारी को एक तरतीब देता है, एक रूप देता है. उससे उसकी इच्छाएँ और बढ़ती हैं. उसमें बड़ी बड़ी इच्छाएँ पैदा होती हैं, उन्हें पूरा करने के लिये फिर वह और बड़े बड़े इरादे और बड़े बड़े काम करता है. यों वह दिमाग़ी तौर पर बड़ा या बालिग़ होता है.

ठीक यही तीनों हालतें एक तरह से मज़हब में होती हैं. सबसे पहली हालत में जाने या अनजाने आदमी अपनी आत्मा के लिये कुछ ख़ूराक चाहता है. इस दुनिया में उसे जो कुछ दिखता या मिलता है उससे वह कुछ और ज़ियादा चाहता है, कुछ तसल्ली चाहता है. फिर वह इसके लिये कुछ जतन या कोशिश करता है. हिन्दू धर्म में इस हालत को कर्म मार्ग और इसलाम में 'शरीअत' कहते हैं. यह रसम परस्ती का ज़माना होता है. उसके बाद आदमी को दूसरी दुनिया का और ईश्वर अल्लाह का कुछ कुछ अधिक स्पष्ट विचार होने लगता है. उसमें ईश्वर को जानने या उस से मिलने की अधिक ज़ोर की इच्छा पैदा होती है. यह मुक़ाम भक्ति मार्ग यानी 'तरीक़त' का मुक़ाम है. इसमें ख़ास तरह की प्यास, जोश, लगन, और जज़बात ज़ोर करते हैं. इसी में आदमी के दिल के अन्दर से दुआएँ निकलती हैं. इस हालत से निकल कर तीसरी हालत ध्यान, मनन, ग़ौर व ख़ौज़ की हालत है. उसमें तलाश और खोज का माद्दा बढ़ता है. यह मुक़ाम ज्ञान मार्ग यानी 'हक़ीक़त' का मुक़ाम है, जिस से और आगे चल कर मार्फ़त का मुक़ाम आता है. इस हालत पर पहुँच कर आदमी में सब की ख़िदमत और सब के भले की इच्छा जागती है. यह केवल एक बच्चे की सी भोली भाली नेकी की हालत नहीं होती बल्कि अपने फ़र्ज़, अपने कर्तव्य की समझ बूझ के साथ

एक ऊँचे दरजे की ख़्वाहिश, सब की बेहतरी और सबके भले की ख़्वाहिश की हालत होती है. यह तीनों हालतें अकसर एक दूसरे से मिलती जुलती और आदमी के अन्दर एक तरह की त्रिवेनी भी बनाती रहती हैं. यह हालत तब होती है जब आदमी सब के अन्दर एक ही जान और सबके अन्दर अपने को, अपने अन्दर सब को और सब के अन्दर ख़ुदा को महसूस करने लगता है. उसी वक़्त आदमी महसूस करता है कि—

शक्ले इनसां में ख़ुदा था मुझे मालूम न था,
चाँद बादल में छिपा था मुझे मालूम न था.

इन तीनों हालतों की तरफ़ इशारा करते हुए ही मौलाना रूम ने कहा है—

"पानी मत ढूँढ़, अपने अन्दर प्यास पैदा कर तो पानी अपने आप तेरे ऊपर से और पीछे से उबलने लगेगा."

भागवत में ईश्वर ने कहा है—

"लोगों के भले के लिए मैंने तीन तरह का योग बताया है—कर्म योग, भक्ति योग और ज्ञान योग. इन तीनों से बाहर और कोई रास्ता नहीं है. जिनकी आत्माएँ अभी बच्चे की हालत में हैं, जिनमें दुनियावी चीज़ों की इच्छा है, उनके लिए कर्मयोग यानी रीत रिवाज और कर्मकांड का रास्ता है. जो दुनिया को इतने चिपटे हुए नहीं हैं लेकिन अभी अघाए भी नहीं हैं, जिन्होंने मेरी बाबत कुछ सुन लिया है और जिनके दिल उधर को चल पड़े हैं उनके लिये भक्ति योग यानी इश्क़ का रास्ता है. जो इस से आगे बढ़कर सुकून हासिल कर चुके हैं और इस माया से ऊपर उठ चुके हैं और दुनिया के फ़र्ज़ों को केवल फ़र्ज़ समझ कर पूरा करते हैं उनके लिए ज्ञान योग का रास्ता है."

जो रूह इन तीनों मंज़िलों को तय कर लेती है उसके लिए यह तीनों रास्ते आगे चलकर एक दूसरे में मिल जाते हैं. शुरू

में यह अलग अलग रहते हैं. शुरू की हालत में ऊपर के रीत रिवाज अधिक चमकते हैं. अन्दर की इच्छा और अन्दर की जानकारी दबी रहती है. यह इच्छा और जानकारी अगर ऊपर दिखाई देती है तो भी रस्मों और रीत रिवाजों में ही दिखाई देती है. इसी से धर्म मज़हब के बारे में तरह तरह के मतभेद और झगड़े खड़े होते हैं, उसी तरह जिस तरह नासमझ बच्चे छोटी छोटी ऊपरी बातों में लड़ते झगड़ते रहते हैं.

अलग अलग धर्मों में जितने झगड़े दिखाई देते हैं वह अधिकतर रीत रिवाज यानी 'शरीयत' या कर्मकांड में ही होते हैं. लेकिन यहाँ पर भी यह फ़र्क़ सिर्फ़ ऊपर का फ़र्क़ होता है. इनमें भी सतह के नीचे यानी दिलों के अन्दर बहुत बड़ी एकता और समानता होती है. मुल्क मुल्क और जगह जगह के आदमियों की पोशाकें अलग अलग दिखाई देती है. लेकिन चूँकि कपड़ों के अन्दर का आदमी एक ही सी बनावट का होता है इसलिये सब पोशाकों को उसी बनावट के मुताबिक़ अपने को ढालना पड़ता है.

वेदों की संध्या उपासना, ईसाइयों की दुआ और मुसलमानों की नमाज़ तीनों हक़ीक़त में एक हैं. तीनों के ख़ास हिस्से भी एक दूसरे से इतने मिलते हुए हैं कि एक दूसरे का अनुवाद मालूम होते हैं. सब उसी एक सर्व शक्तिमान (क़ादिरे मुतलक़) से दुआ माँगते हैं जो सारी दुनिया और हमारी सब जिस्मानी, दिमाग़ी और रूहानी शक्तियों का सरचश्मा है. सब यही दुआ माँगते हैं कि हमें ठीक ठीक अक़्ल और ठीक ठीक इरादा, अन्दर की रोशनी और हिदायत अता कर ताकि हम बुराइयों से बच सकें और अपने फ़र्ज़ ठीक ठीक पूरे कर सकें. ज़ाहिर है कि अगर आदमी की बुद्धि यानी अक़्ल ठीक और नेक है और अगर इरादा यानी संकल्प शक्ति मज़बूत है और बुद्धि के क़ाबू में है तो आदमी के सब काम ठीक होंगे.

यह 'दुआ' या 'प्रार्थना' क्या चीज़ है ? असलियत में प्रार्थना किसी बाहर की शक्ति से नहीं की जाती, बल्कि अपने अन्दर के अल्लाह से की जाती है—उसी अल्लाह ईश्वर से जो सबके घट घट में मौजूद है, जो सब जगह है, सब कुछ कर सकता है, और सब जानता है. पुराने लोग उसे अव्यक्त (बातिन) कहते थे. नई साइन्स उसे 'टोटल अनकानशस' (Total Unconscious) यानी 'हमारे अपने वजूद से बालातर' कहती है. दुआ या प्रार्थना का अधिकतर यह मतलब होता है कि दुआ करने वाला अपनी छोटी .खुदी से ऊपर उठकर अपने हक़ीक़ी वजूद से बाख़बर हो जाए. जो साइन्सदां या कोई बड़ी ईजाद करने वाला किसी सवाल पर अपना पूरा ध्यान जमाता है वह भी असल में 'दुआ' करता है, 'योग' करता है, कोशिश करता है कि वह सब कुछ जानने वाली शक्ति उस साइन्सदां या ईजाद करने वाले के अन्दर अपनी जानकारी का वह अंश दे दे जिसकी उसे आवश्यकता है.

जो रूहें अभी बचपन की हालत में हैं वह बाहर के .खुदा से दुआ माँगती हैं. ज्यों ज्यों समझ आती जाती है वह अपने अन्दर के .खुदा से दुआ माँगने लगती हैं. जैसे बच्चे हर चीज़ माँ बाप या बड़ों से माँगते हैं. जब बड़े हो जाते हैं तो अपने से माँगने लगते हैं. तब हम दूसरों को तकलीफ़ देना पसन्द नहीं करते और जहाँ तक हो सकता है अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करते हैं. ज़ाहिर है यह बात हमेशा मुमकिन नहीं होती. सबको कभी कभी अपने से बड़ों से मदद लेनी पड़ती ही है. अन्त में जा कर फिर सब .खुद करना पड़ता है. माँ बाप खाना दे सकते हैं, गुरु या पीर जानकारी करा सकता है. पर खाना, चबाना, हज़म करना, समझना, जानना सब हमें .खुद ही करना पड़ता है.

सब प्रार्थनाओं के पीछे एक लगातार प्रार्थना रहती है जो सुनाई नहीं देती. यह साँस की तरह बराबर चलती रहती है.

हिन्दू धर्म में इसी को 'अजपा गायत्री' कहते हैं. यह न हो तो कोई जी नहीं सकता. शेख़ सादी ने कहा है—

"हर साँस जो अन्दर जाता है ज़िन्दगी को शक्ति देता है. हर साँस जो बाहर आता है ख़ून को पाक साफ़ करता है. दोनों तरह के साँस हमारे लिये दो नैमतें हैं. हमें हर नैमत पर शुक्र करना चाहिये."

जो दुआ या प्रार्थना दिखावे के लिये की जाय वह केवल बेकार ही नहीं हानिकर भी है. आमतौर पर जो दुआ, पूजा या नमाज़ अकेले में बैठ कर की जावे वही सच्ची और अच्छी होती है. बड़ी बड़ी मुसीबतों में और ख़ास मौक़ों पर मिल कर दुआ करने की भी ज़रूरत होती है. जमाअत की नमाज़ अगर ख़ुलूस और सचाई के साथ की जाय तो उसका भी असर होता है. अकेले बैठ कर पढ़ने का अपना फ़ायदा है और क्लास में सबके साथ मिल कर पढ़ने का अपना फ़ायदा है. यह सब आदमी की अपनी अपनी हालत, अपनी अपनी तबियत और हालात पर निर्भर है.

दुआ या प्रार्थना से आदमी की रूहानी आँख खुलती है. हज़रत ईसा ने कहा है—

"जब तुम दुआ करो तो पाखंडियों की तरह मंदिरों या गलियों में खड़े होकर दुआ न माँगो जहाँ लोग तुम्हें देखें, बल्कि जब कभी दुआ माँगो तो अपने घर के अन्दर दरवाज़ा बन्द करके अकेले में भगवान से दुआ माँगो."

अब हम अलग अलग धर्मों की कुछ ख़ास ख़ास प्रार्थनाएँ नीचे देते हैं.

हिन्दुओं के गायत्री मन्त्र का ठीक ठीक अनुवाद यह है—

"ओ३म्! जागते हुए, सपना देखते हुए और गहरी नींद सोते हुए तीनों हालतों में, ऐ सब के मालिक! तेरी रूहानी जोत (तेरा नूर) हमारी बुद्धि को रोशन करती और राह

दिखाती रहे. हम अपनी अक़्लों को तेरे उस आसमानी नूर के लिये हमेशा .खुला रखते हैं. ओ३म् !"

वेदों की कुछ और प्रार्थनाएँ यह हैं—

"ओ३म् ! ऐ सब से बड़े राह दिखाने वाले ! ऐ नूर ही नूर और जान ही जान ! ऐ सब कुछ जानने वाले ! हमें 'सीधे रास्ते' से कल्याण (बहबूदी) की तरफ़ ले चल ! हमें शक्ति दे कि हम उन बुराइयों से लड़ सकें जो हमारे अन्दर पैदा होती रहती हैं और हमें ग़लत रास्ते पर डालती रहती हैं ! हम तुझ से ही दुआ माँगते हैं और तेरा ही ध्यान करते हैं ! ओ३म् !"

"ओ३म् ! ऐ सबके मालिक, सब पापों को हम से हटा और सब अच्छी बातों और नेकियों की तरफ़ हमें लगा ! ओ३म् !"

"ओ३म् ! ऐ रोशनियों की रोशनी ! मेरा यह मन जो जागते में दूर दूर घूमता रहता है और गहरी नींद में फिर लौट कर अपने में आ जाता है, जो दूर तक जाता है, वह मेरा मन नेक इरादे करने वाला बने."

"मेरा यह मन, मेरी यह बुद्धि, जिसके अन्दर सारा ज्ञान छिपा है, जो जानदार और चेतन है, जिसके अन्दर धीरज है, जो मेरे अन्दर की रोशनी है, जिसके बिना मैं कुछ नहीं, वह मेरा मन नेक इरादे करने वाला बने !"

"मेरा यह मन जिसके अन्दर भूत, भविष्य और वर्तमान (माज़ी, हाल और मुस्तक़बिल) सब हमेशा के लिये जकड़े हुए हैं, जिसके साथ बाक़ी सारे मन ताने बाने की तरह बुने हुए हैं, वह मेरा मन हमेशा नेक इरादे करने वाला हो ! ओ३म् !"

"ओ३म् ! वह जिसने सब को बनाया, जो सबका मालिक है, जो सबका बीज है, और सब जाननेवाला है, जिससे सबकी पैदाइश है, जिससे यह सृष्टि पैदा हुई है और जिसके अन्दर

यह समाई हुई है, वह परम आत्मा हमें हमेशा अच्छी यानी नेक अक़्ल दे ! ओ३म् !"

"हम अपने कानों से अच्छी बातें ही सुनें, अपनी आँखों से अच्छी चीज़ें ही देखें, हमारे हाथ पाँव मज़बूत हों और जब तक हम दूसरों की भलाई कर सकें तब तक ही हम ज़िन्दा रहें. हमारी सारी आयु उसी सब के अन्दर रहने वाले ईश्वर के लिये हो !"

"हम सौ बरस तक और इस से भी अधिक इस तरह जियें कि हमें किसी का सहारा न ढूँढ़ना पड़े !"

"हम सौ बरस तक देखते रहें. सौ बरस तक हमारा बल और तन्दुरुस्ती बढ़ती रहे, सौ बरस तक हम सुन्दर रहें और सौ बरस से ऊपर भी हम इसी तरह जियें !"

क़ुरान की मशहूर दुआ है—

"साथ नाम उस अल्लाह के जो रहमान और रहीम है ! तारीफ़ उस अल्लाह की जो सब दुनियाओं का पालने वाला है ! जो दयावान और मेहरबान है ! जो उस दिन का मालिक है जिस दिन सब को अपने अच्छे बुरे कामों का फल मिलेगा ! ऐ अल्लाह ! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझसे ही मदद चाहते हैं ! हमें 'सीधा रास्ता' दिखला; उन लोगों का रास्ता जिन पर तेरी नैमतें और बरकतें उतरती हैं, उनका रास्ता नहीं जिनसे तू नाराज़ है और जो गुमराह हैं. आमीन !"

क़ुरान में एक और दुआ आती है—

"ऐ हमारे और सबके रब ! हमें इस दुनिया की सब अच्छी चीज़ें अता कर और दूसरी दुनिया की सब अच्छी चीज़ें भी, और हमें पाप से और नरक की आग से बचा."

इंजील के नए अहदनामे में ईश्वर से इन शब्दों में दुआ माँगी गई है—

"ऐ हमारे आसमानी बाप ! तेरा नाम उजागर हो ! तेरा राज क़ायम हो ! इस धरती पर और आसमान पर सब जगह

तेरी इच्छा पूरी हो ! हमें आज हमारा रोज़ का खाना दे. हमें शक्ति दे कि हम अपने क़र्ज़दारों को माफ़ कर दें. तू हमारे क़र्ज़े माफ़ कर दे. हमें लालच में मत डाल. हमें बुराई से बचा. तेरी ही हकूमत हो ! तेरी ही शक्ति हो ! तेरी ही जय हो ! हमेशा हमेशा के लिये. ऐमन !"

वेदों के ऋषि, इंजील के 'मसीह' और क़ुरान के 'नबी' बल्कि कहना चाहिए कि वेदों के मसीह, इंजील के नबी और क़ुरान के ऋषि सब ने ईश्वर अल्लाह से अपना रोज़ का दुनियावी खाना माँगा है. क़ुरान की ऊपर की आयत में भी यही बात है. ऊपर जो वेद मंत्र नक़ल किये गए हैं जिनमें सौ बरस तक की ज़िन्दगी और दुनिया की सब अच्छी अच्छी चीज़ें माँगी गई हैं उनका भी यही मतलब है. किसी मज़हब ने भी इस दुनिया की भलाई की तरफ़ से बेपरवाही नहीं की. सब मज़हबों के मुताबिक़ दूसरी दुनिया में भलाई मिलने के लिए भी इस दुनिया में ठीक रहना ज़रूरी है. सब मज़हब यह भी मानते हैं कि दूसरी यानी आगे की दुनिया भी है. अगर दुनिया भर के लोगों की वोट ले कर आजकल के राजकाजी तरीक़े से तय किया जावे तो जो दो अरब आदमी इस धरती पर रहते हैं, जिन में सोवियत रूस के बीस करोड़ आदमी भी शामिल हैं, उनमें से ज़बरदस्त कसरत राय यही कहेगी कि इसके बाद की दुनिया भी है. इसलिए यह ठीक ही है कि हम इस दुनिया में और दूसरी दुनिया में दोनों में अपनी भलाई और बहबूदी के लिये दुआ माँगें और उसकी कोशिश करें.

हिन्दुओं के वैशेषिक सूत्र में लिखा है—

"जिस चीज़ से इस दुनिया में और अगली दुनिया में दोनों में आदमी का भला हो वही असली धर्म है."

इंजील के पुराने अहदनामे में ईश्वर से प्रार्थना की गई है—

"ऐ मेरे मालिक ! मुझे अपनी नेकी की तरफ़ ले चल. मेरी आँखों के सामने अपने 'रास्ते को सीधा' कर दे. मुझे

मेरे अन्दर छिपी हुई बुराइयों से पाक कर. मैं तेरा सेवक हूँ. मुझे मेरे अन्दर उभरते हुए गुनाहों से बचा. वह मुझ पर क़ाबू न पा सकें. मेरे अन्दर की बुराई और बेइंसाफी से मुझे अच्छी तरह धो दे और मेरे अन्दर के पाप से मुझे पाक कर ! ऐमन !

"ऐ .खुदा ! मेरे दिल की तलाशी ले ! मेरे दिल के अन्दर जो कुछ है उसे देख. मुझे आज़मा और मेरे विचारों को जान और देख कि मेरे अन्दर कोई भी बुरी राह तो नहीं है. मुझे उस रास्ते पर ले चल जो अमर जीवन का रास्ता है. ऐ मेरे मालिक ! मुझे अपनी राहें दिखा ! मुझे अपने रास्तों की तालीम दे. मुझे अपनी सचाई की तरफ़ ले चल. तू ही मेरी नजात का मालिक है. मेरी आँखें खोल ताकि मैं तेरे बताए हुए धर्म की सब अच्छी अच्छी बातें देख सकूँ. अपना शब्द सुना कर मुझ में जान डाल. झूठ के रास्ते से मुझे अलग कर ! ऐमन !"

यहूदियों की एक मशहूर प्रार्थना है—

"सुनो ! ऐ इसराईल क़ौम के लोगो ! एक .खुदा ही हमारा अल्लाह है, .खुदा एक है. ऐ हमारे .खुदा और हमारे पुरखों के .खुदा ! तेरा यह आशीर्वाद हो कि हम तेरे क़ानून पर चलें और तेरी आज्ञाओं को ठीक ठीक मानें. हमें पाप, अन्याय, लालच और अपमान से बचा. बुराई की तरफ़ हर झुकाव को हमसे दूर रख और ऐसा कर कि हम नेकी की राह पर चलते रहें. ऐ .खुदा ! हमें अपनी निगाह में और उन सब की निगाह में जो हमें देखते हैं दया, मेहर और रहम अता कर और हम पर अपनी नेक बरकतें उतार. ऐ .खुदा ! तेरी जय ही जय हो ! तू अपनी क़ौम इसराईल को अपनी नेक बरकतें अता करता है. ऐमन !"

ऊपर की प्रार्थना के इबरानी शब्दों से मालूम होता है कि इबरानी भाषा और दूसरी भाषाओं के शब्दों में कितना मेल है. 'इसराईल' शब्द दो शब्दों से बना है—इस्र और ईल. इस्र के मानी हैं नेकी या धर्म और ईल के मानी हैं क़ादिरे मुतलक़

यानी अल्लाह. इसराईल के मानी हुए वह लोग जो उस सर्व शक्तिमान ईश्वर की बताई राह पर चलें. इबरानी 'अदोनाई', अरबी 'आदम' और संस्कृत 'आदि मनु' या 'आदिनाथ' तीनों एक हैं. संस्कृत ओ३म् ! अरबी आमीन ! और इबरानी ऐमन ! भी मिलते हैं और तीनों के शुरू के मानी बिलकुल एक हैं, यानी यह कि "ऐसा ही हो !" इस प्रार्थना में इबरानी शब्द 'शीमा' आता है जिस के मानी हैं 'सुनो', 'एहद' आता है जिसके मानी हैं 'अहद' यानी एक. 'यही' आता है जिसके मानी हैं 'यह', 'नु' के मानी हैं 'हमको'. अरबी 'अना' और संस्कृत 'नः', 'थुरा' के मानी हैं 'धर्म' वग़ैरा.

पारसियों की एक प्रार्थना है जिसे 'होनोवर' या 'अहोवैराय' कहते हैं. पारसी इसे उतना ही पाक समझते हैं जितना हिन्दू गायत्री को या मुसलमान सूरे फ़ातहा को. वह प्रार्थना यह है—

"हमारे मन उस ईश्वर की पूजा में लग जावें जो नेकी और शक्ति का, बुद्धि का और बल का मालिक है, जिसने हमें वह अन्तरात्मा यानी ज़मीर दी है जिससे हम उसके जैसे यानी नेक काम कर सकें और अपने भाई इनसानों की अधिक से अधिक सेवा कर सकें. उसने हमें दुनिया से वैराग्य दिया है और वह सब्र और धीरज दिया है जिससे हम दुख, दर्द और कमज़ोरी के समय ढारस रख सकें और दूसरे दुखियों और कमज़ोरों को ढारस बँधा सकें."

पारसी धर्म की किताब गाथा की कुछ और प्रार्थनाएँ यह हैं—

"ऐ अहुरमज्द यानी ईश्वर ! मुझे बड़ी उम्र दे, धीरज दे और नेक समझ दे. मुझे 'सीधा रास्ता' दिखला. वह रास्ता जो तेरा रास्ता है और जो तुझ तक पहुँचाता है."

"ऐ अहुरमज्द ! मुझे ऐसी बुद्धि दे जिससे मैं सोच समझ कर काम करूँ और अपने फ़र्ज़ों को पूरा करूँ ! मुझे नेकी की दौलत दे जिस से और सब दौलतें अपने आप पैदा होती हैं.

मुझे इन्साफ़ पर चलने वाली अन्तरात्मा (ज़मीर) दे, सब्र और धीरज दे और नेक काम करने की ताक़त दे !"

"ऐ अहुरमज़्द ! मुझे दर्शन दे. इस तरह कि तेरे हाथ मेरे उन फ़र्ज़ों, नेक कामों और अच्छे शब्दों से भरे हों जिन से रूहानी ज़िन्दगी मिलती है, जिनसे आदमी दुनिया से बेलाग रहता है और जिनसे नजात मिलती है."

"नेक विचारों, नेक शब्दों और नेक कामों से ही हम अहुरमज़्द को जान सकते हैं. अहुरमज़्द हम से प्यार करता है. उसने हमें वह 'सीधा रास्ता' बताया है जिससे हम कभी इधर उधर न भटकें."

"ऐ अहुरमज़्द ! मेरा यह मन तेरी सचाई, तेरी आत्मा और सबके भले और ऊँचे से ऊँचे आदर्शों से भरा हो और मुझे सदा नेकी का ठीक ठीक रास्ता दिखलाता रहे ! जब मैं उस मंज़िल तक पहुँच जाऊँगा तो और सब छोटी छोटी बातें जो मेरी रूह चाहती है मुझे अपने आप मिल जावेंगी."

"ऐ अहुरमज़्द ! हमें ज्ञान और धर्म का वह रास्ता दिखला जिस पर चल कर आदमी की आत्मा को पूरा सकून और सन्तोष मिलता है."

जैन धर्म की एक प्रार्थना यह है—

"ऐ तू जो सब तारीफ़ों का हक़दार है ! जो हर ऐश्वर्य यानी क़ुदरत का मालिक है ! तुझे हमारा नमस्कार हो. ऐ सबके बादशाह ! तुझे हमारा नमस्कार हो. तू प्रभु यानी मालिक है, तू सब जगह है, तू सबसे बड़ा है, तू बेदाग़ है, हमेशा से है, हमेशा तक रहेगा, तू कभी मिट नहीं सकता, तुझमें कोई कमी या बुराई नहीं, तू अनोखा ख़ज़ाना है, सब प्रार्थनाएँ तुझी तक पहुँचती हैं, तू केवल ज्ञान (मार्फ़त) के शीशे में आत्मा के अन्दर ही दिखाई दे सकता है. केवल वही तुझे देख सकता है जिसका अन्दर का यह शीशा बेदाग़ हो, जिसे दुनिया की किसी चीज़ से लगाव न हो. तुझे हमारा नमस्कार हो !

तू शान्त और पाक है ! तू बे आसरों का आसरा है, तेरी कोई सूरत नहीं, तुझमें कोई हरकत नहीं ! तू अचल है ! सब दुनियाओं का मालिक है ! हम तेरी ही पूजा करते हैं, तू सबसे बड़ा दाता है, हमें सबसे बड़ा दान यह दे कि हमारी बुद्धि रोशन हो जाय और हम तेरा ज्ञान यानी असली ज्ञान या मार्फ़त हासिल करें ! तुझे हमारा नमस्कार हो !"

बौद्ध धर्म की सबसे मशहूर प्रार्थना यह है—

"ऐ मेरे मालिक ! मेरे गुरु ! मेरे त्राता ! मेरे प्यारे ! मेरे भाई ! मेरे रहबर ! मुझे रोशनी देने वाले ! ऐ सारे ज्ञान के भंडार और सब जोतों की जोत ! मैं तेरे नाम का सहारा लेता हूँ ! मैं तेरे धर्म का आसरा लेता हूँ ! मैं तेरे संघ की शरण में आता हूँ ! ओ३म् ! मेरी छोटी सी आत्मा जो कमल के पत्ते के ऊपर शबनम की बूँद बनी हुई हीरे की कनी सी चमक रही है, उस खिले हुए कमल में समा जाए जो तेरे बेअन्त वजूद के सागर पर तैर रहा हो !"

गुरु गोविन्द सिंह की एक प्रार्थना यह है—

"सरब काल है पिता अपारा, देवी कलिका मात हमारा,
मनुआ गुरु मोहि मनसा माई, जिन मोको सत क्रिया पढ़ाई,
देवि शिवा ! वर मोहि यहाई, न डरौं अरिसे जब आय लराई,
शुभ कर्मों ते कबहुँ न टरूँ, निश्चय करि अपनी जीत करूँ,

ठाड़ भये कर जोर कर, वचन कहा शिर नाय,
पंथ चलै तव जगत में, जब तुम करो सहाय."

यानी—"हमारा पिता परमेश्वर बेअन्त है, वह हर समय मौजूद था, है और रहेगा, यह अनन्त ही हमारी माता है. मेरे अन्दर का मन मेरा गुरु है. उसकी शक्ति मनसा मेरी पालने वाली है, इन्होंने ही मुझे नेक काम करने की तालीम दी है. ऐ परमेश्वर ! तेरी शक्ति मुझे यह वरदान दे कि मैं नेक कामों के करने से कभी पीछे न हटूँ और जब बुराई से लड़ने का

मौक़ा आए तो कभी दुशमन से न डरूँ. हमेशा जीतूँ. मैं हाथ जोड़ कर खड़ा हूँ और सिर झुका कर कहता हूँ कि दुनिया में लोग तुम्हारे ही रास्ते पर चलें. तुम मदद करो तभी यह हो सकता है."

एक और मशहूर प्रार्थना है जो कई धर्मों में एक सी पाई जाती है. यह इसलिये सब में मिलती है क्योंकि यह अपने आप हर सीधे सादे भले आदमी के दिल से निकलती है. आदमी आदमी सब दुनिया में एक से हैं. सब भले लोगों का दुशमन एक ही है. हमारे अन्दर और बाहर का अँधेरा और सबका सबसे बड़ा दोस्त भी एक ही है यानी रोशनी. वेद में यह प्रार्थना इन शब्दों में की गई है—

"ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय
असतो मा सद् गमय
मृत्योर् अमृतम् ! ओ३म्."

यानी—"मुझे अँधेरे से रोशनी में ले चल. झूठ से सच की तरफ़ ले चल. मौत से अमर जीवन की तरफ़ ले चल."

.कुरान में लिखा है—

"जो लोग इमान लाए हैं उन्हें अल्लाह अँधेरे से निकाल कर नूर यानी रोशनी की तरफ़ ले जाता है !"

एक दूसरी जगह .कुरान में लिखा है—

"अल्लाह 'नूरों पर नूर' है और जिस पर दया करता है उसे अपने नूर की तरफ़ ले जाता है."

भगवद्गीता में ईश्वर को 'जोत के ऊपर जोत' कहा गया है.

सिखों के धर्म ग्रन्थ 'ग्रन्थ साहब' में यह प्रार्थना की गई है—

"ऐ दया के सागर ! हमारे दिलों के अन्दर सदा रहो और हमारे मन को वह रोशनी दो कि जिससे हम तुमसे प्यार करें, तुम्हारी सेवा करें, और तुम्हारी ही पूजा करें. ऐ ईश्वर ! हम

हमेशा तुम्हें अपने पास पावें और महसूस करें. तुम्हीं हमारे बाप, माँ, मालिक और सब कुछ हो !"

ईसाई धर्म की एक मशहूर दुआ है—

"ऐ दया भरी रोशनी ! चारों तरफ़ के इस अँधियारे में मुझे आगे आगे ले चल ! रात अँधियारी है. मैं घर से बहुत दूर हूँ. तू मुझे आगे आगे ले चल !"

पुराने यूनानियों में 'मिनरवा' बुद्धि की देवी मानी जाती थी. कहा जाता था कि यह देवी 'जुपिटर' यानी 'द्यौपितर' ईश्वर के सिर से निकली है जिसका मतलब यह है कि 'मिनरवा' ईश्वर की अक़्लेकुल यानी मार्फ़त का नाम है. पुराने यूनानी लोग 'मिनरवा' से इन शब्दों में दुआ माँगते थे—

"ऐ ईश्वरी शक्ति ! मेरे अँधेरे मन के ऊपर अपनी बेअन्त और पाक रोशनी को बरसाओ. वह पाक रोशनी जो हमेशा से हमेशा तक तुम्हारे पास है. तुम्हारी यह रोशनी सब से पहले थी और सब के बाद रहेगी. मेरी रूह जब तक इस धरती पर फिरती रहे तब तक तुम्हारी यह रोशनी, तुम्हारी यह जोत उसे हिम्मत दिलाती और राह दिखाती रहे. !"

दुनिया के सब नए और पुराने, छोटे और बड़े धर्मों में इसी तरह की रोशनी के लिए प्रार्थनाएँ की गई हैं और 'ठीक रास्ते' और 'सीधे रास्ते' के लिए दुआएँ माँगी गई हैं, और सब के ईश्वर अल्लाह से उस रास्ते पर चलने की शक्ति माँगी गई है.

हमें यह भी याद रखना चाहिये कि इस तरह की जितनी दुआएँ या प्रार्थनाएँ अलग अलग धर्मों में मिलती हैं उनमें 'मैं' या 'मुझे' की जगह 'हम' और 'हमें' ही इस्तेमाल किया गया है और जहाँ कहीं 'मैं' या 'मुझे' कहा गया है वहाँ भी सबके साथ प्रेम और नेकी के सम्बन्ध की दुआ माँगी गई है. सच यह है कि सब मनुष्यों के साथ प्रेम ही ईश्वर प्रेम की असली बुनियाद है. जिस दुआ या प्रार्थना में सब इनसानों के साथ

प्रेम और ईश्वर के साथ प्रेम दोनों बराबर बराबर न झलकते हों वह प्रार्थना थोथी, बेजान और बेमानी है. कोई भी प्रार्थना, प्रार्थना करने वाले को उतनी ही और उसी दरजे तक मदद दे सकती है जितना और जिस दरजे तक प्रार्थना करने वाले का दिल प्रेम से भरा हो.

दुआ. प्रार्थना या प्रेयर (Prayer) आदमी के लिए बहुत बड़े फायदे की चीज़ है. प्रार्थना आत्मा का शृंगार है. प्रार्थना करना रूहानी जज़बे के पवित्र जल में नहाना है. प्रार्थना करना अपने आप को अपने दिल के शीशे में देखना है, अन्दर की कसौटी पर कसना है. प्रार्थना का मतलब यह है कि हम अपने मालिक के सामने जाने से पहले यह देख लें कि हमारे अन्दर या बाहर कोई दाग़, कोई बुराई न रह जाय. प्रार्थना कितनी बार कब कब की जाय यह बात हर आदमी के लिए अपने अन्दर की ज़रूरत पर है. जब भी रूह को प्रार्थना की ज़रूरत महसूस हो तभी प्रार्थना का समय है. सब वक्त भगवान के वक्त हैं, सब वक्त अच्छे हैं. जो दिल ईश्वर के प्रेम से उसी तरह भरे हुए हैं जिस तरह बच्चे का दिल माँ के प्रेम से, वह हर समय अपने प्यारे की नज़दीकी चाहते हैं. फिर भी मामूली इनसानों के लिये और दिन भर का प्रोग्राम ठीक करने के लिये कुछ न कुछ वक्त तय करने ही पड़ते हैं. इसके लिये अधिकतर धर्मों ने बहुत सुबह का वक्त जब .कुदरत नई रोशनी के साथ चमकती है और आदमी दिन भर के काम शुरू करने के लिये निकलता है और शाम का वक्त जब इनसान अपने दिन भर के अच्छे और बुरे कामों पर निगाह डालता है और .कुदरत के साथ साथ आराम करने जाता है, इन दोनों वक्तों की प्रार्थना पर सबसे अधिक ज़ोर दिया है. सुबह के वक्त इनसान को अपने अन्दर के अल्लाह और उसकी .कुदरत से बल की ज़रूरत होती है और शाम को अपने दिन भर के कामों पर निगाह डालकर उसी अन्दर के ईश्वर से दुरुस्ती, माफ़ी, दया

और रहबरी की फिर जरूरत होती है. यह दोनों वक्त ही आदमी के अन्दर शान्ति और प्रेम के उभरने के ख़ास वक्त होते हैं.

ओ३म् ! आमीन ! ऐमन !

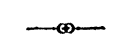

३०

धर्म का शरीर और उसकी आत्मा

आदमी जब तक आदमी है उससे ग़लतियाँ होती ही रहती हैं. वह हर अवसर पर काम, क्रोध, लोभ और मोह को नहीं जीत पाता. यह कमज़ोरियाँ उसकी आँखों पर परदा डाल देती हैं, उसके दिल और दिमाग़ को भटका देती हैं, वह बार बार पछताता है और फिर बार बार ग़लती करता है. मौलाना रूम ने लिखा है—

"ग़ुस्सा और शहवत यानी क्रोध और काम आदमी को अन्धा कर देते हैं और उसकी रूह को सीधे रास्ते से भटका देते हैं."

इसके लिये सब धर्मों में 'प्रायश्चित्त' यानी 'कुफ्फारा' का रास्ता बताया गया है. पहले आदमी को अपने किये पर दुख और शर्म (नदामत) महसूस होती है. हिन्दू धर्म में इसे पश्चात्ताप कहते हैं. फिर वह अपनी आत्मा के सामने और किसी बड़े बुज़ुर्ग के सामने अपनी ग़लती का ऐतराफ़ करता है. इसे 'प्रख्यापन' कहते हैं. इसके बाद वह अपनी ग़लती के लिए कुफ्फारा करता है जिसको प्रायश्चित्त कहते हैं. ईसाई धर्म में भी पापों से बचने की ये ही तीन सूरतें एक दूसरे के बाद बताई गई हैं. एक मुसलमान सूफ़ी कहता है—

"बाज़ आ, बाज़ आ, ऐ हस्ती बाज़ आ,
"गर काफ़िरो गब्रो बुतपरस्ती, बाज़ आ,
"ईं दरगहे मा दरगहे नाउमेदी नेस्त,
"सद बार अगर तोबा शिकस्ती, बाज़ आ."

यानी—"वापिस आ जा, वापिस आ जा, तू जहाँ कहीं और

जो कुछ भी हो वापिस आ जा. चाहे तू नास्तिक हो और चाहे पत्थर या आग का पूजने वाला हो, वापिस आ जा. हमारा (अल्लाह का) यह दरबार नाउम्मेदी का दरबार नहीं है. अगर तूने सौ बार भी तोबा करके अपनी तोबा को तोड़ दिया हो तो भी वापिस आ जा."

गीता में लिखा है—

"अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्,
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यक् व्यवसितो हि सः"

यानी—"कोई चाहे कितना ही बुरा क्यों न हो जो कोई साफ़ और पूरे दिल से ईश्वर की तरफ़ मुड़ता है उसे नेक ही मानना चाहिये क्योंकि वह ठीक तरफ़ लग गया है."

चीन के कनफ़्यूशियस धर्म की एक किताब में लिखा है—

"जब कभी तुम ग़लती कर जाओ तो अपनी ग़लती को ठीक करने में झिझको मत."

उसी धर्म की एक और किताब में लिखा है—

"अपनी ग़लतियों पर शरमा कर उन्हें छिपाओ मत, क्योंकि इस तरह तुम्हारी ग़लतियाँ बढ़ कर जुर्म बन जावेंगी. न अपनी अब तक की ग़लतियों या गुनाहों को ठीक साबित करने की कोशिश करो और न छिपाने की कोशिश करो."

एक और चीनी किताब में लिखा है—

"आदमी अगर कोई बुरा काम कर जावे लेकिन बाद में पछतावे और अपने को ठीक कर ले और इरादा कर ले कि फिर ऐसा काम नहीं करेगा बल्कि श्रद्धा के साथ नेकी करेगा, तो आगे चल कर उसके दिन ज़रूर फिरेंगे और उसकी ग़लतियाँ, उसके लिये बरकतें हो जायँगी, क्योंकि वह उनसे बहुत कुछ सीख लेगा."

मनुस्मृति में लिखा है कि—

"जब कोई आदमी पाप कर बैठता है लेकिन उसके दिल में सच्चा अफ़सोस होता है, वह अपने पाप को मान लेता है, अपने

रास्ते को बदल देता है, ठीक ठीक प्रायश्चित्त करता है, अच्छी अच्छी चीज़ें पढ़ता है, नेक और सादा जीवन बसर करता है, तो उसके पाप उससे इस तरह दूर हो जाते हैं जिस तरह साँप की केंचुल साँप से उतर कर अलग हो जाती है, उसका शरीर और उसकी आत्मा दोनों फिर पाक हो जाते हैं."

इंजील में लिखा है—

"अगर तुम अपनी ग़लतियों के लिए पश्चात्ताप न करोगे तो मिट जाओगे. पश्चात्ताप कर के अपनी राह बदल दो तो तुम्हारे पाप धुल जावेंगे. हम अपनी ग़लतियों को मान लें तो ईश्वर दयावान और माफ कर देने वाला है. इसी तरह वह हमारे सब पापों को हम से अलग करता है."

क़ुरान में जगह जगह आया है कि—

"जो लोग जब कोई गुनाह या ग़लती कर बैठते हैं तो अल्लाह को याद करते हैं और उससे माफ़ी चाहते हैं और फिर अपनी ग़लती या गुनाह को नहीं दुहराते, बल्कि उससे अपने दिल को फेर लेते हैं, पछताते हैं और ठीक रास्ता अख़्तियार करते हैं, उन्हें बेशक अपने अल्लाह से माफ़ी मिल जायगी."

आजकल पच्छिम में एक नई साइन्स चली है जिसे 'साइको ऐनेलिसिस' (Psycho Analysis) कहते हैं. ग़लतियाँ तो उस साइन्स ने बहुत की हैं, फिर भी धीरे धीरे यह नई साइन्स आदमियों को बुराई से बचाने के नए नए तरीक़े, आदमी के दिल और दिमाग़ पर असर डालने के नए नए ढंग निकाल रही है. इनमें हाल का एक तरीक़ा है जिसे 'रीएजूकेशन' कहते हैं. रीएजूकेशन के मानी हैं आदमी ने जो ग़लत चीजें सीख ली हैं उन्हें हटा कर उसे नए सिरे से तालीम देना और सिखाना. इसी काम को पुराने लोग दिल का बदलना कहते थे, 'पुनर्जन्म' या नई ज़िन्दगी भी कहते थे. आजकल की नई दुनिया में मज़हब साइन्टिफ़िक होता जाता है और साइन्स मज़हबी होती जाती है. इस समय के बादल छँट जावें

तो हमारे आगे के डाक्टर एक साथ जिस्म और रूह, यानी शरीर और आत्मा, दोनों के डाक्टर होंगे. दुनिया के जेलख़ानों में इस तरह की कोशिशें चल पड़ी हैं अगरचे यह कोशिशें अभी बहुत अधूरी हैं.

दुनिया के सब धर्म लोगों को दान (ख़ैरात), धर्मादा (ज़कात) देने पर भी ज़ोर देते हैं. पहले लोग मंदिर, मसजिद या गिरजा बनवाते थे, सब के लिए लंगर या सदाव्रत खोलते थे; सराय, धर्मशाला और आरामगाह बनवाते थे, कुएँ और तालाब खुदवाते थे, सड़कें या अस्पताल बनवाते थे; बाग़ लगवाते थे, आम और दूसरे फलों के दरख़्त लगवाते थे, मकतब और पाठशालाएं क़ायम करते थे, वग़ैरा वग़ैरा. यह सब काम सबके भले के लिये ईश्वर और धर्म नाम पर किये जाते थे. आजकल इनकी जगह स्कूलों, अस्पतालों, लाइब्रेरियों वग़ैरा की कमेटियां और उन के चन्दे रह गए हैं. बात वही है—हर आदमी सब के लिये जो अधिक से अधिक कर सकता है करे.

लगभग सब धर्म वालों की अपनी अपनी किताबें हैं. लगभग सब यह भी मानते हैं कि आम लोगों का मज़हब अलग होता है और ख़ास समझदार लोगों का अलग—एक ज़ाहिरी रीत रिवाज का मज़हब और दूसरा बातिनी दिल का मज़हब. यह अन्दर का यानी दिल का मज़हब सब मज़हबों में बिलकुल एक है. इसलाम में कहा गया है कि किसी बात में दीन के ठीक हुकुम का पता लगाना हो तो पहले 'क़ुरान' को देखो, फिर 'हदीस' को देखो और फिर 'इजमा' यानी जानने वालों की मुशतरका राय को देखो और फिर आख़ीर में ख़ुद अपने 'क़यास' से काम लो. हिन्दू धर्म में इन्हीं चारों को श्रुति, स्मृति, सदाचार और आत्मतुष्टि कहा गया है. इसी तरह के चार नाम इनके ईसाई धर्म में हैं. आजकल की क़ानूनी ज़बान में इन्हें 'स्टेचूट' यानी लिखा क़ानून, 'कसटम' यानी रिवाज, 'प्रीसीडैन्ट' यानी नज़ीर और 'ईक्विटी' यानी दिल का इन्साफ़ कहा गया है. सच्चे

दीन धर्म का इन चारों कसौटियों पर ठीक उतरना ज़रूरी है.

आदमी के अगर रूह है तो जिस्म भी है. उसकी अपनी एक सूरत है. इसलिये दीन धर्म के मामले में भी मामूली आदमी का केवल विचारों से काम नहीं चलता. वह कोई न कोई सूरत भी चाहता है. निराकार यानी 'लामकां' पर जलदी से उसका दिल नहीं जमता. इसीलिये सब धर्मों में आदमी को धीरे धीरे ऊपरी रीत रिवाजों में से निकालते हुये अल्लाह तक ले जाने की कोशिश की गई है. यह रीत रिवाज और ईंट पत्थर अगर एक हद तक रहें तो ठीक हैं. लेकिन जब इनके ज़रिये आदमी को क़दम क़दम ऊपर ले जाने के बजाय उसकी अक़ल पर परदा डालने और उसे डरा डरा कर वहमों और अन्धविश्वासों में फँसाए रखने की कोशिश की जाती है, तो सारा दीन धर्म पाखंड और छल कपट रह जाता है. पंडे पुरोहित अपनी खुदग़रजी के लिये इन रीत रिवाजों के ज़रिये आदमी को नीचे घसीट कर उसे सदा के लिये उनमें फँसाए रखना और गिराए रखना चाहते हैं.

अग्नि पुराण में लिखा है—

"रूहानी निगाह से जो लोग अभी बच्चे हैं उनका ईश्वर लकड़ी पत्थर में रहता है. बीच के आदमियों का ईश्वर नदियों और तालाबों में रहता है, जो ज़रा सोचने लगते हैं उनका ईश्वर आसमान में या आसमान के नक्षत्रों वग़ैरा में रहता है, और जो समझदार हैं उन्हें अपना ईश्वर अपनी आत्मा के अन्दर दिखाई देता है."

इंजील में भी लिखा है कि—

"रूहानी बच्चों को रूहानी दूध दिया जाता है और जो रूहानी निगाह से बालिग़ हैं उन्हें रूहानी खाना दिया जाता है."

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि—

"जो लोग समझदार हैं उन्हें चाहिये कि जो लोग कमसमझ

हैं लेकिन नेक कामों में लगे हुए हैं उनमें बुद्धिभेद पैदा न करें."

मोहम्मद साहब की मशहूर हदीस है कि—

"लोगों से उनकी समझ के मुताबिक़ बात करो."

मौलाना रूम की मसनवी में एक बड़ी सुन्दर कहानी आती है—

लिखा है कि हज़रत मूसा एक दिन किसी पहाड़ पर से उतर रहे थे. उन्होंने देखा कि एक गडरिया नीचे को मुँह किये पड़ा है. गडरिये का कम्बल, उसकी चप्पल और उसकी लकड़ी बराबर में पड़ी हुई हैं. उसकी भेड़ें नीचे खड्ड में चर रही हैं. गडरिया पड़े पड़े कुछ बड़बड़ा रहा है. मूसा चुपचाप दबे पांव गडरिये के पीछे जा कर खड़े हो गए और सुनने लगे कि वह क्या कह रहा है. वह यह कह रहा था—"ऐ मेरे अल्लाह ! तू कहां है ? तू मुझे क्यों नहीं मिलता ? तू अगर मुझे मिल जाय तो तेरे पांव थक गए होंगे, मैं अपने हाथों से तेरी ख़ूब मुट्ठी चापी करूँ, तो तेरी थकान दूर हो जावे. तेरी चप्पल फट गई होगी. तू मुझे मिल जावे तो मैं अपने हाथ से तेरी चप्पल गाँठ दूँ. तेरे कम्बल में चीलर पड़ गए होंगे. मैं एक एक चीलर बीन कर फेंक दूँ. रात को मैं तेरे लिये ऐसा अच्छा बिछौना बिछा दूँ कि जिनमें एक सलवट न रहे. उस पर जंगल से फूल ला कर डाल दूं. सुबह को मैं जंगल से ताज़ा शहद का प्याला ला कर तुझे पिलाऊँ. ऐ अल्लाह ! तू कहाँ है ? तू मुझे क्यों नहीं मिलता ?" वग़ैरा वग़ैरा. गडरिया इसी तरह बक रहा था और अपने प्रीतम के प्रेम में टपाटप आँसू बहा रहा था. हज़रत मूसा यह सुन कर गडरिये के सामने आ खड़े हुये. उन्होंने गडरिये से पूछा—"ऐ गडरिये ! तू यह बातें किससे कह रहा है ?" गडरिये ने जवाब दिया—"मूसा ! मैं उस अल्लाह से बातें कर रहा हूँ जिसने तुझे पैदा किया और मुझे पैदा किया." मूसा ने फिर कहा—"ऐ गडरिये ! तू उस अल्लाह की शान में ऐसी बातें कह रहा है कि वह थक गया होगा, उसके कम्बल में चीलर पड़ गये होंगे, वग़ैरा ! अल्लाह

की शान में ऐसी बातें कहना इतना बड़ा कुफ्र और गुनाह है कि अगर उसकी आग बन जाय तो सारी दुनिया उसमें जल कर ख़ाक हो जाय !" गडरिये ने पूछा—"ऐ मूसा ! क्या मुझसे कोई गुनाह हो गया ?" मूसा ने जवाब दिया—"तुझ से इतना बड़ा गुनाह हो गया जिसका कोई कफ्फारा नहीं." गडरिये ने फिर दुखी होकर पूछा—"क्या मेरे गुनाह का कोई कफ्फारा नहीं ?" मूसा ने जवाब दिया—"कोई नहीं." दुख में डूबा हुआ निराश गडरिया उठा, उसने अपना कम्बल कंधे पर डाला, लकड़ी हाथ में ली और भेड़ें पीछे छोड़ दूर जंगल में निकल गया. गडरिया जब निगाह से ओझल हो गया तो मूसा बड़े अभिमान के साथ पीछे लौटे. उसी समय आसमान से आवाज़ आई, या शायद मूसा को अपने अन्दर के अल्लाह की डाँट सुनाई दी, अल्लाह ने मूसा से कहा—

"ऐ मूसा ! तूने यह क्या किया ? तूने हमारे प्रेमी को हम से अलग कर दिया ! तुझे दुनिया में मिलाने के लिए भेजा था, अलग करने के लिए नहीं भेजा गया था !"

"तो बराए वस्ल करदन आम्दी
नै बराए फ़स्ल करदन आम्दी."

"तू समझता है कि हमारी बाबत तेरी दिमाग़ी कल्पना उस गडरिये की मोटी जिस्मानी कल्पना की निसबत हमारी असलियत के अधिक निकट है ! तेरा यह समझना ग़लत है. हमारी असलियत से दोनों एक से दूर हैं. हम तक पहुँचने का रास्ता दिल है, दिमाग़ नहीं. हमने अलग अलग लोगों के लिये अलग अलग तरीक़े बना रखे हैं."

"हिन्दियाँ रा इस्तलाहे दादा अन्द
सिन्धियाँ रा इस्तलाहे दीगर अन्द"

"ऐ मूसा ! ऊपर के आदाब को जानने वाले लोग और होते हैं और वह सच्चे आशिक़, जिनके अन्दर इश्क़ की आग लगी होती है, दूसरे होते हैं."

"मूसिया आदाब दाना दीगर अन्द
आशिक़ां सोज़े दरूनां दीगर अन्द."

"इश्क़ का मज़हब सब दीनों से अलग है. जो सच्चे आशिक़ हैं उनके लिए मज़हब और मिल्लत सब हम ही हम हैं."

"मज़हबे इश्क़ अज़ हमा मिल्लत जुदा अस्त
आशिक़ां रा मज़हबो मिल्लत ख़ुदा अस्त."

वग़ैरा वग़ैरा.

मूसा ने घबरा कर पूछा—"ऐ अल्लाह! मुझसे ग़लती हो गई. अब मैं क्या करूँ?"

अल्लाह ने जवाब दिया—"ऐ मूसा! जा, उस गडरिये को ढूँढ और उसे यह ख़ुशख़बरी दे कि वह ठीक था और तू ग़लत, और उसके लिये अल्लाह की तरफ़ से सब माफ़ है."

हज़रत मूसा उस गडरिये की खोज में निकल पड़े. बरसों की खोज के बाद वह उन्हें कहीं जंगल में अकेला खड़ा हुआ दिखाई दिया. मूसा ने गडरिये को ख़ुशख़बरी दी कि गडरिया ठीक था और मूसा ग़लत, और गडरिये के लिए सब माफ़ है. गडरिये ने अब मुस्कराकर जवाब दिया—"ऐ मूसा! अब किस से बात कर रहे हो? अब मैं उस पहली जगह से हज़ारों साल का फ़ासला तै कर चुका. अब गडरिया कहीं रहा ही नहीं. अब तो मैं अपनी ख़ुदी को मार कर उस पुरानी ख़ुदी के ख़ून में लिथड़ा हुआ खड़ा हूं!"

"मन हज़ारां साल ज़ां सू गश्ता अम!
मन कनूँ दर ख़ूने दिल आगुश्ता अम!"

ईश्वर प्रेम या इश्क़े इलाही की इस तरह की कहानियाँ सब मज़हबों की किताबों में मिलेंगी. रोमन कैथलिक ईसाइयों की किताबों में एक कहानी आती है कि—कोई एक बाज़ीगर था. उसे बड़े अच्छे अच्छे खेल आते थे. वह गाँव और शहर के लोगों को अपने खेल दिखा दिखा कर खुश किया करता था, और उसी से अपनी जीविका चलाता था. पर अपने बच्चों के पेट

कठिनाई से भर पाता था. एक दिन वह किसी गिरजा में गया. उसने देखा कि पादरी लोग मरियम की मूर्ति के सामने बैठ कर बड़ी बड़ी दुआएँ माँग रहे हैं. वह बहुत भोला और दिल का सच्चा और साफ़ था. उसने सोचा कि मैं भी मरियम को ख़ुश करके अपनी जीविका के लिये दुआ माँगूँ. वह गिरजा में बैठ गया. जब सब पादरी और दूसरे लोग चले गए तो उसने अन्दर से दरवाज़ा बन्द करके मरियम की मूर्ति के सामने माँ मरियम को ख़ुश करने के लिये अपने सब खेल करने शुरू कर दिये. किसी पादरी ने किवाड़ की सन्दों में से देखा कि वह सिर नीचे और पाँव ऊपर किये मरियम को अपने तमाशे दिखा रहा है. पादरी को ग़ुस्सा आया. दरवाज़ा खुलवा कर उसने उस बाज़ीगर को मार कर वहाँ से निकालना चाहा. इतने में पादरी की आँखों के सामने एक रोशनी सी दिखाई दी. उस रोशनी में उसने देखा कि माँ मरियम अपनी जगह से हट कर ख़ुद अपने आँचल से उस बाज़ीगर के मुँह का पसीना पोंछ रही हैं. इस बीच कई पादरी वहाँ और आ पहुँचे. उन सबने यह चमत्कार देखा. वह बाज़ीगर को छोड़ कर घुटनों के बल गिर पड़े और कहने लगे—"मुबारक हैं वह लोग जो दिल के पाक साफ हैं क्योंकि ईश्वर के दर्शन उन्हीं को मिल सकते हैं."

हिन्दू धर्म की भक्ति की किताबों में इस तरह की कहानियाँ भरी पड़ी हैं. सम्राट अकबर के मशहूर गवैये तानसेन के गुरु हरिदास के बारे में, जो कृष्ण के भक्त थे, और रामायण के लेखक गोस्वामी तुलसीदास के बारे में. जो राम के भक्त थे, इस तरह की कहानियाँ मशहूर हैं. कहा जाता है कि सम्राट अकबर ने भी हरिदास की झोपड़ी में जाकर इस तरह के नज़ारे देखे थे. हरिदास और तुलसीदास का समय एक ही था.

हमें यहाँ इस तरह की कहानियों के सच्चे या झूठे होने से मतलब नहीं है. मौलाना रूम ने अपनी मसनवी में बार बार

कहा है कि—"मेरी कहानियों के लफ़्ज़ों पर मत जाओ, उनके सच और झूठ को मत देखो, केवल यह जानने की कोशिश करो कि मैं इन कहानियों के ज़रिये क्या समझाना चाह रहा हूँ." इस तरह की कहानियाँ सब धर्मों में मिलती हैं. इसका केवल यह मतलब है कि सब धर्मों में दिल की सफ़ाई पर सबसे अधिक ज़ोर दिया गया है और ईश्वर अल्लाह तक पहुँचने के लिये उस विश्वास को ज़रूरी माना गया है जिसकी बाबत कहा गया है कि—"विश्वास पहाड़ों को भी उनकी जगह से हटा देता है." दिलों की पाकी और सचाई ही भगवान को सबसे अधिक प्यारी होती है, क्योंकि भगवान 'प्रेम' रूप हैं, 'प्रेम' ही भगवान है.

मूर्ति पूजा भी एक ख़ास हालत में ख़ास तरह के लोगों के लिये और एक हद के अन्दर लाभदायक हो सकती है, बशर्ते कि उसे उसी हद के अन्तर रखा जाय. मूर्ति पूजा को बढ़ाना या फैलाना और उस पर जम जाना ग़लत और दीन धर्म के मामले में लोगों की तरक़्क़ी को रोकना है. लोगों को यह बराबर बताते रहना चाहिये कि मूर्ति ईश्वर नहीं है, ईश्वर केवल 'एक' और 'निराकार' है. मूर्ति अधिक से अधिक एक बेजान 'अलामत' है जो हमें उस ईश्वर की याद दिला दे और उसका ध्यान करने में कुछ मदद दे दे.

सूफ़ी धर्म की एक मशहूर किताब 'गुलशने राज़' के विद्वान लेखक से किसी ने पूछा कि—'बुत' क्या चीज़ है ? और 'जनेऊ' क्या चीज़ है ? विद्वान मुसलमान लेखक ने जवाब दिया—

"बुत ई जा मज़हरे इश्क़ अस्तो वहदत,
"बुवद ज़ुन्नार बस्तन अक़्दे ख़िदमत,
"चुं अशया हस्त हस्ती रा मज़ाहिर,
"अज़ां जुम्ले बुत हम यक बाशद आख़िर,
"नदीद ऊ अज़ बुत इल्ला ख़ल्क़े ज़ाहिर,
"अज़ीं जह शुद ऊ अन्दर शआ क़ाफ़िर,

"तू हम गर ज़ न बीनी हक़्क़ पिनहां,
"बबायद कि न गोयन्दत मुसलमां,
"मुसलमां गर बदानिस्ते कि बुत चीस्त,
"बदानिस्ते कि दीं दर बुतपरस्तीस्त."

यानी—"मूर्ति यहाँ अल्लाह के प्रेम और उसकी एकता को ज़ाहिर करती है, और जनेऊ बाँधना ईश्वर की सेवा के लिये कमर कसना है. दुनिया की सब चीज़ें उसी एक अल्लाह के 'ज़हूर' यानी 'रूप' हैं. मूर्ति भी इन्हीं सब चीज़ों में से एक है. मूर्ति पूजने वाले ने मूर्ति के अन्दर सिवा बाहर की मिट्टी, पत्थर के और कुछ न देखा, इसीलिये इस्लामी शरय के अन्दर वह 'काफिर' कहलाया, ऐ मुसलमान ! तू भी अगर जलदी से मूर्ति के अन्दर छुपे हुये 'हक़' यानी अल्लाह को नहीं देख सकता तो तू भी मुसलमान कहलाने का हक़दार नहीं है. मुसलमान अगर यह जान जाय कि मूर्ति क्या चीज़ है तो वह यह भी समझ जाय कि मूर्ति पूजा में दीन (धर्म) है."

कहते हैं कि हज़रत उमर जब काबे के काले पत्थर 'हजरुल-असवद' को बोसा देने से झिझके तो हज़रत अली ने उनसे कहा—"अलहज्र यमीनुल्लाह फिलअर्ज़" यानी—यह पत्थर इस ज़मीन पर अल्लाह का दायां हाथ है. इसके बाद हज़रत उमर ने 'हजरुल असवद' को यह कह कर बोसा दिया कि "ऐ पत्थर ! मैं खूब जानता हूँ कि तू सिर्फ पत्थर है. तू किसी का कोई फायदा नुक़सान नहीं कर सकता. मैं तुझे हरगिज़ बोसा न देता अगर मैंने रसूल (मोहम्मद साहब) के पाक लबों को तुझे बोसा देते न देखा होता."

इसी तरह हर मज़हब वालों के ख़ास ख़ास तीर्थ स्थान, पाक मुक़ाम, मन्दिर, मसजिद, गिरजे, अगियारी, गुरुद्वारे वग़ैरा होते हैं. उन सबकी ग़रज़ यही है कि आदमी का दिल दरजा बदरजा ऊँचे धार्मिक विचारों और रूहानी आदर्शों की तरफ़ बढ़ता चला जाय. जो लोग निराकार यानी ला-मकान का ख़याल

या उसका ध्यान कर सकने के नाक़ाबिल हैं उन्हें इन से मदद मिलती है. पारसी 'अगियारी' वही चीज़ है जो हिन्दू 'अग्नि-अगारा' या 'अग्निहोत्र' है.

हिन्दुस्तान के उत्तर से दक्खिन तक हिन्दुओं के सात पवित्र शहर मशहूर हैं और हज़ारों बरस से चले आते हैं—मायापुरी, जिसे आजकल हरिद्वार कहते हैं, मथुरा, अयोध्या, काशी, अवन्तिका जिसे उज्जैन कहते हैं, कांची जिसे कंजीवरम् कहते हैं, और द्वारका. किसी ज़माने में यह सातों विद्या के ख़ास स्थान थे. इन सातों को 'ब्रह्मपुरी' या 'विद्यापीठ' भी कहते थे. आजकल इनकी जगह एक दरजे तक यूनिवर्सिटियों ने ले ली है. इनमें काशी अभी तक विद्या की एक बहुत बड़ी जगह है और कम से कम तीन हज़ार बरस से चली आ रही है. इसी तरह हिन्दुओं के चार धाम हैं—उत्तर में बद्रीनाथ, पूरब में जगन्नाथ, दक्खिन में रामेश्वर और पच्छिम में द्वारका.

बौद्ध धर्म वालों के चार ख़ास तीर्थ हैं—एक लुम्बिनी बन जहाँ बुद्ध पैदा हुए थे; दूसरा बुद्ध गया, जहाँ उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था; तीसरा सारनाथ, जहाँ उन्होंने अपने धर्म का प्रचार शुरू किया और चौथा कुशीनगर जहाँ उनका 'विसाल' यानी परिनिर्वाण हुआ.

सारनाथ बनारस के पास एक जगह है जिसका पुराना नाम सारंगनाथ था. सारंग संस्कृत में हिरन को कहते हैं. वहाँ किसी समय शिव जी का एक बहुत बड़ा मन्दिर था जिसके आस पास हिरनों का एक बहुत बड़ा जंगल था. लेकिन किसी को वहाँ के किसी हिरन को मारने या उस जंगल में शिकार खेलने की इजाज़त नहीं थी. इसीलिए उस मन्दिर के शिवजी को 'सारंगनाथ' और उस जंगल को 'सारंग वन' कहते थे. आदमी के अन्दर जानवरों से प्रेम और उन पर दया का भाव भी हर धर्म के साथ साथ शुरू से चला आता है. हज़रत ईसा अपनी भेड़ों के गडरिये

कहलाते थे, उनकी तसवीरों में भी अकसर एक मेमना हाथों में रहता है. इंजील में उन्होंने बार बार अपनी भेड़ों का ज़िक्र किया है. आजकल की दुनिया में भी ख़ुद अमरीका के अन्दर यलो स्टोन पार्क (Yellow Stone Park) है जहाँ हज़ारों जानवर रहते हैं और किसी को शिकार की इजाज़त नहीं. यूरोप भर में हज़ारों चिड़ियाघर हैं. अफ़रीका में हाथियों, शेरों और तरह तरह के बड़े बड़े जानवरों के बड़े बड़े जंगल हैं जहाँ किसी को शिकार खेलने या किसी जानवर की तरफ उँगली उठाने तक की इजाज़त नहीं है. सैर करनेवालों की मोटरें शेरों और हाथियों के पास तक जा कर खड़ी हो जाती हैं. न कोई किसी से डरता है और न कोई किसी को छेड़ता है. दुनिया भर में जंगली जानवरों की रक्षा के लिये तरह तरह के क़ानून हैं. आदमी अपने को बार बार भूलता है और फिर बार बार धीरे धीरे अपने को पहचानता है.

हम ऊपर कह चुके हैं कि हर मज़हब में आदमी को किसी न किसी ठोस चीज़ की ज़रूरत पड़ती है जिस से वह प्रेम कर सके या जिस पर श्रद्धा दिखा सके. इस तरह की चीज़ों, तीर्थों, मन्दिरों, मसजिदों या गिरजों से लाखों लोगों के दिल आपस में मिलते हैं. दुनिया भर के लोग आ आ कर इन स्थानों में जमा होते हैं. वहाँ एक मज़हबी वातावरण पैदा हो जाता है. उन्हीं रास्तों से दुनिया में लेन देन, तिजारत, तरह तरह के विचार, सभ्यता और कलचर फैलते हैं और मानव एकता की कड़ियाँ मज़बूत होती हैं.

हज़रत मोहम्मद ने मक्के के तीन सौ साठ बुतों को उनकी जगह से हटवा कर फिकवा दिया, क्योंकि उस समय की बुत-परस्ती के बुरे नतीजों को उन्होंने अच्छी तरह देख लिया था. लेकिन वह इनसान के दिल की ज़रूरतों को जानते थे. उन्होंने हज़रत इब्राहीम के बनाए हुए 'अल्लाह के घर' काबा को क़ायम रखा, उसमें 'हज्रुलअसवद' को क़ायम रखा और बड़ी दूरअंदेशी

के साथ उसे दुनिया के करोड़ों ईमान वालों के हर साल मिलने की जगह ठहराई. नमाज़ में काबे की तरफ़ मुँह करना हर मुसलमान का फ़र्ज़ बताया. लेकिन साथ ही उन्होंने इस बात का ख़याल रखा कि इस काबे या पूरब पच्छिम के मामले में कहीं लोग लकीर के फ़क़ीर बन कर न रह जावें. क़ुरान में साफ़ लिखा है कि—

"पूरब और पच्छिम दोनों अल्लाह के हैं, और जिधर भी तुम नमाज़ में मुँह करो उधर ही अल्लाह का मुँह है. अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और सब जगह है. नेकी इसमें नहीं है कि तुम ने नमाज़ के वक़्त अपना मुँह पूरब की तरफ़ कर लिया या पच्छिम की तरफ़ कर लिया, नेकी इसमें है कि तुम एक अल्लाह को मानो और 'योमे आख़िरत' यानी कर्मों के फल मिलने को मानो और सब फ़रिश्तों, सब किताबों और सब नबियों को मानो."

'नमाज़' या इबादत के वक्तों के बारे में मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है—

"अल्लाह के लिए न कोई सुबह है और न कोई शाम."

क़ुरान में लिखा है—

"तुम जब भी और जहाँ भी हो अल्लाह तुम्हारे साथ है."

काबे में अब बुत नहीं हैं, फिर भी हाजियों का बयान है कि काबे की हज के रीत रिवाजों और हिन्दू तीर्थों के रीत रिवाजों में तरह तरह की समानता है. गंगाजल या मन्दिर के चरणामृत की जगह वहाँ 'ज़मज़म' के पाक कुएँ का पानी पिया जाता है. हाजी लोग ज़मज़म का पानी पीते भी हैं और अपने बदन पर छिड़कते भी हैं. वह उस पानी को बोतलों में भर कर भी अपने अपने देश ले जाते हैं और दूसरों को पिला कर पाक करते हैं. हज के समय केवल दो बेसिले कपड़े पहने जाते हैं जिन्हें 'अहराम' कहा जाता है. यह दोनों कपड़े बिलकुल

हिन्दुओं की धोती या लुंगी और उत्तरीय जैसे होते हैं. काबे की 'परिक्रमा' की जाती है जिसे 'तवाफ़' कहते हैं. 'हज्रुल असवद' को बोसा दिया जाता है. हाजी लोग वहां ध्यान जमा कर बैठते हैं. हज के वक़्त मुसलमान पंडे और मँगते इसी तरह उन्हें चारों तरफ़ से घेरते हैं जैसे हिन्दू मन्दिरों में. काबे के दो ख़ास पत्थर हैं 'हज्रुल असवद' और 'हज्रुल यमान' जिन की बाबत कहा जाता है कि यह दोनों आसमान से गिरे हुए टूटे तारे हैं जिन्हें अंगरेज़ी में 'मीटियर' कहते हैं, यानी आदमियों के गढ़े हुए नहीं हैं. हिन्दुस्तान के कई मशहूर मन्दिरों में जो शिव लिंग स्थापित हैं उनकी बाबत भी यही कहा जाता है. इंजील के पुराने अहदनामे में भी एक जगह लिखा है—

"अगर तुम ईश्वर के लिये पत्थर की वेदी बनाओ तो उसे आदमी के हाथ से गढ़े हुए पत्थर से न बनाओ, क्योंकि अगर तुमने औज़ार लेकर उसके ऊपर चलाना शुरू किया तो तुम उसे नापाक कर दोगे."

मुसलमान यात्री (ज़ाइर) मक्का के अलावा मदीना, नजफ़, करबला, मशहद वग़ैरा और तीर्थों की भी ज़ियारत करते हैं. 'ज़ियारत' और 'ज़ाइर' और 'यात्रा' और 'यात्री' चारों शब्द एक ही असल से निकले हैं और एक हैं.

यहूदी धर्म का सबसे बड़ा तीर्थ येरूसलम है. ईसाई धर्म के भी अनेक तीर्थ हैं जिनमें से कुछ वह हैं जिनका हज़रत ईसा के जीवन के साथ कुछ न कुछ सम्बन्ध रहा है या बताया जाता है. रोमन कैथलिक गिरजों में मरियम, ईसा और ईसाई सन्तों की मूर्तियाँ भरी रहती हैं जिस तरह हिन्दू मन्दिरों में हिन्दू देवी देवताओं की, और उनकी ठीक उसी तरह पूजा की जाती है, धूप दीप जलाए जाते हैं, जल छिड़का जाता है और घन्टे घड़याल बजाए जाते हैं जिस तरह हिन्दू मन्दिरों में.

एक आदर्श माँ और उसके गोद के बच्चे की पूजा भी

लगभग सब धर्मों में किसी न किसी रूप में मिलती है और एक दरजे तक क़ुदरती, अच्छी और मुफ़ीद है. यहाँ तक कि चीन के बौद्ध धर्म में भी एक नारी रूप में बुद्ध की पूजा की जाती है जिसे 'क्वान यिन' बुद्ध कहते हैं. उसके हाथ में एक बच्चा होता है. उसे दया की देवी माना जाता है जो सारी दुनिया की प्रार्थनाएँ सुनती है. इसलाम में फ़ातिमा और हसन हुसेन, ईसाई धर्म में मरियम और उनका बेटा, हिन्दू धर्म में यशोदा और कृष्ण या कौशल्या और राम, यह सब मिलती जुलती चीज़ें हैं.

लेकिन इस तरह की चीज़ों को आदमी आम तौर पर उचित से अधिक महत्व देने लगता है. वह मुनासिब हद से बाहर हो जाता है और इन चीज़ों की अच्छाई बुराई में बदल जाती है. हिन्दू मन्दिरों की गिरावट और बुराइयाँ सब को मालूम हैं. मुसलमानों में भी क़ब्रों और मज़ारों की पूजा वैसी ही गिरी हुई हालत तक पहुँच गई है—घर घर में मन्दिर और गली गली में मज़ार—इसीलिये सब धर्मों के समझदार लोग हमेशा आदमी को इन ऊपरी चीज़ों से हटा कर अन्दर की चीज़ों और असलियत की तरफ़ लाने की कोशिश करते रहते हैं. सूफ़ी कहता है—

"दिला तवाफ़े दिलां कुन कि काबए मख़फ़ीस्त"
"कि आं ख़लील बिना कर्दो ईं ख़ुदा ख़ुद साख्त.
"ता कै ज़ियारते मक़ाबिर, ऐ अफ़सुरदा!
"यक गुर्बए ज़िन्दा बेह अज़ हज़ार शेर मुरदा."

यानी—"ऐ दिल! दिलों की परिक्रमा कर कि उनके अन्दर एक काबा छिपा हुआ है. उस (पत्थर के) काबे को तो हज़रत ख़लील ने बनवाया था और इस (दिल के) काबे को ख़ुद ख़ुदा ने बनाया है. ऐ मुर्झाए दिल वाले! तू कब तक क़ब्रों की ज़ियारत करता रहेगा? एक ज़िन्दा बिल्ली हज़ार मरे हुए शेरों से अच्छी है."

हिन्दू परापूजा में लिखा है—

"जो ईश्वर पूर्ण यानी सब में है उसे एक मन्दिर के अन्दर कैसे बन्द किया जा सकता है, जो सबका आधार यानी सहारा है उसे एक जगह ला कर कैसे बिठाया जा सकता है, जिसका कोई ओर छोर नहीं उसकी प्रदक्षिणा कोई कैसे कर सकता है, और जिसके सिवा कोई दूसरा है ही नहीं उसको कोई नमस्कार कैसे कर सकता है."

योग भाष्य में लिखा है—

"ईश्वर न स्वर्ग में रहते हैं न पाताल में, न पहाड़ों की कन्दराओं में, न समंदर की गहराई में. वह आदमी के दिल की गुफा में रहते हैं, और उस गुफा को अपने नूर से रोशन किये हुए हैं. उसी नूर में आत्मा यह अनुभव करता है कि मैं कोई अलग वजूद हूँ ही नहीं."

ठीक यही बात इन्हीं शब्दों में इंजील में जगह जगह कही गई है.

बुद्ध ने साफ शब्दों में कहा है कि—"आदमी को अपनी मुक्ति यानी नजात अपने अन्दर ही ढूँढनी चाहिये."

बुद्ध का सब से आख़िरी उपदेश यह बताया जाता है—

"तुम अपनी आत्मा को ही अपने लिये चिराग़ बनाओ, अपनी आत्मा का ही सहारा लो, दूसरे किसी का सहारा न लो. बाहर की सब चीज़ों का सहारा और उनसे पैदा होने वाली इच्छाएँ और उम्मीदें सब मिट जायँगी. केवल आत्मा ही बाक़ी रह जायगा. इसलिये ध्यान के साथ अपनी आत्मा को खोजने और समझने में लग जाओ."

जैनियों की किताब 'समाधि शतक' में भी यही बात इन्हीं शब्दों में कही गई है. फिर भी जैन मन्दिरों से बढ़ कर रुपया शायद किसी धर्म के मन्दिरों पर ख़र्च नहीं किया जाता. इनमें से कुछ मन्दिर बहुत ही सुन्दर और शानदार हैं. कलावन्तों की

राय है कि आबू पहाड़ के जैन मन्दिर शान और सुन्दरता में आगरा के ताज से शायद कुछ ही कम हों.

गुरु नानक ने कहा है—

"काहे रे मन ! बन खोजन जाई !
"सरब निवासी सदा अलेखा, तो संग रहत सदाई !
"पहुप मांहि जस बास बसतु है, मुकुर मांहि जस छाई !
"तैसे ही हरि बसत निरन्तर, घटहिं में खोजो, भाई !
"भीतर बाहर एक ही जानो, यह गुरु ज्ञान बताई !
"कहे नानक बिनु आपा चीन्हे, मिटे न भ्रम की काई !"

यानी—"ऐ मेरे दिल ! तू क्यों जंगलों में खोजने जाता है. वह ईश्वर सब के अन्दर है, सब जगह है. कहीं दिखाई नहीं देता, लेकिन सदा तेरे साथ रहता है. जिस तरह फूल में .खुशबू रहती है और जिस तरह शीशे में अक्स रहता है वैसे ही ईश्वर हमेशा सब के दिलों में रहता है. ऐ भाई ! उसे अपने दिल के अन्दर ढूँढो, गुरु ने यह ज्ञान बताया है कि भीतर बाहर सब एक ही जानो. नानक कहता है कि बिना अपने आपे को पहचाने जहालत की काई नहीं मिट सकती."

एक और पंजाबी सूफ़ी संत ने कहा है—

"ऐ भाई ! तू ढूँढने वाले को ढूँढ. तू दूसरे घरों के चक्कर में क्यों पड़ा है ? जिसे तू जंगलों में ढूँढता फिरता है, वह सब का दोस्त कहीं .खुद तू ही न हो !"

लेकिन सिखों में भी ग्रंथ साहब के क़ीमती उपदेशों को समझने और उन पर अमल करने के बजाय खुद ग्रंथ साहब को क़ीमती रेशमी कपड़ों में लपेट लपेटकर ऊँची जगह पर रखा जाता है और उन पर चँवर डुलाए जाते हैं.

तीर्थों, पाक मुक़ामों, ईंट पत्थर के मन्दिरों, मसजिदों, गिरजों, मूर्तियों और बाहरी रीत रिवाजों की कुछ लोगों को उसी तरह ज़रूरत पड़ती है जिस तरह शुरू के पढ़ने वाले बच्चों को लकड़ी के टुकड़ों और खिलौनों की ज़रूरत पड़ती है. पर उस

हद के बाहर यह चीजें लाभ के बजाय हानि पहुँचाने लगती हैं, लोगों के दिलों और दिमाग़ों को ठस कर देती हैं, और प्रेम की जगह झगड़े की जड़ें बन जाती हैं. इसीलिये सब धर्मों के समझदार लोगों को चाहिये कि वह अधिक मूर्तियों, मंदिरों, मक़बरों, मसजिदों वग़ैरा के बनने को रोकें. हिन्दू धर्म में कहा गया है कि कोई नया मन्दिर बनवाने की जगह किसी पुराने मन्दिर की ठीक ठीक मरम्मत कराकर उसे बनाए रखना ज़ियादा अच्छा है. इसलाम में बताया गया है कि कोई नई मसजिद ऐसी जगह नहीं बननी चाहिये कि जहाँ किसी पहली मसजिद की अज़ान की आवाज़ पहुँच सकती हो.

मशहूर मुसलमान संत हज़रत जुनैद ने अपनी एक कहानी में ऊपरी दीन और भीतरी दीन के इस फ़रक़ को या धर्म के अन्दर साधन और साध्य के फ़रक़ को बड़ी सुन्दरता से समझाया है. कहानी यह है—

कोई आदमी काबे की हज करके लौटा और जुनैद से मिला. उसने जुनैद से कहा—"मैं हज की सारी रसमें ठीक ठीक अदा कर आया हूँ." जुनैद ने उससे पूछा—"जिस समय से तुम अपने घर से सफ़र के लिये निकले उस समय से जितना जितना तुम अपने घर से दूर होते गए उतना उतना अपने गुनाहों से भी दूर होते गए या नहीं ?" उस आदमी ने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तो तुम ने घर से सफ़र किया ही नहीं. अच्छा अब यह बताओ कि हर पड़ाव पर जहाँ तुम ठहरे तुम एक पड़ाव और अल्लाह की तरफ़ बढ़े या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तो तुम ने अभी कोई पड़ाव किया ही नहीं. अब बताओ कि जब तुमने अपने मामूली कपड़े उतार कर अहराम बाँधा (यानी हज के कपड़े पहने) तो कपड़ों के साथ साथ तुमने अपनी बुराइयों को फेंक कर उनकी जगह नेकियों को अपने ऊपर ओढ़ा या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तो तुम ने अहराम बाँधा ही

नहीं. अच्छा तो अब बताओ कि जब तुम इरफ़ात की पहाड़ी पर खड़े हुए तो तुम्हारा दिल अल्लाह के ध्यान में डूबा हुआ था या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तो तुम इरफ़ात पर खड़े ही नहीं हुए. अच्छा तो अब बताओ कि जब तुम ने काबे के चारों तरफ़ चक्कर लगाए तो तुमने ला मकान (यानी निराकार) अल्लाह की अलग अलग सिफ़तों पर ग़ौर किया या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तो तुमने काबे का तवाफ़ किया ही नहीं. अब बताओ जब तुम सफ़ा और मरवा की पहाड़ियों के बीच में दौड़े तो तुम्हारे अन्दर सफ़ा यानी पाकी और मुरव्वत यानी दूसरों का लिहाज़ पैदा हुआ या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तब तुम दौड़े ही नहीं. अब बताओ कि जब तुम क़ुरबानी की जगह पहुँचे तो तुमने अपनी दुनियावी ख्वाहिशों को क़ुरबान किया या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने फिर कहा—"तब तुमने क़ुरबानी की ही नहीं. अब बताओ कि जब तुमने कंकरियाँ फेंकीं तो जो कुछ शहवत (यानी काम वासना) के विचार तुम्हारे मन में रह गए थे उन्हें भी फेंक दिया या नहीं ?" उसने जवाब दिया—"नहीं !" जुनैद ने कहा—"तब तुमने कंकरियाँ फेंकीं ही नहीं, और न तुम ने हज की है."

हिन्दू और मुसलमान सन्तों और फ़कीरों की बाणी में इस तरह के विचार भरे पड़े हैं. धर्म या मज़हब के इन ऊपरी रूपों से हट कर धर्म मज़हब के असली मक़सद की तरफ़ यानी अपने अन्दर की तरफ़ रुख़ करना ही सच्चे धर्म और सच्चे दीन की तरफ़ बढ़ना है. यही मज़हब के जिस्म से मज़हब की रूह की तरफ़ जाना है. यही इनसानी एकता को समझना और अपने और सब के अन्दर के ईश्वर अल्लाह को पहचानना है.

—⊙—

३१

धर्मों के अलग अलग रीत रिवाज

दुनिया के सब धर्मों में जिस तरह बुनियादी सचाइयाँ और सदाचार के नियम एक से हैं उसी तरह ऊपर के रीत रिवाज, खेल तमाशे, खुशी और रंज के त्योहार भी बहुत कुछ एक से होते हैं. हिन्दुओं में सत्यनारायण की कथा होती है तो मुसलमानों में मौलूद शरीफ़. मुसलमान मुहर्रम में अपने ख़ास महापुरुषों को याद करते हैं तो हिन्दू पितृपक्ष में अपने पुरखों को याद करते हैं. वह इकादशी को व्रत रखते हैं तो यह रमज़ान में रोज़े रखते हैं. हिन्दुओं का चांद्रायण व्रत तो बिलकुल रमज़ान से मिलता हुआ है. उनका रामलीला-का जलूस निकलता है तो इनके दुलदुल और ताज़िया निकलते हैं. ईसाइयो और दूसरे धर्म वालो के भी इसी तरह के ख़ास ख़ास त्योहार हैं. अठवारे के दिनों में भी किसी ने किसी को पाक मान रखा है तो किसी ने किसी को. वैदिक धर्म वाले आम तौर पर चाँद की हर पहली, आठवीं और ग्यारहवीं तारीख़ को पाक मानते हैं. यहूदी सनीचर को, मुसलमान जुमे को, ईसाई इतवार को. कहीं कहीं हिन्दू मंगल को ख़ास दिन मानते हैं. यही इनके अलग अलग आराम करने के दिन समझे जाते हैं.

आदमी के दिल की माँग सब जगह क़ुदरती तौर पर एक ही सी होती है. वह कभी खेल तमाशा चाहता है, कभी हँसना, कभी रोना और कभी अपने ईश्वर अल्लाह की याद में खाने पीने को भी भूल जाना चाहता है. अन्दर की इस माँग को पूरा करने के लिये तरीक़े अलग-अलग हैं, पर बात वही है. अफसोस केवल

इतना है कि यह खेल तमाशे और रीत रिवाज अधिकतर अपने धर्म के बुनियादी असूलों से भी बहुत दूर चले जाते हैं और प्रेम और मेल मिलाप की जगह नफ़रत और लड़ाई का कारण बन जाते हैं. ज़माने के साथ साथ इन त्योहारों का रंग रूप भी कभी कभी इतना बदल जाता है कि त्योहार की असलियत में और उसके आजकल के मनाने के ढंग में कोई नाता ही नहीं रह जाता.

यहाँ एक और बात की तरफ़ ध्यान देना ज़रूरी है. लगभग हर ज़माने और हर देश में शायरी, नाटक, ड्रामा, नाचना, गाना, बजाना, चित्रकारी, पच्चीकारी, मीनाकारी, मकान बनाना, बाग़ लगाना, कपड़े बनाना, शहर बसाना, जैसी कलाओं और कारीगरियों की जितनी उन्नति मज़हब से हुई है उतनी और किसी चीज़ से नहीं हुई. दुनिया के बड़े से बड़े हुनरमंदों और कलावन्तों ने अधिकतर मज़हब से ही नई नई सूझ बूझ पाई है और शक्ति हासिल की है. दुनिया भर में कला और हुनर के अच्छे से अच्छे नमूने मज़हब के मैदान में ही मिलते हैं. यह बात है भी क़ुदरती. सच्चा मज़हब वही है जो आदमी के अन्दर की ऊँची से ऊँची भावनाओं और उमंगों को जगावे, उजागर करे और पूरा करे. अच्छे से अच्छे हुनर और कला इन्हीं भावनाओं से पैदा होते हैं. सबके भले की भावना इन्हीं भावनाओं में से एक और शायद सबसे ऊँची भावना है. इस भावना ने दुनिया के कलावंतों को सबसे अधिक आगे बढ़ाया है. मज़हब का भी यही निचोड़ है. इस तरह मज़हब लोगों को इन्द्रिय सुख देने का भी बड़ा साधन होता है. इसी तसवीर का दूसरा रुख़ यह है कि जब जब पंडे, पुरोहितों, मुल्ला, पादरियों की नासमझी या नालायक़ी की वजह से मज़हब में गिरावट आई है या लोगों की माद्दापरस्ती और ऐशपरस्ती ने धर्म को नीचे घसीटा है तब तब कला और हुनर में भी भद्दापन, भोंडापन, जंगलीपन, ग़ैरियत, नफ़रत और अन्याय दिखाई देने लगे हैं. जो चीज़

आदमी के दिल के अन्दर झाड़ू देकर उसे साफ करेगी वही उस घर को रोशन करेगी और वही आदमी की भावनाओं, कला और दस्तकारियों को ऊँचा ले जाएगी.

आजकल हमारे अधिकतर त्योहार और उनको मनाने के ढंग हम में एक दूसरे से अलहदगी और नफ़रत पैदा करते हैं. यहाँ तक कि यह त्योहार मारकाट, ख़ून ख़राबियों और बदले की भावनाओं की जड़ बन रहे हैं. तमाम योरप में पिछले हज़ार बरस तक अधिकतर यही हाल रहा है. हिन्दुस्तान में आज भी बहुत दरजे तक यही हाल है. अगर अलग अलग मज़हबों के अगुआ अपने अपने दिमाग़ों को साफ कर सकें और अपने दिलों को ऊँचा ले जा सकें तो उन्हें चाहिये कि एक साथ मिल बैठकर प्रेम के साथ सब धर्मों के त्योहारों में से ख़ास ख़ास को चुन लें और फिर अपने अपने धर्म के मानने वालों को सलाह दें कि उन त्योहारों को सब मिलकर मनाएँ. इस तरह हर धर्म वाले अपने और दूसरों के सबके सुख को दुगुना, चौगुना कर देंगे और सब को सब की अच्छी अच्छी बातों से सीख मिल सकेगी.

आज की दुनिया में अलग अलग मुल्कों के शासकों और राजकाजी नेताओं का मिलना जितना ज़रूरी है उतना ही धार्मिक नेताओं का मिलना ज़रूरी है. दुनिया एक होती जा रही है. मिलना हमें है ही, फिर चाहे नफ़रतों, दंगों और जंगों के लिये अलग अलग संगठन, तनज़ीमें और पैक्ट करके एक दूसरे से टकराएँ और एक दूसरे को मिटाएँ और चाहे प्रेम, एकता, अमन और शान्ति के नाम पर एक दूसरे को गले लगाएँ. पहला रास्ता बरबादी और मौत का रास्ता है और पाप है, दूसरा रास्ता ख़ुशहाली और ज़िन्दगी का रास्ता है और यही सच्चा धर्म है. सबके भले का और सब को बराबर बराबर जिस्मानी और रूहानी ख़ुराक पहुँचाने का यही एक रास्ता है.

सब धर्मों में अपने अपने ढंग से संस्कार, सुन्नत, दीक्षा, और

बपतिस्मा भी होते हैं. मुसलमान इन्हें 'तक़दीस' कहते हैं, हिन्दू 'उपनयन', और पारसी 'नवजोत'. मतलब सबका एक है, दिल को साफ़ करना और ऊँचा ले जाना. हिन्दू धर्म की किताबों में लिखा है कि संस्कार के ज़रिये आदमी एक तरह 'फिर से पैदा होता है.' हज़रत ईसा इसीलिये कहा करते थे—"फिर से बच्चों की तरह हो जाओ." इनमें से कुछ तरीक़े अभी तक बहुत अच्छे तरीक़े हैं. नहाने, धोने, वज़ू और पाकी पर इन में बहुत ज़ोर दिया जाता है. पाकी या सफ़ाई पर सबसे अधिक ज़ोर शायद पारसी धर्म में दिया गया है. पारसी किताब वेन्देदाद में लिखा है—

"ज़िन्दगी से उतर कर पाकीज़गी आदमी के लिये सबसे अधिक भलाई की चीज़ है. यह पाकीज़गी उसमें आती है जो अपने को पाक विचारों, पाक शब्दों, और पाक कामों से लगातार पाक करता रहता है."

ईसाइयों में एक कहावत है—"ख़ुदा की अच्छाइयों को अपने अन्दर लाने की कोशिश से उतर कर अगर कोई चीज़ है तो वह पाकीज़गी यानी शुद्धता है."

कहा जाता है कि किसी नौजवान ईसाई को पादरी बनाते समय उससे पूछा गया कि—"पाकीज़गी ख़ुदा की अच्छाइयों को अपने अन्दर लाने की कोशिश के ठीक पहले आनी चाहिये या ठीक बाद में ?" उसने जवाब दिया—"पहले भी और बाद में भी." उसकी बात बिलकुल ठीक थी. पाकीज़गी यानी शुद्धता के इसी ऊँचे असूल को पिछले ज़माने के हिन्दू इस बुरी हद तक खींच कर ले गए कि उस से अपने में हज़ारों जातें और उपजातें बना डालीं और छुआछूत जैसी बुरी चीज़ चला दी.

भगवान को याद करते समय मन को एक तरफ़ लगाने के लिये सब धर्मों वाले माला या तसबीह या 'रोज़री' इस्तेमाल करते हैं. हिन्दू जप करते हैं. मुसलमान अज़कार, ईसाई लितानी. हिन्दू उपवास रखते हैं, मुसलमान रोज़ा, और ईसाई

फ़ास्ट. हिन्दू रतजगा या जागरण करते हैं, मुसलमान शब-बेदारी और ईसाई 'विजिल'. सबका मतलब यही है कि दिल अल्लाह पर जमे और अल्लाह दिल में आकर बैठे.

हिन्दू, मुसलमान और यहूदी सब आजकल यह भी मानते हैं कि ख़ास ख़ास मौक़ों पर जानवरों की बलि देने या उनकी क़ुरबानी करने से ईश्वर अल्लाह को .खुश किया जा सकता है. सब में जानवरों की क़ुरबानी का रिवाज है. .खुशक़िस्मती से सब यह भी मानते हैं कि मांस खाना कभी कभी छोड़ देने से रूहानी तरक़्क़ी में मदद मिलती है. मुसलमान सूफ़ी इसे 'तर्के हैवानात' कहते हैं और कभी कभी चालीस दिन तक और कोई कोई ज़िन्दगी भर के लिये गोश्त खाना छोड़ देते हैं. सब यह भी मानते हैं कि अपनी ख़ाहिश को रोकना, 'नफ़्सकुशी' यानी तृष्णा का त्याग बड़े ऊँचे असूल हैं.

जानवर की क़ुरबानी का असली मतलब यह है कि हमारे अन्दर जो जानवर या दरिन्दा बैठा हुआ है यानी हमारी .खुदी, हमारा काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार उन्हें मार कर ख़त्म किया जाय. बकरा, भैंसा, घोड़ा, ऊँट, गाय और आदमी तक की क़ुरबानी इन ही अर्थों में करनी चाहिए. पर उलटा होता यह है कि हमारे अन्दर की वही .खुदी अपने को बचाने के लिये क़ुरबानी के असल मतलब को भुला कर शब्दों को चिपट जाती है और अपनी जगह बेगुनाह जानवरों की बलि चढ़ाकर अपनी तसल्ली कर लेती है. सच यह है कि उस ईश्वर अल्लाह को, जो रहमान और रहीम है, जो शिवशंकर है, सिवाय आदमी की .खुदी की .क़ुरबानी के और कोई .क़ुरबानी क़बूल नहीं हो सकती.

वैदिक धर्म में जिसे 'गोमेध' कहते थे उसी को पारसी धर्म की किताब 'ज़िन्दावस्ता' में 'गोमेज़' कहा गया है. विद्वान लोग इनके दूसरे दूसरे और अच्छे अच्छे अर्थ भी लगाते हैं. पर जो तफ़सील 'गोमेध' की पुरानी किताबों में दी हुई है वह

काफ़ी दर्दनाक है. हिन्दू मन्दिरों में ख़ासकर देवी की मूर्तियों के सामने बकरे, भैंसे, मुरग़े, कबूतर सब की क़ुरबानियाँ आज भी होती हैं. सब धर्म वालों ने हमें यह समझाने की कोशिश की है कि हमें जल्दी से जल्दी इन रिवाजों से बाहर निकल आना चाहिये.

महाभारत के शान्ति पर्व में लिखा है कि एक बार ऋषियों और देवताओं में इस बात पर बहस हुई कि यज्ञ में जानवरों को मारना चाहिये या नहीं. आख़ीर में ऋषियों ने फ़ैसला किया कि यज्ञ में जानवरों का ख़ून नहीं बहाना चाहिये. लिखा है कि—

"वेदों का कहना यह है कि बीजों यानी नाज के दानों से यज्ञ करना चाहिये. 'अज' शब्द के मानी यहाँ बकरा नहीं है. तुम ग़लत समझते हो. अज का अर्थ वह दाने हैं जिन में अभी अंकुर नहीं फूटे. तुम्हें यज्ञ में बेगुनाह बकरों को नहीं मारना चाहिये. यह भले लोगों का धर्म नहीं है. यह ज़माना नेक काम करने का ज़माना है. तुम्हें जानवरों की हत्या बन्द कर देनी चाहिये."

(महाभारत, शान्ति पर्व, अध्याय ३४५)

महात्मा बुद्ध ने इस देश में जो बड़े बड़े धार्मिक सुधार किये उनमें से एक यह था कि उन्होंने जानवरों की क़ुरबानी को क़रीब क़रीब बन्द करा दिया. मांस का खाना इस देश में वह पूरी तरह बन्द नहीं कर पाए, पर उन्होंने उसे बहुत कम कर दिया और लाखों के जीवन में से बिलकुल मिटा दिया. राजा बिम्बसार के यहाँ जाकर उन्होंने जानवरों की क़ुरबानी को रोका. जैन धर्म के मानने वालों में भी जानवरों की हिंसा से और मांस खाने से परहेज़ किया जाता है.

हज़रत ईसा से पहले यहूदियों में भी जानवरों की क़ुरबानी का रिवाज था. यहूदी ईश्वर के नाम पर आग में आहुतियाँ

दिया करते थे और उसी में जानवरों को मार कर डाला करते थे. इंजील में बार बार और जगह जगह इस रिवाज को बन्द करने का उपदेश दिया गया है. लिखा है—

"जाओ और बात का असली मतलब समझो. मैं (ईश्वर) दया यानी रहम चाहता हूँ, क़ुरबानी नहीं." (मैथ्यु)

"मैं चाहता था तुम्हें ईश्वर का ज्ञान हो. यह नहीं चाहता था कि तुम जानवरों को काट कर आग में उनकी आहुति दो."
(होसिया)

"ईश्वर की आज्ञा मानना जानवरों की क़ुरबानी करने से अच्छा है और सचाई पर ध्यान देना मेंढे की चरबी से बेहतर है."
(साम)

"ईश्वर कहता है—अगर मुझे भूख लगती तब भी मैं तुमसे न कहता क्योंकि दुनिया और दुनिया की सब चीजें मेरी हैं. क्या मैं बकरों का गोश्त खाऊँगा या साँडों का ख़ून पियूँगा ? ईश्वर को धन्यवाद दो और नेक काम करने की अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करो."
(साम्स)

"मैं (ईश्वर) बैलों, मेमनों या बकरों के ख़ून से ख़ुश नहीं होता. फ़िज़ूल के चढ़ावे मुझे मत चढ़ाओ. नहीं तो जब तुम मुझसे प्रार्थनाएँ करोगे, मै नहीं सुनूँगा, क्योंकि तुम्हारे हाथ ख़ून में रँगे हुए हैं."
(इसाया)

"ईश्वर के सामने अपना टूटा हुआ दिल और अपनी ग़लतियों के लिये पछतावा लेकर जाओ. यही सच्ची क़ुरबानी है. जो ऐसा करता है ईश्वर उसी को अपनाता है."
(साम्स)

"क्या मैं ईश्वर के सामने जले हुए गोश्त की आहुतियाँ लेकर जाऊँगा ? क्या मैं साल भर के छोटे छोटे बछड़ों का गोश्त लेकर जाऊँगा ? क्या हमारा मालिक सैकड़ों भेड़ों और तेल की नदियों से ख़ुश होगा ? उसने हमें नेकी का रास्ता दिखा दिया है. ईश्वर हमसे और कुछ नहीं चाहता सिवाय

इसके कि हम सबके साथ न्याय करें, सब से प्रेम करें, सब पर दया करें, नम्रता के साथ झुक कर चलें." (माइका)

"जो कोई किसी एक बैल की हत्या करता है उसने मानो एक आदमी की हत्या की." (इसाया)

"ऐ ईश्वर, तूने हमसे .क़ुरबानी करने के लिये और चढ़ावे चढ़ाने के लिये नहीं कहा. तू ने हमारे कान खोल दिये हैं. तुझे आग में आहुतियों और पाप के चढ़ावों की ज़रूरत नहीं है. मैं अपने ईश्वर के भजन गाऊँगा और उसे धन्यवाद दूँगा. ईश्वर इससे .ख़ुश होगा. सींगों और खुरों वाले बैलों और साँडों की हत्या से .ख़ुश नहीं होगा."

(साम्स, अध्याय ४० और ६६)

"जो कोई अपनी .ख़ुदी को पाएगा वह अपने असल जीवन को खो देगा और जो कोई अपनी .ख़ुदी को मिटा देगा वह असली जीवन को हासिल करेगा." (इंजील)

यहाँ .ख़ुदी से मतलब आदमी का छोटा आपा है और असल जीवन से मतलब सबके साथ मिल कर सबका मिला जुला आपा है. वही ईश्वर अल्लाह है.

सूफ़ी कहता है—

"बेख़ुदी की तरफ़ कोशिश करके बढ़, तब तू अपने असली आपे को पा सकेगा. अल्लाह सब ठीक जानता है. तू अपनी .ख़ुदी का .ग़ुलाम कब तक बना रहेगा ? इस .ख़ुदी से बाहर निकल. रीत रिवाज के नापाक जूतों को बाहर उतार कर ईश्वर के मन्दिर में जा और उसके चमत्कार देख."

कबीर साहब ने कहा है—

"जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं
प्रेम गली अति सांकरी, वा में दो न समाहिं."

इसी विचार को सूफ़ी ने इन शब्दों में प्रकट किया है—

"हम मोतक़िदे दावए बातिल नहीं होते,
सीने में किसी शख़्स के दो दिल नहीं होते."

एक और सूफ़ी ने कहा है—

"मेरे जुब्बे यानी कुरते के अन्दर सिवा .खुदा के कोई और है ही नहीं."

यही ख़याल सूफ़ियों ने फ़ारसी और अरबी के शेरों में जगह जगह और तरह तरह से ज़ाहिर किया है.

.कुरान में लिखा है—

"लंय्यनालल्लाह लोहूमोहा वला देमावुहा व लाकिय्यना लोहुत्तक़वा मिनकुम." (.कुरान, २२–३७)

यानी—".कुरबानी के जानवरों का .खून या गोश्त अल्लाह को नहीं पहुँचता. अल्लाह को सिर्फ़ तुम्हारे दिल का तक़वा (परहेज़गारी) पहुँचता है, यानी यह कि तुम बुरे कामों से बचे रहो."

रूह यानी आत्मा की दरजे बदरजे तरक्क़ी के लिये हिन्दू 'योग' और सूफ़ी 'सलूक' दोनों में हर तरह के गोश्त से परहेज़ ज़रूरी बताया गया है. हज़रत अली जो सबसे पहले सूफ़ी माने जाते हैं कहा करते थे कि—"अपने पेटों को जानवरों की क़बरे मत बनाओ.'

आदमी की क़ुदरती ख़्वाहिशों और कमज़ोरियों को जहाँ एक तरफ़ क़ाबू में करना ज़रूरी है वहाँ कभी कभी और एक दरजे तक उन्हें खुले मौक़ा देना भी ज़रूरी हो जाता है. इसीलिये सब धर्मों में किसी न किसी रूप में जानवरों की बलि और क़ुरबानी जैसी चीज़ें रखी गई हैं. यह चीज़ें सब धर्मों में ऐसी ही हैं जैसी हर आदमी के शरीर के अन्दर, और सुन्दर से सुन्दर आदमी के अन्दर, मैले से भरी हुई अँतड़ियाँ होती हैं. केवल ईसाइयों, बौद्धों और जैनियों में क़ुरबानी का रिवाज नहीं है. हर मज़हब ने इन चीज़ों पर रोक थाम भी लगाई है और रोक थाम के रास्ते बताए हैं.

भागवत में लिखा है—

"लोगों में स्त्री पुरुष का एक दूसरे की तरफ़ झुकाव और गोश्त और शराब की इच्छा होती ही है. उसे जगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती. इन चीज़ों पर रोक थाम रखने के लिये शादी का रिवाज और यज्ञों का रिवाज डाला गया है. इनसे बचे रहना बहुत ज़ियादा अच्छा है."

इंजील में लिखा है—

"जो लोग अपने को रोक नहीं सकते उन्हें चाहिये कि शादी कर लें. क्योंकि अन्दर अन्दर जलते रहने से शादी कर लेना अधिक अच्छा है."

हर धर्म के मानने वाले किसी न किसी तरह का अपना बाहरी निशान भी रखते हैं. कोई सर पर पीछे की तरफ़ चोटी रखते हैं, कोई दाढ़ी रखते हैं, कोई सब बाल बढ़ाते हैं, और कोई कुछ ईसाई पादरियों की तरह ख़ास तरह सर मुँडवाते हैं, कोई बाएँ कन्धे के ऊपर से जनेऊ डालते हैं, और माथे पर तरह तरह के तिलक लगाते हैं. कोई कमर के चारों तरफ़ ज़ुन्नार बाँधते हैं, कोई टोपियों पर हेलाल और सितारा लगाते हैं और कोई अपनी गरदनों में क्रास लटकाते हैं. लगभग सब जन्तर मन्तर या गंडे ताबीज़ जैसी चीज़ों में भी विश्वास रखते हैं और उन्हें पहनते हैं. गहरे विश्वास के कारण इन चीज़ों का उनके ऊपर असर भी होता है. सब धर्म वालों की ख़ास ख़ास पोशाकें हैं. यह पोशाकें कहीं क़ौमी या राष्ट्री मानी जाती हैं और कहीं धार्मिक. यह सब अलग अलग चीज़ें अगर केवल कला या सुन्दरता की निगाह से पहनी जातीं ताकि एक दूसरे को अच्छी लगें, या अगर इनके साथ थोड़ा बहुत सच्चा भक्ति भाव भी होता, तो इन सब रंग बिरंगी चीज़ों से आदमी की सुन्दरता बढ़ती, नई नई चीज़ें सबको अच्छी लगतीं, और हमारा समाजी जीवन और अधिक मनोरंजक और ख़ुश करने वाला होता. पर इसकी जगह आजकल अधिकतर इन्हें देख कर भी एक दूसरे से

चिढ़ और नफ़रत बढ़ती है. कारण यह है कि हमारे धार्मिक नेता जो रहनुमाई करने की जगह लोगों को और गुमराह करते हैं, अपने लोगों में समझ और प्रेम की जगह नफ़रतें और ग़ुस्से अधिक पैदा करते हैं. वह अपने अपने लोगों को यही बताते रहते हैं कि जो लोग उनकी तरह चोटी नहीं रखते दाढ़ी रखते हैं, या दाढ़ी नहीं रखते चोटी रखते हैं, या दूसरी तरह के कपड़े पहनते हैं, या दूसरी चीज़ें खाते पीते हैं, या दूसरी बोली बोलते हैं, या किसी दूसरी बोली में दुआ प्रार्थना करते हैं वह सब ग़ैर हैं जिनसे बचना चाहिये, बल्कि दुशमन हैं जिन्हें दबाना चाहिये.

सब मज़हबों वाले अपनी पूजा के स्थानों को अलग अलग नामों से पुकारते हैं. इन नामों का अर्थ अकसर एकसा होता है. गिरजा को 'ख़ुदा का घर' भी कहते हैं. मन्दिर को 'देवालय' भी कहते हैं. उसके भी वही मानी हैं. मसजिद को 'बैतुल्लाह' कहते हैं. इसके मानी भी ख़ुदा का घर है. गिरजा, मसजिद या मन्दिर बनाने में सब ऊँची ऊँची आसमान को छूने की कोशिश करने वाली शिखर, कलश, गोपुर, मिनारा, गुम्बद, डोम, स्टीपल वग़ैरा बनाते हैं. लोगों को पूजा इबादत के लिये बुलाने के सबके कोई न कोई ढंग हैं. कोई अज़ान देते हैं, कोई घटा बजाते हैं, कोई घड़ियाल. मरे हुओं का कोई श्राद्ध करते हैं, कोई फातहा पढ़ते हैं, कोई दुआएँ पढ़ते हैं. मरने के बाद कोई भोज खिलाते हैं, कोई कन्दूरी और कोई और और तरह की दावतें देते हैं. सब के कोई न कोई धार्मिक गुरु होते हैं. हिन्दू गुरु के 'शिष्य' होते हैं, मुसलमान पीर के 'मुरीद' कहलाते हैं और ईसाई सेन्ट के 'डिसाइपल' होते हैं. कोई आसन पर बैठता है, कोई सज्जादे पर. कोई घुटने टेक कर नमाज पढ़ता है. कोई पलौथी मार कर संध्या करता है. कोई साष्टांग दंडवत करता है, कोई परिक्रमा या तवाफ करता है. कोई पूजा करने में शरीर के अलग अलग भागों को बार बार

हाथ लगाता है और अलग अलग मंत्र पढ़ता जाता है. कोई घुटनों के बल खड़ा हो जाता है, कोई अपनी एड़ियों के बल घूमता है—ढंग अलग अलग, मतलब सबका एक.

हिन्दुओं में पंडे, पुरोहित, पुजारी, याजक, धर्माधिकारी, और आचार्य होते हैं. मुसलमानों में मुअज़्ज़न, मुजाविर, मुतवल्ली, मुल्ला, मुफ्ती, आलिम, मुजतहिद, इमाम और ख़लीफ़ा होते हैं. पारसियों में दस्तूर और मोबिद होते हैं. यहूदियों में स्क्राइब, फ़रीसी और रब्बी होते हैं, बौद्धों में फुंगी, लामा, बोन्ज़ होते हैं. इसी तरह के दरजनों नाम ईसाइयों में हैं वग़ैरा, वग़ैरा.

इनसे मिलते जुलते सब में अलग अलग संन्यासी, यति, मंडलेश, साधू, बैरागी, उदासी, मठाधीश, संत, महन्त, फ़क़ीर, दरवेश, औलिया, सज्जादा नशीन, शेख़, पीर, मुरशिद, तकियादार, मिस्कीन, भिक्षु, स्थानकवासी, श्रमन, थीर, महाथीर, मांक, नन, वग़ैरा वग़ैरा सब धर्मों में होते हैं, जिनकी तादाद बहुत है पर जिनमें सच्चे साधू या तपस्वी कोई बिरले ही मिलते हैं.

सबके अपने अपने मठ, अखाड़े, धर्मशाला, विहार, लामासरी, दरगाह, तकिया, ख़ानक़ाह वग़ैरा हैं, जिनमें से अधिकतर का इन्तज़ाम बहुत ही ख़राब होता है और बहुत से तो पाप के अड्डे होते हैं.

मशहूर जर्मन विद्वान मैक्समूलर ने अपनी किताब Chips from a German Workshop में बड़ी तफ़सील और सुन्दरता के साथ दिखाया है कि तिब्बत के बौद्ध मठों और योरप के ईसाई रोमन कैथलिक गिरजों में एक एक चीज़ और एक एक रिवाज कितने ग़ज़ब के मिलते जुलते हैं.

सब धर्म वालों ने अपने अपने अनगिनत टुकड़े कर रखे हैं. एक एक की बहुत सी अलग अलग सम्प्रदाएँ हैं. बहुत से पंथ हैं. बहुत से फ़िर्क़े हैं. हिन्दुओं में इनकी तादाद सैकड़ों है. ईसाइयों में भी सैकड़ों है और इसलाम में कम से कम

कोड़ियों. यह बात यूँ तो बड़े दुख की बात है पर इससे एक अच्छी बात का पता चलता है कि लोग अपने धर्म के असली रूप को अपनी सूझ बूझ के अनुसार बदल लेते हैं. इसका मतलब यह है कि वह धर्म के मालिक हैं, धर्म उनका मालिक नहीं. इस बात का भी यह अच्छा सबूत है कि लोग एक मज़हब से दूसरे मज़हब में भी चले जाते हैं.

हिन्दू धर्म में एक और ख़ास चीज़ है जो मोटे तौर पर दूसरे किसी धर्म में नहीं है. वह है हिन्दुओं की जात पात. पर हिन्दू जात पात का मामला इतना पेचीदा और बड़ा है कि उसके लिये अलग अध्याय की आवश्यकता है.

३२

हिन्दू जात पात, उसकी असलियत, बुरा रूप और इलाज

जाति भेद की बुनियाद

हिन्दुओं में एक ख़ास चीज़ जाति भेद यानी जातों की तक़सीम है. समझा जाता है कि किसी दूसरे धर्म में इस तरह की कोई चीज़ नहीं है. यह बात एक दरजे तक ठीक है और एक दरजे तक ग़लत. दुनिया की हर सभ्यता का किसी न किसी धर्म से सम्बन्ध रहा है, और हर सभ्यता में जाति भेद के बीज और उसकी कुछ न कुछ अलामतें मिलती हैं. क्योंकि इस तरह की तक़सीम इनसान के स्वभाव में शामिल है. हिन्दू धर्म में इसी चीज़ ने एक ख़ास रूप धारण कर लिया. लोगों के माल जायदाद के लिये, घरेलू जीवन को ठीक ठीक चलाने के लिये, लोगों की रक्षा के लिये, आदमी आदमी के बीच न्याय के लिये और सारे समाज को ठीक रास्ते पर रखने के लिये सब धर्मों में कुछ न कुछ क़ायदे क़ानून या नियम रहे हैं और हर धर्म ने उन पर अपने लोगों से अमल कराया है. इन्हीं से तरह तरह के रीत रिवाज पैदा होते हैं. इसी उद्देश्य के लिये वैदिक धर्म ने समाज का एक ऐसा ढांचा तैयार कर दिया जिसमें इनसान और समाज दोनों की यह सब ज़रूरतें पूरी हो सकें. यही ढांचा एक तरह से हिन्दुओं का जाति भेद है.

यह विषय इतना गहरा है कि इसे ज़रा विस्तार से देखना होगा. इनसानी समाज को शुरू से सबसे बड़ी ज़रूरत ख़ूराक की होती है. ख़ूराक दो तरह की—एक रूहानी

यानी आत्मा की ख़ूराक और दूसरी जिस्मानी यानी शरीर की ख़ूराक. समाज के सामने हमेशा सबसे बड़ा सवाल यही रहा है कि यह दोनों तरह की ख़ूराकें सब आदमियों को ठीक ठीक और ज़रूरत के मुताबिक़ कैसे मिलें. सब धर्मों ने इस सवाल को हल करने की कोशिश की है. पर जब किसी धर्म के ठेकेदारों और आचार्यों में ख़ुदग़रज़ी बढ़ जाती है तो उस धर्म वालों का अमल इस बारे में बिगड़ जाता है और वह धर्म गिरने लगता है. हर उस चीज़ में, जो पैदा हुई है और बढ़ती है, चढ़ाव के बाद उतार आना ज़रूरी है. फिर एक न एक दिन उसकी मौत भी आवेगी ही, और उसी उद्देश्य को अधिक अच्छी तरह पूरा करने के लिये उस चीज़ की जगह कोई नई चीज़ पैदा होगी. आत्मा, विचार या असूल वही रहता है, केवल ऊपर का शरीर, ढाँचा या रूप बदल जाता है. यही हालत धर्मों की होती है. धर्म की आत्मा अमर है. पर सब धर्मों के ढाँचे हालात के अनुसार बदलते रहते हैं. हमारा यह ज़माना साइन्स और मशीनों का ज़माना है, लोकशाही और समाजवाद का ज़माना है, दिल के मुक़ाबले में यह दिमाग़ की तरक़्क़ी का ज़माना है. इसी के अनुसार आजकल का धर्म और आजकल के सब क़ायदे क़ानून होने चाहियें.

केवल यह प्रार्थना करना काफी नहीं है कि 'ईश्वर की इच्छा पूरी हो'. हमें उस इच्छा के पूरा होने में मदद देने के लिये यह जानने और समझने की भी कोशिश करनी चाहिये कि हमारे ख़ास ज़माने और ख़ास हालात में ईश्वर की इच्छा क्या है. हम दुनिया में अपना फ़र्ज़ पूरा कर सकें इसके लिये केवल हमारा फ़र्ज़ पूरा करने के लिये तैयार रहना ही ज़रूरी नहीं है, यह भी ज़रूरी है कि हम जानें और समझें कि हमारा फ़र्ज़ क्या है. यह मशहूर 'सुनहरा असूल' कि 'दूसरों के साथ वैसा ही सलूक करो जैसा तुम चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ करें' बहुत अच्छा है. पर इसके लिये यह जानना भी ज़रूरी है कि

वह सलूक क्या होना चाहिये. हमें यह समझना चाहिये कि ख़ास हालत में हमें अपने लिये और दूसरों के लिये क्या चाहना चाहिये और क्या नहीं चाहना चाहिये. हम इस तरह सोच समझ कर नहीं चलेंगे तो अच्छी से अच्छी नीयत रखते हुए भी दुनिया में बदअमनी और गड़बड़ पैदा कर देंगे.

यह समझ पूरी पूरी हमें दो जगह से मिलती है. एक दुनिया के उन धर्म ग्रन्थों से जो समय समय के नेक, दूरदर्शी, बुद्धिमान और सब का भला चाहने वाले अवतारों, ऋषियों, नबियों, रसूलों और महात्माओं से हमें मिले हैं, यानी उन लोगों से मिले हैं जिनके अन्दर ईश्वरी जोत जग रही थी और जिनके अन्दर तरह तरह की असाधारण शक्तियाँ मौजूद थीं, और दूसरे उन ज्ञानियों, आलिमों और साइन्सदानों से मिलती है जिनकी असाधारण बुद्धि क़ुदरत के बड़े से बड़े भेदों को फोड़ कर उन्हें आदमी की सेवा में लगा देती है. इन दोनों से हमें पता चलता है कि इनसानी जीवन का मतलब क्या है, दुनिया किधर जा रही है और इनसान और इनसानी समाज दोनों के जीवन में 'ईश्वर की इच्छा' क्या है. तब हम समझ सकते हैं कि दुनिया में आदमी का फ़र्ज़ क्या है और इनसानी समाज को किस तरह सँभालना, सँवारना, रूप देना और चलाना चाहिये, और समाज में और अलग अलग इन इनसानों में किस तरह का नाता होना चाहिये, किस किस के क्या क्या फ़र्ज़ होने चाहियें और किस किस को क्या क्या अधिकार मिलने चाहियें, ताकि हर आदमी हर हालत में अपने फ़र्ज़ को समझ सके और पूरा कर सके, और सब को रूहानी और जिस्मानी ख़ूराक ठीक ठीक मिल सके. तब ही जीवन का उद्देश्य और ईश्वर की इच्छा पूरी हो सकती है.

कोई आदमी दुनिया में अकेला नहीं होता. वह किसी घर में पैदा होता है और उसका घर किसी न किसी देश या समाज के अन्दर होता है जिसमें उस जैसे बहुत से घर

होते हैं. हर आदमी के सुख दुख दूसरों के सुख दुख के साथ बँधे होते हैं. कोई आदमी अपने जीवन में न ईश्वर की इच्छा पूरी कर सकता है, न 'सुनहरे असूल' पर अमल कर सकता है और न अपना फर्ज़ पूरा कर सकता है, जब तक कि वह घर या वह समाज जिसमें वह रहता सहता है इस तरह न बना हो कि दुनिया में अमन रहे और सब सुखी और खुशहाल रहें. यह भी ज़रूरी है कि हर आदमी की ज़िन्दगी इस तरह नपी और बँटी हुई हो कि हर आदमी अपने स्वभाव, अपनी योग्यता और अपनी तबियत के अनुसार अपना भला और समाज की सेवा दोनों कर सके, उसे ठीक ठीक तालीम मिल सके, तालीम के बाद उसे और उसके घर वालों को ठीक ठीक काम और ठीक ठीक रोज़ी मिल सके, एक खास आयु होने पर वह रोज़ी कमाने की मेहनत से छुट्टी पा सके और सबके भले का कोई ऐसा काम मुफ्त कर सके जो उसकी तबियत और क़ाबलियत दोनों के अनुसार हो. और इस सबके बाद अपनी ज़िन्दगी के आख़ीर दिनों में, ज्ञान ध्यान में, सारी दुनिया का भला चेतने में और सबको सबके भले के कामों में लगाए रखने में अपने समय को लगा सके जिससे उसकी आत्मा को शान्ति और दुनिया को उससे लाभ मिले. धर्म वही है जो इस दुनिया में और इसके बाद भी आदमी को सुखी रहने में मदद दे. अब हम यह देखें कि वैदिक धर्म इस ज़रूरत को किस तरह पूरा करता है.

वैदिक धर्म मानव समाज के संगठन का एक ऐसा ढंग पेश करता है जो बिना धर्म, मज़हब, कौम, नसल या किसी तरह के भेद भाव के, दुनिया के सब लोगों और सारी मानव जाति पर लग सके, जिसमें सब तरह के आदमी खप सकें, सबको अपने अपने स्वभाव और अपनी अपनी योग्यता के अनुसार काम मिल सके, सबकी ज़रूरतें पूरी हो सकें, सबको अपनी अपनी तरक़्क़ी का मौक़ा मिल सके, सब समाज की सेवा कर

सकें, सबके अन्दर स्वार्थ और परमार्थ दोनों पूरे हो सकें, सब 'अति' से बच कर 'बीच की सलामती की राह' चल सकें, सब अपने अपने कर्तव्यों और अधिकारों को समझ सकें, और जहाँ तक हो सकता है सबका सब तरह भला हो. लेखक ने अपनी कुछ अंग्रेज़ी किताबों में जैसे—(१) एनशियन्ट वरसेज़ माडर्न साइन्टिफ़िक सोशलिज़्म, (२) दी साइन्स आफ़ दी सेल्फ़, (३) दी साइन्स आफ़ सोशल आरगेनीज़ेशन में. समाज संगठन के इस ढंग को तफ़सील से बयान किया है. उसके मोटे मोटे बुनियादी असूल नीचे दिये जाते हैं—

चार तरह के आदमी और चार चार की चौकड़ियाँ

(१) दुनिया में अपने अपने स्वभाव, तबियत और क़ाबलियत के अनुसार चार तरह के आदमी होते हैं. वह अलग अलग चार तरह के ही कामों के क़ाबिल होते हैं. इनमें पहले वह लोग हैं जिनमें विद्या और ज्ञान की अधिक चाह होती है. दूसरे वह लोग हैं जिन्हें हकूमत या इन्तज़ाम करने का अधिक शौक़ होता है. तीसरे वह जो धन कमाना और जमा करना अधिक चाहते हैं. चौथे वह भोले और सीधे लोग जो मामूली मेहनत मज़दूरी के क़ाबिल होते हैं और उसी में आनन्द ले सकते हैं.

(२) चार तरह के ही पेशे और काम होते हैं—एक विद्या और इल्म से सम्बन्ध रखने वाले पेशे, दूसरे इन्तज़ाम और शासन से सम्बन्ध रखने वाले, तीसरे तिजारत व्यापार से सम्बन्ध रखने वाले, चौथे मेहनत मज़दूरी से सम्बन्ध रखने वाले. इनमें से हरेक की अलग अलग बहुत सी शाखें हैं.

(३) मोटे तौर पर चार तरह की ही आमदनी या जीविका होती है—एक दान, हदिया, पुरस्कार या भेंट रूप, दूसरे टैक्स, ख़िराज और तनख़ाह के रूप में, तीसरी तिजारती नफ़े के रूप में, चौथी मज़दूरी के रूप में.

(४) हर आदमी की ज़िन्दगी के भी चार हिस्से होते हैं—पहला तालिबइल्म यानी विद्यार्थी होने का ज़माना, दूसरा ख़ानेदार यानी गृहस्थ का, तीसरा निस्वार्थ जनता की सेवा का, चौथा यानी आख़री हिस्सा दुनिया से अलग रहकर एकान्त चिन्तन और मनन का यानी 'तारिकुद्दुनिया' होकर ग़ौरो ख़ौज़ का. इनमें पहले दो हिस्सों में आदमी की निजी इच्छाएँ मुनासिब हदों के अन्दर जागनी, बढ़नी और पूरी होनी चाहियें, और दूसरे दोनों हिस्सों में आदमी की समाजी यानी परोपकार की भावनाएँ बढ़नी, खिलनी और अमल में आनी चाहिये. इस तरह हर आदमी की ज़िन्दगी का आख़री हिस्सा शुद्ध समाज की सेवा में ख़र्च हो सकता है.

(५) हर आदमी में चार तरह की ही भूक होती है—एक मामूली खाने पीने की भूक, दूसरी धन दौलत जमा करने की भूक. तीसरी जिन्सी भूक (काम वासना), और चौथी खेल तमाशे और मनोरंजन की भूक.

इन्हीं चारों के मातहत अलग अलग चार तरह की ख़ूराक भी होती है—एक उन लोगों के लिये जो रूहानी, दिमाग़ी या इल्मी काम में या साइन्स की खोजों में लगे हुए हैं, निरामिष, हलकी, जल्दी हज़म होने वाली, अधिकतर फलों और दूध वाली ख़ूराक, जो उनके मन को अधिक चंचल न होने दे, दूसरी ताक़त और जोश दिलाने वाली ख़ूराक उन लोगों के लिये जिन्हें हकूमत करनी हो, इन्तज़ाम करना हो, जल्दी फैसले और जल्दी अमल करना हो, यहाँ तक कि सिपाहियों के लिये एक हद के अन्दर गोश्त भी हो सकता है, तीसरे व्यापारियों के लिये पेट में देर तक ठहरने वाले नाज और दूध की चीज़ें और चौथे मज़दूरों के लिये भारी खाने जिनमें काफ़ी नाइट्रोजन हो ताकि आदमी देर तक मेहनत कर सके.

इन चारों के लिये चार तरह के अलग अलग सामान की भी ज़रूरत पड़ती है—जैसे पहली तरह के लोगों के लिये

किताबें और साइन्सी खोज का सामान, दूसरी तरह के लोगों के लिये हथियार और उसी तरह का सामान, तीसरी तरह के लोगों के लिये मशीनें, कारख़ाने और पैदावार और तिजारत के साधन और चौथी तरह के लोगों के लिये मेहनत मज़दूरी के औज़ार.

यूँ तो हर आदमी में यह चारों तरह की भूक होती है लेकिन किसी में एक चीज़ का ज़ोर होता है, किसी में दूसरी चीज़ का. इसीलिये एक आदमी प्रोफ़ेसर बन जाता है, दूसरा फ़ौजी कप्तान, तीसरा साहूकार और चौथा चरवाहा या मिल मज़दूर.

(६) लोगों में चार तरह की ही इच्छाएँ होती हैं—एक दूसरों से आदर मान की इच्छा, दूसरे हकूमत की शक्ति या अधिकार की इच्छा, तीसरे धन दौलत की इच्छा, और चौथे केवल अपने शरीर के लिये सुख की इच्छा.

(७) हर देश में चार तरह की शक्तियाँ होती हैं—एक साइन्स की शक्ति, दूसरे फ़ौज की शक्ति, तीसरे धन की शक्ति और चौथे मेहनत मज़दूरी की शक्ति.

(८) चार तरह के ही कर्तव्य यानी फ़र्ज़ और उनके मुक़ाबले के चार तरह के अधिकार यानी हक़ होते हैं—पहला फ़र्ज़ विद्या हासिल करना और विद्या फैलाना और उसके मुक़ाबले का अधिकार, इज्ज़त और मान पाना, दूसरा फ़र्ज़ सबकी हिफ़ाज़त करना. देश में अमन शान्ति क़ायम रखना और उसके मुक़ाबले का हक़ हकूमत का अधिकार पाना, तीसरे सब तरह के माल की पैदावार और उसके बँटवारे का प्रबन्ध करना और उसके मुक़ाबले में, देश के क़ानूनों के अन्दर रहते हुए, माल की क़ीमत लेना और मुनासिब नफ़ा कमाना, चौथे सबकी सेवा और मदद करना और उसके बदले में ठीक ठीक मज़दूरी और मनोरंजन और तालीम के मौक़े पाना.

इन अलग अलग अधिकारों के अलावा कुछ अधिकार ऐसे भी हैं जो सबके एक बराबर अधिकार हैं. सब की जीवन की आवश्यकताएँ पूरी होनी चाहियें और सबको अपनी अपनी योग्यता के अनुसार समाज की तरफ अपने फ़र्ज़ पूरा करने के लिये साधन मिलने चाहियें. यह अधिकार हर आदमी के जन्म के अधिकार हैं.

(९) बूढ़े लोगों के छोटी उम्र के लोगों की तरफ और राजा के प्रजा की तरफ चार ख़ास फ़र्ज़ हैं—पहला फ़र्ज़ है सबको तालीम देना, दूसरा सबकी हिफ़ाज़त यानी रक्षा करना. तीसरा सब का पेट पालना और सब को खाना, कपड़ा और घर देना और चौथा सब तरह से सब की मदद करना. थोड़े से शब्दों में तालीम, हिफ़ाज़त, खाना और सेवा इन चारों का सब को हक़ है.

(१०) चार ही तरह के संगठन हर देश या राज के अन्दर ज़रूरी हैं जिन से मिल कर एक अच्छा राज बनता है. यह चारों एक दूसरे पर निर्भर हैं—पहला तालीम का संगठन, दूसरा राजकाजी और फौजी संगठन, तीसरा आर्थिक संगठन और चौथा उद्योग धन्दों का संगठन.

(११) हर आदमी चार तरह का क़र्ज़ा अपने ऊपर लेकर पैदा होता है. इन में सब से पहला क़र्ज़ा हम पर देवताओं यानी क़ुदरत की शक्तियों का है. क़ुदरत की यह शक्तियाँ ही हमें उस दुनिया में लाती हैं जिस पर हमारी सारी ज़िन्दगी और हमारा सारा तजरबा निर्भर है. दूसरा क़र्ज़ा हमारे उन पुरखों का क़र्ज़ा है जिन्होंने हमें पैदा किया और यह जिस्म दिया. तीसरा क़र्ज़ा पिछले ज़माने के उन सब सन्तों, महात्माओं और विद्वानों का क़र्ज़ा है जिन्होंने हमारे लिये ज्ञान का वह भण्डार छोड़ा जो हमें दूसरे जानदारों से अलग करता है और हमारे जीवन को रौनक़ देता है. चौथा क़र्ज़ा उस परमात्मा परमेश्वर का क़र्ज़ा है जिससे हमें जीवन की वह चिनगारी मिली जिसे हम रूह या आत्मा कहते हैं.

(१२) इद चारों क़र्ज़ों को अदा करने के चार तरीक़े हैं— पहला क़र्ज़ा अदा होता है सब के भले के इस तरह के काम करने से जैसे दरख्त लगाना, ज़मीनों में फिर से जंगल लगाना, कुएँ, तालाब या नहरें खुदवाना, काम के जानवरों और सुन्दर पशु पक्षियों की रक्षा करना और उन्हें बढ़ाना, हवा को साफ़ रखना, .खुशबूदार चीज़ें जलाना, पाक और अच्छी अच्छी किताबें पढ़ना. इन सब बातों से .कुदरत का वह सब भण्डार फिर से भरता है जिसे हम काम में लाते हैं. हमारी दिमाग़ी ताक़तें इससे बढ़ती हैं. हमारी तबियत फिर से ताज़ा होती है. आजकल के हालात में ऐसी तरकीबें करना जिनसे धुएँ की मुसीबत कम हो, शहरों के शोर शर कम हों, आसपास का पानी और हवा साफ रहे, बीमारियाँ कम हों, मैला और गन्दगी खाद के काम आवे, और इसी तरह के सब के भलाई के काम. यही इस ज़माने में देवताओं का क़र्ज़ा अदा करने के काम हैं. दूसरा क़र्ज़ा अदा करने का तरीक़ा है अच्छे बच्चे पैदा करना और उन्हें पालना और अच्छी तालीम देना. तीसरा क़र्ज़ा अदा करने के लिये हमें इल्म यानी विद्या का दूसरों को दान देना चाहिये और आलिमों को इस बात में मदद देनी चाहिये कि वह दूसरों को इल्म सिखा सकें. हमारा यह भी फ़र्ज़ है कि दुनिया के इस वक़्त तक के इल्म और ज्ञान को बढ़ाने में मदद दें. चौथा क़र्ज़ा अदा करने के लिये ख़ास आयु के बाद हमें मामूली दुनियादारी और कुनबा परवरी से अलग होकर आत्मा में ध्यान लगाना चाहिये, सब की आत्मा को अपनी आत्मा समझना चाहिये और पूरे दिल से लगातार सब का भला चेतना और चाहना चाहिये.

ऊपर जो कई तरह की चौकड़ियाँ गिनाई गई हैं उनमें से हर चार एक दूसरे से जुड़ी हुई और एक दूसरे पर निर्भर हैं. उनमें एक दूसरे के साथ वैसा ही सम्बन्ध है जैसा हमारे बदन के अन्दर सिर, हाथ, धड़ और टाँगों में. चारों को मिला कर एक पूरा आदमी बनता है. ऐसे ही पूरा समाज इन सब को

मिला कर बनता है. इसी तरह इन चारों में से हर एक की बहुत सी शाखें हैं और बहुत बार तो किसी चीज़, पेशे, या काम की बाबत यह तय करना भी मुशकिल हो जाता है कि उसे चारों में से किस के अन्दर गिना जावे. हम इस तरह के जितने बँटवारे करते हैं वह सब केवल इसलिये कर लेते हैं ताकि समाज का काम आसानी से चल सके.

थोड़े से शब्दों में वैदिक 'जाति भेद' की यही असलियत है और यही उसकी बुनियाद है. वेदों में इसे वर्णाश्रम धर्म कहा गया है, यानी यह कि इनसानी समाज में चार वर्ण होते हैं यानी चार तरह के काम और चार तरह के काम करने वाले—ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र, और हर आदमी के जीवन के चार हिस्से होते हैं—ब्रह्मचारी (तालिबइल्म), गृहस्थ (ख़ानेदार), वानप्रस्थ (बिना तनख़ाह का दुनिया का ख़ादिम), और सन्यासी (तारिकुद्दुनिया) यानी सब को दुआएँ, ख़ैर और नेक उपदेश देने वाला.

दूसरे देशों में इस तरह की तक़सीम

दूसरे सब धर्मों और देशों में भी इससे मिलते जुलते विचार मौजूद हैं. सबने अपने यहाँ के इनसानों की इसी तरह की तक़सीमें की हैं. फ़र्क़ यह है कि किसी ने एक तरह और किसी ने दूसरी तरह. किसी ने एक पेशे वाले को ज़ियादा ज़रूरी और ऊँचा माना है और किसी ने दूसरे पेशे वाले को. किसी ने लोगों को एक जमाअत या एक पेशे से दूसरी जमाअत या दूसरे पेशे में जाने की खुली इजाज़त दी है किसी ने नहीं दी, वग़ैरा.

वेदों में जिन्हें ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य कहा गया है, अरबी में उन्हीं को 'उलुलइल्म,' 'उलुलअम्र' और 'ज़रीअ' कहा गया है. यह तीनों नाम क़ुरान में भी आए हैं. चौथी तरह के लोगों को अरबी और फ़ारसी में 'मज़दूर' कहा जाता है. इन्हीं चारों को आलिम, आमिल (आमिर या अमीर), ताजिर और मज़दूर

भी कहा जाता है. पारसी धर्म में इन चारों को 'ऐर्यम्ना', 'वीरेजिन,' 'खायतुश,' और 'गोवास्त्रा' कहते हैं. इन चारों पारसी शब्दों के संस्कृत रूप हैं अर्यमा, वीर्यवान, क्षितीश और गोवासी.

पारसी धर्म की किताबों में इन चारों के और और नाम भी आते हैं. पारसी धर्म ग्रन्थ 'गाथा' में इन चारों की चरचा करते हुए लिखा है—

"वैश्य, ब्राह्मण और क्षत्री तीनों दुनिया के सुख भोगों में पड़ जाते हैं. ईश्वर करे हमारे वैश्य कभी सुस्त या काहिल न हों, हमारे क्षत्री कभी अधिक ख़ूँख़ार या तुन्द न हों, हमारे ब्राह्मण कभी अनपढ़ और जाहिल न हों, हमारे शूद्र जो सबकी सेवा करते हैं कभी हिम्मत न हारें. बुरे वक्तों में जब दुशमन हमला करता है तो हमारे ब्राह्मण या हमारे वैश्य क्या कर सकते हैं ? उस समय हमारे क्षत्री ही भगवान की मदद से हमारी रक्षा कर सकते हैं."

इंगलैन्ड में अभी थोड़े दिन पहले तक वहाँ के लोग अपने देश के लोगों की तीन जमाअतें गिनाया करते थे—एक 'क्लरजी' यानी पादरी, दूसरे 'नोबिलिटी' यानी लार्ड ख़ानदान के लोग, तीसरे 'कामन्स' यानी आम लोग. अब इनमें एक चौथी जमाअत और जुड़ गई है, वह है 'प्रोलिटेरियट' यानी मज़दूरों और दस्तकारों की जमाअत.

योरप के दूसरे मुल्कों में भी आबादी के लगभग इसी तरह के बँटवारे हैं.

जापान में कुछ दिनों पहले तक चार जमाअतें गिनी जाती थीं—एक 'क्यूगे' यानी सम्राट के ख़ानदान के लोग और दरबारी अमीर उमरा, दूसरे 'बूशी' और 'सामुराई' यानी क्षत्री और सिपहगिरी पेशे के लोग, तीसरे 'हीमिन' यानी आम लोग और चौथे 'ईता' और 'हीनिन' यानी वह लोग जो बिलकुल भारत के अछूतों जैसे समझे जाते थे.

चीन में भी कुछ दिनों पहले तक चार जमाअतें गिनी जाती थीं. वहाँ सबसे ऊपर विद्वान लोग थे जिनमें दरबारी अफसर भी शामिल थे, दूसरे दरजे पर किसान, तीसरे दरजे पर दस्तकार और चौथे दरजे पर सौदागर व्यापारी. यह एक अजीब बात है कि पुराने चीन में सिपाहियों की कोई ख़ास जगह नहीं थी. चीन में सिपाहियों को हमेशा एक हलकी और 'अन्त्यज' जमाअत की तरह समझा गया है. चीन जापान की लड़ाई ने, जो बहुत दिनों जारी रही, वहाँ सिपाही की क़दर को बढ़ा दिया. फिर भी शायद यही वजह है कि चीनी लोग स्वभाव से अमन पसन्द हैं और लड़ाई को अच्छी निगाह से नहीं देखते. यह भी एक ख़ास बात और बड़ी अच्छी बात है कि चीन में यह अलग अलग जमाअतें कभी भी जन्म से यानी पैतृक नहीं समझी गईं. इसी वजह से भारत की सी जात पात का बुरा रिवाज चीन में कभी नहीं रहा.

वेदों में जाति भेद का शुरू का रूप

अब हम यह देखें कि हिन्दू धर्म में जातों की तक़सीम का रूप शुरू में यानी वेदों के ज़माने में क्या था.

ऋग् वेद में लिखा है—

"यह जो विश्व रूप महान पुरुष यानी सारा इनसानी समाज है इसका सिर और मुँह क्या है, इसकी भुजाएं क्या हैं, इसका धड़ और इसकी जाँघें क्या हैं और इसके पैर क्या हैं ? जिस आदमी के अन्दर ज्ञान यानी इल्म और हिकमत है वह इसका सिर और मुँह है और ब्राह्मण कहलाता है. जो अपनी बहादुरी से दूसरों की रक्षा करने के कारण चमकता है वह इसकी भुजाएँ है और राजा या क्षत्री कहलाता है. जो धरती के ऊपर जमकर उससे नाज और धन दौलत पैदा करता है वह इसका धड़ और जाँघें है और वैश्य कहलाता है. जो और सबकी सेवा में लगा रहता और दौड़ता फिरता है वह इसकी टाँगे है और शूद्र

कहलाता है. यह पूरा मनुष्य समाज इन्हीं चार से बना हुआ है. यही था, यही है और यही होगा. इस समाज की व्यापक आत्मा सारी दुनिया को घेरे हुए और अपने अन्दर लिये हुए है और फिर भी सबसे बाहर है."

यजुर्वेद में लिखा है—

"ऐ परमेश्वर, सबके मालिक! हम सबके दिलों में यानी हमारे ब्राह्मणों, हमारे क्षत्रियों, हमारे वैश्यों और हमारे शूद्रों के दिलों में, एक दूसरे के लिये प्रेम पैदा कर ताकि हम एक दूसरे को सुख पहुँचा सकें. हम एक दूसरे से सदा मीठी बातें करें, सबके साथ नम्रता का बरताव करें, सब एक दूसरे का भला करें और एक दूसरे की सेवा करें."

अथर्व वेद में लिखा है—

"ऐ ईश्वर! जो इस सारे विश्व के सब हिस्सों को चला रहा है और सबके अन्दर की जान है! हम सबको एक दूसरे के साथ प्रेम के मज़बूत धागों में बाँध दे. हमारे ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों को और उन सबको जो हमारे मित्र हैं प्रेम के मज़बूत धागों में बाँध दे. और जो हमारे शत्रु हैं उन्हें भी हमारा मित्र बना दे."

अब देखना यह है कि शुरू के चार तरह के लोगों की यह क़ुदरती तक़सीम, जो समाज के काम की आसानी के लिये थी, बिगड़ कर और गिर कर सैकड़ों जन्म की जातों में कैसे बदल गई.

स्वार्थ और बिगाड़

चार तरह की शक्तियों की चरचा हम ऊपर कर चुके हैं— विद्या शक्ति, राज शक्ति, धन शक्ति और श्रम यानी मेहनत मज़दूरी की शक्ति. इनसानी समाज की अधिकतर मुसीबतें इसीलिये पैदा होती हैं कि हम इन चार तरह की शक्तियों में

समतोल यानी तवाज़ुन क़ायम नहीं रख सकते. विद्या यानी इल्म की शक्ति ही अकसर धर्म मज़हब की शक्ति होती है. पर जब विद्वान लोग जो सबको राह दिखाने वाले होते हैं स्वार्थ में पड़ कर धन बटोरने या ख़ुद राज सत्ता हथियाने की सोचने लगते हैं या अत्याचारी राजाओं के हाथ के साधन बन जाते हैं या उनके लिये साधन तैयार करने लगते हैं, तो यह शक्ति समाज के लिये बरकत होने की जगह लानत बन जाती है. आज साइन्स और साइन्सदानों की भी यही दुर्गत हो रही है. ग़लत इस्तेमाल से और समतोल न रहने से यही हाल दूसरी शक्तियों का होता है.

बहुत से देशों में सदियों से दो तरह के लोगों में खींचा-तानी और लड़ाई होती रही है—एक राजा (दुनियावी हाकिम) और दूसरे धार्मिक गुरु या पंडे पुरोहित. योरप के बीच के ज़माने भर में राज शक्ति और धार्मिक शक्ति के बीच की यह खींचातानी जारी रही. यह योरप के ब्राह्मणों और क्षत्रियों की लड़ाई थी. लेकिन आज दुनिया में पैसे की शक्ति ने विद्या (धर्म) और राज (हथियार) दोनों को क़ाबू में कर लिया है. आज दुनिया के ब्राह्मण और क्षत्री दोनों वैश्यों के चंगुल में हैं. साइन्स और राजनीति दोनों अर्थ नीति की ग़ुलाम हैं. और अब ऐसा मालूम होता है कि मज़दूरी की ताक़त पैसे की ताक़त को भी अपने क़ाबू में करती जा रही है. आगे की दुनिया में सबसे बड़ी शक्ति जो साइन्स, बहादुरी, राजकाज और पैसा सब पर हावी होगी वह मेहनत मज़दूरी की शक्ति है.

इससे साफ़ मालूम होता है कि इन चार तरह की शक्तियों में हम ठीक ठीक बैठ बिठाव नहीं कर पाए, हर एक को अपनी अपनी जगह नहीं दे सके, यानी उनमें समतोल या तवाज़ुन क़ायम नहीं रख सके. हमारे देश में भी सैकड़ों बरस से स्वार्थी विद्वानों और आचार्यों ने आदमी से उसकी व्यक्तिगत आज़ादी छीन कर एक काम से दूसरे काम या एक पेशे से दूसरे पेशे में

जाने के दरबाजे बिलकुल बन्द कर दिये. नतीजा यह हुआ कि यह चारों जमाअतें इस तरह मौरूसी यानी जन्म की जातें हो गईं जिस तरह दुनिया में और कहीं नहीं हैं.

एक और बुरी बात हुई. कुदरती तौर पर बावजूद रोक थाम के समय समय पर एक वर्ण से दूसरे में विवाह भी जब तब होते रहे. उधर मौरूसीपन का असूल आ ही चुका था. नतीजा यह हुआ कि इस तरह के मिले जुले विवाहों की औलाद की और नई नई जातें बनती चली गईं. इन जातों, उप-जातों और उप-जातों के अन्दर उप-उप-जातों की गिनती बढ़ती गई. इस तरह देश में हज़ारों जातें बन गईं. सब एक दूसरे से अलग, जिनमें न एक से दूसरी में रोटी बेटी का सम्बन्ध हो सकता था और न कोई एक से दूसरी में आ जा सकता था. यही हाल अब तक जारी है. इन सब को एक डोर में बाँधने वाला केवल एक शब्द 'हिन्दू' रह गया है, जिसका अब सिवाय 'हिन्दुस्तानी' या 'हिन्द वासी' के और कुछ अर्थ हो ही नहीं सकता. जात या उपजात के आजकल केवल यह मानी रह गए हैं कि कुछ घरानों का एक गिरोह है जो केवल एक दूसरे के हाथ का खाते हैं और एक दूसरे के साथ ही शादी विवाह करते हैं, दूसरी जात वालों के साथ न खाते हैं और न उनके साथ शादी विवाह करते हैं. यहाँ तक कि दूसरी जात या उपजात वालों के हाथ का छुआ हुआ भोजन भी उनके लिये नापाक है. इस छुआछूत का कारण शुरू में कुछ भी रहा हो—हो सकता है यह छुआछूत इस डर से शुरू हुई हो कि कोई किसी को ज़हर न दे दे—पर अब इस रिवाज में कोई समझ या भलाई की बात नहीं रह गई है. हमारे देश के आगे बढ़ने में इस समय यह सारी गिरोह बन्दी सब से बड़ी रुकावट है.

आजकल की जात पात

सन् १८९१ की मरदुमशुमारी के अनुसार हिन्दुओं के अन्दर कुल जातियों और उपजातियों की तादाद दो हज़ार तीन

सौ अठत्तर थी. उसके बाद भी कुछ जातियाँ टूट कर और टुकड़े होती गईं और कुछ एक दूसरे में मिलती गईं. सन् १६३१ की मरदुमशुमारी में सब जातियों और उपजातियों की ठीक ठीक गिनती देने की कोशिश ही नहीं की गई. राजकाजी चुनावों तक पर इसका गहरा और बहुत बुरा असर पड़ा है. देश में सच्ची एकता पैदा नहीं हो पाती. ईमानदारी और क़ाबलियत को ऊपर आने का मौक़ा नहीं मिलता. बेईमानी और गन्दी गुटबन्दी बढ़ती जा रही है. देश सेवकों का ध्यान इस बुराई की तरफ जाने लगा है, पर अभी बहुत कम. लेखक ने सन् १६३६ में जब वह हिन्दुस्तान की केन्द्रीय धारा सभा का मेम्बर था एक क़ानून अलग अलग जातियों में विवाह शादी जायज़ क़रार दिये जाने का पेश किया था. उस समय वह पास न हो सका. पर उसके बाद इस तरह के क़ानून पास हो चुके हैं और कुछ रास्ते खुलते जा रहे हैं. ज़ाहिर है कि इस ज़ात पात के बिना मिटे देश एकता और उन्नति की राह पर आगे नहीं बढ़ सकता.

साइन्स और समझ दोनों की यह माँग है कि हम हर कोई चीज़ हर किसी के हाथ से न खावें और न हर किसी के साथ ब्याह शादी करें. इस सम्बन्ध में समझदारी और विवेक से काम लेना ज़रूरी है. हमें समाज को तन्दुरुस्त रखना है तो पाक साफ़ खाना खाना चाहिये, शुद्ध जल पीना चाहिये, ऐसे लोगों के साथ बैठकर खाना पीना चाहिये जिनकी आदतें अच्छी और जिनसे हमारी तबियतें मिलती हों. विवाह भी ऐसे लोगो में ही होना चाहिये जिनके स्वभाव, विचार, शौक़ और तबियतें मिलती हों. पर यह बात नासमझ और स्वार्थी लोगों के हाथों में उलटी हो जाती है. समय के साथ साथ पुरानी अच्छी से अच्छी चीज़ भी सड़ जाती है और नुक़सान करने लगती है.

दूसरे देशों में तो लोगों ने केवल अपने एक राजा या

एक पुरोहित के बारे में यह विचार बना लिया कि उसे ईश्वरी अधिकार मिला हुआ है. हमने इस देश में लाखों आदमियों की एक पूरी जाति के बारे में यह मान लिया कि भगवान ने जन्म से ही उन्हें दूसरों से ऊँचा और दूसरों पर हुकुम चलाने का हक़दार बना दिया है. और जब यह लोग जन्म से ऊँचे हो गये तो बाक़ी लाखों करोड़ों लोग जन्म से ही नीच समझे जाने लगे. हमने मान लिया कि उन्हें भगवान ने इन ऊपर वालों की सेवा करने और उनका हुकुम मानने के लिये ही बनाया है. दस्तकारों, किसानों, मज़दूरों सब की हमने यही दुर्गत कर डाली. यहाँ तक कि अमरीका के हबशी ग़ुलामों की तरह हमने देश के लाखों और करोड़ों मर्द औरतों को और पीढ़ी दर पीढ़ी उनकी औलाद को हमेशा के लिये शूद्र, अछूत और अन्त्यज क़रार दे दिया. नतीजा यह हुआ कि साइन्स और समझ की जगह हम कहीं अधिक अन्धविश्वासों, नासमझी और गन्दगी में फँसते चले गए.

हम गन्दे और बीमार लोगों के हाथों का पका हुआ नापाक खाना खाते हैं केवल इसलिये क्योंकि पकाने वाला उसी जाति का है जिसके हम हैं. हमारे यहाँ रोज़ बेमेल और बेतुकी शादियाँ होती रहती हैं क्योंकि लड़का और लड़की दोनों की जात का नाम एक है. हम इस तरह की शादियों को 'सवर्ण' कहते हैं जिसका मतलब यह है कि लड़का और लड़की दोनों एक वर्ण के हैं. असल में यह सब शादियाँ अधिकतर 'अवर्ण' या 'असवर्ण' होती हैं. संस्कृत क़ायदे से 'वर्ण' शब्द के तीन मानी हैं—एक वह चीज़ जो समाज के अन्दर किसी आदमी की रोज़ी, उसके पेशे या उसकी जगह को बयान करे, दूसरे वह चीज़ जिसे कोई आदमी ख़ुद अपने लिये चुने या पसन्द करे, इसमें पेशा भी आ सकता है. तीसरे वह चीज़ जो किसी आदमी को ढके हो, जैसे उसका रंग वग़ैरा. 'वर्ण' शब्द के मानी किसी तरह भी जन्म की जात नहीं होते.

अधिकतर जातों और उपजातों के नाम, पेशों और धंदों पर हैं. हो सकता है शुरू में इस तरह की जातों ने, वह काम किया हो जो आजकल दुनिया में 'ट्रेड यूनियनें' या 'ट्रेड गिल्ड' करती हैं. पर हमारे यहाँ थोड़े ही दिनों के अन्दर पेशे या काम से उनका कोई सम्बन्ध नहीं रह गया. यहाँ तक कि आजकल सिवाय एक पुरोहिताई के काम के बाक़ी सब काम सब जातियों के लोग बिना किसी फ़र्क़ के करते हैं. केवल एक पुरोहिताई का काम अब ऐसा रह गया है जिस पर ब्राह्मण जाति में पैदा हुए लोगों का इजारा चला आता है. वह इजारा भी अब धीरे धीरे ख़त्म हो रहा है.

नई पीढ़ी के लोग नई रोशनी और नई ज़रूरतों के असर में देश की इस बुराई को समझते जा रहे हैं. देश से बाहर की हवाएँ भी अपना कार्य कर रही हैं. पुराने बन्धन टूट रहे हैं. पर अभी बहुत धीरे. इन बन्धनों के तोड़ने में हमारे सामने लक्ष्य या मक़सद, बेलगाम छूट या केवल भोग विलास नहीं होना चाहिए. हमारे सबके सामने लक्ष्य होना चाहिये समाज की और सबकी असली और टिकाऊ भलाई.

इसका यह मतलब नहीं कि हमारा देश दुनिया के और देशों से अधिक गिरा हुआ है. कोई देश किसी एक बात में गिरा हुआ है तो कोई किसी दूसरी बात में. इस मामले में सब जगह सुधार की ज़रूरत और गुंजाइश है. इन मामलों में टिकाऊ सुधार तब ही हो सकता है जब दुनिया के बच्चों को शिक्षा देने वाले हर लड़के और लड़की के स्वाभाविक 'रुझान' उसकी तबियत और क़ाबलियत को ठीक ठीक समझ कर उसी के अनुसार हर एक को तालीम दें और उसी के अनुसार शुरू से हर एक का पेशा और काम तय किया जावे और शिक्षा ख़तम होने पर उन्हें वैसा ही काम सौंपा जावे. इसके लिए ख़ास समाजी संगठन की ज़रूरत है.

रोटी और काम वासना

रोटी का सवाल और जिन्सी सवाल इन दो पर ही आदमी की सारी ज़िन्दगी चलती है. इन्हें ठीक ठीक हल करना और ठीक क़ाबू में रखना हर देश के रहने वालों के लिये ज़रूरी है. इसके लिये मुनासिब नियम और क़ानून होने चाहियें जिनका तोड़ना सबसे बड़ा जुर्म समझा जावे. माँ का दिल और माँ का शरीर इन्सानी समाज की सबसे पाक चीज़ है. यही विधाता का सबसे बड़ा मन्दिर है. जो देश इस मन्दिर को गन्दा करने की या दुख पहुँचाने की अपने लोगों को इजाज़त देता है उस पर मनु के शब्दों में—"ईश्वर की तरफ़ से बिजली गिरती है." यह बिजली या तो दिलों और दिमाग़ों के बिगड़ने की शकल में में दिखाई देती है या बीमारियों, महामारियों, जंगों, भूचालों, बाढ़ों, अकालों और ज्वालामुखियों के फूटने की शकल में दिखाई देती है. इनमें से कई तरह की आफ़तों का सम्बन्ध आदमी के कामों से ज़ाहिरा दिखाई नहीं देता. लेकिन इस सम्बन्ध से इनकार नहीं किया जा सकता. नैतिक और आध्यात्मिक लहरें जिस तरह काम करती हैं और माद्दी दुनिया पर अपना असर डालती हैं वह मामूली इनसानों की सूझबूझ के लिये ऐटम और उसकी ताक़त के काम करने के तरीक़ों से कहीं अधिक बारीक़ और मुशकिल चीज़ है. लेकिन इन ताक़तों का असर बहुत गहरा, ज़बरदस्त और व्यापक होता है.

गीता में लिखा है—

"आदमी के नेक कामों और क़ुरबानी (यज्ञ यानी त्याग) से बारिश होती है. उसी से नाज पैदा होता है. नाज से सब जानदारों को ख़ूराक मिलती है,..... जिन्सी बदचलनी (संकर) उस बदचलनी से सम्बन्ध रखने वाले सब लोगों को नरक में पहुँचा देती है."

मौलाना रूम ने लिखा है—

"जब लोग ज़कात यानी ख़ैरात देना बन्द कर देते हैं तो

बादल आने बन्द हो जाते हैं और जब लोग शहवत (काम वासना) के पीछे पड़कर बदचलन हो जाते हैं तब मुसीबतें उन्हें चारों तरफ़ से घेर लेती हैं."

इंजील में बड़े ज़ोरदार शब्दों में आदमी को हिदायत की गई है कि—

"सिवाय एक अल्लाह के किसी और को अपना देवता न बनाना. तुम किसी तरह की मूर्ति या बुत बना कर न रखना, चाहे वह बुत हवा में उड़ने वाली किसी चीज़ की शकल में हो, चाहे धरती पर चलने वाले किसी जानदार के रूप में और चाहे पानी में रहने वाले किसी प्राणी की शकल में. तुम ऐसे किसी बुत के सामने सर न झुकाना और न उनकी पूजा सेवा करना, क्योंकि मैं तुम्हारा ईश्वर इस मामले में बहुत डाह करने वाला हूँ. जो लोग गुनाह करते हैं मैं तीसरी और चौथी पीढ़ी तक उनकी औलाद को, उन लोगों को जो मुझसे नफरत करते हैं, सज़ा देता हूँ और उन पर जो मुझसे प्रेम करते हैं और मेरे हुकुम मानते हैं दया दिखलाता हूँ.' (इंजील; 20 Exodus).

इंजील की यह हिदायत ध्यान से समझने की चीज़ है. यह सच है कि कभी कभी मूर्तियों के पूजने वालों में भी किसी उपासक की गहरी श्रद्धा, उसका ज़बरदस्त विश्वास उसमें इस तरह के भाव जगा देता है कि उसका दिल और दिमाग़ उसी पत्थर की मूर्ति के अन्दर हाथ पैर देखने लगता है. वह मूर्ति उसे जानदार मालूम होने लगती है, उससे बोलने लगती है, और थोड़ी देर के लिए उसके अपने दिल की हालत के अनुसार उसके लिये सच्चा फ़रिश्ता या सच्चा शैतान बन जाती है. यह कोई अनोखी बात नहीं है. आख़िर आत्मा सबके अन्दर है. ख़ुदा हर चीज़ में है. बुत के अन्दर भी है. आदमी की कल्पना शक्ति उसे क्या क्या नहीं दिखा सकती. पर जिस तरह की मूर्ति पूजा आज दुनिया में फैली हुई है, और उससे मिलती जुलती दरख़्तों, पहाड़ों, नदियों जैसी चीज़ों की पूजा

लोगों के दिमाग़ों को कुन्द कर देती है, उनकी इरादे की शक्ति को कमज़ोर कर देती है, उनके अन्दर समझ के ख़िलाफ़ अन्ध विश्वास भर देती है, और क़ौमों को उन्नति की जगह अवनति और बरबादी की तरफ़ ले जाती है.

इंजील के ऊपर के शब्दों में जो 'किसी और देवता' की चरचा की गई है उससे मतलब केवल पत्थर की मूर्तियों से ही नहीं है, और ईश्वर के 'हुकुम' की जो चरचा की गई है उससे मतलब केवल इस तरह की मूर्तियों की पूजा के ख़िलाफ़ हुकुम से ही नहीं है. और सब दूसरे देवताओं से कहीं बुरे दो देवता हैं जिन्हें यूनानी 'बैक्कस' और 'प्राएपस' कहा करते थे. इनमें बैक्कस शराब का और बुरे खाने का देवता है, और 'प्राएपस' जिन्सी बदचलनी (कामवासना) का देवता है. यह दोनों, देवता नहीं, सबसे बड़े शैतान हैं. इन दोनों की पूजा से जो बुराइयाँ और गन्दी बीमारियाँ पैदा होती हैं वह 'तीसरी या चौथी पीढ़ी तक' ही नहीं इससे कहीं ज़ियादा पीढ़ियों तक फलती रहती हैं. जिन्सी बदचलनी से तो दिमाग़ और जिस्म दोनों की तरह तरह की कमज़ोरियाँ और बीमारियाँ बाप से बेटे को और उससे उसके बेटे को मिलती रहती हैं. इसलिये सब धर्मों में इन दोनों बुराइयों से बचने का 'हुकुम' दिया गया है. इन हुकुमों में सब से बड़े हुकुम वैद्यक यानी डाक्टरी के हुकुम हैं. यह 'हुकुम' .क़ुदरत के अटल नियम हैं. .क़ुदरत .ख़ुदा की .क़ुदरत है. इसलिये .क़ुदरत के नियम .ख़ुदा के हुकुम हैं. ईश्वर से 'प्रेम' करने या उससे 'नफ़रत' करने का मतलब इन्हीं .क़ुदरत के अटल नियमों से प्रेम करना या उनसे नफ़रत करना है, जिस का मतलब है इन नियमों को मानना या उनकी तरफ़ से बेपरवाही बरतना, क्योंकि दुनिया की सब चीज़ें और सब नियम क़ायदे क़ानून ईश्वर ही से हैं.

मौरूसीपन और हर एक का अपना अपना उठान

इस सबके लिये समाज को एक ऐसे संगठन या निज़ाम की

ज़रूरत है जो मज़बूत भी हो और साथ ही लचीला भी हो. ऊपर बयान किये हुए चारों तरह के इनसान क़ुदरत के दो नियमों के अधीन होते हैं—पहला मौरूसीपन का नियम और दूसरा हर एक की अपनी आज़ाद उठान (या परिवर्त्तन) का नियम. आत्मा यानी रूह एक है, इसलिये हममें कुछ मौरूसी गुणों का होना स्वाभाविक है. अनात्मा यानी प्रकृति तरह तरह की है इसलिये सब के अलग अलग रूप होना और उन रूपों का बदलते रहना भी उतना ही क़ुदरती है. दर्शन शास्त्र यानी फलसफे में यह दोनों नियम एक दूसरे में आ जाते हैं. सब बच्चे माँ बाप के अन्दर मौजूद होते हैं, और हर माँ या बाप ख़ुद अनगिनत पुरखों की औलाद होता है. हर कार्य (नतीजा) अपने कारण (सबब) के अन्दर बीज रूप में मौजूद होता है. 'सब हमेशा और हर जगह हैं', क्योंकि वह एक, जिस के अन्दर यह सब हैं, हर जगह है.

आजकल की बायोलोजी की साइन्स में और हमारे देश के पुराने आयुर्वेद में दोनों में विस्तार के साथ बयान किया गया है कि माँ बाप के दिलों और दिमाग़ों की उस समय की हालतें और आस पास की देश काल की हालतें सब मिल कर किस तरह बच्चे के ऊपर असर डालती हैं और किस तरह एक बच्चे से दूसरे बच्चे में अनगिनत फ़र्क़ पैदा होते चले जाते हैं. जब यह हालात एक से होते हैं तो बच्चों के रूप रंग और दिमाग़ भी एक से होते हैं. यह बात जुड़वाँ बच्चों में ख़ूब दिखाई देती है. हिन्दुस्तान की ज्योतिष विद्या से भी हमें इस मामले में बहुत सी बातों का पता चलता है, जैसे यह कि पुरुष और स्त्री के किस समय के औरकैसे समय के मेल से कैसी औलाद पैदा होनी चाहिये.

हर बच्चा दो इनसानों से पैदा होता है और उन दोनों में से भी हर एक दो दो से पैदा हुआ है. इस तरह अगर हम पीछे को चलते रहें तो इस बेअन्त सिलसिले में हमें आगे की सारी सृष्टि के बीज और उसके कारण मिल जावेंगे. दुनिया में कोई चीज नई

नहीं है. सब एक में हैं और सब में एक है. इसलिये मौरूसीपन और लगातार परिवर्तन दोनों एक ही सिक्के के दो रुख़ हैं.

दुनिया की नई और पुरानी सब तहज़ीबों ने किसी न किसी हद तक इन चार क़िस्म के आदमियों और क़ुदरत के इन दोनों नियमों (क़ानूनों) को निगाह में रख कर ही समाज का संगठन किया है. अगर हम ध्यान से देखें तो जहाँ तक इन असूलों को निगाह में रख कर समाज का संगठन किया गया है वहाँ तक ही वह तहज़ीबें कामयाब और ख़ुशहाल रही हैं. हिन्दुस्तान की पुरानी तहज़ीब ने इस असूल को अच्छी तरह समझा था और उस पर अमल करने की कोशिश की थी. शायद इसीलिये हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता एक चीनी सभ्यता को छोड़ कर, शायद सबसे अधिक दिनों तक ज़िन्दा और फलती फूलती रही. पर जबसे हमारी इस तहज़ीब के अगुआ, उसके रक्षक और शिक्षक अधिक स्वार्थी और ख़ुदग़रज़ हो गए और उन्होंने आपस के फ़र्क़ों को उचित से अधिक बढ़ाना शुरू कर दिया, अपने को ऊँचा और दूसरों को नीचा कहने लगे, मौरूसीपन के असूल से ग़लत फ़ायदा उठा कर अपने को सदा ऊँचा और नीचे वालों को सदा नीचा ठहराने लगे और व्यक्तिगत स्वतंत्रता और परिवर्तन के असूलों को ज़बरदस्ती दबाने की कोशिश करने लगे तब ही से हिन्दुस्तानी सभ्यता में गिरावट आने लगी. हमारी सभ्यता अभी तक बिलकुल मरी नहीं है. इसका कारण शायद यह है कि पुरानी आध्यात्मिकता और बुनियादी मानव धर्म यानी मज़हबे इनसानियत की कुछ चिनगारियाँ हम में अभी तक बाक़ी हैं.

यहाँ यह बता देना भी आवश्यक है कि बावजूद मौरूसीपन पर इतना अधिक ज़ोर होने के यहाँ जातों का अदल बदल बराबर होता रहा है. इक्का दुक्का लोग ही नहीं गिरोहों के गिरोह हमेशा अपने को नीचे की जातों से उठाकर 'ब्राह्मण' या 'क्षत्री' नाम देते रहे हैं और आज कोई उनसे वह नाम छीन नहीं सकता. लेकिन जो एक सुन्दर साइन्सी ढंग से सबका आदर मान रखते हुए शुरू का संगठन था वह जाता रहा.

योरप से मुक़ाबला

इस मामले में योरप हमसे अच्छा नहीं रहा. हमारे यहाँ मौरूसीपन पर बेजा ज़ोर दिया गया और योरप में इसके ख़िलाफ़ आदमी आदमी के स्वार्थों की टक्कर और उनके बीच बेजा अन्धे मुक़ाबले पर ज़ोर दिया गया. सच यह है कि योरप में अभी तक कोई समाज संगठन हो ही नहीं पाया. एक दरजे तक मौरूसीपन भी सब जगह चलता है और क़ुदरती है. योरप में भी अधिकांश लाखों करोड़ों आदमी अपने बाप दादा के ही पेशों में लगे रहते हैं. लेकिन यह एक बड़ी अच्छी निशानी है कि योरप के अधिक उन्नत देशों में बच्चों को तालीम देने वालों का ध्यान तेज़ी से इस तरफ जा रहा है कि छोटी आयु से ही हर बच्चे के क़ुदरती रुझान और उसकी क़ाबलियत को समझने की कोशिश की जावे और उसी के अनुसार जीवन में उसे काम धन्दा देने की कोशिश की जावे. कुछ देशों में तो इस विद्या के ख़ास विद्वान या माहिर स्कूलों में रखे गए हैं. कहीं भी अगर समाज का टिकाऊ संगठन किया जावेगा तो मौरूसीपन और आज़ाद अदल बदल दोनों को ध्यान में रखना होगा. हाँ, हर बच्चे का पेशा तय करने में उसकी अपनी आज़ाद तबियत और निजी पसन्द का सबसे अधिक लिहाज़ रखा जायगा.

सुधार की ज़रूरत

जैसे हमारी राजकाजी और माली ज़िन्दगी में रक्षक भक्षक बन जाते हैं, 'लीडर' (रहबर) 'मिस लीडर' यानी गुमराह करने वाले हो जाते हैं, 'ट्रस्टी' अपने को "बैनीफ़िशयरी' बना बैठते हैं. दूसरों को खिलानेवाले ख़ुद उन दूसरों को निगलने लगते हैं, जनता के नौकर जनता के मालिक और अफ़सर बन बैठते हैं, जिससे हमेशा झगड़े, बलवे, इनक़लाब और क्रान्तियाँ होती रहती हैं, और फिर जो असली 'बैनीफ़िशयरी' है यानी

आम जनता के लोग वह फिर से अपने नए ट्रस्टी मुक़र्रर करते हैं; ठीक उसी तरह मज़हब के मामले में भी होता है. मज़हबी गुरु दुनयवी ताक़त छीनने के चक्कर में पड़ जाते हैं और हक़ूमत की ताक़त वाले धार्मिक गुरु बन जाने की फ़िक्र में रहते हैं. पुरोहित, पंडे, मुल्ला और पादरी सब लोगों को धोका देकर अपने छोटे स्वार्थों को पूरा करने के चक्कर में पड़ जाते हैं. धर्म को भी नया जामा पहनाने की ज़रूरत पड़ती है. राजकाजी इनक़लाब और मज़हबी इनक़लाब दोनों में गहरा सम्बन्ध है. जब धर्म और राजकाज दोनों को नया रूप दिया जाता है तब एक नई सभ्यता जन्म लेती है. आदमी बीमार पड़ता है तो हकीम डाक्टर की ज़रूरत होती है. जब किसी सारी क़ौम की आत्मा बिगड़ जाती है तो उसमें नई ईश्वरी रूह फूँकने की ज़रूरत पड़ती है. कोई न कोई 'ख़ुदा का बेटा', 'अवतार', 'मसीह', 'रसूल' या 'तीर्थंकर' उस क़ौम का इलाज करने के लिये आता है, उसे नया जन्म देता है, नया जिस्म देता है, और सारे समाज का नए सिरे से संगठन करता है. जब तक किसी समाज का ठीक तरह से संगठन नहीं होगा अच्छे से अच्छे आध्यात्मिक और नैतिक असूल भी बेकार रहेंगे, चाहे राज पादरी पुरोहितों के हाथों में हो, चाहे फ़ौजी सरदारों के, चाहे पूँजीपतियों के और चाहे आम जनता के. देश का इख़लाक़ सदाचार) तब ही ऊँचा जा सकता है जब हर आदमी के रुझानों को ठीक ठीक समझा जावे और उनके अनुसार कामों का ठीक ठीक बँटवारा किया जावे.

असली इलाज

महात्मा बुद्ध ने और जैन धर्म के क़ायम करने वाले महावीर स्वामी ने इस असूल को अच्छी तरह समझा था. उन्होंने जन्म की जातों को तोड़कर इस क़ुदरती नियम पर समाज को चलाने की कोशिश की थी. बहुत दरजे तक उन्हें कामयाबी भी हुई. इसीलिये जो नई सभ्यता उन्होंने क़ायम की वह

लगभग बारह सौ बरस तक ख़ूब चली. उस ज़माने में साहित्य और साइन्स दोनों ने ख़ूब तरक़्क़ी की, बड़ी बड़ी सलतनतें क़ायम हुईं जो अपने ज़माने की रोमी, यूनानी, ईरानी और चीनी सलतनतों से किसी तरह कम न थीं. बदक़िस्मती से हमारे अन्दर की अविद्या (जहालत) और हमारी बुराई की शक्तियाँ फिर ऊपर आ गईं. हमारा सारा शीराज़ा फिर बिखर गया.

बौद्ध ग्रंथ 'धम्मपद' में एक पूरा अध्याय है जिसमें यह बताया गया है कि सच्चा ब्राह्मण कौन है. लिखा है—

"लम्बी जटाएँ रख लेने से, या किसी ख़ास घर में पैदा हो जाने से, या किसी ख़ास स्त्री के पेट से पैदा होने के कारण कोई ब्राह्मण नहीं बन जाता. जो कोई सचाई पर क़ायम रहता है और अपना धर्म यानी फ़र्ज पूरा करता है, वही पाक है और वही ब्राह्मण है. जो तन से, मन से और वचन से कोई बुराई नहीं करता, जो अपने लिये माल असबाब या पैसा जमा नहीं करता, जो सब्र और धीरज के साथ दूसरों के कड़वे शब्दों, बदसलूकी और मार तक को बरदाश्त कर लेता है, जो अपने मन में ग़ुस्से को पैदा नही होने देता, जिसके अन्दर क्षमा यानी माफ़ी की ज़बर्दस्त शक्ति है, उसी को सच्चा ब्राह्मण कहना चाहिये. केवल जन्म से न कोई ब्राह्मण होता है और न कोई शूद्र होता है. हर आदमी अपने कामों से और अपने रहन सहन के ढंग से ब्राह्मण या शूद्र होता है. सूरज निकलता है तो दिन हो जाता है. रात होती है तो चाँद निकलता है. बहादुरी और उदारता से आदमी क्षत्री होता है. बुद्धिमत्ता और विचार शीलता से ब्राह्मण होता है."

महात्मा बुद्ध ने इन चार तरह के लोगों और पेशों का साफ़ साफ ज़िक्र किया है, इस फ़र्क़ को माना है, और सच्चे ब्राह्मण की जगह जगह ख़ूब तारीफ की है. लेकिन वह जन्म से जात को नहीं मानते थे. जो लोग जन्म से जाति और उसके आधार पर अपने को ऊँचा नीचा या ख़ास चीज़ों का हक़दार मानते हैं उन्हें बुद्ध ने बुरा कहा है. उनकी राय है कि हर आदमी के गुण

कर्म, क़ाबलियत, दिल और दिमाग़ की हालत और तबियत के अनुसार उसका पेशा तय होना चाहिए, और फिर चारों में से किसी एक वर्ण में उसे गिना जाना चाहिये.

जैन धर्म इस मामले में इससे भी अधिक स्पष्ट है. जैन सूत्रों में लिखा है कि—

"मनुष्य जाति सब एक है. लोगों की वृत्ति यानी उनके रहन सहन और काम के फ़र्क़ से चार जातियाँ दिखाई देती हैं. जो लोग नेक और पाक ज़िन्दगी की प्रतिज्ञाएँ करके उन्हें पूरा करते हैं वह ब्राह्मण हैं. जो दूसरों की रक्षा के लिये हथियार धारण करते हैं वह क्षत्री हैं. जो सच्चा और उचित व्यापार करके धन कमाते हैं वह वैश्य हैं. और जो दूसरों की सेवा करके मज़दूरी से गुज़ारा करते हैं वह शूद्र. आदमी अपने कामों से ब्राह्मण होता है, अपने कामों से क्षत्री, अपने कामों से वैश्य और अपने कामों से शूद्र. किसी का जन्म उसके चेहरे पर नहीं लिखा रहता. उसके काम सब को दिखाई देते हैं."

हिन्दू धर्म ग्रन्थों में भी यही असूल बताया गया है. महाभारत में लिखा है—

"दुनिया के सब आदमी ब्रह्मा की औलाद हैं, इस लिये सब ब्राह्मण हैं और एक बाप की औलाद होने के नाते सब भाई भाई हैं. शुरू में उनमें कोई फ़र्क़ नहीं था. सब का पेशा भी लगभग एक ही था. धीरे धीरे अलग अलग पेशे और अलग अलग काम पैदा हो गए जिस से चार वर्ण बन गए."

गीता में श्री कृष्ण ने कहा है—

"ईश्वर ने चार वर्ण लोगों में गुण और कर्म के भेद से बनाए हैं. हर आदमी अपने कामों से और अपने स्वभाव के गुणों से इस वर्ण या उस वर्ण में होता है."

भविष्य पुराण में लिखा है—

"तीन तरह के गुण होते हैं—सत्व, रजस् और तमस् (सत्व में ज्ञान का ज़ोर होता है, रजस् में कर्म का और तमस् में इच्छा

का). जिन लोगों की तबियत और उनके काम सत्व की तरफ़ जाते हैं वह ब्राह्मण कहलाते हैं. जिनकी तबियत रजस् की तरफ़ जाती है वह क्षत्री कहलाते हैं. जिन की तमस् की तरफ़ जाती है वह वैश्य कहलाते हैं. जिनके अन्दर तीनों गुण सोए हुए से हों वह शूद्र कहलाते हैं."

जब तक आदमी के अन्दर सिर, बाज़ू, धड़ और टाँगें अलग अलग हैं और इन्हीं के मुताबिक़ अलग अलग तबियतें दिखाई देती हैं तब तक सब मुल्कों और सब देशों में यह चार तरह के लोग दिखाई देंगे. जो समाज इस असूल के ऊपर अपना ठीक ठीक संगठन कर ले और उसी असूल पर सबके कर्त्तव्य और सबके अधिकार तय कर दे उसी समाज का संगठन अमन (शान्ति) के लिये है. वही समाज .ख़ुशहाल रहेगा. उसे किसी दूसरे से डर नहीं होगा. वह दूसरों के लिये भी अमन की मिसाल क़ायम करेगा और उन्हें इसमें हर तरह मदद देगा. दुनिया की सब क़ौमों का मिलाकर इस तरह संगठन हो जावे तो अपने आप आदमी आदमी में बेजा होड़, डाह, जलन, लोभ, लालच और आपा धापी दुनिया से मिट जावें. सब अपने अपने पैरों पर खड़े हो सकें. किसी को किसी पर हमला करने का कोई कारण न रहे और सब सबके भले के कामों में आसानी से लग सकें.

ज़िन्दगी के चार हिस्से

दुनिया में अमन क़ायम करने के लिये यह भी ज़रूरी है कि हर आदमी अपनी आयु के अनुसार ब्रह्मचर्य का पालन करे, अपने को रोके, अपनी तबियत को अपने क़ाबू में रखे, .ख़ुद तबियत के क़ाबू में न हो जावे: इसीलिये हर आदमी की आयु के चार हिस्से किये गए हैं, जिन्हें चार 'आश्रम' कहते हैं— ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास. इस मामले में अगर लोगों ने इस तरह अपनी तबियत को न रोका तो यह कमज़ोरी उनकी और दुनिया की सबसे बड़ी दुशमन साबित होगी.

ज़िन्दगी के तीसरे और चौथे हिस्सों में तो आदमी को अपने को बिलकुल ही रोककर रखना चाहिए. कोई चीज़ अगर दुनिया से जंगों को ख़तम कर सकती है तो इस तरह का नैतिक संगठन यानी इख़लाक़ी निज़ाम ही कर सकता है. इसके साथ साथ हमें क़ुदरत की ताक़तों को भी जहाँ तक हो सके अपने क़ाबू में करके उनसे काम लेना चाहिये. समाज के अन्दर की यह नैतिक जंग जितनी कामयाब होगी बाहर की जंगें उतनी ही कम होंगी.

समाज के इस तरह के संगठन में हर काम के अन्दर एक सुनहरा बीच का रास्ता रहता है, न किसी चीज़ की ज़ियादती न किसी चीज़ की कमी. सब को अपनी अपनी तरह बढ़ने का मौक़ा मिलता है. सब की कमज़ोरियों का भी ध्यान रखा जाता है और उन्हें अपनी कमज़ोरियों पर क़ाबू हासिल करने में मदद मिलती है. इस संगठन में देश, राष्ट्र या नस्ल का कोई भेद नहीं. यह निज़ाम सब इनसानों के लिए एक सा है, चाहे वह किसी देश या किसी नस्ल के क्यों न हों. यह निज़ाम साइन्स के ऐन अनुकूल है. इसमें जब तजरबेकार अधेड़ या बूढ़े लोग रुपये कमाने के धंदे को छोड़ कर बिना तनख़ाह जनता की सेवा करेंगे तो नौजवानों के लिये मैदान खुला होगा और उन्हें राह दिखाने और सलाह देने के लिये बराबर तजरबेकार, निस्वार्थ जन सेवक मिलते रहेंगे. सब को ज़िन्दगी में आनन्द मिलेगा और सबके दिल और निगाह उनके क़ाबू में रहेंगे. सब सुखी रहेंगे.

सब धर्मों को मिलाने का उपाय

इनसानी समाज के इस तरह के संगठन का किसी ख़ास धर्म या धार्मिक विश्वास से कोई सम्बन्ध नहीं. हिन्दुस्तान अगर इस तरह के संगठन को अपनाले तो वह केवल उन लोगों का ही संगठन नहीं होगा जो अपने को हिन्दू कहते हैं. इसमें मौलाना

अबुलकलाम आज़ाद सच्चे ब्राह्मण गिने जाएँगे. जमीयतुलउलमा के सब मेम्बर, स्कूलों और कालिजों के सब अध्यापक और प्रोफ़ेसर चाहे वह हिन्दू हों या मुसलमान, ईसाई हों या पारसी या कुछ भी हों, ब्राह्मण माने जाएँगे. जिस किसी को भी विद्या पढ़ने पढ़ाने का शौक़ हो या ज्ञान ध्यान में आनन्द मिलता हो वह ब्राह्मण. उसे फिर लम्बी तनख़ाह या दुनिया की टीपटाप या राज शक्ति अपने हाथ में लेने की चिन्ता न होगी. उसका आदर्श मशहूर अंगरेज़ी कहावत के अनुसार 'सादा जीवन बिताना और ऊँचा सोचना' होगा. इसी तरह जो भी फ़ौजी सिपाही या फौजी अफ़सर का काम करता है वह चाहे किसी भी धर्म का मानने वाला हो क्षत्री है. हम मौलाना शौक़त अली को उनके स्वभाव और बहादुरी के कारण हमेशा क्षत्री मानते थे. बम्बई के मुसलमान बोहरे और पारसी सौदागर सब वैश्य गिने जावेंगे. किसान चाहे किसी भी धर्म का मानने वाला हो धरती से धन पैदा करने के कारण वैश्य गिना जावेगा. गीता में खेती का काम वैश्यों का काम बताया गया है. देश भर के केवल शरीर से काम करने वाले सब लोग शूद्र गिने जावेंगे.

पर इसमें ऊँचा नीचा कोई नहीं होगा. ब्राह्मण ऊँचा और शूद्र नीचा, यह ग़लत विचार स्वार्थी लोगों ने देश की गिरावट के दिनों में पैदा कर लिया है, सब समाज के एक बराबर अंग, सबके राजकाज आदि में एक बराबर हक़, सबको बराबर के मौक़े, एक बार ब्राह्मण होकर भी जो विद्या में रस लेना छोड़ देगा या कम कर देगा और धन बटोरने की फ़िक्र में अधिक रहेगा वह फिर वैश्य कहलावेगा. तिजारत करने वाला जन्म से चाहे कुछ भी हो वैश्य गिना जावेगा. जो मेहनत मज़दूरी करते करते विद्या सीखने सिखाने का शौक़ दिखाएगा और इस काम में लग जायगा वह ब्राह्मण गिना जायगा. अपने रुझान, अपनी तबियत और अपनी क़ाबलियत के अनुसार एक वर्ण से दूसरे वर्ण में जाना सबके लिये खुला होगा.

हिन्दुओं की सैकड़ों हज़ारों जातें, उपजातें और बिरादरियाँ सब तोड़ दी जावेंगी और हमेशा के लिये ख़त्म हो जावेंगी. छुआछूत मिट जावेगी.

सारे समाज की इस तरह की व्यवस्था धीरे धीरे बिना किसी के साथ ज़बरदस्ती किये हमें अलग अलग धर्मों और सम्प्रदायों से ऊपर उठा कर उस एक मज़हबे इन्सानियत, मानव धर्म, प्रेम धर्म यानी मज़हबे इश्क़ की तरफ़ ले जावेगी जो सब अलग अलग धर्मों की बुनियाद और सबमें एक बराबर है. वही सच्चा इसलाम है, वही क़ुरान का 'दीनुल क़य्यमा' है, वही इस देश का 'सत्य सनातन धर्म' है. यही समाजी निज़ाम सारी दुनिया में फैल सकता है और दुनिया को एक कर सकता है. आपसी आपाधापी और देशों देशों के बीच अंधे स्वार्थ को ख़त्म करने का यह एक उपाय है.

वर्णाश्रम धर्म और कम्युनिज़्म

नए चीन के विधान में केवल 'किसानों' और 'मज़दूरों' को राज का अधिकारी माना गया है. पर नए चीन के उसी विधान के अनुसार अपने दिमाग़ से काम करने वाले लोग और दिल और दिमाग़ दोनों को मिला कर कला और साहित्य की सेवा में लगन से काम करने वाले प्रोफ़ेसर, साहित्यकार और चित्रकार सब 'वर्कर' यानी 'मज़दूरों' में शामिल हैं, और सब एक बराबर आदर के हक़दार. ऐसी सूरत में चीनी कम्युनिस्ट विचारधारा के साथ ऊपर की व्यवस्था का अधिक विरोध नहीं है. सब काम करें, सब अपना अपना काम करें और समाज में सबके एक बराबर हक़ और सबका एक बराबर मान हो.

दुनिया को शान्ति के लिये संगठित करना

अगर सब देशों और सब क़ौमों के कुछ बड़े दिल वाले और समझदार आदमी मिलकर सब क़ौमों और सब धर्मों की एक सच्ची लीग बनाकर बैठें और गम्भीरता के साथ सारी

इनसानी क़ौम के लिये इस तरह के समाजी संगठन पर विचार करें और फिर या तो उसे मंजूर करें और आगे की नसलों को उसके असूलों की तालीम दें और या कोई इससे बेहतर दूसरा ढंग निकालें, तब ही दुनिया से आदमी आदमी और क़ौमों क़ौमों के बीच की आपाधापी मिट सकती है और दुनिया के लोग सुख चैन से जीवन बिता सकते हैं और इस धरती पर स्वर्ग ला सकते हैं. दुनिया को जंग के ख़िलाफ़ 'शान्ति के लिये' टिकाऊ तौर पर संगठित (मुनज़्ज़म) करने का यही एक तरीक़ा है.

३३

इनसानी भाई चारे का असली रास्ता

पिछले अध्यायों में हम दिखा चुके हैं कि दुनिया के अलग अलग मज़हबों में बहुत सी बुनियादी बातें एक सी हैं. मज़हबों की इन मिलती जुलती बातों में अच्छी बातें भी हैं और बुरी भी. अच्छी बातों की बहुत सी मिसालें हम दे चुके हैं. बुरी बातों की एक ख़ास मिसाल यह है कि हर मज़हब कुछ दिनों चल कर सैकड़ों फ़िरक़ों, सम्प्रदायों और जमाअतों में बँट जाता है. इसका कारण आदमी के अन्दर की वही कमज़ोरी है जिसे हम 'ख़ुदी' कहते हैं और जो धर्म मज़हब में भी अपना रंग लाए बिना नहीं रहती. हर एक अपनी ही राय को ठीक समझता है. लोगों के व्यक्तिगत झगड़े भी इन फ़िरक़ों और सम्प्रदायों के बनने में बहुत बड़ा हिस्सा लेते हैं. इससे भी अधिक बुरी एक बात यह है कि हर मज़हब के अन्दर तरह तरह के गुप्त फ़िरक़े इस तरह के भी पैदा हो जाते हैं जिन्हें जादू, वाम मार्ग और शैतानी ताक़तों की पूजा कहकर बयान किया जा सकता है और किया जाता है. इस तरह के सम्प्रदायों में कहीं-कहीं गंदी रस्में भी चल पड़ी हैं. यहाँ तक कि देवी देवताओं के नाम पर आदमी की क़ुरबानी और मासूम बच्चों की हत्या तक होने लगती है. इस तरह के फ़िरक़ों और रिवाजों की तरफ़ हमें बराबर निगाह रखनी चाहिये और उनसे लड़ना चाहिये. हर रोशनी के पीछे कहीं न कहीं गहरा साया भी होता है. सुन्दर से सुन्दर आदमी या जानवर अपने जिस्म से गंदगी और मल मूत्र भी निकालता है. अच्छी से अच्छी मशीन कहीं न कहीं राख, फ़ुज़ला और गंदगी भी बाहर फेंकती है. इस तरह की

चीज़ों को हमेशा साफ़ करते रहने, पोंछते रहने और धोते रहने की ज़रूरत होती है.

हर मज़हब जब अपनी असल ऊँचाई से गिर जाता है और झूठे मुल्ला, पुरोहितों और गुमराह करने वाले ख़ुदग़रज़ रहनुमाओं के हाथों में पड़ जाता है तो उसके मानने वालों में से हर एक यह कहने लगता है कि—"एक मेरा मज़हब ही सच्चा मज़हब है, यही एक असली और पुराना धर्म है. कम से कम मेरा यह धर्म और सबके धर्मों से कहीं अच्छा है. मेरे मज़हब के मानने वाले ही 'धर्मात्मा' और 'मोमिन' हैं, और धर्मों के मानने वाले 'मलेच्छ', 'काफ़िर' और 'पेगन' हैं, और उन सबको दबाना या मिटाना ज़रूरी है!" यह लोग इस खुली सचाई को भूल जाते हैं कि सबके जिस्म एक प्रकृति (माद्दे) के बने हुए हैं और सबकी आत्माएँ (रूहें) एक ही परम आत्मा (रूहे कुल) से निकली हैं.

अलग अलग मज़हबों के मानने वालों के इस झूठे दावे के पीछे एक गहरी सचाई भी छिपी है. हर मज़हब में कुछ आम बुनियादी बातें होती हैं और कुछ न कुछ ख़ास बात भी होती है. हर मज़हब किसी न किसी एक ख़ास सचाई या एक ख़ास नेकी या ख़ास तरह के नेक काम पर ज़ोर देता है और दूसरी सचाइयों, दूसरी नेकियों और दूसरे अच्छे कामों की निसबत उसे बढ़कर बताता है. यह बात आम तौर पर उस ख़ास देश, उस ख़ास ज़माने या उन ख़ास हालात की वजह से होती है जिनमें वह मज़हब जन्म लेता है. मिसाल के लिये वैदिक धर्म में घट घट में रहने वाली एक आत्मा, और अलग अलग लोगों के अलग अलग कर्त्तव्यों के अनुसार समाज का संगठन करने पर ज़ोर दिया गया है. यहूदी धर्म में ईश्वर के कड़े इन्साफ़ और ईश्वर में विश्वास करने वाले लोगों की रक्षा पर ज़ोर दिया गया है. पारसी धर्म में पाकीज़गी, सचाई और ईमानदारी पर ज़ोर दिया गया है. बौद्ध धर्म में त्याग और दया

पर, ईसाई धर्म में बुराई का बदला बुराई से न देने पर, और दूसरों के लिये अपने को क़ुरबान करने पर, इसलाम में सब इनसानों की बराबरी और भाईचारे पर और ज़ुल्म का मुक़ाबला करने पर, वग़ैरा वग़ैरा. लेकिन धीरे धीरे सब मज़हबों की यह ख़ास बातें एक अजीब शकल अख़्तियार कर लेती हैं और हर मज़हब के लोग यह मानने लगते हैं कि उनके मज़हब को क़ायम करने वाला महापुरुष ही आदमी की ख़ुदा से सिफ़ारिश करने वाला या दोनों में नाता जोड़ने वाला हो सकता है. जिस आदमी की वह सिफ़ारिश कर दे वही नजात पायगा और कोई नजात नहीं पा सकता और न और कोई सिफ़ारिश कर सकता है.

जब आदमी 'मेरा मज़हब' कहता है तो उसके इस कहने में एक और सचाई छिपी होती है जिसे अगर वह जान जावे तो वह सचाई ही उसके 'तांबे' को 'पारस' की तरह छू कर 'सोना' कर दे. आपसी झगड़े की जगह आदमी फिर बड़ी से बड़ी शान्ति के मैदान में पहुँच जावे. 'मेरा मज़हब' का मतलब है 'मैं का मज़हब, आत्मा का मज़हब, उसी आत्मा का जो सबके अन्दर है, यानी परम आत्मा का या रूहे कुल का मज़हब'.

"मेरा मज़हब ही अकेला सच्चा मज़हब है, जो मैं मानता हूँ वही ठीक है, जो मैं करता हूँ वही ठीक अमल है." मामूली तौर पर यह ज़बरदस्त धोका, यह घमण्ड, यह पागलपन, आदमी की छोटी ख़ुदी का यह माया जाल (फ़रेब), इस ऊँची सचाई का ठीक उलटा है कि सब सच्चाई, सब नेकी और सब सुन्दरता उसी एक आत्मा, परम आत्मा या रूहे कुल में हैं जो असल 'मैं' हूँ. सचमुच यह 'मैं' ही दुनिया को बचा सकता है. इस ऊँची घट घट व्यापी 'मैं' का मज़हब ही सच्चा मज़हब है. लेकिन यह 'मैं' और यह मज़हब तो सब मज़हबों के अन्दर फैला हुआ है. सब इसी से क़ायम हैं. इसी के कारण यह सब मज़हब आदमी के मददगार बन सकते हैं. यही सब में सुलह कराने वाली चीज़ है. यही सब को बाँधने वाला सुनहरा धागा है. यह न हो तो

सब टुकड़े टुकड़े हो जावें. इसी को तो जगाना और जानना है. घट घट के अन्दर व्यापक आत्मा से बड़ी और कौन चीज़ हो सकती है. यही तो 'मैं' है. यही तो 'मैं' हूँ. इसी के अन्दर तो सारी दुनिया है. हमारी इस छोटी .खुदी से ज़ियादा छोटी कौन चीज़ हो सकती है जो मन दो मन हाड़ मांस तक महदूद है और बराबर जन्म, मरण, जवानी और बुढ़ापा, सेहत और बीमारी के चक्करों में फँसी रहती है. फिर भी यह छोटी सी .खुदी उस बेअन्त लामहदूद आत्मा को अपनी बालिश्त से नापने की कोशिश करती है ! उसकी यह कोशिश भी ठीक ही तो है, क्योंकि आख़िर असलियत में यह वही है.

हमारी आत्मा हमारे सब अलग-अलग मज़हबों से ऊपर और बड़ी है. यह इस बात से भी साबित है कि हर आदमी चाहे वह बड़ा विद्वान हो और चाहे बिलकुल अनपढ़, जब चाहे अपनी अन्दर की आवाज़ पर अपना ऊपरी मज़हब बदल सकता है और बदलता रहता है और उसकी जगह जिस मज़हब को चाहे अख़तियार कर सकता है. इस से ज़ाहिर है कि उसके अन्दर कोई चीज़ ऐसी है जो सब अलग अलग मज़हबों से ऊँची और बालातर है. एक सूफ़ी ने कहा है—

"चू हक़ीक़त रा मुजव्विज़ हम तुई,
ऐन हक़ इनस्त ऐनुलहक़ तुई."

यानी—"चूंकि असलियत को पहचानने वाला तू ही है इसलिये ऐन सच यही है कि असली सचाई भी तू ही है."

सूफ़ी कहता है कि "उम्मुलकिताब यानी सब किताबों की वह माँ जो अल्लाह के पास बताई जाती है आदमी की रूह ही है."

असल असलियत को समझने में यानी असल आत्मा को पहचानने में आदमी ग़लती इसलिये करता है कि उसने अपने को इस धोके में डाल रखा है कि वह यही मुट्ठी भर हाड़, मांस और .खून की पोटली है. बेअन्त यानी लामहदूद को महदूद

बनाकर वह महदूद को लामहदूद बनाने की कोशिश करता है. ख़ुदा का उलटा ही ख़ुदी यानी शैतान है. ब्रह्म से इनकार ही जीव है. सचाई की घटिया नक़ल झूठ है. उस बेअन्त से इनकार का नाम ही नास्तिकता है. यही हमारी महदूद हस्ती है.

यूरोप के एक विद्वान् ने कहा है कि—

"किसी मज़हब के अनोखेपन या ख़ुसूसियत को समझना हो तो उन चीज़ों से नहीं समझना चाहिये जो उस मज़हब में दूसरे मज़हबों से मिलती हुई हैं, बल्कि उस चीज़ से समझना चाहिये जो उन मिलती जुलती चीज़ों के ऊपर उस मज़हब की अपनी ख़ास मुहर है." बात सच है और ज़ाहिर है. अगर हम हर मज़हब के अनोखेपन को ही समझना चाहें तो सचमुच हमें सब मज़हबों को टटोलकर देखना चाहिये और मज़हब मज़हब के फ़र्क़ पर ही ज़ोर देना चाहिये, एक सी बातों पर नहीं. पर क्या सचमुच हमें इसकी ज़रूरत है? क्या यह अच्छा है? क्या इससे फ़ायदा है? क्या इससे दुनिया का भला हो सकता है? हर आदमी का रूप रंग हर दूसरे आदमी से अलग होता है, उठने, बैठने और सोचने के तरीक़े भी अलग अलग होते हैं. हर कुनबे का अपना अपना ढंग होता है—हर क़ौम का, हर क़बीले का. बहुत सी बातों में सब एक दूसरे से अलग अलग होते हैं. पर क्या इन अलग अलग बातों पर ज़ोर देना ज़रूरी है और मुफ़ीद है? क्या यह काफ़ी नहीं है कि हम इन अलग अलग फ़र्क़ों को सिर्फ़ समझ लें और गवारा कर लें? हर आदमी की आवाज़ अलग होती है जिससे वह अँधेरे में भी पहचाना जा सकता है. इसलिये अगर दो आदमी एक ही बात कहें तो क्या हम उनकी आवाज़ों के फ़र्क़ की वजह से इस बात को मानने से इनकार कर दें कि उन दोनों का मतलब एक ही है? दुनिया की आजकल की हालत में क्या इसकी ज़रूरत नहीं है कि हम फ़र्क़ों को बिलकुल मिटाने

की कोशिश किये बग़ैर उन्हें जहाँ तक हो सके नर्म करने की कोशिश करें. बिलकुल मिटाने की कोशिश करना तो क़ुदरत के भी ख़िलाफ़ होगा क्योंकि क़ुदरत के अन्दर कसरत में वहदत और अनेकता में ही एकता है. पर क्या मैं और तू, मेरा कुनबा, मेरी नस्ल, मेरा क़बीला, मेरी क़ौम और मेरे रंग के लोग, यह सब आवाज़ें हद से ज़ियादा नहीं बढ़ चुकी हैं ? क्या अब इस बात की ज़रूरत नहीं है कि हम अपनी मुश्तरका इनसानियत पर ज़ोर दें, यह समझें कि हम सब इनसान हैं, सब आदम की औलाद हैं ? कसरत में वहदत देखने का यही एक तरीक़ा है. इसी निगाह को जगाने और बढ़ाने से समाज, समाजी ज़िन्दगी, सच्चा समाजवाद और इनसानी भाईचारा मुमकिन हो सकते हैं. सूफ़ी कहता है—

"जिस किसी के दिल में सच्चा कुफ़्र पैदा हो गया वह फिर इस ऊपर के इसलाम से बेज़ार हो गया. उसे फिर इसकी ज़रूरत नहीं रहती."

—ॐ—

३४

शब्द और अर्थ

पिछले एक अध्याय में हम दिखा चुके हैं कि ज्ञान (मारफ़त) के रास्ते पर चलने वालों की राह में सबसे बड़ा ख़तरा यह होता है कि वह अपने छोटे से आपे को यानी अपनी निजी आत्मा को ही असल आत्मा समझ बैठते हैं और यह भूल जाते हैं कि यह उनकी आत्मा एक छोटी सी आत्मा है, केवल एक धोका है, और असल आत्मा यानी असली आपा वही 'सर्व आत्मा' यानी 'रूहे कुल' है जो घट घट के अन्दर और सबके अन्दर है. इसी तरह जो लोग भक्ति यानी इश्क़ के रास्ते पर चलते हैं उनसे सबसे बड़ी ग़लती यह होती है कि वह अपने से बाहर किसी एक पीर, मुरशिद, गुरु, आचार्य, पोप, या किसी एक छोटे से देवी देवता को ही परम आत्मा या कुल मालिक समझ बैठते हैं. बेअन्त (अनन्त) को हर सीमित (महदूद) वजूद के अन्दर देखने की कोशिश करना बिलकुल ठीक और सराहनीय है लेकिन महदूद को बेहद या बेअन्त समझ बैठना ग़लती और धोका है. इसी तरह जो लोग कर्मकाण्ड की राह पर चलते हैं यानी जो शरअ और मिनहाज पर चलकर अपने दीनी फ़र्ज़ को पूरा करना चाहते हैं उनसे सबसे बड़ी ग़लती यह होती है कि वह अकसर अपनी ख़ास तरह की रस्मों, अपनी ख़ास पूजा विधि, अपने संस्कारों और अपने रीत रिवाजों को ही सबके लिये सब जगह और सब हालतों में ठीक और ज़रूरी मान बैठते हैं. वह अपने रीत रिवाजों से इस बुरी तरह चिपकते हैं कि उन्हें अपने ही रिवाज ठीक और सबके रिवाज ग़लत दिखाई देने लगते हैं. असलियत से भटक कर वह नाम रूप में फँस जाते हैं.

ग़ौर से देखा जाय तो इन तीनों रास्तों की यह तीनों तरह की ग़लतियाँ एक ही जड़ से पैदा होती हैं. वह जड़ है वही हमारे अन्दर की .खुदी, हमारा अहंकार. यह अहंकार ही सब शैतानों का बादशाह है. हमारी यह तीनों तरह की ग़लतियाँ इसी के तीन रूप हैं. ज़बरदस्ती दूसरों को अपने मज़हब में लाना, अन्धी तबलीग़ और अन्धी शुद्धि दूसरी तरह के रीत रिवाजों के मानने वालों को हैरिटिक, काफ़िर या म्लेच्छ कहकर मार डालना, या ज़िन्दा जला देना और धर्म मज़हब के नाम पर जंग हमारे अन्दर की इसी शैतानियत के नतीजे हैं. हम अगर समझें तो धर्म और युद्ध यानी मज़हब और जंग इनमें कोई वास्ता ही नहीं हो सकता. यह एक दूसरे के वैसे ही विरुद्ध होते हैं जैसे सच और झूठ, नेकी और बदी या उजाला और अँधेरा. हमारे अंदर की .खुदी के इस तरह के फैलाव बड़े बड़े देशों की सामाजिक और नैतिक हवा को गन्दा कर देते हैं और क़ौमों के दिलों और दिमाग़ों को कुन्द और लकीर के फ़क़ीर बना देते हैं. हैनरी टामस ने अपनी किताब 'दी स्टोरी आफ़ ह्यूमन रेस' में लिखा है कि केवल ईसाई पादरियों की आज्ञा पर एक करोड़ से ऊपर इनसान समय समय पर ज़िन्दा जला दिये गये. यह करतूत केवल एक मज़हब के नाम पर हुई. दूसरे मज़हबों के नाम पर जो इस तरह के पाप हुए हैं, और कम या ज़ियादा सब मज़हबों के नाम पर हुए हैं, उनका हिसाब किसी ने नही लगाया.

इस तरह वह सुन्दर और संजीदा रीत रिवाज जो आदमी के दिल को दुनिया से खींच कर एक अल्लाह में लगा देने के लिये बनाए गए थे वही रिवाज एक दूसरे के ख़िलाफ़ तलवारें खींचने का कारण बन जाते हैं और आदमी को आदमी से क़त्ल करवाते हैं, जब कि हर मज़हब में और उन मज़हबों में भी जो सबसे अधिक कट्टर समझे जाते हैं, मज़हब के मामले में हर तरह की ज़बरदस्ती को साफ़ साफ़ शब्दों में मना किया गया है.

क़ुरान में साफ़ लिखा है—

"ला इक्रहाफ़िद्दीन"

यानी "दीन के मामले में किसी के साथ किसी तरह की ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिये."

क़ुरान में लिखा है—"तुम्हारा दीन तुम्हारे लिये और मेरा दीन मेरे लिये."

क़ुरान में ईमान वालों को हिदायत की गई है कि—

"लोगों को अपने रब के रास्ते पर लाओ, समझदारी के शब्दों के साथ और नरम और मीठी बातों के साथ."

क़ुरान में यह चीज़ भी साफ़ साफ़ और बार बार कही गई है कि—

"हर क़ौम के लिये हमने अलग अलग शरअ और मिनहाज यानी अलग अलग कर्मकाण्ड बना दिये हैं जिन पर चलकर वह अल्लाह तक पहुँच सकते हैं. अल्लाह अगर चाहता तो सबको एक उम्मत (एक क़ौम) बना देता. पर उसने ऐसा नहीं किया. इसलिये सब लोगों को चाहिये कि जो रास्ता उन्हें बता दिया गया है उसी पर चलें और नेकी के कामों में एक दूसरे से बढ़ने की कोशिश करें. कोई दूसरे पर हँसे नहीं क्योंकि हो सकता है कि जिस पर तुम हँस रहे हो वह तुमसे अच्छा हो."

शब्दों की माया अपार है. शब्दों और तरह तरह के नारों से बड़े बड़े नेक काम भी हो जाते हैं और बड़े बड़े गुनाह (पाप) भी. बड़े बड़े बलवे, दंगे, फ़िसाद और जंग शब्दों से ही होते हैं. ग़लत नारों से क़ौमें की कौमें पीढ़ियों तक धोके में पड़ी रहती हैं और एक दूसरे को और ख़ुद अपने को मिटाती रहती हैं. कभी कभी अलग अलग लोग अलग अलग शब्दों का उपयोग करते हैं पर उन शब्दों से उनका मतलब एक ही होता है. केवल वह एक दूसरे को समझ नहीं पाते, या दिलों में ज़िद्दें पैदा हो जाने से यानी उनके दिलों पर शैतान का ग़लबा हो जाने से ज़बरदस्ती एक दूसरे को उलटा समझते

रहते हैं. दुनिया में जितने झगड़े और फ़िसाद होते हैं लगभग सबकी वजह यही होती है कि हम शब्दों के पीछे या शब्दों से आगे बढ़कर असलियत को या तो समझ नहीं पाते या समझने के लिये तैयार नहीं होते. मौलाना रूम ने अपनी मशहूर किताब मसनवी में बार-बार कहा है—"लफ़्ज़ों में मत फँस, मानी की तरफ़ जा". राजनीति में भी जब जब लोग कामयाबी के साथ मिल जुल कर झगड़ों को तय करना चाहते हैं और शान्ति या अमन क़ायम करना चाहते हैं तब तब उन्हें यही करना पड़ता है कि बार बार बैठकर मेहनत के साथ एक दूसरे की बात सुनें और एक दूसरे का मतलब समझें और समझावें. ग़लत समझने का मतलब ही न समझना है. ग़लत समझने से ही आदमी एक दूसरे का दुशमन बनता है. फिर हर वह आदमी जिसकी बोली या ढंग हमसे अलग है हमें अपना दुशमन दिखाई देने लगता है.

यही हाल उन लोगों का है जो दुनिया के शारीरिक रोगों को अच्छा करने का दावा करते हैं. दुनिया के रूहानी डाक्टरों की तरह यह जिस्मानी डाक्टर भी एक दूसरे से लड़ते रहते हैं और अधिकतर केवल शब्दों पर लड़ते रहते हैं, और एक दूसरे को नफरत की निगाह से देखते हैं. इनमें से अकसर में भी रोगी को अच्छा करने की इच्छा इतनी ज़ोरदार नहीं होती जितनी अपने अपने ढंग और अपने अपने इलाज के तरीक़े को चिपटे रहने की ज़िद. हर एक के अपने अपने शब्द होते हैं. ऐलोपैथिक डाक्टर अपने शब्द बोलता है, होमियोपैथ अपने शब्द, हकीम अपने शब्द और वैद अपने. हर एक को अपने ही शब्द ठीक मालूम होते हैं और वही प्यारे मालूम होते हैं. पर जब कि यह अपने मोटे मोटे शब्दों के जाल में फँसे रहते हैं और उन्हीं पर लड़ते रहते हैं, मामूली अनपढ़ आदमी भी यह जान जाता है कि उसे किस डाक्टर, हकीम या वैद से फ़ायदा होगा. वह बेहतर जानता है कि कौन अधिक अच्छा करता है और कौन अधिक मारता है. वह उनके शब्दों के धोके में नहीं

आता. वह यह भी जानता है कि किस रोग में उसे किस से अधिक फ़ायदा हो सकता है और सबसे फ़ायदा उठा लेता है. आख़िरकार डाक्टर, हकीम या वैद सब उसी मामूली आदमी की ही तो पैदाइश हैं. वही उन्हें खिलाता, पिलाता और चलाता है. इसी तरह धर्म मज़हब के मामलों में शब्दों के जंजाल में फँसे हुए मौलवी, पंडित और पादरी झगड़ते रहते हैं. पर मामूली जनता के दिलों में उस एक घट घट व्यापी आत्मा की जोत अकसर इतनी अच्छी चमकती है कि जनता .खुद बड़ी आसानी से यह तय कर लेती है कि किस रीत रिवाज को ओढ़े रहे और किस को उतार फेंके. जनता यह भी अधिक अच्छी तरह समझ लेती है कि आख़िरकार सब रीत रिवाजों के पीछे आत्मा एक ही है और जिसका मन साफ़ हो उसे ऊपरी रीत रिवाजों के फ़रक़ में पड़ने की ज़रूरत नहीं है.

शब्दों और नाम रूपों को चिपटे रहने से जो अन्याय और अनर्थ होता है उसे देखकर ही दुनिया को उससे बचाने के लिये दुनिया में हमेशा नए नए राह दिखाने वाले आते रहे हैं. ईसाई धर्म में प्रोटेस्टेन्ट धर्म की बुनियाद इसी तरह पड़ी. वैदिक धर्म की इसी गिरावट की वजह से बौद्ध धर्म पैदा हुआ. जैन धर्म, शंकर का अद्वैत, रामानन्द, चेतन और तुलसीदास की भक्ति, कबीर साहब का प्रेम धर्म, गुरु नानक का सिख मत और स्वामी दयानन्द का आर्य समाज सबकी बुनियादें इसी तरह की लहरें थीं. इसलाम में भी सैकड़ों सूफ़ी, वहाबी, बहाई, क़ादयानी वग़ैरा वग़ैरा असल में हमें इस ख़तरे से आगाह करते रहे हैं. योग सूत्रों में 'शब्द' और 'अर्थ' का फ़रक़ करने पर बहुत अधिक ज़ोर दिया गया है. सुक़रात ने भी अपनी किताबों में यही तालीम दी है. वह लोगों से बार बार सवाल करके यही जानने और बताने की कोशिश किया करता था कि उनके शब्दों के पीछे मतलब क्या है. वह उन्हें समझाता था कि लोग अकसर शब्दों के मानी या तो उलटे करने लगते हैं और या उनके दिमाग़ों में केवल शब्द ही शब्द रह जाते हैं, मानी कोई रहते ही नहीं.

इंजील में लिखा है—"शब्दों पर मत चिपको, शब्द आदमी को मार डालते हैं, मानी की तरफ जाओ, उसी से तुम्हें अमर जीवन मिलेगा.

"हाड़ मांस की चीज़ों को आत्मा (रूह) की आँखों से देखो, यह न करो कि उलटा आत्मा की चीज़ों को हाड़ मांस की आँखों से देखो."

इस नेक और क़ीमती सलाह पर हम चलें तो हम एक दूसरे से नफ़रत करना छोड़ दें और उसकी जगह एक दूसरे से प्यार करना सीख लें. यह प्यार करना ही सब मज़हबों का असल असूल और सबका असली मक़सद है. दुनिया के शीशे के अन्दर से हमें रूहानी चीज़ों के अक्स को देखने की कोशिश करनी चाहिये. शब्दों की पूजा या किसी एक ज़बान के शब्दों की पूजा बुतपरस्ती से भी अधिक ख़तरनाक है. उससे बचने का एक अच्छा तरीक़ा यह भी है कि हम कई कई मज़हबी ज़बानों को सीखें और अलग अलग मज़हबी किताबों को सामने रखकर एक दूसरे से मिलाते हुए उन्हें पढ़ें तब हमें अपने आप अलग अलग चेहरों के अन्दर एक ही दोस्त का प्यारा चेहरा दिखाई दे जायगा. फ़ारसी की मशहूर किताब 'मामुक़ीमा' में बार बार बड़े सुन्दर शब्दों में कहा गया है—

'कि बचश्माने दिल मबी जुज़ दोस्त
हरचे बीनी बिदां कि मज़हरे ओस्त'

यानी "अपने दिल की आँख से सिवाय दोस्त के और कुछ मत देख. जो भी तुझे दिखाई देता है उसे जान ले कि वह उसी एक प्यारे का रूप है."

३५

"हज़ारों काबों से एक दिल बेहतर है"

इससे पहले के एक अध्याय में हम कह चुके हैं कि अलग अलग धर्मों की ख़ास ख़ास किताबों को अगर हम असल ज़बान में एक दूसरे से मिलाकर पढ़ें तो हमें उन सब के अन्दर एक ही से विचार और एक ही प्रीतम का प्यारा मुखड़ा दिखाई देगा. बुतपरस्ती आदमी की आत्मा पर बेड़ियों का काम करती है. पर बुतपरस्ती से भी अधिक ख़तरनाक बेड़ियाँ वेद-परस्ती, .कुरआन-परस्ती और इंजील-परस्ती हैं. धर्म के मामले में मेरा तेरा और अहंकार यानी .खुदी वैसी ही बुरी और ख़तरनाक हैं जैसी हमारे आए दिन के बरताव में.

इस .खुदी से ऊपर उठने का एक तरीक़ा दुनिया के बड़े से बड़े महापुरुषों ने हमें यह बताया है कि हम सब काम उस रूहेकुल यानी परम आत्मा के नाम पर, उसी की राह में, और उसी को अर्पण करके करें, जो सबके अन्दर है. यह मानकर करें कि जो कुछ हम कर रहे हैं उसी की मरज़ी है, उसी की आज्ञा है. तब ही हज़रत ईसा का यह वाक्य—"ईश्वर ! तेरी इच्छा पूरी हो, मेरी नहीं" धीरे धीरे हमारे जीवन का अंग बन सकता है. केवल इसी तरह हम अपनी आत्मा को उस परम आत्मा के साथ मिलाकर एक कर सकेंगे. और यह एकता हमारे प्रेम, हमारी इबादत और हमारे सब छोटे बड़े कामों में चमक उठेगी. तब ही हमारे अन्दर हक़ का ज़हूर होगा.

.कुरआन में लिखा है कि—

"ग़रीबों, यतीमों और क़ैदियों को केवल अल्लाह के लिये और उसी की मुहब्बत के नाम पर खाना दो. अपने लिये

किसी तरह का इनाम या बदला न चाहो, शुक्रिये की भी इच्छा न करो."

और लिखा है कि—

"मेरी सब दुआएं, मेरी क़ुरबानियाँ, मेरा जीवन और मेरी मौत सब उसी अल्लाह के लिये हैं जो सब दुनियाओं का मालिक है."

"हम पूरे दिल से उसी अल्लाह पर भरोसा करते हैं, वही हमारी सबसे अच्छी पनाह, हमारा आश्रय है."

गीता में ईश्वर ने कहा है—

"मुझमें अपने मन को लगा, मुझसे प्रेम कर, मेरे ही लिये क़ुरबानी कर, मुझे नमस्कार कर, मैं तुझे सब पापों से बचा लूँगा, तू फिक्र मत कर, हे अर्जुन ! अच्छी तरह समझ ले कि मेरा भक्त कभी नष्ट नहीं होता."

"तू जो कुछ करे, जो कुछ खावे, जो कुछ आहुति दे, जो कुछ दान दे, जो कुछ तपस्या करे, ऐ अर्जुन ! सब मुझे अर्पण कर."

इंजील में लिखा है—

"ऐ वह सब लोगो जो थक गए हो और जिन के दिलों पर चिन्ताओं का बोझ है, मेरे पास आओ. मैं तुम्हें आराम पहुँचाऊँगा..... पूरे दिल से ईश्वर से प्रेम करो.....हम जियें तो ईश्वर के लिये और मरें तो ईश्वर के लिये, इसलिये हम चाहे जियें और चाहे मरें हम ईश्वर के हैं.....तुम चाहे खाओ, चाहे पियो और चाहे कुछ भी काम करो, जो करो सब ईश्वर के लिये और उसी की शान के लिये करो."

हज़रत ईसा ने कहा है कि—

"ऐ वह लोगो जिन पर मेरे पिता की बरकतें हैं, ईश्वर के राज के वारिस बनो.....क्योंकि जब मैं भूका था तुम ने मुझे खाना दिया, जब मैं प्यासा था तुम ने मुझे पानी दिया...मैं नंगा था और तुमने मुझे कपड़े पहनाए." (मत्ती की इंजील)

चीन के मशहूर महात्मा लाओ-त्से ने लिखा है—

"ताओ यानी धर्म का रास्ता यही है कि हम अपने लिये या अपने को सामने रखकर कोई काम न करें, हम जो काम करें उसमें नतीजों की चिन्ता न करें, खावें और सवाद की फ़िक्र न करें, छोटी चीज़ को बड़ी और बड़ी को छोटी समझें और कोई हमें नुक़सान पहुँचावे तो उसका बदला नेकी से दें."

(लाओ-त्से-किंग)

पारसी धर्म की किताब गाथा में लिखा है—

"ऐ मज़दा (ईश्वर) ! ज़रतुश्त अपना तन और अपनी आत्मा तुझे अर्पण करता है.....नेक काम करने वाला जो कुछ भी करता है, ऐ ईश्वर ! सब तेरे ही लिये करता है."

कबीर साहब ने इस हालत को 'सहज समाधि' कहा है और इसे इन शब्दों में बयान किया है :—

"जहं जहं डोलौं सो परिकरमा, जो कछु करौं सो सेवा
"जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा
"कहौं सो नाम सुनौं सो सुमिरन खावौं पियौं सो पूजा
"गिरह उजाड़ एक सम लेखौं भाव मिटावौं दूजा."

यानी—"मैं जहाँ जहाँ भी चलूँ वही भगवान की परिक्रमा यानी तवाफ़ है, मैं जो कुछ भी करूँ वही ईश्वर की सेवा यानी ख़िदमत है, मैं जब भी सोऊँ मेरा सोना उसकी दंडवत यानी सिजदा है, मैं किसी और देवी देवता को नहीं पूजता. जो भी शब्द मेरे मुँह से निकले वही उसका नाम है, जो कुछ भी मैं सुनूँ वही सुमिरन यानी उसकी याद है, जो कुछ मैं खाऊँ पियूँ वह सब उसी की पूजा यानी इबादत है, घर और जंगल दोनों को मैं एक बराबर देखता हूँ, दुई का ख़याल ही मैंने अपने दिल से निकाल दिया है."

पुराने मिस्री धर्म में मौत के देवता को 'औसीरस' कहा गया है. हिन्दुओं में उसे यमराज कहते हैं. क़ुरआन में अल्लाह के उसी रूप का नाम 'अल्क़ाबिज़' है. जो रूहें बेगुनाह और पाक होती हैं उन्हें भी मौत के बाद 'औसीरस' नाम से पुकारा

जाता है. प्राचीन मिस्र की मशहूर किताब 'बुक आफ़ दी डेड' में लिखा है—

"औसीरस को जाने दो. तुम देख रहे हो कि वह बेगुनाह है.....वह ज़मीन पर सचाई से रहा, उसने सच्चा ही खाना खाया.....इसीलिये ईश्वर ने उसका स्वागत किया.....उसने अल्लाह के भूकों को खाना खिलाया, अल्लाह के प्यासों को पानी पिलाया और अल्लाह के नगों को कपड़ा पहनाया."

'पात्रे दानम्' यानी हक़दार को दान देना, 'अन्नदानम्' यानी भूकों को खाना खिलाना, 'विद्यादानम्' यानी बेपढ़ों को पढ़ाना, इन तीनो कामों की भारत के धर्म ग्रन्थों में बार बार तारीफ़ की गई है और यह सब के लिये फ़र्ज़ बताए गए हैं.

अल्लाह के इश्क़ यानी भक्ति का आनन्द लेना और अपने आप को ईश्वर के अर्पण कर देना ही काफ़ी नहीं है. जो आदमी ख़ुद आज़ाद हो गया हो उसका यह भी फर्ज़ है कि वह उन लोगों के लिये जो अभी तक ग़ुलाम हैं यानी तरह तरह की दुनियवी इच्छाओं की बेड़ियों में जकड़े हुए हैं उनके लिये ख़ादिम की तरह काम करे. उसे अपने रात दिन के कामों में इस बात को समझना और इस पर अमल करना चाहिये कि सारी मानव जाति बल्कि सब जानदार एक ही बहुत बड़ी बिरादरी हैं जिसका कोई अन्त नहीं. सच्चा ज्ञान और सच्ची भक्ति दोनों पति पत्नी की तरह हैं. पर यदि इन दोनों से अच्छे कामों यानी नेक आमाल के बच्चे पैदा न हों तो यह दोनों निकम्मे और बाँझ हैं. धार्मिक विश्वास और साइन्सी अक़्ल बिना नेक कामों के, निकम्मे ही नहीं, बुरे हैं. नेक काम ही आदमी के धार्मिक विश्वास के गवाह होते हैं. आदमी के दिल का अक़ीदा वही है जिस के अनुसार वह काम करता है. असली विश्वास शब्दों से साबित नहीं होता कामों से साबित होता है. विश्वास का सबूत शहीदों का ख़ून होता है, वही विश्वास का असल बीज होता है.

इंजील में लिखा है—

"तुम उन्हें उनके फलों यानी कामों से पहचानोगे."

हिन्दू किताब निरुक्त में लिखा है—

"जिस आदमी को सब वेद ज़बानी याद हैं पर जो उनके अर्थों को नहीं जानता वह एक लकड़ी के कुन्दे की तरह है जिस पर बोझ लदा हुआ है. और जो अर्थ को भी जानता है और अपने उस ज्ञान के अनुसार नेक काम करता है वह उन पापों से बचता हुआ जो आत्मा को बाँधते और नीचे घसीटते हैं स्वर्ग को प्राप्त करता है."

वशिष्ठ स्मृति में लिखा है—

"सब वेदों को उनके छहों अंगों समेत यदि कोई आदमी बड़ी मेहनत के साथ पढ़ भी ले पर उसके काम अच्छे न हों तो वेद उसे नहीं बचा सकते. मरने के समय वेद उसे इस तरह छोड़कर चले जाएँगे जिस तरह चिड़िया के बच्चे बड़े होने पर घोंसले को छोड़कर चले जाते हैं."

गीता में लिखा है—

"जीवन के उस चक्र को जो ईश्वर ने चला दिया है जो आदमी ठीक ठीक चलने में मदद नहीं देता यानी दूसरों के साथ नेकी नहीं करता, हे अर्जुन ! वह पाप करता है और उसका जीना बेकार है."

बौद्ध ग्रन्थ धम्मपद में लिखा है—

"जो आदमी विद्वानों की सी बातें बहुत करता है, पर दूसरों के साथ नेकी नहीं करता वह उस नासमझ आदमी की तरह है जो दूसरे की गायों को बार बार गिनता है, लेकिन जिसे एक घूँट भी दूध पीने को नहीं मिलता."

मनुस्मृति में लिखा है—

"नेक काम करना ही सब से बड़ा धर्म है. सब वेदों और स्मृतियों की यही तालीम है. इसलिये समझदार आदमी को चाहिये कि अपने को ठीक रखते हुए हमेशा नेक काम करता

रहे. जो ब्राह्मण नेक कामों से हटा हुआ है उसे वेद नहीं बचा सकते, और जो नेक काम करता रहता है उसे जीवन के सब अच्छे फल मिलते हैं."

महाभारत में लिखा है—

"वह पढ़ने वाले और पढ़ाने वाले और सब लोग जो बड़ी बड़ी किताबों के केवल शब्द पढ़ते रहते हैं और उन्हीं पर बहस करते रहते हैं वह सब एक बुरी आदत में फँसे हुए और मूर्ख हैं. पंडित वही है जो दूसरों के साथ नेकी करता है."

सूफी कहता है कि—

"चाहे तुमने कितना भी इल्म पढ़ा हो अगर तुम्हारे काम नेक नहीं हैं तो तुम जाहिल हो. तब तुम एक ऐसे जानवर की तरह हो जिस पर किताबों का बोझ लदा हुआ है, पर जो न सचाई को जानता है और न समझदार है."

मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है—

"सय्यदुल क़ौम ख़ादिमुल क़ौम" यानी—"क़ौम का सरदार वही है जो क़ौम की सबसे ज़ियादा ख़िदमत करता है."

चीनी ग्रन्थ ताओ-तेह-किंग में लिखा है—

"जो लोग बड़ा बनना चाहते हैं उन्हें चाहिये कि सबसे छोटे बनकर रहें और सब की सेवा करें."

इंजील में लिखा है—

"जो लोग दीन यानी मुन्कसिर मिज़ाज हैं वही धरती के मालिक होंगे, स्वर्ग का राज उन्हीं को मिलेगा.....तुम में से जो कोई सरदार बनना चाहे उसे चाहिये कि सब की सेवा करे, जो कोई तुम में बड़ा बनना चाहता है उसे चाहिये कि सब की ख़िदमत करे.....जो कोई अपने को ऊँचा मानेगा वह नीचे गिरेगा और जो कोई अपने को नीचा करके चलेगा उसे ऊँचा उठाया जायगा.... तुम में जो सब से बड़ा है वही तुम सब का सेवक होगा.....जो तुम में सब से बड़ा है उसे चाहिये कि सब से छोटा होकर रहे, और जो सरदार है उसे चाहिये कि सब का सेवक बनकर रहे."

क़ुरआन में लिखा है—

"अल्लाह के सब से नज़दीक और उसकी निगाह में सबसे बड़ा वही है जो तुम सब में दूसरों के साथ सब से अधिक नेकी करता है."

मनुस्मृति में लिखा है—

"सच्चा ब्राह्मण आदर सम्मान से हमेशा इस तरह भागता है जिस तरह ज़हर के काँटे से और अपमान और निरादर का इस तरह स्वागत करता है जिस तरह अमृत का."

सूफ़ी कहता है—

"ब एहसान आसूदा करदन दिले
"बेह अज़ अल्फ़ रकअत बहर मंज़िले
"दिल बदस्त आवर कि हज्जे अकबर अस्त
"अज़ हज़ारां काबा यक दिल बेहतर अस्त
"दिल गुज़रगाहे जलीले अकबर अस्त
"काबा बुनगाहे ख़लीले आज़र अस्त."

यानी—"किसी एक आदमी के साथ भी नेकी करके उसके दिल को ख़ुश करना ज़ियादा अच्छा है बनिस्बत इसके कि आदमी काबे की हज्ज को जाए और हर मंज़िल पर एक एक हज़ार रकअत नमाज़ पढ़ता जाए. दूसरे के दिल को अपने हाथ में ले क्योंकि यही सब से बड़ा हज्ज है, हज़ारों काबों से एक दिल बढ़कर है. आदमी का दिल ख़ुद अल्लाह के आने जाने की जगह है, जब कि वह पत्थर का काबा केवल आज़र के बेटे ख़लील यानी हज़रत इबराहीम का बनाया हुआ है."

महाभारत में लिखा है—

"तपस् तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थम् इन्द्रियनिग्रहः,
"सर्वभूतदया तीर्थं ध्यानं तीर्थम् अनुत्तमम्.
"एतानि पंच तीर्थानि सत्यं षष्ठं प्रकीर्तितम्,
"देहे तिष्ठन्ति सर्वस्य तेषु स्नानं समाचरेत्.

"दानं तीर्थं दमस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थम् उच्यते,
"ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता.
"ज्ञानं तीर्थं धृतिस् तीर्थं तपस् तीर्थमुदाहृतम् ,
"तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा."

यानी—"तप (रियाज़त) एक तीर्थ है, क्षमा यानी दूसरों के क़सूरों को माफ कर देना एक तीर्थ है, अपनी इन्द्रियों का क़ाबू में रखना एक तीर्थ है, सब प्राणियों पर दया करना तीर्थ है, ईश्वर में ध्यान लगाना बहुत अच्छा तीर्थ है, यह पाँचों पाँच तीर्थ हैं और सच बोलना छठा तीर्थ है. यह सब तीर्थ सब आदमियों के जिस्म के अन्दर मौजूद हैं. आदमी को इन्हीं तीर्थों में अच्छी तरह नहाना चाहिये. दूसरों को दान देना तीर्थ है. दम यानी अपने नफ्स पर क़ाबू रखना तीर्थ है, संतोष यानी क़नाअत करना तीर्थ है, ब्रह्मचर्य यानी नेक चलन रहना बहुत बड़ा तीर्थ है, सबसे मीठे बोलना तीर्थ है, ज्ञान यानी मारफत तीर्थ है, धीरज रखना यानी सब्र करना तीर्थ है. और इन सब तीर्थों का भी तीर्थ यह है कि आदमी अपने मन को पाक रखे."

बौद्ध धर्म की किताब धम्मपद में लिखा है—

"नंगे रहना, सिर पर लम्बी लम्बी जटाएँ रखना, बदन पर मिट्टी और भभूत मलना, बड़े बड़े उपवास करना, पत्थरों पर सोना और तरह तरह से अपने बदन को तकलीफें देना, यह सब चीज़ें, ऐ दोस्त ! तुझे पाक नहीं कर सकतीं जब तक कि तू अपने दिल को सब नापाक ख़ाहिशों से ख़ाली न कर ले, जटाओं से और मृगछाला ओढ़ने से क्या लाभ, जबकि तेरे अन्दर पापों ने घर बना रखा है. तू बाहर के शरीर को पाक करने की कोशिश करता है, धर्म का असली रास्ता यह नहीं है, धर्म का असली रास्ता है अपने दिल को पापों और बुरी इच्छाओं से पाक रखना."

मनुस्मृति में लिखा है—

"वेदों का पढ़ना, तपस्या करना, यज्ञ करना, त्याग करना, यम और नियमों का पालन करना, दान देना, इनमें से कोई काम उस आदमी का भला नहीं कर सकता जिसके दिल के अन्दर बुराई मौजूद है."

इंजील में लिखा है—

"मुबारक है वह आदमी जो लोभ और मोह के क़ाबू में नहीं आता, क्योंकि जब वह ईश्वर के सामने जाएगा तो उसे जीवन का वह ताज मिलेगा जिसका ईश्वर ने अपने प्रेमियों से वादा किया है. पाक धर्म जो ईश्वर को प्यारा है यह है कि तुम यतीमों और बेवाओं के पास जाकर उनके दुख को दूर करो और अपने को दुनिया की बुराइयों से बचाए रखो. ऐ मेरे भाइयो ! जो आदमी यह कहे कि मैं ईश्वर में और धर्म में विश्वास रखता हूँ, पर उसके काम अच्छे न हों उसे उस विश्वास से क्या फ़ायदा ! उसका विश्वास उसे नहीं बचा सकेगा. विश्वास कामों से पूरा होता है. जिस तरह शरीर बिना आत्मा के मुर्दा है इसी तरह विश्वास बिना अच्छे कामों के मुर्दा है."

यहूदियों में ख़तने का रिवाज था. इस रिवाज की तरफ़ इशारा करते हुए इंजील में लिखा है कि—

"ख़तना कराना या न कराना कोई बात नहीं. बात असली यही है कि ईश्वर की आज्ञाओं को माना जावे."

"जो नेकी मैं करना चाहता हूँ वह मैं नहीं कर पाता और जिस बुराई से मैं बचना चाहता हूँ वह मैं कर डालता हूँ."

इसी से मिलता हुआ विचार महाभारत में यूँ प्रगट किया गया है—

"मैं जानता हूँ कि मेरा धर्म क्या है, फिर भी मैं उसकी तरफ़ नहीं जा पाता. मैं जानता हूँ कि अधर्म क्या है, फिर भी मैं उधर को झुकता हूँ !!"

इंजील में लिखा है—

"क्या हम सब का बनाने वाला एक ही ईश्वर नहीं है ? तब फिर कोई आदमी अपने भाई दूसरे आदमी के साथ दग़ा कैसे कर सकता है.....जिस तरह जिस्म एक होता है और उसके अलग अलग अंग यानी हाथ पैर वग़ैरह होते हैं इसी तरह हम सब एक जिस्म हैं और हम सब उसी जिस्म के अलग अलग अंग हैं, चाहे यहूदी हों या ग़ैर यहूदी, चाहे ग़ुलाम हो या आज़ाद. जिस्म के अलग अलग अंगों से अलग अलग काम भी लिया जाता है. ईश्वर एक है और हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार काम लेता है. ईश्वर एक है. आत्मा एक है. वही घट घट में मौजूद है. एक का दुख सबका दुख है. एक का मान सब का मान है. यही ईश्वर की आज्ञा है कि जो कोई ईश्वर से प्रेम करे वह अपने भाई आदमी से प्रेम करे."

बौद्ध धर्म के एक ग्रन्थ में लिखा है—

"जो कोई अपने बाएँ हाथ को मैले से गन्दा होने देता है और उसे अपने दाहने हाथ की मदद से ठीक ठीक नहीं धोता वह बहुत जल्दी अपने शरीर के सब अंगों को नापाक कर लेगा. सब अंग मिल कर ही तो शरीर हैं. ऐसे ही हम सब इनसान कुल इनसानी शरीर यानी समाज के अंग हैं. हर अंग को चाहिये कि वह हर दूसरे अंग का ध्यान रखे और उसकी सेवा करता रहे."

चीनी ग्रन्थ 'ली-की' में लिखा है—

"हमें अपने जीवन में दूसरों के काम आना चाहिये."

वेदों में भी सारे इनसानी समाज को एक जिस्म बताया गया है और कहा गया है कि—

"जो लोग विद्या पढ़ते पढ़ाते हैं वह सब इस एक जिस्म का मुँह हैं, जो दूसरों की रक्षा करते हैं वह इस जिस्म के बाज़ू हैं, जो अपने और सब के लिये धन कमाते हैं वह धड़ हैं और जो केवल सेवा के कामों में लगे हैं वह इस जिस्म के पैर हैं."

सूफ़ी कहता है—

"बनी आदम आज़ाए यक दीगर अन्द
"कि दर आफ़रीनश ज़ यक जौहर अन्द्
"चूं उज़्वे ब दर्द आवरद रोज़गार
"दिगर उज़्वहा रा न मानद क़रार
"तू कज़ मेहनते दीगरां बेग़मी
"न शायद कि नामत निहन्द आदमी."

यानी—"आदम की औलाद यानी सब इनसान एक जिस्म हैं और सब एक दूसरे के हाथ पैर हैं, क्योंकि सब की पैदाइश एक ही अस्ल से है. अगर बदन के एक अंग में दर्द हो तो बाक़ी अंग आराम से नहीं रह सकते. जो आदमी दूसरों के दुख दर्द से दुखी नहीं होता और उन्हें आराम पहुँचाने की कोशिश नहीं करता वह इनसान कहलाने का हक़दार नहीं है."

एक और सूफ़ी ने लिखा है—

"एक फ़क़ीर किसी ख़ानक़ाह में दूसरे फ़क़ीरों के साथ रहता था. पर वह दिल वाला था. ख़ानक़ाह के क़ायदों को तोड़कर वह ख़ानक़ाह से निकल पड़ा और एक मदरसे में जाकर बच्चों को पढ़ाने लगा. मैंने उससे पूछा कि अल्लाह की इबादत करने वालों और लड़के पढ़ाने वालों में तुमने क्या फ़र्क़ देखा कि तुमने उस तरीक़े को छोड़कर यह काम अख़्तियार कर लिया? उसने जवाब दिया कि जब समन्दर में बाढ़ आती है तो ख़ानक़ाह के रहने वाले अपने अपने कम्बलों को बचाने की कोशिश करते हैं और यह बच्चे पढ़ाने वाले डूबते हुए इनसानों को बचाने की कोशिश करते हैं."

एक और सूफ़ी ने कहा है—

"अल्लाह तक पहुँचने का रास्ता सिवाए ख़िदमते ख़ल्क़ के यानी लोगों की सेवा के और कोई नहीं है. माला लेकर अल्लाह का नाम रटने से या नमाज़ पढ़ने से या गुदड़ी ओढ़ लेने से अल्लाह नहीं मिलता."

मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है—

"केवल कोशिश करना मेरा काम है कामयाबी नाकामयाबी अल्लाह के हाथ है."

यही विचार इन्हीं शब्दों में बार बार गीता के अन्दर आया है.

पारसी किताब गाथा में लिखा है—

"दूसरों की तरफ़ अपना फ़र्ज़ पूरा करने और नेक काम करने के रास्ते को पकड़ो. जो आदमी दूसरों के साथ नेकी करना छोड़ देता है वह धोके में है. उसका अपना भला कभी नहीं हो सकता."

यहूदी किताब मिशना में लिखा है—

"आदमी के लिये असली चीज़ किताबें पढ़ना नहीं हैं. असली चीज़ है दूसरो के साथ नेकी करना."

कबीर साहब ने कहा है—

"पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ पंडित भया न कोय
ढाई अच्छर 'प्रेम' के पढ़े सो पंडित होय."

इंजील में ईश्वर कहता है—

"जो आदमी अपने फ़र्ज़ की तरफ़ से अपने कान बन्द कर लेता है उसकी प्रार्थना भी नफ़रत की चीज़ है.....जब तुम अपने हाथ प्रार्थना के लिये फैलाओगे तो मैं (ईश्वर) तुम्हारी तरफ़ से अपनी आँखें फेर लूँगा, और जब तुम बार बार प्रार्थना करोगे तो मैं कान बन्द कर लूँगा. इसलिये कि तुम्हारे हाथ अपने भाइयों के .खून से रँगे हुए हैं."

हिन्दू पुराण में लिखा है कि—

"रुद्राक्ष के दाने या तुलसी की माला पहरना या माथे पर तीन रंग का तिलक लगाना, शरीर पर भस्म का मलना, तीर्थों की यात्रा करना, बड़ी बड़ी नदियों में स्नान करना, आग में हवन और यज्ञ करना, जप करना और मन्दिरों में जाकर देवता के दर्शन करना, यह सब मिलकर भी आदमी को पाक नहीं कर

सकते, जिस तरह कि दूसरे प्राणियों की सेवा और दूसरों की भलाई के कामों में लगा रहना उसे पाक करता है."

इंजील में लिखा है—

"हर वह आदमी जो ईश्वर ईश्वर चिल्लाता रहता है स्वर्ग के राज में दाख़िल नहीं हो सकता, ईश्वर के राज में वही दाख़िल होगा जो उस पिता परमेश्वर का हुकुम मानता है.....ईश्वर कहता है कि जो लोग दूसरों पर ज़ुल्म करते हैं उनसे मैं यह कहूँगा कि जाओ मुझसे दूर रहो, मैं तुम्हें नहीं जानता."

सूफ़ी कहता है कि—

"अगर मैं यह देखूँ कि एक अन्धा बेचारा जा रहा है और कुआँ सामने है और फिर मैं ख़ामोश बैठा रहूँ तो मैं गुनहगार हूँ."

चीनी ताओ धर्म की किताब में लिखा है कि—

"अपनी अक़्ल और अपने ज्ञान से दूसरों को फ़ायदा पहुँचाना ही सच्ची अक़्लमन्दी है, अपनी दौलत दूसरे ज़रूरतमन्दों में बाँटना एक नेक काम है."

गीता में लिखा है—

"दुनिया में काम न करने से आदमी ऊँचा नहीं उठ सकता. संन्यास से भी आदमी सिद्धि यानी कमाल हासिल नहीं कर सकता. असली ब्रह्म की शान्ति उन्हीं को हासिल होती है जो हमेशा सबकी भलाई के कामों में लगे रहते हैं."

पारसी धर्म की किताब 'पतीत पशेमानी' में एक सच्चा दीनदार आदमी ईश्वर से प्रार्थना करता है कि—

"अगर मैंने इनसानी समाज के भाईचारे के ख़िलाफ़ अपने बाप, अपनी माँ, अपनी बहन, अपने भाई, अपनी स्त्री या अपने बच्चों के साथ कोई गुनाह किया हो, या अपने 'गुरु', अपने 'मार्ग दर्शक', अपने किसी रिश्तेदार या अपने किसी जान पहचान वाले के साथ कोई ग़लत बरताव किया हो, या अपने शहर वालों, अपने साझीदारों, अपने पड़ोसियों, अपने गाँव

वालों या अपने नौकरों किसी के साथ भी ग़लत बरताव किया हो, तो मुझे उसका दुख और पछतावा है और मैं ऐ ईश्वर ! तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि तू मुझे माफ़ कर दे."

आख़ीर में हम सूफ़ी साहित्य से 'अबु बिन अधम' नाम की मशहूर सुन्दर कविता का अनुवाद नीचे देते हैं—

"अधम का बेटा अबु—अल्लाह उसकी नसल को बढ़ावे !

"एक दिन रात को शान्ति के गहरे सपने से चौंक कर उठा !

"उसके कमरे में चाँदनी छिटकी हुई थी.

"वह चाँदनी कमरे की शोभा को इस तरह बढ़ा रही थी जिस तरह खिले हुए नरगिस के फूल.

"उस चाँदनी में अबु ने देखा कि एक फ़रिश्ता सोने की एक किताब लिये उसमें कुछ लिख रहा है.

"मन की सच्ची शान्ति ने अधम के बेटे को निडर बना दिया था.

"उसने उस फ़रिश्ते से पूछा—

'तुम क्या लिख रहे हो ?'

"फ़रिश्ते ने अपना सिर उठाया और बड़े मिठास से अबु की तरफ देखकर जवाब दिया.

'मैं उन सब के नाम लिख रहा हूं जो ईश्वर से प्रेम करते हैं.'

"अबु ने फिर पूछा—

'क्या मेरा नाम उनमें है ?'

"फ़रिश्ते ने जवाब दिया—

'नहीं ! तुम्हारा नाम उनमें नहीं है.'

"अबु ने फिर धीरे से लेकिन .खूब .खुश होकर कहा—

'तब मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि मेरा नाम उन लोगों में लिख लो जो अपने भाई इनसानों से प्रेम करते हैं.'

"फ़रिश्ते ने लिख लिया और वह गुम हो गया.

"अगली रात फ़रिश्ता फिर आया और उसके नूर से अबु फिर जाग उठा.

"फ़रिश्ते ने अबु को अब उन लोगों के नाम लिखे हुए दिखाए जो ईश्वर से प्रेम करते हैं और जिन्हें ईश्वर की बरकतें हासिल हैं.

"अब ! अबु बिन अधम का नाम उनमें सब से ऊपर था."

२६

किताबों के शब्दों में न उलझो, असल मतलब की तरफ़ जाओ

हर मज़हब में कमसमझ और स्वार्थी आदमी हमेशा ऊपरी रीत रिवाज़ों और तरह तरह की रस्मों पर ही ज़ोर देते रहते हैं और इन्हें बढ़ाते रहते हैं. यह लोग अपनी मज़हबी किताबों का भी इसी तरह मतलब लगाते हैं और उनके अजीब अजीब मानी करते हैं. दुनिया के सब महापुरुषों और मज़हबी रहनुमाओं ने इस तरह के ग़लत मानी करने वालों और ग़लत मतलब निकालने वालों से लोगों को आगाह किया है और कहा है कि हमें किसी भी किताब के केवल शब्दों की तरफ़ नहीं उसकी रूह की तरफ़ जाना चाहिये. क़ुरआन में लिखा है—

"इस किताब में कुछ आयतें ऐसी हैं जो 'मोहकमात' यानी बुनियादी और साफ़ साफ़ हुकुम हैं. वही इस किताब की जड़ हैं. बाकी आयतें 'मुतशाबेहात' यानी बतौर तशबीह या मिसाल के कही गई हैं. लेकिन जिन लोगों के दिलों में कजी (टेढ़) है वह उसी हिस्से पर चलते हैं जो तशबीह के तौर पर कहा गया है, उससे फ़ितने यानी झगड़े खड़े करते हैं और तरह तरह से उसकी तावील करते हैं, यानी उसके छिपे हुए मानी निकालते हैं. लेकिन उसके छिपे हुए मानी सिवा अल्लाह के और कोई नहीं जानता." (3–7)

गीता में लिखा है—

"जो लोग वेदों के रीत रिवाजों और रस्मों में ही लगे रहते हैं, उसी की बात करते हैं और कहते हैं कि यही सब

कुछ है और इसके सिवा कुछ है ही नहीं, वह सचमुच कुछ नहीं जानते."

उपनिषद् में लिखा है—

"समझदार आदमी को चाहिये कि उस एक सचाई की खोज करे जिससे असली ज्ञान मिलता है, और बहुत से शब्दों के जंजाल में न पड़े क्योंकि यह शब्दों का जंजाल केवल अपनी ज़बान को थकाना है."

एक और जगह उपनिषद् में लिखा है—

"जो आदमी सच्चे ज्ञान विज्ञान की खोज में हो उसको चाहिये कि समझ के साथ शास्त्रों को पढ़े. लेकिन एक बार शास्त्रों को पढ़कर और उनके असली मतलब को समझकर उनके गुथे हुए शब्दों को इस तरह एक एक कर दूर फेंक दे जिस तरह वह आदमी जो नाज के दाने की तलाश में होता है दाने को भूसे से अलग करके भूसे को दूर फेंक देता है."

मौलाना रूम ने कहा है—

"अगर तू मारफ़त यानी ज्ञान के राज़ (रहस्य) को जानना चाहता है तो तुझे चाहिए कि लफ़्ज़ों को छोड़ कर मानी की तरफ़ जा."

एक और जगह मौलाना रूम ने कहा है—

"तू अगर क़ुरआन को इसी तरह पढ़ता रहेगा और इसी तरह मतलब करता रहेगा तो तू इसलाम की सारी रौनक़ को मिटा डालेगा."

मौलाना रूम का एक और मशहूर शेर है—

"मैंने क़ुरआन में से मग़्ज़ (गूदा) निकाल लिया है और हड्डियाँ कुत्तों के सामने फेंक दी हैं."

महाभारत में लिखा है—

"वेदों को दुनिया के इतिहास और पुराण यानी अब तक के परम्परागत ज्ञान की रोशनी में पढ़ना चाहिये. कमसमझ

आदमी से वेद भी यह सोचकर डरता है कि यह आदमी मेरे असली मतलब को ख़त्म कर देगा."

"व्याकरण यानी (ग्रामर) जानने वालों को चाहिये कि समझदार बड़े लोगों की बातों का बहुत बारीकी के साथ अर्थ न करें. जो लोग समझदार हैं वह शब्दों पर इतना ध्यान नहीं देते जितना उनके अन्दर छिपे हुए विचारों और अर्थों पर."

हमें यह भी बार बार बताया गया है कि सब सच्चे ज्ञान का असली सोता हमारे अपने अन्दर है. धर्म की किताबों को वही ठीक ठीक समझ सकता है जिसे अपने अन्दर का वह सोता मिल गया हो. इस अन्दर के सोते को अलग अलग मज़हबों ने अलग अलग शब्दों में बयान किया है, जैसे—प्रतिभा यानी इशराक़, दिव्य दृष्टि यानी चश्मेबातिनी, यौगिक ज्ञान यानी इल्मे-हुज़ूरी, अन्तरप्रकाश यानी रोशनज़मीरी, मन्त्रदर्शन यानी कश्फ़, वग़ैरा वग़ैरा. जो आदमी शब्दों में फँसा हुआ है वह इसके ख़िलाफ़ तर्क यानी दलील या बहस और अनुमान यानी इल्मे-हुसूली या अटकल की तरफ़ जाता है.

एक सूफ़ी कहता है—

"है अपने सीने में उससे ज़ायद
जो बात वाइज़ किताब में है."

कुछ और सूफ़ियों का कहना है—

"तू किताबों और रस्मों में .ख़ुदा को नहीं पा सकता. अपने दिल की किताब को पढ़ क्योंकि इससे बढ़कर कोई किताब नहीं है."

"सैकड़ों किताबों और सैकड़ों वरक़ों को आग में डाल दे और अपनी जान और अपने दिल को अपने दिलदार (प्रीतम) की तरफ़ लगा दे."

"सच यह है कि .ख़ुद तू ही सब किताबों की माँ है, अपने अन्दर की आयतों को .ख़ुद अपने अन्दर पढ़. तेरा दिल .ख़ुद एक मानी से भरी हुई 'लौहे महफ़ूज़' (सुरक्षित पाटी) है

जो कुछ भी तू चाहता है वह तुझे उस पाटी से मिल सकता है."

उपनिषद में लिखा है—

"सब विद्याओं का भंडार आदमी का दिल है."

मनुस्मृति में लिखा है—

"अपने अन्दर ध्यान से देखो! सब दुरुस्ती और सब ग़लती तुम्हारे ही अन्दर है. जो आदमी सब कुछ अपने ही अन्दर देख लेता है वह फिर अधर्म यानी बुराई नहीं करता. सब देवता तुम्हारे ही अन्दर हैं. जो कुछ हो तुम ही हो. सब तुम में है."

"जो आदमी सब प्राणियों की सेवा करके सब की आत्मा को अपनी आत्मा, अपने अन्दर सबको और सबके अन्दर अपने को देख लेता है, उसका दुई का परदा हट जाता है और वह शुद्ध अद्वैत (तौहीदे ज़ाती), भाव अद्वैत (तौहीदे सिफ़ाती) और क्रिया अद्वैत (तौहीदे अफ़आली) तीनों तरह की तौहीद की हक़ीक़त को जान जाता है."

'लौहेमहफ़ूज़' अल्लाह का वह हाफ़ज़ा यानी उसकी स्मृति है जिसमें भूत, भविष्य, और वर्तमान तीनों हमेशा के लिये मौजूद हैं. इसी को संस्कृत में 'चित्रगुप्त' कहते हैं. जो 'अल्क़ाबिज़' है वही यम है. जो 'अल्शकूर' है वही अन्तरयामी है. 'महत् बुद्धि' के जो मानी हैं वही 'अक़्लेकुल' के हैं. नए नए इल्म हम इसीलिये ईजाद कर सकते हैं क्योंकि हमारी आत्मा के अन्दर वह सब पहले से और हमेशा से मौजूद हैं. अपने अन्दर के उसी समन्दर में से हम कंकरियाँ और जवाहर निकाल निकाल कर बाहर फेंकते रहते हैं. इसीलिये ज्ञान यानी मारफ़त का रास्ता और भक्ति यानी इश्क़ का रास्ता और कर्म यानी ख़िदमते ख़ल्क़ का रास्ता सब एक दूसरे में बँधे हुए हैं और सब एक हैं.

.कुरआन में लिखा है—

"सबसे बढ़कर 'ईमान' यह है कि सब आदमी तुम्हारे हाथों में अपने को सुरक्षित (महफ़ूज़) महसूस करें. सबसे

आला 'इसलाम' यह है कि तुम्हारी ज़बान और तुम्हारे हाथों से सब बे-खटके और सलामत रहें."

इंजील में लिखा है—

"सच्चा और कामिल प्रेम डर को दिल से निकाल कर बाहर फेंक देता है."

मनुस्मृति में लिखा है—

"जो आदमी दुनिया के मोह को छोड़ देता है और यह प्रतिज्ञा कर लेता है कि वह किसी के दिल में अपने से डर पैदा होने नहीं देगा, उसको भी फिर किसी चीज़ का डर नहीं रह सकता. सब लोक (यानी सारे आलम) फिर अपनी पूरी शान के साथ उसके सामने खुल जाते हैं."

गीता में लिखा है—

"जिस आदमी से दुनिया में कोई डर नहीं खाता और जो ख़ुद किसी से डर नहीं खाता, जो घमंड, डर, घबराहट तीनों से ऊपर है वही भगवान को प्यारा है."

प्राचीन मिस्र के मज़हब का अब कोई मानने वाला नहीं रहा. उस पुराने मज़हब की पाक किताब 'परलोकवासियों की किताब' (दि बुक आफ दी डेड) में लिखा है कि आदमी के मरने के बाद जब उसकी रूह यमराज के सामने जाती है तो उसे यह कहने के क़ाबिल होना चाहिये कि—'मैंने कभी किसी को नहीं रुलाया.'

सूफ़ी कहता है—

"नमाज़े जाहिदां क़द्दो सुजूद अस्त
नमाज़े आशिक़ां तरके वजूद अस्त."

यानी—ज़ाहिदों (रीत रिवाज के मानने वालों) की नमाज़ खड़े होना और सिजदे में गिरना है, और आशिक़ों की नमाज़ अपनी ख़ुदी को मिटाना है.

इजील में लिखा है—

"और जब तुम दुआ माँगो तो उन पाखण्डियों की तरह न करो जो आम पूजा घरों में और गलियों के कोनों में खड़े होकर दुआ माँगना पसन्द करते हैं ताकि लोग उन्हें देखें..... तुम जब दुआ माँगो तो नासमझ लोगों की तरह फ़ज़ूल के वाक्य न दुहराओ. वह लोग समझते हैं कि वह अगर बहुत बोलेंगे तो उनकी बात ज़रूर सुनी जायगी..... तुम अपनी कोठरी में जाओ और जब दरवाज़ा अन्दर से बन्द कर लो तब अकेले में उस परम पिता परमात्मा से दुआ माँगो जो दिलों के अन्दर रहता है....."

"न कुछ ख़तना कराने में है और न कुछ ख़तना न कराने में है. सब कुछ इसी में है कि दूसरों के साथ बरताव करने में तुम ईश्वर की आज्ञाओं को मानो."

सूफ़ी कहता है—

"ऐ दिल! दूसरों के दिलों का तवाफ़ (परिक्रमा) कर क्योंकि इन दिलों के अन्दर एक काबा छिपा हुआ है. वह जो पत्थर का काबा है उसे तो हज़रत इबराहीम ने बनाया था और यह जो दिलों के अन्दर का काबा है इसे .खुद .खुदा ने बनाया है."

"हज्ज को जाना क्या है? अपनी .खुदी से दूर भागना. और जाना कहाँ है? उस रूहेकुल की तरफ़ जो सबके अन्दर और सब रहनुमाओं की रहनुमा है."

भागवत में लिखा है—

"दरियाओं के पानी से तीर्थ नहीं होता और न मिट्टी पत्थर के देवता देवता हैं. इनके ज़रिये तेरे दिल की सफ़ाई में एक ज़माना बीत जायगा. पर जो नेक लोग हैं उनके दर्शन करने से ही तू पाक हो जायगा क्योंकि उनका दिल ही भगवान का सिंहासन है."

बौद्ध किताब धम्मपद में लिखा है—

"आत्मा ही आत्मा का मालिक और रक्षक है, और कोई

रक्षक नहीं है. जिस किसी ने अपनी आत्मा को पा लिया उसे वह रक्षक मिल गया जिससे बढ़कर फिर कोई रक्षक नहीं."

गीता में ईश्वर कहता है—

"नासमझ लोग मेरे उस वजूद की तरफ़ से बेपरवाही करते हैं जो सब आदमियों के जिस्म के अन्दर है. वह यह नहीं जानते कि मैं ही सब प्राणियों के अन्दर और सबकी जान हूँ."

"आदमी को चाहिये कि अपनी आत्मा से अपनी आत्मा का उद्धार करे यानी अपनी छोटी ख़ुदी को ऊपर उठाकर सर्व आत्मा यानी सबके आपे में फ़ना कर दे. अपनी आत्मा को गिरने न दे. सबका आपा ही सारे देवता हैं. जो कुछ है सब इसी बड़े आपे के अन्दर है." (गीता और मनुस्मृति)

कहा जाता है कि बुद्ध भगवान के मुँह से जो आख़री शब्द निकले वह यह थे—

"तुम्हारी आत्मा के अन्दर जो रोशनी है उसी रोशनी में चलो. अपने से बाहर कोई और रोशनी तलाश न करो. आत्मा की ही शरण में आओ और किसी की शरण न ढूँढ़ो. और जितने बाहर के देवता आदि हैं वह सब आने जाने हैं. अमर केवल तुम्हारे अन्दर का सर्वआत्मा है. इसे याद रखो और होशियारी और सावधानी के साथ अपने अन्दर के उस अमर रहनुमा के पीछे चलो."

कबीर साहब ने इसी विचार को अपने शब्दों में यूँ प्रकट किया है—

"घट घट रमता राम रमैया, कटुक बचन मत बोल रे ! तोहे राम मिलेंगे.

"रंग महल में (यानी अपने अन्दर) दीप बरत है, आसन से मन डोल रे ! तोहे राम मिलेंगे."

गीता में कहा गया है—

"और सब प्राणियों के लिये जो रात है संयमी यानी बाहोश आदमी उसी में जागता है और जिसमें सब प्राणी जागते हैं वह साहबे नज़र मुनि के लिये रात है."

सूफ़ी कहता है—

"जो अपने को जागा हुआ समझता है वह सचमुच सोया हुआ है. उसका जागना उसके सोने से बदतर है. अपनी छोटी .खुदी से सोना ही असली जागना और असली होशियारी है. इस होश का समझने वाला वही हो सकता है जो अपनी .खुदी की तरफ़ से बेहोश है. लेकिन ज़बान की बात समझे वह जिसके कान हों."

"बरसों मेरा दिल मुझ से ज्ञान के प्याले की माँग करता रहा. ग़ैर से उस चीज़ की ख़ाहिश करता रहा जो .खुद उसके अन्दर मौजूद थी."

"इनसाने कामिल वही है जो मालिक होते हुए सबकी ग़ुलामी करता है और सब की सेवा में लगा रहता है. इसी में आदमी का कमाल है."

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—

"अफ़ज़लुल अशग़ाल ख़िदमतुन्नास."

यानी—"सब से बढ़कर शग़ल (योग) आदमी की सेवा है."

सब धर्मों के मानने वाले कभी कभी यह समझ कर अपने को धोका देते रहते हैं कि हमने अपने को पूरी तरह ईश्वर अल्लाह पर छोड़ रखा है, जो कुछ करता है वही करता है, हम ईश्वर के हाथ में केवल एक कठपुतली हैं. यह समझकर वह बुरे से बुरे कामों में पड़े रहते हैं. अपने असली फ़र्ज़ और असली दीन धर्म की तरफ़ से बेपरवाह और ग़ाफ़िल रहते हैं. यह धोका बड़ा ज़बरदस्त धोका है. हर कार्य एक कारण यानी सबब होता है और हर कारण का कार्य यानी हर सबब का नतीजा होना लाज़मी है. हम में से कोई अपने कामों के नतीजे से नहीं बच सकता. अगर हम कोई काम करने पर मजबूर हैं तो हमें उस काम का नतीजा भुगतने के लिये भी मजबूर होना पड़ेगा. सब धर्मों ने हमें इस धोके से बचाने की कोशिश की है. जब किसी

काम के करते समय हमें पल भर के लिये भी यह महसूस हो कि हम यह करें या न करें या यह करें या वह करें तो हमें अपने फ़ैसले के नतीजे को भुगतने के लिये भी तैयार रहना चाहिये.

इंजील में लिखा है—

"कल की मत सोचो, जो फ़र्ज़ आज इस समय तुम्हारे सामने है उसे अपनी पूरी शक्ति लगाकर पूरा करो."

गीता में लिखा है—

"ईश्वर सब जानदारों के दिलों के अन्दर बैठा हुआ है. वही सब को चला रहा है.....ए अर्जुन ! 'तू अपने किसी फ़र्ज़ से ग़ाफिल न हो. केवल अपने कामों के नतीजे की परवाह न कर."

लगभग इन्हीं शब्दों में क़ुरान में कहा गया है—

"सब जानदारों के दिल उस रहमान की उँगलियों पर हैं."

पर अपने फ़र्ज़ से इनसान ग़ाफिल नहीं हो सकता. मुहम्मद साहब की एक हदीस है—

"कोशिश करना मेरा काम है, कामयाबी नाकामयाबी अल्लाह के हाथ है."

सूफ़ी कहता है—

"तेरे कामों का असल बनाने वाला तेरे इस कारख़ाने के अन्दर छिपा हुआ है, तू अगर कारख़ाने के अन्दर ज़ाए तो उसे साफ देख लेगा. वही तेरे काम बनाने वाला है. वह तेरे सब कामों में मौजूद है. इसलिये अपने कामों के नतीजों की बाबत तेरा फ़िक्र करना केवल तेरी एक बीमारी है."

गीता में लिखा है—

"बेलाग होकर तू हमेशा अपने फ़र्ज़ को पूरा करने में लगा रह. इस तरह अगर तू ईश्वर के हाथों में केवल एक औज़ार का काम देता रहेगा तो तू उस परम पुरुष परम आत्मा को पा जायगा."

सब मज़हब हमें यह बताते हैं कि वह ईश्वर जो सब आत्माओं की आत्मा है और जो सबके घट में मौजूद है वही

हक़ है, वही सुन्दर और प्यारा है और वही सारी नेकी है. हिन्दू किताबों में 'सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्' के यही मानी हैं. उस 'हक़' को हमें जानना और पहचानना चाहिये. उस 'सुन्दर' और प्यारे की तरफ़ हमें अपने दिल को लगाना चाहिये. उसके नज़दीक पहुँचने के लिये हमें हर तरह से दूसरों के साथ 'नेकी' करनी चाहिये. सत्यम्, शिवम्, और सुन्दरम्, को ही सत्यम्, हितम् और प्रियम् भी कहते हैं. सूफ़ी लोग इन ही तीनों को 'मौजूद' 'माबूद' और 'मक़सूद' कहते हैं. सूफ़ी कहता है—"ला मौजूद, इल्लाहू; ला माबूद इल्लाहू, ला मक़सूद इल्लाहू." यानी उस एक के सिवा न कोई हक़ है न कोई प्यारा है और न कोई पूजा इबादत का हक़दार है.

इस तरह हम देखते हैं कि सब मज़हबों का सार यानी सब की असल हक़ीक़त एक है. वह हक़ीक़त उसी एक ईश्वर अल्लाह से है और उसके मुताबिक़ चलकर ही इनसान फिर अल्लाह तक पहुँच सकता है. इसी रास्ते का नाम 'योग' यानी 'सलूक' है. अलग अलग मज़हबों में इस रास्ते को अलग अलग नाम दिये गए हैं. पर रास्ता एक है. हिन्दुओं की सन्ध्या और उपासना में, मुसलमानों की नमाज़ में और ईसाइयों की दुआ में सबमें इस रास्ते के बीज मौजूद हैं. इस रास्ते के बहुत से निशान हैं. इन निशानों को मुक़ाम भी कहते हैं. इनमें कुछ यह हैं—यम, नियम, तप, चित्तप्रसादन, चित्त परिक्रम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, निर्विकल्प समाधि—या सूफ़ी शब्दों में तहज़ीबुन्नफ़्स, तसफ़ीयए दिल, नफ़्स कुशी, रियाज़त, तनक़ीयए क़ल्ब, ज़िक्र, फ़िक्र, मुजाहेदा, अशग़ाल, हब्सदम, मुराक़ेबा, मकाशफ़ा, मुशाहेदा, हाल, दीदार, वज्द, मुआयना वग़ैरा. जिसे हम ध्यान या मुराक़बा कहते हैं उसी को चीनी बौद्ध मज़हब में 'चान' और जापान में 'ज़ेन' कहते हैं.

योग सूत्रों में लिखा है कि आदमी जिस चीज़ का ध्यान करता है, जिस पर दिल लगाता है, वही वह हो जाता है.

आख़ीर में सब मज़हब यही कहते हैं कि जो कुछ है 'वही'

है. 'हमा ओस्त' और 'सर्वम् खलु इदम् ब्रह्म' दोनों के यही मानी हैं. अब चूँकि इनसान अपनी असल हक़ीक़त में उसी अल्लाह से है और वही है इसीलिये इनसानी समाज की ख़िदमत ही भगवान की सेवा है और यही अल्लाह की इबादत है.

इंजील में लिखा है—

"जो नेकी तुमने किसी छोटे से छोटे जानदार के साथ की है वह तुमने अल्लाह के साथ की."

भागवत में लिखा है—

"जो नेक इनसान हैं वह हमेशा दूसरे प्राणियों के दुख से दुखी रहते हैं, उनके दुख को अपना दुख समझते हैं. यही उनकी ईश्वर आराधना है. यही उस ईश्वर की सबसे अच्छी पूजा है जो सबके घट के अन्दर मौजूद है."

"येन केन प्रकारेण—यस्य कस्यापि जन्तुनः,

"सन्तोषं जनयेद् धीमान्—तदेव ईश्वरपूजनम्."

यानी—"जिस तरह भी हो सके समझदार आदमी को चाहिये कि जिस प्राणी के भी दिल को हो सके संतोष यानी तसल्ली पहुँचावे. यही ईश्वर की पूजा है."

सूफ़ी कहता है—

"अगर तू अल्लाह का दीदार हासिल करना चाहता है तो इनसान की सूरत को देख, उसके अन्दर तुझे अल्लाह यानी हक़ की ज्ञान साफ हँसती हुई दिखाई देगी."

एक और सूफी कहता है—

"शक्ले इनसां में ख़ुदा था मुझे मालूम न था
चाँद बादल में छिपा था मुझे मालूम न था."

भागवत में लिखा है—

"ईश्वर ने अपने रहने के लिये एक दूसरे के बाद बहुत से घर बनाए जैसे धात, पत्थर, पौदे, कीड़े, मछली, रेंगने वाले जानदार, उड़ने वाले पंछी और बड़े बड़े दरिन्दे. पर ईश्वर के लिये यह काफ़ी न हुआ. आख़िरकार उसने आदमी का रूप

बनाया. इस रूप में आकर उसने ख़ुद अपने को जाना. इनसान का जिस्म ही ईश्वर का सबसे बड़ा घर है."

सूफ़ी कहता है—

"वजूद के इस समन्दर में सिर्फ़ एक ही मोती है और वह है ख़ुद शनासी' यानी अपने को पहचानना. हम भँवर की तरह उसकी तलाश में अपने चारों तरफ़ चक्कर लगाते रहते हैं."

"यह जिस्म एक दरिया है. इसके अन्दर दिल एक सीपी है. हक़ उस सीपी के अन्दर का मोती है. बहादुर वही है जो इस दरिया में ग़ोता लगाकर उसमें से उस मोती को निकाल लावे."

"अपने होंटों को बन्द करो, अपनी आँखों को बन्द करो, अपने कानों को बन्द करो, अगर फिर भी तुम्हें अपने अन्दर हक़ की सूरत दिखाई न दे तो हम पर हँस लेना."

दुनिया के शोर ग़ुल से अपने को अन्दर खींचना ही अपने दिल की गुफाओं में अल्लाह को खोजना और उसका दीदार हासिल करना है.

योग सूत्रों में लिखा है—

"जब आदमी की सब इन्द्रियाँ यानी उसके सब हवास बाहर की तमाम चीज़ों से अपने को खींच लेते हैं तब इन सब इन्द्रियों के पीछे आदमी का जो चित्त यानी होश है वह अपने अन्दर की तरफ़ मुड़ता है, यानी जब आदमी के मन की सब हरकतें बन्द हो जाती हैं और मन पूरी तरह शान्त और निश्चल हो जाता है तब उसकी आत्मा अपने को देख पाती है. तब वह देखती है कि सब कुछ वही वह है और कुछ कहीं है ही नहीं. देश और काल यानी मकान और ज़मान तब मिट जाते हैं, हरकत ख़त्म हो जाती है, और आदमी की आत्मा सबकी आत्मा यानी परम आत्मा या रूहेकुल के साथ मिलकर एक हो जाती है. तब कोई ग़ैर नहीं रह जाता."

३७

अमन और प्रेम का एक ही रास्ता

धर्म (मज़हब) की एक ही ग़रज़ है और वह यह है कि लोगों के दिलों को एक दूसरे के साथ और अल्लाह के साथ मिलाया जावे. धर्म का कमाल यानी पूरापन इस बात के समझ लेने में है कि एक ही आत्मा सबके अन्दर है और वही अल्लाह है, और इसीलिये सबकी सेवा ही अल्लाह की इबादत है.

इंजील में लिखा है—"पूरे दिल के साथ ईश्वर से प्रेम करो और अपनी ही तरह अपने पड़ोसी से प्रेम करो." इसमें यह बात शामिल है कि अपने अन्दर मौजूद आत्मा ही परम आत्मा यानी ईश्वर है.

पर यह सारी कायनात यानी सृष्टि दुई पर क़ायम है और दो-दो विरोधी चीज़ों से बनी है. वजूद की सुई बराबर दोनों तरफ के दो सिरों के बीच में चक्कर काटती रहती है. इसीलिये हमें अनेक में एक यानी कसरत में वहदत की झलक मिलती रहती है. इसी को 'वहदत दर ज़ात' यानी परम तत्व में एकता और 'कसरत दर सिफात' यानी गुणों और धर्मों में अनेकता कहते हैं. हक़ीक़त एक है और उसके गुण यानी सिफात अनगिनत हैं. ऊपरी धर्म बहुत से हैं, धर्मी एक है. अनेकता के अन्दर बिगाड़ का होना भी लाज़िमी है. व्यापकता और हक़ीक़त को चमकाने के लिये ख़ुदी और बनावट ज़रूरी हैं. रंज और ख़ुशी, नफ़रत और प्रेम, मग़रूर शैतान और रहमदिल ईश्वर का बेटा, इसी तरह पारसी धर्म में अहरमन और स्पीतम, देवता और दैत्य, सुर और असुर, पापात्मा और पुण्यात्मा, शैतान और फ़रिश्ते, ज़िन्दगी और मौत, अपना और पराया, यह सब दुनिया में लाज़िम मलज़ूम हैं. एक के साथ दूसरे का होना

ज़रूरी है. इसी असूल पर मज़हब भी अपने ऊँचे मुक़ाम से नीचे गिरता है. असली और ज़रूरी बातों से हट कर वह बनावटी और ग़ैर ज़रूरी चीज़ों में फँस जाता है. यहाँ तक कि गन्दे अंधविश्वास और ज़ालिमाना रीति रिवाज उसमें दाख़िल हो जाते हैं. लोगों के दिलों को मिलाने के बजाय वह उन्हें और फाड़ने लगता है. धरती पर अमन क़ायम करने और लोगों में एक दूसरे से प्रेम पैदा करने की जगह मज़हब एक दूसरे को क़तल करने और तकलीफ़ पहुँचाने पर उतर आता है. कुछ दिनों तक यही होता रहता है. फिर हालत पलटती है. आदमी का दिल बदलता है. उसमें पछतावा जागता है. मज़हब में सुधार होता है. आत्मा वही रहती है पर ऊपर का रूप या शरीर बदल जाता है. इनसान फिर से पैदा होता है. वह ऊपर उठता है, आदम गुनाह करता है, असीरी यानी बन्धन में पड़ता है, अहंकार की बेड़ियाँ अपने ऊपर लेता है, .ख़ुदी, ग़ुस्सा और शहवत के क़ाबू में आ जाता है, और यह सब इसीलिये होता है कि अपनी इस छोटी .ख़ुदी को मार कर वह फिर ऊपर उठे और नजात यानी मोक्ष हासिल करे. इसी को 'फ़ना फ़िल्लाह' (ब्रह्म निर्वाण) कहते हैं. तब आत्मा को वह रुतबा हासिल होता है, वह शान्ति प्राप्त होती है जो सुख और दुख, नफ़रत और प्रेम जैसी हर तरह की दुई से ऊपर है.

जहाँ तक हमें दुनिया का, ख़ास कर बीच के ज़माने का, इतिहास मालूम है वहाँ तक पूरब में और पच्छिम में दोनों जगह मज़हब के नाम पर लड़ाई झगड़े होते रहे हैं. ईसाइयों और मुसलमानों के बीच सलीबी लड़ाइयों (क्रूसेड्स) के ज़माने में और उसके बाद और .ख़ुद ईसाई धर्म के अन्दर अलग अलग सम्प्रदायों के बीच उन मज़हबी कचहरियों ने, जो 'इनक्वीज़ीशन' कहलाती थीं, केवल धार्मिक मतभेद के कारण लाखों इनसानों को मौत के घाट उतार दिया या ज़िन्दा जला दिया. मज़हब के नाम पर वह सब कारनामे याद करके

आदमी काँप उठता है. यूरप में अब कुछ दिनों से कैथलिक, प्रोटेस्टेन्ट झगड़े नहीं हो रहे हैं. लेकिन यूरप अभी तक उन झगड़ों से पूरी तरह आज़ाद भी नहीं है. सन् १६२१ ई० में आज़ाद आयरिश हकूमत (आयरिश फ्री स्टेट) के इंगलैंड से टूट कर अलग हो जाने का कारण एक बड़े दरजे तक यही मज़हबी फ़रक़ था. इंगलैंड प्रोटेस्टेन्ट है और आयरलैंड कैथलिक. सारे यूरप के अन्दर वह बुराई पहले धार्मिक या साम्प्रदायिक थी तो अब राजनैतिक और आर्थिक है, और आजकल की राजनीति और अर्थनीति के नाम पर लड़ाइयाँ उस समय की मज़हब के नाम पर लड़ाइयों से कहीं अधिक ख़ौफ़नाक हैं. इन लड़ाई झगड़ों के अन्दर अन्दर एक दूसरे से नफ़रतों की जो आग धधक रही है वह वैसी की वैसी ही है. आजकल की इन लड़ाइयों में एक तरफ हद दरजे धन का लोभ, दूसरों को नेस्त नाबूद कर देने की तैयारी और जिस्मानी ऐश की वह चाह है जो देश भक्ति और क़ौम-परस्ती का जामा पहने हुए है और अपने को 'इण्डिविजुएलइज़्म' यानी 'व्यक्तिवाद' कहती है. और दूसरी तरफ वह साम्यवाद (कम्यूनिज़्म) या समाजवाद (सोशलइज़्म) है जो दुनिया के धन दौलत में सबके साथ मिलकर बराबर का हिस्सा बटाना चाहता है. इस निगाह से इस साम्यवाद या समाजवाद की जड़ें सचमुच रूहानी और धार्मिक हैं. लेकिन अभी तक उसे ख़ुद अपने इस रूप का ठीक ठीक पता नहीं है. अभी तक वह अँधेरे में टटोल रहा है, तजरबे कर रहा है और ग़लतियाँ कर रहा है. इन ग़लतियों का कारण यह है कि अभी तक उसकी निगाहें ग़लत तरफ़ हैं. उसे अभी तक सच्चे और टिकाऊ समाज संगठन का भेद नहीं मिला. वह यह नहीं समझा कि राजनीति (पालिटिक्स) की जड़ें अर्थनीति (इकोनोमिक्स) में होती हैं, अर्थनीति की जड़ें हमारे घरेलू रहन सहन में होती हैं, इस घरेलू रहन सहन की जड़ें हमारे दिल के भावों और

दिमाग़ के विचारों और आदर्शों में होती हैं, और इन सबकी जड़ें दर्शन शास्त्र यानी ज़िन्दगी के फ़लसफ़े में होती हैं. और यह दर्शन शास्त्र जब पक्का और पूरा होता है तो यही रूहानी मज़हब यानी उस अनन्त जीवन की वह अध्यात्म विद्या होता है जिसके अन्दर सब साइन्सें, सब विद्याएँ और सब हुनर समा जाते हैं.

लेकिन हिन्दुस्तान के अन्दर मज़हबी और ग़ैर मज़हबी, दीनी और दुनियावी, साम्प्रदायिक, राजनीतिक और आर्थिक सब तरह के झगड़े और सब तरह की समस्याएँ एक दूसरे में गुथी हुई हैं. मालूम होता है हिन्दुस्तान के लिये ही यह बदा है कि वह इन सब समस्याओं के लिये या तो एक ऐसा हल निकाले जिससे यह सब हल हो जावें और या इस कोशिश में मिट जावे. आज दुनिया में जितने बड़े बड़े मज़हब ज़िन्दा हैं वह सब एशिया ही में पैदा हुए. पूरब और पच्छिम का, नए ज़माने और पुराने ज़माने का, एशिया एक ख़ास संगम है. सन् १६३० और सन् १६३१ ईसवी के दिसम्बर-जनवरी में हिन्दुस्तान के अन्दर बनारस में पहली कुल एशियाई एजूकेशन कानफ़रेन्स हुई थी. यह देश एशिया के ठीक बीचों बीच है. यह अपने एक हाथ से बौद्ध धर्म, शिन्तो धर्म, ताओ धर्म और कनफ़्यूशियन धर्म के मानने वाले बरमा, चीन और जापान को अपने साथ चिपटाए हुए है और दूसरे हाथ से इसलाम धर्म के मानने वाले अफ़ग़ानिस्तान, ईरान, तुरकी, अरब, मिस्र और अफ़रीका को अपनी छाती से लगाए हुए है. यहूदी धर्म और ईसाई धर्म के मानने वाले फ़िलस्तीन और यूरप को भी वह साथ लिये हुए है. इसके एक कन्धे पर बौद्ध तिब्बत है तो दूसरे कंधे पर मुसलिम तुरकिस्तान, ज़रतुश्ती धर्म के मानने वाले पारसी अब दुनिया में बहुत ही कम रह गए हैं और जो रह गए हैं उनमें से अधिकतर तेरह सौ बरस से इसी देश के दक्खिन पच्छिम को अपना घर बनाए हुए हैं. ज़रतुश्ती धर्म

की किताब 'गाथा' वेद ही की एक शाख़ है और ऐसी भाषा में लिखी हुई है जो वैदिक संस्कृत का एक दूसरा रूप है. हिन्दुस्तान के दक्खिन में हिन्दुस्तानी यहूदियों की भी एक बहुत अच्छी बस्ती है जिसकी आबादी अब कई हज़ार रह गई है. जहाँ तक ईसाई धर्म का सम्बन्ध है कहा जाता है कि हज़रत ईसा के परलोक सिधारने के थोड़े ही दिनों बाद उनके बारह मशहूर चेलों में से एक सेन्ट टामस ख़ुद हिन्दुस्तान आए थे और उन्होंने इस देश के दक्खिन पूर्वी किनारे पर ईसाई धर्म का बीज बोया था. आज हिन्दुस्तान की ईसाई आबादी पौन करोड़ के लगभग है. मुट्ठी भर ऐसे लोगों को छोड़कर, जो कहीं बाहर जाकर बस गए हैं, बाक़ी हिन्दुओं, जैनियों और सिखों का दुनिया में हिन्दुस्तान के सिवा और कोई घर है ही नहीं. यह देश सात करोड़ से ऊपर मुसलमानों की जन्म भूमि है. बौद्ध धर्म यहीं पैदा हुआ और उसके शुरू के सब तीर्थ इसी देश में हैं. कनफ्यूशियन धर्म, ताओ धर्म और शिन्तो धर्म तीनों बौद्ध धर्म के अन्दर मिलकर लगभग उसी में समा गए हैं.

बनारस के पास सारनाथ में, जहाँ महात्मा बुद्ध ने आज से ढाई हज़ार बरस पहले अपने धर्म का उपदेश देना शुरू किया था, पिछले कुछ बरसों के अन्दर पुराने अशोक स्तूप के पास एक बहुत बड़ा नया बौद्ध मन्दिर तामीर किया गया है. जापानी चित्रकारों ने उसकी दीवारों को चित्रों से सजाया है. एक और बड़ा मन्दिर वहाँ पर ही एक चीनी सज्जन ने बनवाया है. भारत के हिन्दू और बरमा के बौद्ध दोनों ने वहाँ धर्मशालाएँ बनवाई हैं जहाँ सब जाकर ठहर सकते हैं. इस तरह की और भी धर्मशालाएँ बनती जा रही हैं. बौद्ध भिक्षुओं और विद्यार्थियों की एक पूरी बस्ती वहाँ आबाद हो गई है और बढ़ती जा रही है. बनारस में, जो हिन्दू धर्म का ख़ास गहवारा है, पुराने हिन्दू मन्दिरों के साथ साथ बहुत सी मुसलिम मसजिदें, जैन मन्दिर, ईसाई गिरजे और सिख संगत पास पास मौजूद हैं. इस तरह दुनिया के सब मज़हब इस देश के अन्दर एक जगह जमा हैं.

मालूम होता है कि एक नए आलमगीर वैज्ञानिक यानी साइन्सी मज़हब को जन्म देना और रूप देना भी हिन्दुस्तान ही के लिये बदा है. यह नया धर्म उसी पुराने 'सत्य सनातन धर्म' यानी उसी पुराने 'इसलाम' का एक नया रूप होगा जिसे वेदों में 'सनातनधर्म' और क़ुरान में 'दीनुलक़ैयमा' कहा गया है. अन्दर की रूह वही पुरानी और ऊपर की शकल ज़माने की ज़रूरत के अनुसार नई. उस नए मज़हब में साइन्स और मज़हब दोनों मिलकर एक हो जायँगे. साइन्स फिर 'मज़हबी साइन्स' होगी और मज़हब 'साइन्सी मज़हब' होगा. जड़ और चेतन, रूह और माद्दा फिर एक ही हक़ीक़त के दो पहलू दिखाई देंगे. तब जाकर हम इनसानी ज़िन्दगी की एकता और भरपूरता का आनन्द ले सकेंगे. यह एक बुनियादी सचाई है जिसे दुनिया के सब लोगों को और ख़ासकर हिन्दुस्तान के हिन्दुओं और मुसलमानों को अच्छी तरह समझ लेना है.

श्री कृष्ण ने गीता में कहा है—

"ऐ पार्थ (अर्जुन) ! दुनिया में लोग चारों तरफ़ से जितने रास्तों पर चलते हैं वह सब रास्ते आख़ीर में मुझ तक ही पहुँच जाते हैं."

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—

"दुनिया में जितनी रूहें हैं अल्लाह तक पहुँचने के उतने ही रास्ते हैं."

इंजील में लिखा है—

"न कोई यहूदी है न कोई यूनानी, न कोई ग़ुलाम है न कोई आज़ाद, न कोई पुरुष है न कोई स्त्री, ईसा मसीह में तुम सब एक हो."

शंकराचार्य ने लिखा है—

"आत्मा का न कोई वर्ण है, न कोई उसकी जात है, न कोई उसका आश्रम, आचार या धर्म है. वह एक ही है. वही सब में है. वही शिव है. वही मैं हूँ."

हकीम सनाई ने कहा है—

"रूह की जिन्दगी अक़्ल और इल्म से है, रूह में न कोई पारसी है और न कोई ताज़ी."

इसी ख़याल को मौलाना जलालुद्दीन रूमी ने इस तरह कहा है—

"रूह बा अक्ल अस्त बा इल्म अस्त यार
रूह रा बा ताज़ी ओ तुरकी चे कार."

दुनिया भर के मुसलमान मौलाना रूम को बड़ी इज्ज़त की निगाह से देखते हैं. उनकी ख़ास किताब मसनवी 'पहलवी यानी फारसी ज़बान में .कुरआन' कही जाती है. हमारे देश के मशहूर शायर सर मुहम्मद इक़बाल ने मौलाना रूम का ज़िक्र करते हुए कहा है—"उन्होंने पहलवी हरफों में .कुरान लिख डाला." हम मौलाना रूम के शब्दों को थोड़ा सा बदल कर कह सकते हैं—

"रूह रा बा हिन्दुओ मुसलिम चे कार."

यानी—रूह के लिये न कोई हिन्दू है न कोई मुसलिम, न कोई तुर्क न कोई अरब, न कोई ईरानी और न कोई ईसाई, न कोई नस्ल, न कोई जात और न कोई फिरक़ा. रूह के लिये बस समझ है और नेकी.

हमारा धर्म या मज़हब हमारे चेहरों पर उस मुस्कराहट की शकल में दिखाई देना चाहिये जो दूसरों के दिलों को जीत ले. हमारे बदन पर वह सुन्दर गहने की तरह चमकना चाहिये. मज़हब का असर यह होना चाहिये कि हमारा अपना दिल .खुशी से भरा हुआ हो और हमें देखते ही आस पास के सब लोगों के दिल .खुशी से भर जावें. यह नहीं होना चाहिये कि धर्म मज़हब के नाम पर हमारी नाक भौं चढ़ी हुई हो और जो हमें देखे हम से बचकर भागे. धर्म या मज़हब दूसरों को डराने वाला हथियार नहीं होना चाहिये. उससे न हमारे अन्दर डर या बेरहमी पैदा हो और न हमें देखकर दूसरों के अन्दर डर या

बेरहमी पैदा हो. मज़हब दिल की चीज़ है. दिल ही में उसकी ख़ास जगह होनी चाहिये. सब की सेवा, प्रेम और नेकी उसके रूप होने चाहियें. मज़हब माथे पर या चेहरे पर साइनबोर्डों या नाम-पट्टियों की तरह दिखावे के लिये नहीं होना चाहिये. सिर पर, होंटों पर या ठोड़ी पर बाल रखने या काटने के तरह तरह के ढगों या अलग अलग तरह के छापों, बिल्लों या कपड़ों में मज़हब का वह दिखावा नहीं होना चाहिये जिस से केवल अपना इश्तहार हो और एक दूसरे से जुदाई और अधिक चमके. प्रकृति यानी क़ुदरत हर नए पैदा हुए बच्चे के चेहरे पर इनसानियत बल्कि उलूहियत (ब्रह्मत्व) की मुहर लगाकर पैदा करती है. कोई बच्चा हिन्दू, मुसलिम, पारसी या ईसाई निशानी लेकर पैदा नहीं होता. यह अलग अलग निशान बाद में हम लोग गढ़ कर हर बच्चे पर चिपका देते हैं. हो सकता है कि किसी ख़ास ज़माने में, ख़ास हालत में और ख़ास जगहों पर इनकी ज़रूरत और इनसे फ़ायदा रहा हो. पर आज इन चीज़ों पर ज़िद करना अदूरदर्शिता यानी कोताह अन्देशी भी है और सब की बरबादी का कारण भी.

मुहम्मद साहब ने कहा है—

"जितने बच्चे पैदा होते हैं वह सब केवल एक उसी अल्लाह को तसलीम करते हुए पैदा होते हैं."

महाभारत में लिखा है—

"ब्रह्म ने शुरू में इस सारी दुनिया को बनाया था इसलिये सब जानदार उसी ब्रह्म की औलाद हैं."

मुहम्मद साहब की मशहूर हदीस है—

"इसमें कोई शक नहीं कि अल्लाह ने आदम को अपनी सूरत पर बनाया है. हर इनसान की सूरत रहमान की ही सूरत है."

इंजील में लिखा है—

"ईश्वर ने आदमी को अपनी ही सूरत पर बनाया."

उपनिषद में लिखा है—

"यह जीव ब्रह्म ही है, कोई ग़ैर नहीं."

.कुरआन में लिखा है—

".खुद अल्लाह की फितरत पर आदमी की फितरत बनाई गई है."

आज से कुछ समय पहले जब हमारे अंगरेज़ हाकिमों की चालों और हमारी अपनी नादानी के कारण देश में हिन्दू मुसलिम झगड़े जगह जगह हो रहे थे उस समय एक सच्चे दिलवाले मुसलमान शायर ने एक बड़ी सुन्दर नज़्म हिन्दुओं, मुसलमानों और सब के लिये लिखी थी. हमारी राय है कि हर हिन्दुस्तानी स्कूल और कालेज की पढ़ाई की किताबों में यह प्यारी और सच्ची नज़्म होनी चाहिये और देश के सब बच्चों को याद कराई जानी चाहिये. वह नज़्म यह है—

तुम राम कहो या रहीम कहो, दोनों की ग़रज़ अल्लाह से है,
तुम इश्क़ कहो या प्रेम कहो, मतलब तो उसी की चाह से है.

तुम धर्म कहो या दीन कहो, मक़सद तो उसी की राह से है,
तुम सालिक हो या योगी हो, मंशा तो दिले आगाह से है.

क्यों लड़ता है मूरख बन्दे, यह तेरी ख़ाम ख़याली है,
है पेड़ की जड़ तो एक वही, हर मज़हब एक एक डाली है!

बनवाओ शिवाला या मसजिद, है ईंट वही चूना है वही,
मेमार[1] वही मज़दूर वही, मिट्टी है वही गारा है वही.

तकबीर[2] का जो कुछ मतलब है, नाक़ूस[3] की भी मंशा है वही,
तुम जिनको नमाज़ें कहते हो, हिन्दू के लिये पूजा है वही.

फिर लड़ने से क्या हासिल, ज़ीफहम[4] हो तुम नादान नहीं,
जो भाई पे दौड़े ग़ुर्रा कर वह हो सकता इनसान नहीं!

---

१. मेमार = राज। २. तकबीर = अल्लाहो अकबर।
३. नाक़ूस = शंख। ४. ज़ीफहम = समझदार।

क्या क़त्ल व ग़ारत .ख़ूंरेज़ी, तारीफ़ यही ईमान की है ?
क्या आपस में लड़कर मरना, तालीम यही .क़ुरआन की है ?

इन्साफ़ करो तफ़सीर[1] यही, क्या वेदों के फ़रमान की है ?
क्या सचमुच यह ख़ूंख़ारी ही, आला ख़सलत[2] इन्सान की है ?

तुम ऐसे बुरे आमाल[3] पे अपने, कुछ तो .ख़ुदा से शर्म करो !
पत्थर जो बना रक्खा तुमने, इस दिल को ज़रा तो नर्म करो !

१. तफ़सीर = भाष्य ।

२. आला खसलत = अच्छी आदत ।

३. आमाल = काम ।

३८

दुनिया की तालीम और तालीम देने वाले

पहले के अध्यायों में हमने सब धर्मों की बुनियादी एकता के बारे में कुछ मोटी मोटी और बुनियादी बातों की चरचा की है. अब हम यह देखना चाहते हैं कि आजकल के विद्वानों, साइंसदानों और तालीम और तालीम देने वालों के साथ इसका क्या सम्बन्ध है.

बच्चों की तालीम हमारे सारे जीवन की जड़ होती है. जिसे हम सभ्यता कहते हैं वह इस जीवन का फूल और फल है. बोने वाला यदि अच्छे बीज बोएगा तो फसल काटने वाला अच्छे और मीठे फल पाएगा. वह अगर कड़वे और ज़हरीले बीज बोएगा तो काटने वालों को फल भी कड़वे और ज़हरीले मिलेंगे. हमारे बच्चों को पढ़ाने वाले अध्यापक बीज बोने वाले हैं. वही मानव सभ्यता को बनाते हैं. वह हमारे बच्चों के दिलों और दिमाग़ों में अच्छे बीज बो सकें इसके लिए आवश्यक है कि वह .खुद सच्चे अर्थों में उस्ताद यानी ब्राह्मण हों, सच्चे मौलवी हों, सच्चे रब्बी हों. सच्चा ब्राह्मण वह जो ब्रह्म यानी ईश्वर में रहता हो. सच्चा मौलवी वह जो अपने मौला अल्लाह का सच्चा बंदा हो. यहूदी अपने पुरोहितों को रब्बी कहते हैं. सच्चा रब्बी वही है जो रब्ब यानी .खुदा के हुकुम को समझे और उसके अनुसार चले. दूसरे धर्मों में भी ब्राह्मणों और मौलवियों के लिए जो शब्द आए हैं उनके भी इसी तरह के अर्थ हैं. सच्चे अध्यापक या ब्राह्मण को ईश्वर अल्लाह का मिशनरी या प्रचारक होना चाहिए, शैतान का तनख़्वाहदार नौकर नहीं होना चाहिए, क्योंकि शैतान अल्लाह का दुश्मन है.

यदि सन् १६१४-१८ के पहले महायुद्ध से पहले योरप के अध्यापकों, साइंसदानों, पादरियों और विद्वानों ने अपना कर्तव्य पालन किया होता और अपने अपने देश के बच्चों को नेकी की तालीम दी होती तो उस महायुद्ध का अवसर ही न आता. यदि उस महायुद्ध के बाद भी योरप के इन ब्राह्मणों ने अपने अपने देशों के क्षत्रियों यानी जंगजू शासकों और वैश्यों यानी धन लोलुप उद्योगपतियों के हाथ अपनी आत्माओं को न बेचा होता और विद्या, धर्म और साइंस का इस तरह दुरुपयोग होने न दिया होता, यदि वे मिलकर खड़े हो गए होते और अपने आत्म-बल, धर्मबल और सत्यबल से उन्होंने अपने अपने यहाँ के बहके हुए क्षत्रियों और वैश्यों की शैतानियत का मुक़ाबला किया होता तो हमारे अंदर का शैतान ज़रूर हार जाता. यदि सब देशों में इस तरह के सब लोग मिलकर युद्ध के ख़िलाफ़ खड़े हो गए होते और अपनी आत्मा की आवाज़ पर युद्ध में किसी तरह का भी सहयोग देने से साफ़ इनकार कर देते तो दुनिया दूसरे महायुद्ध के भयंकर क़त्ले आम से बच गई होती. पर इसके ख़िलाफ़ थोड़े से मुबारिक और सराहनीय अपवादों को छोड़कर लगभग सब देशों में विद्वानों, अध्यापकों, पादरियों और साइंस-दानों ने प्रेम के ख़िलाफ़ नफ़रत का, शांति के ख़िलाफ़ युद्ध का और ईश्वर के ख़िलाफ़ शैतान का साथ दिया.

इन सराहनीय अपवादों में एक ख़ास नाम श्री बरट्रेंड रसल का है. एक सच्चे साइंसदां और दार्शनिक की तरह उन्होंने जेल जाना स्वीकार किया पर युद्ध में सहयोग देना या उसका समर्थन करना स्वीकार नहीं किया. दुनिया के सबसे बड़े साइंसदां डा० आइंसटीन ने भी सन् १६३२ में एक युद्ध विरोधी एसोसियेशन क़ायम की. अपनी सचाई के कारण उन्हें अपने देश से जलावतन होना पड़ा. प्रो० एच. ई. आर्मस्ट्रोंग ने 'नेचर' नाम की पत्रिका में, दुनिया के साइंसदानों की सोई हुई आत्मा को जगाने के लिए लिखा था—

"सौ बरस की साइन्स की उन्नति का यह नतीजा हुआ है कि जिन बातों का असली महत्व कुछ नहीं है उनमें हमारी जानकारी ग़ज़ब की बढ़ गई है. पर इन सौ बरस ने हमें उन चीज़ों की बाबत बहुत कम जानकारी दी है जिन से हमारा सबका सच-मुच पेट भरे और हम मिलकर शांति के साथ रह सकें और एक दूसरे को सह सकें. एक दूसरे को देखकर ख़ुश होना और एक सच्चे ईसाई की तरह सबके साथ प्रेम और मित्रता निबाहना तो और भी दूर की बात है.....भविष्य में साइन्स के मैदान में काम करने वाला कोई भी आदमी तब ही साइन्स का सच्चा सेवक कहला सकेगा जब वह सारे मानव समाज की सेवा के ज़रिए सबका भला करके अपने वजूद को सार्थक करे."

सच्चे ब्राह्मण की यही तारीफ है. ब्राह्मण, अध्यापक, उस्ताद, मौलवी या साइंसदां केवल अपने लोगों की दिमाग़ी जानकारी को ही नहीं बढ़ाता, वह उनके सदाचार को, उनके आपसी सम्बन्धों को, उनके घरेलू और शहरी जीवन को और उनकी आत्मा को भी ऊँचा ले जाता है, जीवन के हर काम और हर महकमे में वह लोगों की सच्ची रहनुमाई करता है.

एडिनबरा के प्रो० क्रू ने दिसम्बर सन् १९३१ में 'साइंस और मानव समाज' पर बोलते हुए कहा था—

"आदमी के अंदर के लोभ और लालच के कारण साइंस का दुरुपयोग करके उससे आदमी की गंदी और बुरी इच्छाओं को पूरा करने का काम लिया जा रहा है.....आजकल की सबसे बड़ी समस्या यह नहीं है कि आदमी आदमी में माद्दी चीज़ों का बैठ बिठाव या बटवारा कैसे किया जाय, बल्कि सबसे बड़ी समस्या यह है कि लोगों की आत्माओं के बीच में बैठ बिठाव कैसे किया जाय. दुनिया में इस समय इतना ज्ञान मौजूद है और इतनी शक्ति भी है कि जिससे सारे मानव समाज को फिर से ठीक रूप दिया जा सकता है. पर यह ठीक रूप देने की इच्छा अभी हममें नहीं है. हमारे सामने कोई ऐसा आदर्श

नहीं है जिसकी तरफ़ हम सब चलें. ज़िन्दगी को कैसे क़ायम रखा जावे इसके तरीक़ों को तो हम थोड़ा बहुत जानते हैं, पर ज़िन्दगी कैसे बसर की जावे या किस बात के लिए जिया जावे यह हम नहीं जानते. साइन्स आजकल आदमी की धन लोलुपता और शक्ति लोलुपता की ग़ुलाम बन गई है. वह अब ज़ालिमों के हाथ का एक हथियार है. हमें फिर से यह पता लगाना होगा कि मनुष्य जाति का असली भला किस बात में है और फिर यह देखना होगा कि साइंस से हमें जो शक्ति मिलती है वह उसी मतलब को पूरा करने के लिए काम में लाई जावे. ज्ञान ने प्रेम से अलग होकर दुनिया में नफ़रत और दुख की आग भड़का दी है, अब हमें एक नई नैतिक यानी इख़लाक़ी निगाह की ज़रूरत है. यह निगाह हमें कहाँ से मिले ?"

जो 'निगाह' प्रोफ़ेसर कृ चाह रहे हैं वह हमें केवल उस व्यापक यानी आलमगीर वैज्ञानिक धर्म से ही मिल सकती है जो दुनिया के सब धर्मों की जान है, उसी से हमें यह पता चल सकता है कि 'सारे मानव समाज का भला किस बात में है', 'हम किस चीज़ के लिए ज़िन्दा रहें', 'किस आदर्श की तरफ़ बढ़ें', 'कैसे जीएँ', 'जीवन का असली मतलब और ग़रज़ क्या है' और साइंस के मैदान में काम करने वाला समाज की सेवा करके अपने जीवन को किस तरह सार्थक करे. इसके लिए एक ठीक योजना के साथ समाज का फिर से संगठन करना ज़रूरी है. हम में 'नेक इरादों या इच्छाओं की कमी' इसलिए है क्योंकि हर नई पीढ़ी के लोग धन लोलुपता और शहवत परस्ती में ही पैदा होते हैं और उसी में पलते और तालीम पाते हैं. उन्हें आत्मबल और मानव प्रेम की तालीम दी ही नहीं जाती. हमारी सारी तालीम बिलकुल ग़लत और उलटी है. उसी से हमारे जीवन के सब सोते ज़हरीले हो जाते हैं. यदि हम बाहरी युद्ध को मिटाना चाहते हैं तो पहले हमें अपनी गिरी हुई प्रवृत्तियों, अपने अन्दर की शैतानियत से युद्ध शुरू करना होगा. उसके

बाद हम बाहर की शक्तियों पर क़ाबू पा सकेंगे. यह रास्ता बहुत ही ठीक और अमली रास्ता है. यही सच्चा रास्ता है. बच्चों की ठीक-ठीक तालीम ही सारी मानव जाति के दिलों और दिमाग़ों को मोड़कर ठीक रास्ते पर ले जा सकती है.

पिछले पच्चीस तीस बरस में दुनिया के अन्दर शान्ति और अमन बनाए रखने के लिए कई तहरीकें चल चुकी हैं. इनमें एक ख़ास तहरीक 'वर्ल्ड फेलोशिप आफ फ़ेथ्स' है जो सन् १९३३ में शिकागो (अमरीका) में शुरू हुई. वर्ल्ड फेलोशिप आफ फ़ेथ्स के मानी हैं—'दुनिया के सब धर्मों का मिलाप'. शिकागो में इस तहरीक की जो पहली सभा हुई थी उसकी बाबत कहा गया कि—"सब धर्मों, नसलों और देशों के लोग इस सभा में आए थे.....उन्होंने मिलकर इनसान की आजकल की सब समस्याओं के रूहानी हल खोजने की कोशिश की—वे समस्याएँ यह हैं : जंग, मतभेद के कारण एक दूसरे को तकलीफ़ें पहुँचाना, पक्षपात, एक तरफ धन के अंबार और दूसरी तरफ ग़रीबी, बेरोज़गारी, राष्ट्रों राष्ट्रों में टक्करें, जहालत, नफरतें और एक दूसरे से डर."

इससे बहुत पहले सन् १८७५ में न्यूयार्क में थियोसोफ़ीकल सोसाइटी क़ायम हुई थी. इस सोसाइटी के तीन मक़सद थे और हैं. यह तीनों, इसमें कोई शक नहीं, सराहनीय हैं. वे यह हैं—(१) नसल, धर्म, मर्द, औरत, जात और रंग के भेदभावों से ऊपर उठकर सारे मानव समाज के व्यापक भाईचारे का एक केन्द्र बनाना. (२) अलग अलग धर्मों, अलग अलग दर्शन शास्त्रों, और साइंस इन सब को मिलाकर पढ़ना और पढ़ाना. (३) क़ुदरत के उन क़ानूनों का, जो अभी तक समझ में नहीं आए, और आदमी के अन्दर की छिपी हुई शक्तियों का, पता लगाना. इन तीनो बातों की ग़रज़ वही है यानी दुनिया की शान्ति और सब की ख़ुशहाली. थियोसोफ़ीकल सोसाइटी का

सदर दफ़्तर मदरास के पास अडियार में है और उसकी शाखें दुनिया के पचास से ऊपर देशों में क़ायम हैं.

बहुत से देशों के बड़े बड़े शहरों में 'पार्लिमेंट्स आफ़ रिलिजन्स' यानी धर्मों की पार्लिमेंटें हो चुकी हैं. इनमें से भी पहली १८९३ में शिकागो ही में हुई थी. इन सबका मक़सद भी शान्ति क़ायम करना था.

सन् १९२० में 'लीग आफ़ नेशन्स' क़ायम हुई जिसका मक़सद था—"राष्ट्रों राष्ट्रों के बीच सहयोग को बढ़ाना और सब के बीच अमन क़ायम करना."

बहुत से देशों में साइन्सदानों की एसोसिएशनें भी बन चुकी हैं. यह एसोसियेशनें अब साइन्स के 'इनसानी' पहलू पर यानी समाजी और नैतिक पहलू पर अधिक ध्यान देने लगी हैं, यानी इस बात पर कि साइन्स का मनुष्य के मिले जुले समाजी जीवन के साथ क्या सम्बन्ध है. इस तरह के नेक साइन्सदानों के लेखों में यह विचार अब आम तौर पर प्रगट किया जाता है कि साइन्स अब इतनी तेज़ी से आगे बढ़ गई कि सदाचार का और साइन्स का साथ छूट गया. हालैंड के शहर डेल्फ़्ट में एक इन्टरनेशनल कौंसिल आफ़ साइन्टिफ़िक युनियन्स है जिसकी एक ख़ास कमेटी 'साइन्स और मानव समाज' के परस्पर सम्बन्ध पर है.

यह सब कोशिशें इसलिये फ़ज़ूल जा रही हैं क्योंकि साइंसदां अभी तक इस बात को नहीं समझ रहे हैं कि जड़ साइंस की बड़ी से बड़ी और अजीब से अजीब ईजादें भी बुराई की बाढ़ और उसके अन्यायों को बढ़ाती ही रहेंगी. बुराई की यह बाढ़ तभी रुक सकती है जब हम कोई ऐसा ढंग निकालें जिससे दुनिया के सब लोग उस पुराने सुनहरे असूल पर अमल करने लगें कि 'हर आदमी हर दूसरे आदमी के साथ वैसा ही बरताव करे जैसा वह चाहता है कि दूसरे उसके साथ करें'. इसके लिए मानव समाज के संगठन की एक ऐसी व्यापक योजना बनानी होगी

जिसके अनुसार हर आदमी साइंस की नई से नई ईजादों को सारी मनुष्य जाति के भले के लिए काम में लाने लगे. कोई इन ईजादों को किसी एक राष्ट्र के फ़ायदे के लिए या उस राष्ट्र के अन्दर भी किसी एक गिरोह के लाभ के लिए काम में न ला सके. हमारा समाज संगठन ऐसा होना चाहिए जिसमें हर आदमी को इसके लिए अपने अंदर से स्वाभाविक प्रेरणा मिले.

बरसों से दुनिया की हर 'बड़ी क़ौम' पागलों की तरह अपनी फ़ौजें और अपने हथियार बढ़ाती जा रही है और साथ ही शान्ति और अमन की बात करती है. सन १९३९ में दुनिया की उन फ़ौजों की तादाद जो हर समय युद्ध के लिए तैयार रहती थीं साढ़े पाँच करोड़ से ऊपर थी. इन पर ख़र्च सन् १९३९ में कहा जाता है पचास अरब रुपए से ऊपर हुआ. तब से इन फ़ौजों की तादाद और इन पर ख़र्च इस से भी कई गुना बढ़ चुका है. बहुत से देश हथियारों की इस घुड़दौड़ में हिस्सा लेने के कारण भारी क़र्ज़ों के नीचे दबते जा रहे हैं. दूसरे महायुद्ध ने इस सारी विषम स्थिति को और भी भयंकर कर दिया है. अब तीसरे महायुद्ध का डर दुनिया के सामने है. दुनिया बरबादी के गड्ढे के मुँह पर खड़ी हुई है.

हर आदमी महसूस करता है और कहता है कि यह सब पागलपन है. पर मालूम होता है कि विधि या कोई दैवी शक्ति सब की गरदन पकड़े उन्हें धकेले लिए जा रही है.

यदि यह करोड़ों आदमी जो एक दूसरे को क़तल करने के लिए तैयार किए जा रहे हैं और वह अरबों और खरबों रुपया जो करोड़ों निहत्थों को ज़िन्दा भून डालने के लिए नए नए हथियार बनाने में ख़र्च किया जा रहा है, यदि यह सारी शक्ति और यह सारा धन साइन्स की मदद से सब के भले के लिए ख़र्च किया जा सकता तो हमारी यह धरती, यह सारी ज़मीन, एक हरे भरे खेत या बाग़ की तरह नाज, फल और फूल से लहलहा उठती. पर माया, जहालत, हिर्स, तकब्बुर, घमण्ड,

लोभ, ऐशपरस्ती और दूसरों से नफ़रत इन सबने मिलकर हमें इतना अन्धा कर दिया है कि दुनिया के बड़े से बड़े नेता न केवल दूसरे देशों के लोगों को बल्कि अपने अपने देशों की करोड़ों जनता को भी जोश के साथ तोपों और गोलों का चारा बनने के लिये तैयार कर रहे हैं. इस से बढ़कर अन्धापन, पागलपन और शैतान-परस्ती और क्या हो सकती है ?

दुनिया के बड़े से बड़े मानव प्रेमी, राह दिखाने वाले, फ़ज़ूल ही चिल्लाते रहे—"एक दूसरे से प्रेम करो", "दूसरों के साथ वैसा ही सलूक करो जैसा तुम चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ करें." अन्धकार की शक्तियाँ उजाले की शक्तियों पर हावी हो रही हैं. सारी दुनिया इस आफ़त के नीचे तड़प रही है. आदमी पर बोझ बढ़ते जा रहे हैं, नफ़रत का बोझ, डर का बोझ, हथियारों का बोझ, और करोड़ों इनसानों के आर्थिक शोषण का बोझ. हथियारों का यह बोझ अब बहुत दिनों नहीं चल सकता. यह हथियार ख़तम तो होंगे ही, चाहे एक दूसरे को ख़तम करके ख़तम हों और चाहे सब को ज़िन्दा रख कर आपसी समझौते से ख़तम हों !

इस मुसीबत से बचने के लिए और मानव जाति की आइन्दा की शान्ति, सलामती और खुशहाली के लिए सबसे पहली ज़रूरत यह है कि दुनिया के क़ानून बनाने वालों, हाकिमों, हर घर, हर उद्योग, हर महकमे और हर संस्था के सरदार या नेता में और इन सबसे बढ़कर दुनिया के बच्चों को तालीम देने वाले अध्यापकों में दिमाग़ी जानकारी और होशियारी से कहीं बढ़कर ऊँचे नैतिक गुण हों, उनके दिलों में दूसरों के लिये वैसा ही प्रेम हो जैसा पिता के दिल में अपनी औलाद के लिये. हमारा दिमाग़ अगर बहुत चतुर न भी हो तो भी सच्चा प्रेम भरा दिल हम सब को ठीक रास्ते पर और सब के भले के रास्ते पर लगा सकता है. दिमाग़ की चतुराई अगर उसके साथ दिल ख़राब है तो हमें तबाही के गड्ढे में गिराए बग़ैर नहीं रह

सकती. दिमाग़ जितना चतुर होगा उतना ही जल्दी हम सब बरबाद होंगे, इसलिए यह ज़रूरी है कि हमारी शिक्षा संस्थाओं में, हमारी ताल़ीमगाहों में बच्चों को बहुत अधिक जानकारी देने की अपेक्षा उनके चरित्र को अच्छा, ऊँचा और मज़बूत बनाने की तरफ़ कहीं अधिक ध्यान दिया जावे. इसके लिए यह ज़रूरी है कि हमारे अध्यापक ख़ुद नेक. निस्वार्थ, प्रेमी और ऊँचे चरित्र के हों. सच्चा अध्यापक, सच्चा ब्राह्मण होना चाहिए, सच्चा मौलवी होना चाहिए. उसमें विद्या होनी चाहिए, इल्म होना चाहिए और ज़ोहद (धार्मिकता) होना चाहिए. ज्ञान और परोपकार भावना दोनों से मिलकर शुद्ध बुद्धि यानी अक़्ले सलीम बनती है.

धर्म या मज़हब जिसका काम सबके दिलों को तसल्ली देना, सबके चरित्र को ऊँचा ले जाना, सबको मिलाना और सबका भला करना था, अब सब जगह गिर कर स्वार्थी पंडे पुरोहितों और पादरी मुल्लाओं के हाथो में निकम्मे रीति रिवाजों और अंध विश्वासों को बढ़ाने वाला, दुनिया को धोका देने वाला, और आदमी को आदमी से फाड़ने वाला एक भयंकर जाल बनकर रह गया है. राज जिसका काम सबकी रक्षा और सबकी तरक़्क़ी करना था अब स्वार्थी राजनैतिक नेताओं के हाथों में पड़कर दुनिया को चूसने वाली और खुले अन्याय करने वाली संस्था बन गया है. पंचायतें और अदालतें जिनका काम सबके झगड़े तय कराकर उन्हें मिलाना था अब ख़ुदग़रज़ और चालाक वकीलों के अड्डे बन गई हैं. डाक्टर और वैद्य जिनका काम दुनिया के रोगों को दूर करके उन्हें फिर से तनदुरुस्त करना था धन के लोभ में अब अपने शिकारों को जोंकों की तरह चूसने लगे हैं. व्यापार और तिजारत जिनसे सबको खाना, कपड़ा और ज़िन्दगी की ज़रूरतें मिलनी चाहिए थीं अब बदलकर सबको बरबाद करने वाला नया अर्थ-शास्त्र बन गया है, जिसमें स्टाक जमा किए जाते हैं, कंपनियों के हिस्सों का जुआ खेला जाता है, सट्टा किया जाता है, फाटका लड़ाया जाता है, दुनिया के सिक्कों

के साथ जादूगरों की तरह तमाशे किए जाते हैं, सरकारों की इच्छा पर कहीं सिक्कों के दाम घटाए जाते हैं कहीं बढ़ाए जाते हैं, कहीं रुपयों की कौड़ियाँ कर दी जाती हैं और कहीं कौड़ियों के रुपए कर दिए जाते हैं, बिलकुल बनावटी ढंग से और ज़बरदस्ती, ख़ास ख़ास गुटों, कंपनियों और गिरोहों के तुच्छ लाभ के लिए चीज़ों की क़ीमतों को मनमाना बढ़ाया और घटाया जाता रहता है, जुआचोरी एक बड़े पैमाने पर और खुले बेशरमी के साथ जारी है, बड़े बड़े शास्त्री, विद्वान, नेता और माहिर उसे बढ़ावा देते हैं, अपने अंधेपन में हम अशरफ़ियाँ लुटा रहे हैं और कोयलों पर या काग़ज़ों के टुकड़ों पर मोहर लगा रहे हैं. गृहस्थ जीवन जिससे ज़िन्दगी में मिठास भर जानी चाहिए थी, नई जान आनी चाहिए थी और आदमी का बल बढ़ना चाहिए था, अब केवल कामतृप्ति का साधन रह गया है. इसका ख़ास कारण यह है कि हमारे बच्चों और नौजवानों की तालीम जिससे सबको ठीक रास्ता मिलना चाहिए था, ख़ुद ग़लत रास्ते पर पड़ गई है. हमारे मास्टर, अध्यापक और प्रोफ़ेसर अपने असली मिशन से बेपरवाह होकर ग़लत तरफ़ भटक गए हैं. उनके अन्दर जो ज़बरदस्त नैतिक शक्ति, त्याग और तपस्या का बल और आत्मबल होना चाहिए था वह जाता रहा. वे फ़ौजी लीडरों और स्वार्थी पूँजीपतियों के हाथों में खेलने लगे, जबकि उनका काम था इन लीडरों और पूँजीपतियों को ठीक रास्ते पर रखना. हमारे अध्यापकों ने अपने ऊँचे और पवित्र काम को नीचे गिराकर अब मशीन की तरह और एक अफ़सरी ढंग से बच्चों को इस तरह चलाना शुरू कर दिया है जिस तरह जानवरों के गल्लों को चलाया जाता है. अध्यापकों के दिल जो माता पिता के से प्रेम से भरे होने चाहिए थे अब सूखे, स्वार्थी और निर्दय हो गए हैं. हम सब एक शैतानी चक्कर में फँस गए हैं. ख़राब बीज से हमने ख़राब फल पैदा किए, उन फलों से और भी ख़राब बीज निकले, उनसे और अधिक ख़राब फल लगे. यहाँ तक कि

तीसरा महायुद्ध और इनसानी क़ौम का या कम से कम इनसानियत का ख़ात्मा अब हमारी आँखों के सामने नाच रहा है.

आज जो क़ौम जितनी अधिक सभ्य समझी जाती है उतना ही उसकी सारी ज़िन्दगी में ख़ुदी, अहंकार और आपाधापी बढ़ी हुई दिखाई देती है. हर आदमी बड़े से बड़ा बनना चाहता है. हरेक दूसरे से बढ़कर रहना चाहता है. और जितनी तेज़ी से हो सके ऊपर उठना चाहता है. सब किसी न किसी रूप में भोग विलास और ऐशपरस्ती की तरफ दौड़े चले जा रहे हैं. इसी का नाम हम लोगों ने 'जीवन के स्तर को ऊँचा करना' (raising of the standard of life) रख रखा है ! ऐशपरस्ती के साथ नफरतों का चलना लाज़मी है. हम पहले एक अध्याय में कह चुके हैं कि आदमी के अन्दर उसके छै सब से बड़े दुशमन हैं. आजकल यह छहों पूरे ज़ोर पर हैं. ये हैं— ऐशपरस्ती, जंग की तैयारियाँ, पूँजीवाद, दूसरों को डराकर रखना, साम्राज्यवाद, और दूसरों को चूसकर अपने अपने राष्ट्र का धन बढ़ाना. आजकल की सभ्यता जीवन के हर मैदान में, व्यक्तिगत, समाजी, राष्ट्रीय, घरेलू, माली, आर्थिक और राजनैतिक, सब पहलुओं से आँख बन्द किए बरबादी की तरफ बढ़ी चली जा रही है. अलग अलग देश अपने अपने क़ौमी क़रजे को बेतहाशा बढ़ाते चले जा रहे हैं. हथियारों के अम्बार लग रहे हैं और उनमें होड़ जारी है. ख़र्च को रोकने या कम करने का किसी को ध्यान तक नहीं है. आगे की किसी को परवाह नहीं है. कोई अपनी छोटी सी ज़िन्दगी से आगे या अपनी नाक के सिरे से आगे तक देखने की चिन्ता नहीं करता. आजकल की सरकारें जिस तरह चल रही हैं उस तरह कोई व्यक्ति चलता तो पागल और आत्म-हत्यारा कहा जाता. दुनिया की बेगुनाह जनता की अधिकतर शक्ति जीवन की आवश्यक वस्तुएँ बनाने की जगह और सब को आराम पहुँचाने वाली चीज़ें तैयार करने की जगह थोड़े से लोगों के ऐश आराम के सामान तैयार करने और मनोरञ्जन के गन्दे और फ़ोहश सामान तैयार करने, और

उससे अधिक ज़मीनी, समन्दरी और हवाई लड़ाई के वे सामान तैयार करने में लगी हुई हैं जिनका एक मात्र उद्देश्य यह है कि आदमी की ज़िन्दगी, उसकी मेहनत, उसके माल असबाब और बाल बच्चों को मिटाया जाय. इन्हीं चीज़ों की रक्षा करना, उन्हें बढ़ाना और तरक़्क़ी देना सरकारों का काम था. और सब सरकारें इन्हीं को मिटाने की तरकीबों में लगी हुई हैं. अलग अलग देशों के वे शासक, नेता और राजनीतिज्ञ जो अपने को बहुत होशियार और 'व्यावहारिक' समझते हैं आज इसी पागलपन की दौड़ में एक दूसरे से होड़ लगा रहे हैं.

आजकल की सभ्यता ने जो कई तरह की धोके की टट्टियाँ हमारे सामने खड़ी कर दी हैं, उनमें से एक सबसे अधिक धोके की और शैतानी चीज़ यही 'व्यावहारिकता' है.

हममें से बहुत से अकसर इस बात पर बहस करते रहते हैं कि क्या चीज़ व्यावहारिक यानी 'प्रेक्टिकल' है और क्या अव्यावहारिक यानी 'इमप्रेक्टिकल' है.

जब दुनिया में धर्म का ज़ोर था तो अक़्सर लोग समझते थे और कहते थे कि मेरा धर्म ठीक और दूसरे का धर्म ग़लत. आज जब राजनीति का ज़ोर है तो उसी तरह के लोग कहते हैं कि मेरी राय, मेरा सुझाव और मेरी योजना व्यावहारिक और दूसरे की अव्यावहारिक या कोरा आदर्शवाद. मतलब यह कि जो मुझे ठीक जँचे वह 'व्यावहारिक' (अमली) और जो दूसरे को ठीक जँचे वह 'अव्यावहारिक' (ग़ैर अमली).

बहुत सी चीज़ें जो पहले कोरा आदर्शवाद और ग़ैर अमली मालूम होती थीं अब अमल में आ गई. भाप, बिजली, रेडियो, हवाई जहाज़, पनडुब्बी, सोवियत रूस, चीन, सत्याग्रह, टैलीविज़न, ऐटम बम और हाइड्रोजन बम इसकी चंद मिसालें हैं. फिर भी हमारा यह 'व्यावहारिकता' का भूत क़ाबू में नहीं आता, दरख़्त अपने फलों से पहचाना जाता है. आजकल के इन

चतुर राजनीतिज्ञों और नेताओं की इस व्यावहारिकता के नतीजों पर हम एक निगाह डालकर देखें.

पहले धर्म ही को लीजिए. सच्चे धर्म से नेकी, सदाचार और एक दूसरे के साथ ईमानदारी का बर्ताव पैदा होने चाहियें थे. अब लगभग सब 'तरक़्क़ीयाफ़्ता' क़ौमों की ज़िन्दगी से धर्म क़रीब क़रीब मिट चुका. सदाचार में गहरा 'इन्क़लाब' पैदा हो चुका है. एक तरफ़ क़ानूनी ऐयाशी और 'स्वतन्त्र प्रेम' और दूसरी तरफ आत्म संयम और गृहस्थ यानी कौटुम्बिक प्रेम, इन दोनों के बीच वह संग्राम जारी है कि इनमें से कोई न कोई दूसरे को मिटाकर रहेगा.

अब राजनीति को लीजिए. दुनिया की पार्लिमेंटें और क़ानून सभाएँ स्वार्थी लोगों और गिरोहों की खींचा तानी के अखाड़े बनी हुई हैं. आपसी झगड़े, साज़िशें, एक दूसरे के ख़िलाफ़ धुआँधार तक़रीरें, सब अपने अपने गिरोहों के नाम पर होती हैं. सबके भले की सोचने का कहीं नाम नहीं दिखाई देता. क़ानून आए दिन इस तरह के बनते रहते हैं जिनसे आपसी झगड़े और गिरोहों गिरोहों के बीच होड़ और बढ़े. पहले महायुद्ध में ही एक करोड़ से ऊपर आदमी मारे गए और लगभग सात सौ अरब रुपए के माल का दुनिया का नुक़सान हुआ. बड़ी बड़ी क़ौमों पर क़र्ज़े के बोझ लद गए. कमज़ोर और ग़रीब क़ौमें पीढ़ियों तक के लिए दूसरों के यहाँ रहन रख दी गईं. दूसरे महायुद्ध में इससे कई गुना अधिक बरबादी हुई और आज तीसरे महायुद्ध से पहले दुनिया की बड़ी बड़ी क़ौमों ने अपने पंजों, अपनी चोंचों और अपने दाँतों को इतना पैना कर लिया है और लोभ लालच, एक दूसरे पर अविश्वास, घमण्ड और नफ़रतों का बाज़ार इतना गरम हो गया है कि सबको डर होने लगा है कि अगले महायुद्ध के बाद कोई भी बचेगा या नहीं. यह है हमारी 'व्यावहारिक' राजनीति !

अब अर्थशास्त्र को लीजिए. हम ईमानदारी से देखें तो दुनिया

की अधिकतर क़ौमें आज दिवालिया हो चुकीं या तेज़ी से दिवालियापन की तरफ़ जा रही हैं. बेकारों की तादाद बीस करोड़ से ऊपर तक पहुँच चुकी है. बेकारों से पँचगुने वे हैं जो एक दूसरे की बरबादी के कामों में लगे हैं. पुराने असूल थे—"ईमानदारी सबसे अच्छी पालिसी है" और "उधार व्यापार करो तो क़रज़ा अदा करने के लिए रुपया पहले पास रख लो." अब ऐसी बातें 'अव्यावहारिक' समझी जाती हैं. अब असूल है—"अन्दर जमा हो या न हो, हवाई साख पर व्यापार बढ़ाए चलो." यह असूल 'व्यावहारिक' माना जाता है. अगर कोई यह कहे कि इस अरबों खरबों रुपए को जो ग़लत कार्यों पर ख़र्च किया जाता है समझ के साथ सबके भले के लिए ख़र्च किया जावे और दुनिया भर के बेकारों को धरती के उन बड़े बड़े हिस्सों पर जहाँ हरे भरे खेत और ख़ुशहाल आबादियाँ खड़ी की जा सकती हैं, जैसे कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अमरीका, अफ़रीका में ले जाकर बसाया जावे तो इस तरह की बात सुझाने वाला 'अव्यावहारिक' और 'कोरा आदर्शवादी' समझा जाता है.

अब घरेलू जीवन को लीजिए. पच्छिम के बहुत से बड़े बड़े शहरों में साल में जितनी शादियाँ होती हैं उससे आधे से अधिक तलाक़ होते हैं. शादी और तलाक़ के बीच का समय जगह जगह कुछ बरसों से घटते घटते कुछ महीने और अब कुछ हफ़्ते रह गया है. गर्भ गिराने और औलाद पैदा न करने की दवाओं का खुले आम प्रचार होता है. यह है हमारे सदाचार में इनक़लाब ! आबादी फिर भी बढ़ती चली जा रही है और किसी योजना के साथ लोगों को जगह ब जगह ले जाकर बसाने के बजाय रोटी के लिए खींचातानी और जंगों की संभावना बढ़ती जा रही है. ग़ैर शादीशुदा लोगों में बच्चों की पैदाइश बेहद बढ़ गई है. पागलों और गंदी बीमारियों के रोगियों की गिनती दुनिया भर में बढ़ रही है. बहुत जगह तो

बच्चे ही इन बुराइयों को साथ लेकर पैदा होते हैं. समझ, सोच विचार और भलमंसियत का कहीं पता नहीं. घरों के अन्दर 'चादर देखकर पैर पसारो' जैसी बातें अब ग़ैर अमली मानी जाती हैं. कोई यह कहे कि अलग अलग राष्ट्रों का इंतज़ाम उसी तरह होना चाहिए जिस तरह अलग अलग घरों का, यानी यह कि एक हद के अन्दर और जहाँ तक हो सके हर राष्ट्र अपनी ज़रूरत की चीजें ख़ुद तैयार करे और अपने पैरों पर खड़ा हो, तो इस तरह के सुझाव ग़ैर अमली बताए जाते हैं !

अब तालीम को लीजिए. पुराना असूल था "सादा ज़िन्दगी बसर करो और अपने विचारों को ऊँचा रखो." अब कहा जाता है "अपनी ज़रूरतों को बढ़ाए जाना और उन ज़रूरतों के पूरा करने के साधनों को भी लगातार बढ़ाए जाना इसी का नाम सभ्यता है." साइन्स आज नेकी और परोपकार के रास्ते से हट कर लोगों की बुरी इच्छाओं और आपसी नफ़रतों को पूरा करने के लिए एक गंदे साधन का काम दे रही है. गैसें तैयार की जा रही हैं जिन्हें हवाई जहाज़ से बरसा कर लन्दन. न्यूयार्क और बरलिन जैसे शहरों की कुल आबादी को चंद घंटों के अन्दर दम घोटकर ख़तम किया जा सकता है. चीर फाड़ के तजरबों में ज़िन्दा इनसानी बच्चे और बालिग मर्द औरत तक काम में लाए जाने लगे हैं. अख़बारों का अधिकतर काम रह गया है एक बड़े पैमाने पर झूठा प्रोपेगेंडा, झूठे इश्तहार और जनता को सच्ची रोशनी देने की जगह उन्हें पूरा पूरा धोका देना. पुराना असूल था कि दुनिया मिलकर चलने के लिए है और एक दूसरे के लिए क़ुरबानियाँ करते हुए ही हम आगे बढ़ सकते हैं. यह 'अव्यावहारिक' बात बताई जाती है. व्यावहारिक असूल अब यह बताया जाता है कि हर आदमी का जीवन एक लगातार 'संघर्ष' है, जो जितनों को मिटा सके उतना ही उसका जीवन सफल होगा. यह है आजकल की 'व्यावहारिकता' !

कला और मनोरंजन में आजकल के बड़े शहरों के रात के

जीवन पर जो कहा जा सके वह थोड़ा है. शराब, बदचलनी, दौलत की चाट ही जीवन में सुख पैदा करने के एकमात्र साधन रह गए हैं. नैतिक या आध्यात्मिक यानी इख़लाक़ी और रूहानी सुख कोई चीज़ ही नहीं रही. .क़ुदरत के साथ मेल या संपर्क की तो हमारे जीवन में कोई जगह ही नहीं रही.

पच्छिम की बड़ी से बड़ी क़ौमें आज इसी बात को सबसे ज़ियादा 'व्यावहारिक' मानती हैं कि दूसरी कमज़ोर और निर्धन क़ौमों को और .ख़ुद अपने ही यहाँ के कमज़ोर और निर्धन लोगों को जितना हो सके चूस कर, आर्थिक निगाह से भी चूस कर और राजनीतिक निगाह से भी चूस कर, अपनी 'शानदार सभ्यता' को क़ायम रखा जाय !

यह सब बुराइयाँ केवल एक ऐसे व्यापक और वैज्ञानिक धर्म की मदद से और एक ऐसे समाज संगठन के ज़रिये ही दूर हो सकती हैं जो इस धरती की सारी मानव ज़ाति को अपने अन्दर समा सके.

दुनिया के राजनीतिज्ञों और नेताओं को चाहिये कि वे केवल 'राष्ट्रीय' या 'नेशनेलिस्ट' न होकर 'मानवीय' यानी ह्यूमेनिस्ट हों, और समाज संगठन की इस तरह की योजनाएँ तैयार करें और दुनिया के सामने रखें, जिनमें सबकी सब ज़रूरतें पूरी हो सकें और सबके दिलों को तसल्ली और संतोष मिल सके. लोग नारों और फ़िक़रों के चक्कर में न पड़कर मेल और सबके भले की बातें सोचें. पूरब और पच्छिम, एशिया और योरप आज एक दूसरे के काफ़ी निकट आ गए हैं और आ रहे हैं. दोनों में कमज़ोरियाँ हैं. दोनों में गुण हैं. दुनिया के नेताओं का काम है कि दोनों की कमज़ोरियों को दूर करते हुए दोनों के गुणों को चमकावें और सबको सबके गुणों से फ़ायदा उठाने का मौक़ा दें. पुराना पूरब और नया पच्छिम दोनों का आज गठ-बन्धन हो रहा है. .क़ुदरत दोनों का आज संगम चाहती है और पूरा पूरा संगम चाहती है. हमें अपनी योजनाओं और

उनके अमल से यह साबित करना है कि क़ुदरत ने पूरब और पच्छिम को निकट लाकर ग़लती नहीं की, और इनको निकट लाना शैतान का काम नहीं है बल्कि भलाई के फ़रिश्ते का काम है. यही इस समय दुनिया के सामने काम करने को है. यही व्यावहारिक बात है, अमली है, बाक़ी सब ग़ैर अमली.

रेल, जहाज़, हवाई जहाज़, इन सबने मिलकर बनावटी राजनैतिक सीमाओं को तोड़ दिया है. सब क़ौमों के अच्छे से अच्छे लोग समझ रहे हैं और कह रहे हैं कि हमें अब दुनिया भर के एक संगठन की आवश्यकता है जो हमें बरबादी से बचा सके. एच० जी० वैल्स ने अपनी किताब 'ए शार्ट हिस्ट्री आफ़ दी वर्ल्ड' में लिखा है कि—"पुराने ढंग के अलग अलग बिलकुल ख़ुदमुख्तार राष्ट्र अब नहीं चल सकते." दुनिया के नेक और अच्छे लिमाग किस तरह सोच रहे हैं इसकी एक मिसाल सन् १९३३ के शिकागो के वर्ल्ड फेलोशिप आफ फेथ्स के जलसे में ईसाई पादरी डा० इच्० रीज़ की तक़रीर थी. उनके कुछ वाक्य हम नीचे देते हैं. उन्होंने कहा कि—

"राजशाही, लोकशाही और कम्यूनिस्ट तीनों तरह के देशों में एक बड़े पैमाने पर समाज का फिर से संगठन करने की योजना तैयार करने का विचार बढ़ता जा रहा है. लोग अब दूर तक आगे देखने लगे हैं." इसके बाद जापान, जरमनी, फ्रांस, इंगलैंड, इटली, स्पेन और अमरीका में इस तरह की कोशिशों को बयान करने के बाद डा० रीज़ ने कहा कि—"इसमें शक नहीं कि राष्ट्रीय योजनाओं के तैयार करने में रूस की योजना और रूस की मिसाल सबसे अधिक चमकती हुई है. यह योजना इन विचारों को सामने रखकर बनाई गई है कि क्या क्या चीज़ें पैदा की जावें, कितनी पैदा की जावें, कब और कहाँ पैदा की जावें और किस क़ीमत पर पैदा की जावें.....इसमें कोई अचरज की बात नहीं कि रूस बहुत आगे बढ़ रहा है. रूस का फ़लसफ़ा सामाजिक नियंत्रण का फ़लसफ़ा है यानी समाज पर

अपना क़ाबू और समाज का अपने ऊपर क़ाबू. रूस की योजना एक व्यापक योजना है. उसमें हर तफ़सील की तरफ़ ध्यान दिया गया है. इसलिए रूस की कामयाबी में लगभग कोई शक नहीं हो सकता. यह कहना भी बढ़ाकर बात करना न होगा कि रूस में जिस तरह की योजनाएँ बनाई जा रही हैं उनका रंग ढंग और उनका उद्देश्य धार्मिक (religious) है." आगे चलकर डा० रीज़ ने कहा है कि—"समाज का उद्देश्य एक ऐसा समाज क़ायम करना है जिसमें अलग अलग ऊँची नीची जमाअतें न हों (a classless society). यह उद्देश्य जब सारी दुनिया के लिए लगाया जायगा तो अलग अलग जमाअतों के संघर्ष के कड़वेपन के मुक़ाबले में यह कहीं अधिक शक्तिशाली चीज़ होगा।"

जहाँ तक अमीर और ग़रीब और जन्म से जात पात का सवाल है वहाँ तक यह बिलकुल ठीक है कि हमें एक ऐसा समाज बनाना है जिसमें इस तरह की जमाअतों का फ़रक़ बिलकुल बाक़ी न रहे. पर दुनिया में सब जगह चार तरह के आदमी, उनके चार तरह के क़ुदरती शौक़ और उनकी चार तरह की क़ाबलियतें बराबर रहेंगी, कुछ विद्या प्रेमी, कुछ हकूमत प्रेमी, कुछ धन प्रेमी और कुछ केवल सेवा प्रेमी. इस फ़रक़ को अभी न समझ पाना इस समय के रूसी तजरबे की एक मात्र कमी है. इसके कारण ग़लतियाँ भी हो रही हैं. इसलिए काट छाँट भी करनी पड़ रही है. पर ख़ुशी की बात है कि उस बड़े तजरबे की सारी पालिसी में सुधार और तब्दीलियाँ भी होती जा रही हैं.

दुनिया के अध्यापकों का फ़र्ज़ है कि इन सब चीज़ों को ठीक ठीक समझें और आइन्दा की नसलों को समझावें.

३९

तालीम का चौथा 'आर'

इससे पहले के अध्याय में हम आजकल की पच्छिमी सभ्यता की गिरावट की चरचा कर चुके हैं. हम दिखा चुके हैं कि धन, राजनीति, अर्थशास्त्र, घरेलू जीवन, तालीम, कला और मनोरंजन सब में आज हम तेजी के साथ बरबादी के गड्ढे की तरफ बढ़े चले जा रहे हैं. जो बातें हमारे लिए सब से आवश्यक और हमारे भले की हैं उन्हें हम अव्यावहारिक समझ बैठे हैं और जो हमें मिटाने वाली हैं उन्हें हम व्यावहारिक समझते हैं.

इस हालत की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी हमारे साइन्सदानों और अध्यापकों पर है. इस ज़माने के ये ब्राह्मण अपने कर्तव्य को भूलकर दुनिया की हालत को ठीक करने की कोशिश करने के बजाय उसे और बिगाड़ने में मदद देते हैं. उन्होंने अपने आप को शैतान और शैतान के एजेंटों के हाथ बेच रखा है. नतीजा यह है कि हमारा यह असूल बन गया है कि आज तो खाओ पीओ और गुलछर्रे उड़ाओ, यानी जो थोड़े से लोग भी ऐसा कर सकें, और कल की कल देखी जायगी ! आज की पीढ़ी कल की पीढ़ी के लिये अपने सुख चैन में कमी क्यों करे ? अगली पीढ़ी के लिए धन सम्पत्ति की जगह हम भारी भारी क़र्जे क्यों न छोड़ जाँय ! यही आजकल के जीवन का फ़लसफ़ा है. यही हमारे चारों तरफ़ की नैतिक हवा है. हमारी राजनीति, अर्थनीति और घरेलू जीवन सब इसी के रंग में रँगे हुए हैं. इस पाप और पागलपन का नाम ही हमने सभ्यता (तहज़ीब) रख रखा है. इसी को हम 'उन्नति' कहते हैं. कम से कम वे

लोगों की उन्नति इसी में समझते हैं जिनके हाथों में आज दुनिया की सत्ता है, यानी जिनके हाथों में धन की थैली और तलवार है.

इसमें भी शक नहीं कि जहाँ तहाँ और सब जगह इसकी प्रतिक्रिया यानी नतीजे दिखाई देने लगे हैं और यह प्रतिक्रिया भी तेज़ी से बढ़ती जा रही है. इस प्रतिक्रिया ने सारी दुनिया को हिला दिया है. सारी दुनिया बेचैन है. रूस में बहुत बड़ा इनक़लाब हो चुका है. वह इनक़लाब हर तरह भले के लिए ही है या हर तरह बुरे के लिए या कुछ भले के लिए और कुछ बुरे के लिए, यह कह सकना अभी हर किसी के लिए आसान नहीं है. अति यानी ज़ियादती हर चीज़ की हमेशा उलटा असर लाती है. लेकिन पच्छिमी सभ्यता की यह प्रतिक्रिया बढ़ती और फैलती जा रही है. यह डर भी हो सकता है कि इस प्रतिक्रिया के साथ साथ मानव समाज एक मुसीबत से निकलकर दूसरी मुसीबत में जा पड़े. राजाओं और बादशाहों की तानाशाही और उनके ज़ुल्मों से निकलकर हम सरदारों, सामंतों और फ़ौजी नेताओं के शासन में आए. वहाँ से निकलकर दुनिया पूँजीवाद, पूँजीपतियों और धनलोभी स्वार्थी लोगों के हाथों में गई. इसकी क़ुदरती प्रतिक्रिया हुई सोशलिज्म यानी समाजवाद और कम्यूनिज्म यानी साम्यवाद. यह समाजवाद यदि सच्चा समाजवाद न हुआ तो डर है कि हम फिर से सबसे चालाक और सब से चलते हुए लोगों या नेताओं के चक्कर में पड़कर जिसकी लाठी उसकी भैंस के दलदल में फँस जावें और इतिहास का पुराना शैतानी चक्कर फिर से शुरू हो जावे.

कोई नहीं चाहता कि ऐसा हो. पर इसके लिए हमें सावधान रहने की ज़रूरत है. हम इस ख़तरे से आसानी से बच सकते हैं अगर हमारे साइन्सदां और हमारे बच्चों को तालीम देने वाले ईमानदारी के साथ अपने फ़र्ज़ को पूरा करें. उनमें साइन्स यानी दिमाग़ी जानकारी और दीन धर्म यानी नेकी और सबके भले की इच्छा, दोनों साथ साथ होनी चाहिएँ.

हज़ारों बरस पहले मानव जाति एक तरह के क़ुदरती कम्यूनिज्म यानी साम्यवाद का जीवन बिताती थी. आदमी गिरोहों में रहते थे. सब सम्पत्ति सब की होती थी. किसी की कोई अलग सम्पत्ति न थी. यह हालत हमारी सभ्यता से पहले की हालत थी. इससे निकलकर हम दरजे बदरजे आजकल के हर दरजे के व्यक्तिवाद यानी नफ़्सा नफ़्सी में पहुँचे. सब अलग अलग, सबमें एक दूसरे के साथ होड़, एक दूसरे से मुक़ाबला और टक्करें, हरेक में ख़ुदी का बोलबाला, फिर वह ख़ुदी चाहे व्यक्तिगत रूप ले चाहे राष्ट्रीय. इस हालत से निकलकर हमें सोच समझ कर पूरी कोशिश के साथ एक ऊँचे ढङ्ग की मिली जुली ज़िन्दगी, एक अच्छे सहयोग और समाजवाद की तरफ़ बढ़ना है. हमारा यह नया समाजवाद एक साइन्सी योजना के साथ बनना चाहिए. यह ख़िलाफ़ क़ुदरत ज़बरदस्ती का और मशीनी ग़ैर टिकाऊ साम्यवाद न हो जो हम पर बाहर से लाद दिया गया हो. हमारा यह समाजवाद मानव प्रकृति के अटल नियमों और मानव जीवन के टिकाऊ आदर्शों के अनुसार होना चाहिए. हम पहले भी इसकी चरचा कर चुके हैं. यह ठीक है कि आदमी आदमी सब बराबर हैं. यह भी ठीक है कि सब को बराबर के मौक़े मिलने चाहिएँ. पर यह भी ठीक है कि आदमियों के अलग अलग स्वभाव, अलग अलग तबियतें और अलग अलग क़ाबलियतें होती हैं. इन्हीं के अनुसार उनके अलग अलग काम होते हैं. इन अलग अलग स्वभावों, तबियतों और क़ाबलियतों को समझकर और सब को पूरा मौक़ा देकर ही सच्चा समाज और सच्चा सोशलिज्म यानी समाजवाद बन सकता है.

मशहूर यूरोपीयन विद्वान् जे० ई० कारपेन्टर ने अपनी किताब 'दि प्लेस आफ क्रिश्चियानिटी अमंग दि रिलिजन्स आफ दि वर्ल्ड' में लिखा है—

"व्यापार का उद्देश्य यह है कि धरती की सब पैदावार को इस तरह से संगठित किया जावे कि सारे मानव समाज की

सब ज़रूरतें पूरी हो सकें. साइन्स का उद्देश्य यह है कि सब चीज़ों की सच्ची सच्ची जानकारी सब में फैल जावे. राजनीति का उद्देश्य यह है कि सब देश न्याय और शान्ति के साथ मिलकर प्रेम से रह सकें, और सबकी बराबर उन्नति हो. इसी तरह धर्म का उद्देश्य यह है कि सबके अन्दर एक सच्चा विश्वास हो."

कारपेंटर साहब की ऊपर लिखी बात में हम यह और जोड़ना चाहेंगे—"मज़दूरी और मज़दूरों का उद्देश्य यह है कि ऊपर के सब उद्देश्यों को पूरा करने के लिए जो सहयोग और मदद ज़रूरी हो वह दें." और यह कि—"यह सब उद्देश्य अलग अलग तभी पूरे हो सकते हैं जब मनुष्य समाज में चार तरह के आदमी यानी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, यानी आलिम, आमिल, ताजिर और मज़दूर मिलकर अपनी अपनी तबियतों और अपनी अपनी क़ाबलियतों के अनुसार अपना अपना फ़र्ज़ पूरा करें और इस तरह सारे समाज को आगे ले जाएँ." इसका हिन्दुओं की बिलकुल ग़लत जन्म की जात पात से कोई सम्बन्ध नहीं. यह चार तरह के आदमी यानी एक वह जो साइन्स की खोजों और पढ़ने पढ़ाने का शौक़ रखते हैं, दूसरे वह जो इन्तज़ाम और हुकूमत की क़ाबलियत रखते हैं, तीसरे वह जो धन पैदा करने आर कमाने में ज़ियादा होशियार हैं और चौथे वह जो मज़दूरी और सबकी मदद ही कर सकते हैं, यह चार तरह के आदमी क़ुदरती तौर से हर देश के अन्दर होते हैं. इसके लिए हर बच्चे की तबियत और उसकी योग्यता को समझना और उसके अनुसार उसे समाज सेवा का मौक़ा देना यही सच्चे समाज संगठन और सच्चे समाजवाद का तरीक़ा है. कारपेंटर साहब की बात में हम यह भी जोड़ना चाहते हैं कि—"विश्वास और ज्ञान यानी ईमान और इल्म साथ साथ चलने चाहियें. यह दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं. यह दोनों उस अनन्त यानी लामहदूद ज्ञान के ऊपर क़ायम हैं और उसी से निकले हैं जो इस अन्त वाली यानी महदूद

दुनिया के सारे इल्मों को अपने अन्दर लिए हुए, सँभाले हुए और मिलाए हुए है."

आजकल की हमारी, यानी दुनिया के अधिकतर सभ्य कहलाने वाले देशों की, सारी तालीम बनावटी, बे असर, निकम्मी, बल्कि साफ़ नुकसान करने वाली, और हद दरजे ख़र्चीली और मँहगी है. हमारे बच्चों के अन्दर यह ग़लत आदर्श, ग़लत विचार और जीवन के ग़लत उद्देश्य भर देती है. उन चीज़ों के बोझ के नीचे जो जीवन के केवल साधन हैं यह जीवन के असली उद्देश्य को ही दबाकर ख़तम कर देती है. दिखावटी और बिलकुल तुच्छ बातों के बोझ से यह जीवन के असली असूलों को दम घोंटकर मार डालती है. इसे बड़ी बड़ी लागत की इमारतें चाहिएँ, बड़ी बड़ी तनख़्वाहें चाहिएँ, बेहद मँहगा और तरह तरह का साज़ सामान और औज़ार चाहिएँ, वह चीज़ें चाहिएँ जो कम से कम एशियाई देशों की बिसात से कोई सम्बन्ध ही नहीं रखतीं. इन सब बातों के होते हुए आजकल की यह तालीम प्रकृति यानी क़ुदरत से हमें बिलकुल दूर फेंक देती है, यहाँ तक कि क़ुदरत के अध्ययन में भी इसने एक दर्दनाक बनावटीपन पैदा कर रखा है. इससे अधिकतर केवल वे लोग पैदा होते हैं जो 'लरनेड प्रोफ़ैशन्स' यानी विद्या सम्बन्धी पेशों के लोग कहलाते हैं. यह तालीम न बच्चों की अलग अलग तबियतों और अलग अलग क़ाबलियतों का पता लगा सकती है, न उसे परख सकती है और न उसे बढ़ने का मौक़ा दे सकती है. इस तालीम में सब धान बाईस पसेरी के निर्दयी असूल पर बच्चों की आत्माएँ कुचल डाली जाती हैं. इस बात की सख़्त ज़रूरत है कि आजकल की इस तालीम की जगह एक अधिक क़ुदरती. अधिक काम की और अधिक सस्ती तालीम बच्चों को दी जावे जो हर लड़के और लड़की को उसके लिए सबसे अच्छे और सबसे दिल पसंद काम के क़ाबिल बना दे, वह तालीम जो बच्चों को जीवन के ठीक ठीक आदर्श बतावे और

हमारी सारी मानव सभ्यता के नैतिक और आध्यात्मिक वातावरण को बदल दे, इससे पहले कि हम बरबाद हों.

पच्छिम के बड़े बड़े विद्वानों का ध्यान इन बातों की तरफ़ जाने लगा है. एक बहुत बड़े विद्वान एडवर्ड सेगुइन, जिनका सारा जीवन तालीम के कामों में ही बीता, लिखते हैं—"अगर हम अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी की मामूली चीज़ों का अपने हाथों से ठीक ठीक उपयोग कर सकें, तो हमारी तालीम पर उसका बहुत बड़ा असर पड़ सकता है. इन मामलों में हम तालीम के साधनों को तो बहुत अच्छी तरह याद रखते हैं लेकिन जिन असूलों पर उन साधनों से काम लेना चाहिए उन असूलों को भूल जाते हैं. असलियत यह है कि वे असूल ही सबसे अधिक ज़रूरी हैं. इन असूलों को भूल जाना या उनकी तरफ़ से बेपरवाही करना सारी तालीम को बिगाड़ देता है. यह असूल ही तालीम का फ़लसफ़ा हैं."

आजकल के तालीम देनेवाले तालीम के इन असूलों को या इस फ़लसफ़े को इसलिए अपनी निगाह से ओझल कर देते हैं कि या तो उन्हें समझने की उनमें दिमाग़ी क़ाबलियत नहीं होती और या क़ाबलियत होते हुए भी .खुदग़रज़ी उन्हें अन्धा कर देती है. उसी लेखक ने आगे चलकर लिखा है—"सबसे बड़ी शक्ति जो बच्चों को समाज के अच्छे और काम के अङ्ग बना सकती है प्रेम है. जिस तरह हम बच्चों की देखने सुनने आदि की शक्तियों को बढ़ाते हैं उसी तरह हमें उनके अन्दर प्रेम की शक्ति बढ़ानी चाहिए. इसके लिए नए औज़ारों या नए अध्यापकों की ज़रूरत नहीं है. ज़रूरत केवल इतनी है कि हम बच्चों के दिलों पर ठीक असर डालना और उन्हें खिलने का ठीक मौक़ा देना सीखें. बच्चे के दिल में यह बात बैठ जानी चाहिए कि दूसरे मुझसे प्यार करते हैं और इसके बदले में बच्चे में यह उमंग जागनी चाहिए कि वह दूसरों से प्यार करे. यही हमारे तालीम की शुरुआत थी और यही उसका अन्तिम उद्देश्य है. साइन्स, साहित्य, डाक्टरी, फ़िलोसफ़ी सब हमारे बच्चों को

कुछ न कुछ फ़ायदा पहुँचा सकती हैं, लेकिन उन्हें मानव समाज का उपयोगी अंग केवल प्रेम ही बना सकता है. इसलिए बच्चों के सच्चे रक्षक और सच्चे बचाने वाले वही हैं जो बच्चों से प्यार करते हैं." यह प्रेम और इसके साथ मनुष्य स्वभाव के कुछ असूल ही सच्चे सोशलिज्म यानी समाजवाद की बुनियाद हो सकते हैं. इसलिए दुनिया के सबसे बड़े अध्यापक वही हैं जो मनुष्य जाति से सबसे अधिक प्रेम करते हैं, यानी उन बड़े बड़े धर्मों के क़ायम करने वाले जो धर्म लोगों को एक दूसरे के साथ और सबको एक ईश्वर अल्लाह के साथ बाँधते हैं और जिन्होंने अपने अपने समय में नई नई सभ्यताओं को जन्म दिया.

इमर्सन ने कहा है—"सब प्रेम के हवाले कर दो. उस पर पूरा भरोसा करो. प्रेम ही ईश्वर है. प्रेम के लिए आसमान के सब दरवाज़े खुले हुए हैं."

सभ्यता या तहज़ीब तब ही सभ्यता या तहज़ीब कहला सकती है जब उसके अन्दर सबके भले की इच्छा सब तरफ़ समाई हुई हो. इतना ही नहीं, हरेक के अन्दर हर दूसरे के साथ प्रेम और हमदर्दी हो और उसी के अनुसार अमल हो. यह अमल ठीक तभी हो सकता है जब हम में अपने ऊपर क़ाबू हो, खान पान और सब चीज़ों में एक बीच का रास्ता हो, हिम्मत हो, बरदाश्त हो और अपना अपना फ़र्ज़ पूरा करने की ज़बरदस्त लगन हो. वही सच्ची सभ्यता कहलाने की हक़दार है जिसमें भोग विलास, घमंड, नफ़रत, लालच, हसद, स्वार्थ और डर इन सबको ऊपर लिखे गुणों ने पूरी तरह अपने क़ाबू में कर रखा हो. ज़बरदस्ती के साम्यवाद और ज़ालिमाना व्यक्तिवाद और निर्दय पूँजीवाद और पत्थर-दिल सैनिकवाद की जगह सच्चा समाजवाद मानव हृदय के ऊपर लिखे गुणों की ही मदद से क़ायम हो सकता है.

आज दुनिया इस पूँजीवाद और सैनिकवाद के नीचे इसीलिए तड़प रही है क्योंकि हमारे समाज के अन्दर ऊपर लिखे दुर्गुण

इधर से उधर तक फैले हुए हैं. दुनिया की करोड़ों जनता इसीलिए आज पूँजीवाद, सैनिकवाद और साम्राज्यवाद की शिकार है. तेज़ से तेज़ चलने वाली लोहे और फ़ौलाद की मशीनें और चालाक से चालाक शासकों की योजनाएँ, बड़ी से बड़ी राजनीति या चिकने चिकने शब्द गढ़ने वाली कूटनीति, ऐसे ऐसे शब्द जिनके अर्थ रोज़ बदलते रहें, इन सबसे दुनिया का दुख दूर नहीं हो सकता. हमारे दिलों के अन्दर सच्ची धार्मिक भावना यानी एक दूसरे के साथ प्रेम, एक दूसरे के साथ हमदर्दी और एक दूसरे के भले की इच्छा होनी चाहिए. सच्चे समाजवाद की बुनियाद इसी चीज़ पर पड़ सकती है कि हम सबके अन्दर एक ही जान, एक ही आत्मा को अनुभव करें. सबके अन्दर एक आत्मा को देखना ही परमात्मा को देखना है.

जो अध्यापक यह चाहता है कि वह मानव समाज में इस तरह की सभ्यता के फैलाने में मदद दे सके उसके लिए ज़रूरी है कि पहले वह इस एकता को अपने अन्दर अनुभव कर ले. इसी से उसके अन्दर सब तरह के सच्चे विचार और सच्चे भाव पैदा होंगे. इसी के अनुसार वह बच्चों को तालीम देगा और बच्चों के दिलों में आत्मा की इस एकता के भाव को जगावेगा. इस तरह की तालीम से ही हमारी सभ्यता सच्ची समाजवादी सभ्यता हो सकती है. धार्मिक शिक्षा यानी मज़हबी तालीम का यही मतलब है. पंडे पुरोहितों और मुल्ला पादरियों के स्वार्थ और उनकी ग़लतियों के कारण आज बहुत से लोगों को धर्म या मज़हब के नाम से चिढ़ हो गई है. इसलिए हम ऐसी तालीम को आध्यात्मिक या रूहानी तालीम भी कह सकते हैं. अंगरेज़ी तालीम की बुनियाद अक्सर लोग तीन 'आर' बताते हैं [लिखना, पढ़ना और हिसाब]. अगर हम अंगरेज़ी शब्द 'रिलिजन' को ठीक ठीक समझें तो 'रिलिजन' का आर [R] तालीम का चौथा आर होना चाहिए और बाक़ी तीनों 'आरों' से यह कहीं ज़ियादा अहम और ज़रूरी है.

४०

सच्चा समाजवाद

दुनिया की सब धार्मिक किताबों में इस धरती के ऊपर रामराज की स्थापना या आसमानी हकूमत या हकूमते इलाही के क़ायम होने की चरचा की गई है. सच यह है कि आदमी के अन्दर दो आपे हैं, एक उसका छोटा आपा और दूसरा बड़ा आपा. छोटा आपा वह आपा है जो अपने आपको अपने व्यक्तित्व (शख्सी वजूद) तक महदूद समझता है. बड़ा आपा वह आपा है जिसने दुनिया के सब लोगों के आपे के साथ अपनी एकता को अनुभव कर लिया है. इस तरह के लोग ही अपने छोटे आपे को जीत कर सचमुच आत्म विजयी, अपने ऊपर क़ाबू रखने वाले, नेक, परोपकारी, तजरबेकार और बुद्धिमान कहला सकते हैं. इस ज़मीन पर रामराज का मतलब इसी बड़े आपे का राज यानी उन लोगों का राज है जिनके अन्दर यह बड़ी आत्मा जाग चुकी है. यही सच्चा 'स्वराज' है. मनुस्मृति में लिखा है—

"सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि,
समं पश्यन् आत्मयाजी स्वाराज्यम् अधिगच्छति."

—यानी "जो आदमी सब प्राणियों के अन्दर अपनी आत्मा को और अपने अन्दर सब प्राणियों को एक बराबर देखता है और इस बड़ी आत्मा के लिये अपनी छोटी आत्मा को क़ुरबान कर देता है वही 'स्वाराज' को हासिल करता है."

इस अन्दर के स्वराज से ही बाहर का स्वराज पैदा हो सकता है.

ऊपर की इस छोटी सी बात में सारी मानव समस्याओं, सब इनसानी मुशकिलों का हल मौजूद है, और वही एक

हल हो सकता है. अगर हमारे घरेलू जीवन में इसी बड़ी आत्मा का राज हो तो हमारा घरेलू जीवन सुख से भर जावे. तब दूसरों को सुखी रखना हमारा फ़र्ज़ हो जावे और प्रेम हमारा सबसे बड़ा असूल. अगर यही बड़ी आत्मा आर्थिक मैदान में मानव समाज को चलाने लगे तो कोई आदमी अपनी .खुदग़रज़ी के लिए या लोभ में आकर अपने लिये धन जमा न करे, हर आदमी अपनी सारी धन संपत्ति को सबकी चीज़ समझे, उसे सबके भले के लिये ख़र्च करे और ज़िन्दगी की सारी ज़रूरी चीज़ें और आदमी को आराम पहुँचाने वाली चीज़ें सब में बराबर की बँटी हुई हों. सबको सुखी रखने और सबको आराम पहुँचाने में ही हरेक के दिल को सबसे बड़ी राहत मिले. अगर यह बड़ी आत्मा हमारे राजकाज को चलाने लगे तो कोई आदमी अपनी 'पार्टी' के लिये काम न करे, सब सबके लिये काम करें. जब हमें सबका भला देखना हो, सबके साथ न्याय करना हो, सबका एक बराबर हित करना हो तो पार्टियों की कोई ज़रूरत ही नहीं रह जाती. पार्टियाँ वहीं बनती हैं जहाँ या तो हमारे आर्थिक हित एक दूसरे से टकराते हों और या हमारे धर्म या सम्प्रदाय एक दूसरे से टक्कर लेते हों. इसी तरह अगर हमारी दूकानों, बाज़ारों कारख़ानों, व्यापार मंडलों, पुलिस चौकियों, फ़ौजों, कचहरियों, म्युनिसिपैलटियों, अस्पतालों, जहाज़ों और रेलों में और जहाँ कहीं आदमियों का आदमियों से वास्ता पड़ता है इसी बड़ी आत्मा का राज हो तो हर जगह सब लोग ईमानदारी से, नरमी के साथ, हमदर्दी के साथ और सबका भला चेतते हुए अपने अपने फ़र्ज़ों को पूरा करें. अगर यह बड़ी आत्मा हमारी धारा सभाओं में क़ानून बनाने वालों के अन्दर जागी हुई हो तो हमारे सब क़ानून नेक, दूरंदेशी के और सबका भला करने वाले हों. तब हम हर क़ानून के बनाने में सब तबियतों और सब पेशों और सब जमातों के लोगों का एकसा ख़याल रखें. हमारी यही बड़ी आत्मा यदि हमारे बच्चों की तालीम में हमारे विद्वानों और अध्यापकों की रहनुमाई कर सके तो नई

पीढ़ी के लोगों को ठीक ठीक तालीम मिल सके और सब लोगों के सब काम बहुत जल्दी दुरुस्त हो जावें.

जिन लोगों में यह बड़ी आत्मा जाग गई है यानी जिन्होंने सबके अन्दर अपने को और अपने अन्दर सबको और घट घट में समाए हुए एक आत्मा को जान लिया है वही निस्वार्थ, बेग़रज़, बेलाग, परोपकारी, और सचमुच बुद्धिमान हो सकते हैं. इस तरह के मर्द और औरत सबसे मान और आदर पाने के हक़दार होते हैं. क़ुदरती तौर पर सब उनपर भरोसा करेंगे, वही क़ौम के सच्चे नुमाइन्दे होंगे, क्योंकि इनसान के अन्दर जो सबसे अच्छे भाव हैं वही उनके अन्दर जागे हुए होंगे. जहाँ कहीं और जिस देश में भी इस तरह के ऊँचे आदमी हक़ूमत करेंगे, इन्तज़ाम करेंगे, क़ानून बनाएँगे और लोगों की रहनुमाई करेंगे, वहीं सच्चा रामराज समझना चाहिए, वहीं हक़ूमते इलाही है क्योंकि वहाँ नेकों और नेकी का राज है.

यह ज़रूरी है कि तालीम के और क़ानून बनाने के मैदानों में कम से कम इन दो जगह इसी तरह के लोगों का बोलबाला हो और उन्हीं की आवाज़ पर सब चलते हों. 'स्वराज' का मतलब यही है कि हमारे अन्दर का ऊँचा 'स्व' यानी ऊँचा आपा हम सब पर राज करता हो. जो लोग अपने देश में ऐसा सच्चा 'स्वराज' चाहते हैं और उसे क़ायम रखना चाहते हैं उनका पहला फ़र्ज यह है कि देश की सारी जनता के अन्दर सब मर्दों, औरतों, बड़ों और छोटों के अन्दर उस बड़ी आत्मा को जगावें ताकि सब सबके भले में ही अपना भला देखें, तब ही सचमुच सबको सुख मिल सकता है.

इस नेक और ज़रूरी काम का प्रारम्भ हमें तालीम से ही करना चाहिये, हमारी तालीमगाहें, हमारे सब स्कूल और कालिज सचमुच 'देवालय' यानी 'ग्यानए ख़ुदा' होने चाहियें. तालीम से उतर कर यह ज़िम्मेवारी हमारे अख़बारों पर है क्योंकि अख़बार भी जनता की तालीम का एक बहुत बड़ा साधन है.

इसलिए जिन लोगों के सपुर्द तालीम का काम है, चाहे स्कूलों और कालिजों के अध्यापक हों और चाहे अख़बारों के एडीटर, उनके लिये ज़रूरी है कि वे ऊँचे मानी में ईश्वर प्रेमी हों यानी यह कि उन्हें सबके अन्दर एक ही ईश्वर अल्लाह का जलवा काम करता हुआ दिखाई देता हो. उनके अन्दर तप यानी रियाज़त और इख़लास यानी निस्वार्थता होनी चाहिये. उनमें विद्या यानी इल्म और ज्ञान यानी इरफ़ान होना चाहिये. तब ही वे पहले अपने अन्दर रूहानी बराबरी (Equality), भाईचारा (Fraternity) और आज़ादी (Liberty) पैदा करके जनता को वह तालीम और वह नेक जानकारी दे सकेंगे जिससे जनता के अन्दर सच्ची बराबरी, सच्चा भाईचारा और सच्ची आज़ादी पैदा हो सके.

चीनी महात्मा लाओत्से ने अपनी किताब "ताओ तेह किंग" में लिखा है—

"सब चीजें उसी एक परमात्मा से पैदा होती हैं. उससे सबको ख़ूराक मिलती है. उसी की शक्ति सबको रूप देती है, वही सबको कमाल तक पहुँचाती है. वही सबकी रक्षा करती है. उसके काम करने के ढंग से हमें तीन सबक़ मिलते हैं. अव्वल यह कि हम सब चीजें और सब तरह का माल पैदा करें लेकिन किसी चीज़ या किसी माल को अपना न समझें. दूसरा यह कि सब काम करें लेकिन अपनी ख़ुदी को ऊपर आने न दें. और तीसरा यह कि सबको बढ़ावें पर किसी पर हावी होने की इच्छा न करें. परमात्मा सब चीज़ों को प्यार करता है और चलाता है पर आप कहीं दिखाई नहीं देता. न अपनी मिल्कियत जताता है."

ऊपर के शब्दों में हमारी बड़ी आत्मा का यानी हमारे उस आपे का जिसे हम इनसान का बड़ा आपा कहते हैं पूरा बयान आ गया. जो लोग मुल्क में धन दौलत पैदा करें उनका फ़र्ज़ है कि धन दौलत पैदा करते हुए भी उसे अपनी मिल्कियत न समझें, सबकी मिल्कियत समझें. जो लोग राज करते हैं उनका काम है

कि राज करते हुए भी अपनी .खुदी को ऊपर आने न दें. जो लोग देश को या मानव समाज को बढ़ने और तरक़्क़ी करने में मदद देते हैं उनका फर्ज है कि .खुद किसी पर हावी होने की कोशिश न करें. यही काम विद्वानों और अध्यापकों का है.

अध्यापक को चाहिये कि वह किसी दूसरे का मोहताज न हो, उसका जीवन सादे से सादा हो, वह अपनी तबियत से आज़ाद हो और फिर भी अपने को छोटे से छोटा समझे. उसका दिल प्रेम से भरा हो और वह प्रेम ही का प्रचारक हो. यदि ऐसा होगा तो उसकी मिसाल को देखकर और उसकी रूहानी ताक़त यानी उसके आत्म बल को देखकर ऊँचे हाकिम भी बुराई करने से डरेंगे और बचे रहेंगे. जहाँ भी वह खड़ा हो जायगा वहाँ नेकी और परोपकार ही दिखाई देंगे. किसी अध्यापक या सम्पादक को किसी बुरे आदमी से तनख्वाह या मदद नहीं लेनी चाहिये. सब धर्मों की किताबें हमें इस बारे में सावधान करती रही हैं.

मनुस्मृति में लिखा है—

"जितनी तरह की पाकियाँ हैं उनमें सबसे बढ़कर पाकी पैसे की पाकी है. जो पैसे के मामले में पाक है वही सचमुच पाक है. मिट्टी और पानी से मल मलकर बार बार बदन धोने वाला पाक नहीं है."

एक सूफी ने कहा है—

"जब लालच बीच में आ गई तो हुनर छिप गया, जब .खुदी बीच में आ गई तो .खुदा ओझल हो गया. इनके आने से सैकड़ों परदे दिल से उठ उठकर आँख के ऊपर पड़ जाते हैं."

वेदान्त के शब्दों में माया (ख़ाहिश) दो काम करती है, एक 'आवरण' यानी हमारी आँख पर परदा डाल देना और दूसरा 'विक्षेप' यानी हमारे दिल और दिमाग़ को सब तरफ से हटा कर अपनी उसी इच्छा को पूरा करने की तरफ लगा देना. आवरण का इलाज है 'वैराग्य' यानी दुनियावी ख्वाहिशों की तरफ़ से बेताल्लुक हो जाना. इसी को 'मुजानबत' कहते हैं.

विक्षेप का इलाज है 'अभ्यास' यानी मश्क़. इसे मुनाज़लत भी कहते हैं. इन्हीं को 'इख़लास' और 'जिहाद' भी कहा जा सकता है.

गुरु, आचार्य, उपाध्याय, पीर, मौल्लिम और अतालीक़ का फ़र्ज़ है कि अपने अन्दर के इख़लास में फ़रक आने न दे और ख़िदमते ह़ल्क़ को ही अपनी सबसे बड़ी इबादत समझे. उसे चाहिये कि हक़ यानी सचाई से कभी बाल भर भी इधर उधर न हिले. मानसिक फल की परख उसकी माली यानी आर्थिक जड़ से होती है. इसलिये किसी देश का भी तालीम का ख़र्च शराब जैसी चीज़ों के टैक्सों से नहीं चलना चाहिये. जो राजा या हाकिम इस तरह की पाप की चीज़ों से धन कमाता है उसकी बाबत मनुस्मृति में लिखा है कि—

"जो तालीम देने वाला लोभी और पापी राजाओं से धन लेकर पढ़ाता है वह इस तरह के राजाओं की बुराई उनके सामने प्रगट नहीं कर सकता और इसीलिये ख़ुद भी नरक में जाता है और राजा को भी नरक में ढकेलता है."

सूफ़ी कहता है कि—

"चूँ दिहद क़ाज़ी बदिल रिशवत क़रार
कै शनासद ज़ालिम अज़ मज़लूम ज़ार."

यानी—"अगर क़ाज़ी ही अपने दिल के अन्दर रिशवत को जगह दे दे तो फिर ज़ालिम और मज़लूम में फ़रक़ कौन कर सकता है?"

जो तालीम देने वाला मास्टर या अध्यापक ज़ुल्म और बुराई को बढ़ाता है वह आगे की तमाम नस्लों को ख़राब करता है और सारे देश और सारी सभ्यता को बरबादी की तरफ़ ले जाता है, अध्यापक को कोई काम ऐसा नहीं करना चाहिये जिससे उसे किसी दरजे तक भी और किसी तरह भी अपनी आज़ादी, अपने आत्मा और अपनी ज़मीर को बेचना पड़े. अध्यापक के ऊपर सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी है. वह सारे देश को बना सकता है या

मिटा सकता है. वह इनसानी सभ्यता को चमका सकता है या ख़तम कर सकता है.

मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है—

"जब आलिम नेकी के रास्ते से हट जाते हैं तो सारा आलम ग़लत रास्ते पर पड़ जाता है."

गीता में लिखा है कि—

"बड़ा या समझदार आदमी जो कुछ करता है बाक़ी सब लोग उसी की नक़ल करते हैं, वह जिस चीज़ को ठीक क़रार दे देता है दुनिया उसी पर चलती है."

इंजील में लिखा है—

"क्या अंधे अंधों को रास्ता दिखा सकते हैं ? क्या वे दोनों ख़ंदक़ में नहीं गिरेंगे ?"

उपनिषद में लिखा है—

"जो अभागे लोग अँधेर में पड़े हुए हैं लेकिन ख़ुद अपने को धीर और पंडित मानते हैं और अपनी पंडिताई के घमंड में हैं वे एक गड्ढे से दूसरे गड्ढे में गिरते रहते हैं, जिस तरह वह अंधे लोग गिरते हैं जिन्हें अंधे रास्ता दिखा रहे हों !"

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—

"दुनिया के लोग अपने बादशाहों के दीन पर जाते हैं."

ठीक इसी मानी की एक मशहूर संस्कृत कहावत है—"यथा राजा तथा प्रजा."

इल्म यानी ज्ञान एक शक्ति होती है. अध्यापक के पास इल्म होता है. उसमें वह शक्ति होती है कि लोगों के दिलों और दिमाग़ों को नेकी की तरफ़ ले जाय या बदी की तरफ़. राजा के पास तलवार होती है. वह अधिक से अधिक आदमी के जिस्म को क़ाबू में कर सकता है. अध्यापक और पुजारी की शक्ति राजा की शक्ति से बढ़कर होती है. इसीलिए पाखंडी और झूठे पंडे

पुरोहित और मुल्ला पादरी बुरे से बुरे राजाओं और बादशाहों से अधिक नुक़सान कर सकते हैं. सीधे या टेढ़े, कम या बहुत, बिना पंडे पुरोहितों की मदद के राजाओं का .जुल्म चल ही नहीं सकता. धर्म और राजनीति अगर आदमी के भले के लिए मिल जावें तो ज़मीन पर स्वर्ग ला सकते हैं. यही दोनों अगर लोगों को ग़ुलाम बनाने और उन्हें चूसने के लिये मिल जावें तो इस धरती को नरक बना देते हैं. रूहानी शक्ति यानी आत्म-बल राजशक्ति को क़ाबू में कर सकती है और जिधर चाहे मोड़ सकती है.

वेद में लिखा है—

"विद्या (साइंस) किसी ब्राह्मण (ज्ञानी) के पास गई और कहने लगी कि मेरी रक्षा करो और मुझे एक पाक अमानत की तरह बचा कर रखो. मुझे उन लोगों को मत दो जिनके मन में खोट है, जिनके दिलों में टेढ़ापन है, जिन्हें अपने ऊपर क़ाबू नहीं है, जो घमंडी हैं, ज़ालिम हैं, लोभी हैं, विलासी हैं और दूसरों से ग़ैरियत बरतते हैं. मुझे केवल ऐसे आदमियों को दो जो नेक और पाक हैं, सबका भला चाहते हैं और सबके भले के काम करते हैं. मुझे केवल उन्हीं को दो तब मेरी शक्ति बढ़ेगी और मैं दुनिया का भला कर सकूँगी !"

मनुस्मृति में लिखा है—

"विद्या की शक्ति यानी आत्मा की शक्ति और राज शक्ति यानी फ़ौजी शक्ति दोनों को एक दूसरे की ज़रूरत है. इनमें से कोई दूसरे के बिना फलफूल नहीं सकती. पर यदि फ़ौजी शक्ति .जुल्म के रास्ते पर चलने लगे और विद्या की शक्ति को अपना साधन बनाने लगे तो विद्वान का धर्म हो जाता है कि राज शक्ति को रोके और ठीक तरफ़ चलावे. विद्या में ऐसा करने की शक्ति है क्योंकि विद्या ही राज के हथियारों और साज़ सामान को बनाती है. जो विद्या हथियारों को बनाती है वही उन्हें तोड़कर ख़तम भी कर सकती है."

शुक्रनीति में लिखा है—

"जब क्षत्री लोग जिनके हाथों में तलवार है यह देखते हैं कि ब्राह्मण यानी अल्लाह वाले अपने धर्म पर डटे हुए हैं तब वे डर जाते हैं और .खुद भी अपने सच्चे धर्म से इधर उधर नहीं भटक पाते. इसलिए ज्ञानी और ईश्वर भक्त लोगों को चाहिये कि दुनिया को ठीक रखने के लिए .खुद तप (रियाज़त) में लगे रहें."

दुनिया के अध्यापक, विद्वान लोग और साइन्सदाँ अगर डटकर अपने फर्ज़ को पूरा करने के लिए खड़े हो जावें तो राजकाजी नेताओं की सब बुराइयाँ उन पर से इस तरह झड़ जावें जिस तरह तूफान के आने पर दरख़्तों के पुराने पत्ते झड़कर गिर पड़ते हैं.

योरप के इतिहास से पता लगता है कि ईसाई धर्म के पादरी लोग जब जब नेक, निस्वार्थ और सच्चे रहे हैं तब तब उन्होंने अन्यायी राजाओं के अन्याय से दुनिया को बचाया है. इसके ख़िलाफ जब जब पादरियों में इनसानी शकल के अन्दर शैतान पैदा हो गए हैं जैसा कि 'इनक्विज़िटर' थे तब तब ज़ालिम बादशाहों के साथ मिलकर उन्होंने धरती को कँपा दिया है. तब तब अनेक राष्ट्रों और करोड़ों इनसानों की आह आसमान तक पहुँची है और अल्लाह की तरफ से बदला पाखंडी पुरोहितों और ज़ालिम राजाओं दोनों के सर पर टूटा है. प्राचीन भारत में ऋषियों ने अनेक बार बुरे राजाओं को दंड दिया है और मिटा भी डाला है. इसलाम की तारीख़ में नेक और .खुदापरस्त आलिमों ने अकसर सुलतानों और बादशाहों के ज़ुल्मों को रोक दिया है. ईसाई धर्म के अन्दर भी बड़े बड़े बहादुर सुधारक और शहीद हो चुके हैं जिन्होंने अपने आत्मबल से बड़े बड़े बादशाहों से टक्कर ली. यहूदियों में भी जेरेमिया जैसे नबी हुए हैं जिन्होंने अपने समय के ज़ालिमों का मुकाबला किया.

आजकल के अध्यापकों और साइन्सदानों को चाहिए कि अपने पाक मिशन के लिए खड़े हो जावें. उन्हें चाहिए कि धन और दुनिया के ऐश आराम की चाह को अपने अन्दर से मिटा डालें. ज्ञान और परोपकार की क़ीमत धन नहीं है, प्रेम और मान है, माँ बाप अपने बच्चों से जो प्रेम करते हैं और उनके लिए जो क़ुरबानियाँ करते हैं उसकी क़ीमत क्या उन्हें धन के रूप में अदा की जा सकी है ?

क़ुरान में लिखा है—

"बड़ी से बड़ी इज्ज़त उनको मिलनी चाहिए जो अल्लाह से डरते हैं और लोगों से प्रेम करते हैं. जो सबसे नेक है वही अल्लाह के सबसे नज़दीक है."

अध्यापक को चाहिए कि अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरतों को कम से कम रखे और कम से कम ज़रूरतों के पूरा होने में संतोष माने. उसे चाहिए कि जान बूझ कर और अपनी मरज़ी से ग़रीबों की सी ज़िन्दगी बसर करे. तब उसके अन्दर के तप और ज़ोहद की आग यानी उसका आत्मबल बढ़ता और चमकता चला जायगा. सब नेक आदमी उसे प्यार करेंगे और उसका आदर करेंगे. सब बुरे आदमी उससे डरेंगे और उसके असर से धीरे धीरे अपने को बदलेंगे. लोभी और स्वार्थी लोग भी उसे देखकर शरमावेंगे और अपने ऊपर क़ाबू हासिल करना सीखेंगे. ऐसे आदमियों से लोग प्रार्थना करेंगे कि वे अच्छे और समझदारी के क़ानून बनावें ताकि दूसरे उन पर चलें. नेक और समझदार लोग ही नेकी और समझ के क़ानून बना सकते हैं, और ऐसे क़ानूनों से ही दुनिया का भला हो सकता है. सच यह है कि जब इस तरह के ख़ुदा के बंदे दुनिया में क़ाफ़ी हो जायँ तो क़ानूनों और क़ानूनी लोगों की ज़रूरत ही बहुत कम रह जाती है. नैतिक (इख़लाक़ी) क़ानून जो हमारे दिलों में लिखे रहते हैं बाहर के किताबी क़ानूनों को अनावश्यक बना देते हैं. जिस तरह बीमारी को पहले ही से रोकना बीमारी आ जाने पर

इलाज करने से कहीं अच्छा है उसी तरह क़ानूनसाज़ी से ठीक तालीम देना कहीं ज़ियादे ज़रूरी है. अन्दर के स्वभाव से जो चीज़ निकलती है वह बाहर के डर या दबाव से कहीं अच्छी होती है. इसलिए तालीम का मोल बहुत अधिक है. तालीम देने वालों का मिशन बड़ा और ऊँचा मिशन है, सच्चा ब्राह्मण, सच्चा मौलवी और सच्चा रब्बी ही, यानी जन्म से अपने को ब्राह्मण, मौलवी या रब्बी मानने वाला नहीं बल्कि अपनी क़ाबलियत और अपने चलन से ब्रह्म, मौला या रब्ब का सच्चा सेवक ही, यानी केवल वह आदमी ही जिसने इस बात को समझ लिया है, कि एक ही परमात्मा, एक ही अल्लाह, सबके घट के अन्दर मौजूद है, केवल ऐसे आदमी को ही तालीम का काम और क़ानून बनाने का काम सपुर्द होना चाहिए. यह दोनों ज़िम्मेदारियाँ बड़ी पाक ज़िम्मेदारियाँ हैं.

उसी देश के लोग सुखी और .खुशहाल रह सकते हैं जिस देश में इस तरह के सच्चे ब्राह्मण, मौलवी या रब्बी काफी हों, जो अच्छे से अच्छे अर्थों में अपनी बातों से और अपनी मिसाल से दोनों से लोगों को ठीक तालीम दे सकें, वे लोग नहीं जिन्होंने धर्म या मज़हब को अपना पेशा बना लिया है और आदमियों आदमियों के बीच भेद भाव और नफरतें पैदा करते रहते हैं. इस तरह के देश में ही सच्ची 'समाजवादी सभ्यता' (Socialistic civilisation) पैदा हो सकती है. ऐसे देश में ही लोग बीच के सुनहरे रास्ते पर चलेंगे और सबको अधिक से अधिक सुख मिलेगा. तब ही लोग इस तरह की बातों को समझेंगे जैसे बाइबल का यह कहना कि "कोई आदमी केवल अपने लिए नहीं जीता, हम सब एक दूसरे के अंग हैं.....ईश्वर ने धरती की सतह पर रहने वाली सब क़ौमों को एक ख़ून से बनाया है" या वेद का यह कहना कि—"सब आदमियों का एक दूसरे के साथ वैसा ही संबंध है जैसा सिर, हाथ, पेट और टाँगों का एक दूसरे के साथ" या .क़ुरान का यह कहना कि "सब जानदार

अल्लाह का कुनबा हैं", या शेख़ सादी का यह कहना कि "आदम की सब औलाद एक दूसरे के हाथ पैरों की तरह है." तब ही व्यक्तिवाद और समाजवाद यानी इंडिविजुएलिज्म और सोशलिज्म में सच्चा समन्वय होगा.

चीन के पुराने फ़िलासफ़र व्यक्तिवाद को 'यांग चू' कहा करते थे जिसके मानी हैं 'हर एक अपने को सम्हाले' और समाजवाद को कहा करते थे 'मिहतेह' यानी सबसे एक बराबर प्रेम करो. इन दोनों असूलों को मिलाकर ही सच्चा समाज संगठन हो सकता है, यह दोनों मिलकर ही धरती पर मज़बूत और टिकाऊ 'अमन' क़ायम कर सकते हैं, क्योंकि इनसे ही लोगों में एक दूसरे के भले की इच्छा जाग सकती है. इस तरह के अल्लाह के बंदे ही लोगों में एक दूसरे के भले की इच्छा पैदा कर सकते हैं. इसके लिए उन्हें दो बातें करनी होंगी. पहली यह कि सब अलग अलग धर्मों की बुनियादी एकता और उनकी बुनियादी सचाइयों को सामने लाकर उनके मानने वालों में एक दूसरे के साथ प्रेम और एक दूसरे का आदर पैदा करें. और दूसरी यह कि सब धर्मों के निचोड़ के रूप में दुनिया को यह बतावें कि सच्चे समाज संगठन के असूल क्या होने चाहिएँ जिन पर चलकर सब लोगों की जायज़ ज़रूरतें और जायज़ इच्छाएँ पूरी हो सकें. हर एक को ठीक ठीक काम और ठीक ठीक मज़दूरी मिल सके, हर काम के लिए ठीक ठीक आदमी मिल सकें, और हमारे समाज की यह इतनी बड़ी मशीन इस तरह चल सके कि किसी के ऊपर उचित से अधिक बोझ न हो, कोई भूखा, नंगा या बिना घर के न रहे, और सबका सब तरह भला और सबकी उन्नति हो.

ऐ दुनिया के साइन्सदानो ! सबसे भारी ज़िम्मेदारी तुम्हारे ऊपर है ! तुम ही ज्ञान का पता लगाते हो और उसे फैलाते हो. वह ज्ञान दुनिया के भले के लिए काम में आना चाहिए. लेकिन इस समय वह दुनिया के बुरे के लिए काम में लाया जा रहा है ! इसलिए अपनी माद्दी साइन्स को रूहानी साइन्स से रोशन करो.

अपनी साइन्स के साथ परोपकार की पक्की भावना को मिला दो ! सब मिल जाओ ! लोगों को दिखला दो कि समाज संगठन का ठीक तरीक़ा क्या हो सकता है. तुमने अगर अपना यह फ़र्ज़ पूरा न किया तो मानव समाज मिट सकता है ! और यदि तुमने अपना यह फ़र्ज़ पूरा कर लिया तो मानव समाज बच सकता है, जी सकता है, और सब शांति और सुख के साथ रह सकते हैं.

४१

कहाँ भटके ?

हम दो छोटी और सुन्दर कहानियाँ नीचे देते हैं, एक हिन्दू धर्म की किताबों से और दूसरी इसलामी किताबों से.

छै अंधे एक ऐसी जगह पहुँचे जहाँ एक हाथी खड़ा हुआ था. वह हाथी के रूप के बारे में एक दूसरे से झगड़ने लगे. एक ने हाथी की दुम को टटोलकर कहा कि हाथी एक झाड़ू की तरह है. दूसरे ने हाथी की सूँड़ को टटोलकर कहा कि हाथी एक बड़े अजगर की तरह है. तीसरे का हाथ हाथी के कान पर पड़ा. वह कहने लगा कि हाथी एक बड़े छाज की तरह है. चौथे ने हाथी के पेट को टटोलकर कहा कि हाथी एक बड़े ढोल की तरह है. पाँचवें ने हाथी की टाँग को थपथपा कर देखा और कहा कि हाथी एक मोटे खंभे की तरह है. छठे ने हाथी के एक दाँत को छूकर कहा कि हाथी एक बड़े सोटे की तरह है. सबको अपनी अपनी बात का पक्का विश्वास था. हर एक दूसरे की बात को ग़लत मान रहा था. हठ और झगड़ा बढ़ने लगा. इतने में एक सातवाँ आदमी उधर से निकला. उसके आँखें थीं. वह देख और समझ सकता था. उसने उनमें से हरेक को समझाया कि हाथी उन सबके अलग अलग ख़यालों का मेल है. उसने उन्हें यह भी बतलाया कि हाथी कोई बेजान मिट्टी या लकड़ी की चीज़ नहीं है. वह एक प्राणी है जो अपने इन सब अंगों से काम लेता है.

इसी तरह हमारी सब अलग अलग जड़ साइन्सें इस भौतिक दुनिया के किसी एक पहलू से वास्ता रखती हैं. दुनिया का हर मज़हब आत्मा या परमात्मा की किसी एक सिफ़त या एक पहलू पर ज़ोर देता है. लेकिन वह चीज़, जिसे हम तसव्वुफ़, वेदान्त

और ज़िन्दगी की असली फ़िलोसोफी कहते हैं और जिसे मज़हबी साइन्स या साइन्सी मज़हब भी कहा जा सकता है, वह इन सब धर्मों के अलग अलग पहलुओं को मिलाकर उनका संगम या समन्वय करती है.

दूसरी कहानी यह है—

चार मुसाफ़िर, एक रूमी, एक अरब, एक ईरानी और एक तुर्क ज़िन्दगी की सड़क पर साथ साथ चले जा रहे थे. रेतीली, पथरीली, कँटीली, कहीं बरफ की तरह ठंडी और कहीं जलती हुई राहों पर चलते चलते उन चारों को भूख और प्यास सताने लगी. उन्हें किसी ऐसे खाने की ज़रूरत थी जिससे उन्हें शांति और शक्ति मिले. वह एक दूसरे की बोली नहीं समझते थे. उँगलियों से इशारा करके उन्होंने अपने चारों के पास के सब दाम दिरम जमा किए, इसलिए कि उससे कुछ खाना ख़रीदें. पर सवाल हुआ कि क्या चीज़ ख़रीदी जाय. अरब ने कहा कि 'अनब' ख़रीदा जाय. तुर्क ने गुर्राकर कहा 'उज़म' ख़रीदो. ईरानी ने कहा 'अंगूर' ख़रीदना चाहिए. रूमी ने कड़क कर कहा 'अस्ताफील' लिये जायँ. वे झगड़ने लगे. आँखें लाल हो गईं. मुट्ठियाँ मिचने लगीं. हाथापाई की नौबत आ गई. इतने में एक फेरी लगाकर फल बेचने वाला पास से निकला. इस तरह के फेरी लगाने वाले आम तौर पर बहुत सी ज़बानों के ख़ास ख़ास शब्दों से वाक़िफ होते हैं. उन्हें तरह तरह के गाहकों से वास्ता पड़ता है. उन चारों के बीच में जाकर उसने अपना टोकरा जिसमें जीवन का मेवा भरा हुआ था उनके सामने खोलकर रख दिया. मुट्ठियाँ ढीली पड़ गईं. आँखें नरमा गईं. आवाज़ में मिठास आ गई, चेहरे मुस्कराने लगे. चारों को उस टोकरे के अंदर अपनी दिलचाही चीज़ दिखाई दे गई. अरबी 'अनब', तुर्की 'उज़म', ईरानी 'अंगूर', रूमी 'अस्ताफील', पहलवी 'दाख', संस्कृत 'द्राक्षा' और अंगरेज़ी 'ग्रेप' सबके एक ही मानी हैं, सब एक ही मीठे फल को ज़ाहिर करते हैं.

हम में से हरेक ने दूसरों को बाहर रखने के लिए अपने चारों तरफ़ एक दायरा खींच लिया है. हमारे अपने दायरे से बाहर सब हमें नास्तिक, क़ाफ़िर, म्लेच्छ और ग़ैर दिखाई देते हैं. प्रेम ने ज्ञान के साथ मिलकर एक बड़ा दायरा खींचा जिसके अंदर सब छोटे दायरे समा गए. सूफ़ी कहता है—

"फ़क़त तफ़ावत है नाम ही का,
"दर अस्ल सब एक ही हैं, यारो !
"जो आबे साफ़ी कि मौज में है,
"उसी का जलवा हबाब में है !"

यानी केवल नामों का फ़रक़ है. ऐ यारो ! हक़ीक़त में सब एक हैं. जो साफ़ पानी दरिया की लहर में चमक रहा है उसी की चमक बुलबुले के अंदर भी है.

प्यारे भाइयो और बहनो ! कहाँ कहाँ से, कोई दूर से और कोई नज़दीक से आकर हम यहाँ ज़िन्दगी की राह पर मिल गए हैं. हम सब भूखे और प्यासे हैं. सबको उस खाने और उस पानी की ज़रूरत है जो हमें सच्ची ज़िन्दगी दे सके. वह खाना और पानी 'प्रेम' है. यह प्रेम आदमी के अपने अंदर उबलता है, पर उस समय उबलता है जब आदमी इस बात को महसूस करने लगे कि एक ही जान, एक ही परमात्मा सब जगह और घट घट के अंदर मौजूद है. पर हममें से बहुत सों के अन्दर अभी सच्ची प्यास की कमी है.

मौलाना रूम ने कहा है—

"पानी मत ढूँढ़, पहले अपने अंदर प्यास पैदा कर. जब सच्ची प्यास पैदा होगी तो पानी अपने आप तेरे आगे और पीछे, ऊपर और नीचे, फ़व्वारों की तरह फूटने लगेगा."

बड़े लोग जिनके दिल दया और प्रेम से लबालब भरे थे, जिनके लिए कोई ग़ैर न था, बड़े बड़े धर्मों की पाक किताबों को लिखने और तरतीब देनेवाले, जो अब भी हमेशा प्रेम के साथ मनुष्य जाति पर उसी तरह निगाह रखते हैं जिस तरह माएँ अपने छोटे बच्चों पर निगाह रखती हैं, वे बड़े लोग हमारे

लिए जीवन के अच्छे से अच्छे मेवों और मीठे से मीठे फलों के बाग़ लगाकर छोड़ गए हैं, उनकी लगाई हुई अंगूरों की बेलें बारहमासी बेलें हैं. उनके अंगूर जितने अधिक तोड़े जावें उतने ही फलते और बढ़ते रहते हैं. उनकी इन सदा-बहार बेलों से हमने कुछ गुच्छे चुनकर जमा कर दिए हैं, ताकि सब उनमें बराबर का हिस्सा बटा सकें, सब उनका आनन्द ले सकें. और जब कभी हम बाहर परदेस जावें या अपने अपने घरों को लौटें तो इन फलों की मिठास हमारी ज़बानों और हमारे होठों पर बनी रहे. हम जहाँ जावें इस एकता और प्रेम के सुन्दर बीज हमारे साथ हों और हम यहाँ वहाँ और सब जगह इन बीजों को बखेरते रहें.

एक हिन्दुस्तानी संत ने कहा है—

"अब हौं कासौं बैर करौं,
"कहत पुकारत प्रभु निज मुखते
"घट घट हौं बिहरौं,
"आप समान सबै जग लेख्यो,
"भक्तन अधिक डरौं,
"अब हौं कासौं बैर करौं."

कबीर साहब ने कहा है—

"घट घट रमता राम रमैया
"कटुक बचन मत बोल ! रे तोहे राम मिलेंगे."

एक अंगरेज़ कवि ने कहा है—

"So many castes, so many creeds,
"So many paths that wind and wind,
"When all that the sad world needs,
"Is the art of being kind !"

यानी "बहुत सी जात पात हैं, बहुत से अलग अलग धर्म हैं, बहुत से रास्ते हैं जिन पर लोग चक्कर खाते रहते हैं. पर इस दुखी दुनिया को जिस एक चीज़ की ज़रूरत है वह है सबके साथ प्रेम का बरताव !"

सबके साथ प्रेम का बरताव करना तभी आ सकता है जब हम मेहनत के साथ इस बड़ी सचाई को अपने दिलों और दिमाग़ों में जमा लें कि एक ही बे-अंत और व्यापक आत्मा हमारे अपने और सबके अंदर रमी हुई है. जीवन का एक समन्दर है जो लगातार बह रहा है. वही प्रेम है, वही ईश्वर है, प्रेम ही ईश्वर है, ईश्वर प्रेम है, क्योंकि ईश्वर सबके अंदर मौजूद है. इस एकता को अनुभव करना ही ईश्वर भक्ति या इश्क़े हक़ीक़ी है.

उपनिषद में लिखा है—

"यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः,
"तदा देवम् अविज्ञाय दुःखस्यांतो भविष्यति."

यानी "जिस दिन लोग सारे आकाश को एक चटाई की तरह लपेट कर अपने हाथ में ले लेंगे उस दिन ही बिना ईश्वर को देखे दुनिया के सब दुखों का अंत हो सकेगा."

सूफ़ी कहता है—

"शाद बाश ! ऐ इश्क़ .ख़ुश सौदाए मा !
"ऐ दवाए जुम्ला इल्लतहाए मा !
"ऐ इलाजे नख़्वतो नामूसे मा !
"ऐ तू अफ़लातूनो जालीनूसे मा !
"वेद, अवस्ता, अलक़ुरान, इंजीलनीज़,
"काबओ, बुतख़ानओ, आतशकदा,
"क़ल्बे मन, मक़बूल करदा जुमला चीज़,
"चूं मरा जुज़ इश्क़ नै दीगर .ख़ुदा !"

यानी—"ऐ मेरे प्यारे पागलपन, ऐ प्रेम ! .ख़ुश रहो. तुम ही मेरी सारी बीमारियों की दवा हो ! तुम ही मेरे घमंड और मेरी .ख़ुदी का इलाज हो ! मेरे अंदर के रोगों के लिए तुम अफ़लातून फ़िलोसोफ़र हो और तुम ही मेरी बाहर की बीमारियों के लिए जालीनूस हकीम हो ! वेद, ज़िंद अवस्ता, क़ुरान, इंजील, काबा, बुतख़ाना और आतशकदा, मेरे दिल ने इन सबको अपना लिया है, चूंकि मेरे लिए अब सिवा 'प्रेम' के और कोई मज़हब ही नहीं रहा."

शेख़ सादी ने अपनी मशहूर किताब 'मामुक़ीमां' में लिखा है—

"ताबे आमोख़्तेम अबजदे इश्क़
"रक़मे ग़ैर अज़ीं नमी दानेम
"कि बचश्माने दिल मबीं जुज़ दोस्त
"हरचे बीनी बिदां कि मज़हरे ओस्त
"चूँकि वाक़िफ़ शुदेम ज़ परदयेराज़
"दम बदम ईं तराना मी गोयेम
"कि बचश्माने दिल मबीं जुज़ दोस्त
"हर चे बीनी बिदां कि मज़हरे ओस्त !"

यानी—"जब से हमने प्रेम की अलिफ, बे. ते. पढ़ी है तब से सिवाय इसी एक बात के और कोई बात हम जानते ही नहीं कि दिल की आँखों से किसी को भी सिवाय दोस्त के और कुछ नहीं देखना चाहिए. जो कुछ तू देखता है समझ ले कि सब उसी एक ईश्वर का जलवा है. जब से हम भेद के परदे से वाक़िफ़ हुए हैं तब से हर दम हम यही राग गा रहे हैं कि दिल की आँखों से किसी को भी सिवाय दोस्त के और कुछ नहीं देखना चाहिए. जो कुछ तू देखता है समझ ले कि सब उसी एक ईश्वर का जलवा है.

'वर्ल्ड फेलोशिप आफ फेथ्स' में जो गाना सब धर्मों की तरफ से गाया गया था उसका मतलब यह है—

"दुनिया के सब रहनेवाले भाई भाई हैं !
"सबके भले में हरेक का भला है.
"सबका निकास एक से है, एक ईश्वर सबका ईश्वर है.
"एक क़ानून सबके ऊपर है.
"एक मंज़िल सबके सामने है.
"एक जीवन सबको लपेटे है.
"सबका रास्ता प्रेम है.
"लोभ, लालच, डर, घमंड और नफ़रत

"इन्होंने बहुत दिनों हमें वीरान किए रखा,
"इनका राज अब ख़तम हुआ.
"नसल, रंग, संप्रदाय और जात पात,
"सब एक बीते हुए बुरे सपने की तरह मुरझा गए.
"आदमी ने आख़िर जागकर यह सीख लिया
"कि सबके अंदर एक ही जान है !"

उस जलसे में सबकी तरफ़ से नीचे लिखी प्रार्थना की गई थी—

"अमन और .ख़ुशहाली लोगों में फिर से वापस आ जाएँ !
"सब मिलकर काम करें, एक प्रेम सबको बाँधे हुए हो !
"एक भाई चारा सबको लिए हुए हो, सबको धीरज हो !
"सबमें आत्म संयम का बल हो !
"सब एक दूसरे की पिछली बातों को भूल जाएँ,
"सब सबके भविष्य को बनाना अपना पाक फ़र्ज़ समझें,
"अमन और .ख़ुशहाली सब में लौट आवें !"

.क़ुरान में ईश्वर से प्रार्थना की गई है—

"एहदेनस् सिरातल् मुस्तक़ीम"

यानी—"हे ईश्वर ! हम सबको सीधी राह दिखला."

वेद में लिखा है—

"अग्ने ! नय सुपथा !"

यानी—"हे ईश्वर, हमें सीधे रास्ते पर ले चल !"

महाभारत में लिखा है—

"सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु !
"सर्वः सद्बुद्धिमाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु !"

यानी—"सब अपनी अपनी कठिनाइयों को पार कर सकें, सबको भलाई ही भलाई दिखाई दे, सबको नेक समझ हो, और सब सब जगह .ख़ुश रहें !" यही सीधा रास्ता है.

ओम् ! आमीन ! एमन !

शब्दानुक्रमणिका

अ
अंगरेज़ी १२०, १४३
अँधेरी दुनिया १२७
अकबर ५५
अग्निपुराण २९५
अग्निहोत्र ३०२
अजया गायत्री २७९
अज़राईल १३८
अजाज़ील १०५, २१९
अतिवाहिक १४१
अथर्ववेद ३३६
अद्वैत ७४, १६१
अद्वैतवाद १०४
अध्यात्मिक ५१
अनाहतनाद २७२
अनेकान्तवाद ३८
अन्तर-दृष्टि ११६, २०५
अन्तरप्रकाश ३८५
अन्तरात्मा ८१
अपरा विद्या ७९
अपरिग्रह १७४, २०३
अपरोक्ष ८०
अपरोक्ष ज्ञान ८१, ८२
अफ़लातून १२६
अबा ५९
अबुदाउद १४८
अबु बिन अधम ३८१
अबु मुस्लिम १२५
अब्दुल क़ादिर ५६
अभितन्य ४३
अभिनिवेष २२०
अमर जीवन १७६, ३६७
अमर वारुणी २७२
अमरीका ५०
अमृतचन्द सूरी ३८
अमेश स्पन्द १३७
अरबी १२०, १६२
अर्जुन ५३
अर्जुन-कृष्ण २३४
अर्थ १५२
अर्थनीति ३९७
अर्थशास्त्र ४१७, ४२३
अर्द १३७
अर्हत २०, १५९
अल-मुज़िल ४२
अलहादी ४२
अल्लाह ४०, १६१
अवतार २०, १५७, १५९
अवशीय ५९
अवितन्य ४३
अविद्या १६४, २०१, २२०
अव्यक्त ४२
अशरफुल मख़लूक़ात १२५
अष्टावक्र ८३
असली ज्ञान २८६
असली यमराज १३४
अस्मिता त्याग ६९
असली जीवन ३१८
असली धर्म ५६
असली प्रेय २४७
असली मुक्ति २११
असली श्रेय २४७
असुर ३२, १३७
असुर-मेधा ४३

अस्तेय २३४
अहमद बिन यबूस १२५
अहमद बिन साबित १२५
अहुरमज्द ४३, ५६
अहो वैराग्य २८४

आ

आइन्सटीन डा० ४०६
आग १३७
आगम ८२
आचार्य ३२२
आत्म अद्वैत सत्ता ५८
आत्मज्ञान ७८
आत्मतुष्टि २९४
आत्मत्याग २६५
आत्मबल ४३८, ४४०
आत्मा ३०, ३८, ६७, ९५, १०३, १०४, १२३
आत्मा की खुराक ३२५
आधिभौतिक १४१
अध्यात्मविद्या ३९८
आनन्द १६६
आयुर्वेद ३४५
आरीगन १२७
आर्डर एस० एडिंगटन ३०
आर्थर एच० कौम्पटन ३०
आर्य ६३
आर्य धर्म ६९
आर्य समाज ३६६
आलमे कबीर १४३
आलमे सग़ीर १४३
आवरण २०३, ४३५
आसन ४९२
आहारसंज्ञा २०२

इ

इङ्गलैण्ड २६, ५००
इञ्जील १५, १६, १८, ३६, ४०, ५३, ६३, ६५, ७५, ७६, ७७, ८२, ८९, १०८, ११०, १११, ११७, १२१, १२४, १३१, १३२, १३३, १४१, १४५, १४६, १४९, १५९, १६१, १६३, १६८, १७२, १७८, १८४, १८६, १९३, १९५, १९७, १९८, २०४, २०६, २१२, २१९, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२९, २३०, २३६, २४०, २४३, २४८, २५९, २६३, २८१, २८२, २९५, ३०२, ३०५, ३०७, ३१७, ३१८, ३२०, ३४३, ३६७, ३६९, ३७२, ३७३, ३७६, ३७७, ३८०, ३८७, ३९१, ३९३, ३९५, ४००, ४३७
Ecclesiastics १७९
इक्ष्वाकु ५३
इच्छा ४५
इटली ५०
इतोंगगो १२८, १२९
इनक्विजिटर ४३९
इनसानी भाईचारा ३६१
इनसानी संगठन २५
इनसाने कामिल १५९
इनाजो नितेबे ३८
इन्टरनेशनल कौंसिल आफ साइन्टिफक युनियन्स ४१०
इन्टरनेशनलिज्म ३४
इन्द्र १०५
इन्द्रीसुख ७४
इबरानी १६२
इमर्सन ४२९
इम्पीरियलिज्म ५०
इसराफ़ील १३८
इसाया ३१७, ३१८

इसलाम १२, ६७, ११५, १४६, १५७, १६६, २५६, ३०९, ३२२, ३५४, ३५८, ३६६
इसलाम धर्म ३९८

ई

ईरानी १२९
ईशोपनिषद् १२७
ईश्वर १६१
ईश्वर का मन्दिर ७७
ईश्वर का राज १००, २२५
ईश्वर की पूजा ३९३
ईश्वर प्रणिधान २३३
ईश्वर प्रसाद २२८
ईश्वर भक्ति २५३, ४४८
ईसा १७२, १७४, १८४
ईसाई १६६, २१६, २३४, २८८, ३१४, ३१९, ३२२
ईसाई धर्म १४६, १७४, २००, २५६, ३०६, ३५८, ३६६, ३९८, ४३९
ईसाई मत १२
ईसाई मज़हब १४४

उ

उपदेव १३७
उपनयन ३१४
उपनिषद् १६, २७, ५१, ७०, ७५, ७६, ७७, ८०, ८१, ८३, ८५, ८६, ९०, ९४, १००, १०५, १०६, १०७, ११९, १४१, १४५, १५४, १५८, १६६, १९५, २०५, २१०, २११, २१२, २१४, २२०, २२६, २३०, २४३, २४६, २८४, ३८६, ४०२ ४३९, ४४८
उपवास ९६, ३२४

ऊ

ऊर्ध्वगति २२३
ऊर्ध्वमार्ग १०१, १७६

ऋ

ऋग्वेद १५४, १९८, ३३५
ऋतम् १०७
ऋषि २०, ५३, २८२
ऋषि ऋण २५२

ए

ए० एस० एडिंगटन २८
एक्लेजियास्टिक्स ५३
एच० ई० आर्मस्ट्रोंग ४०६
एच० जी० वैल्स ४२१
एडवर्ड सेगुइन ४२८
एडविन आरनाल्ड १७०
एनशियन्ट वरसेज़ माडर्न साइन्टिफ़िक सोशलिज्म ३२८
ए प्लुरैलिस्टिक यूनिवर्स १४५
एलफ्रेड सरल वैलेस २९
एल्बर्ट आइन्सटाइन
ए शार्ट हिस्ट्री आफ दी वर्ल्ड ४२१
एशिया धर्म २१, २२, २४

ऐ

ऐक्सटेनशन आफ़ फैकलटी १३६
ऐपीक्यूरस २४५
ऐरोगन १२७
ऐसेज़ आन सम कनट्रोवरटेड क्वेशचन्स १५०
ऐस्सेनीज़७८

ओ

ओलिवर लाज २७, १५१

औ

औसीरस ३७०

क

कंगफ़ूत्ज़े ३७, ४३
कठ उपनिषद् २४६
कन्फ़ूशियन १३३

कन्फ्यूशियन धर्म १२ २१ ६१ ११६, १८४, १८७, १८८, १९१, २०७, २०९, २२४, २२८, २९१, ३९८, ३९९
कन्फ़ूशियस २३४
कबीर साहब २१३, २१८, २३१, २४०, ३६६, ३७०, ३७९, ३८९
क़ब्बालह १२६
क़ब्वाला १२४
कम्युनिज़्म ५०
कम्युनिस्ट ५०
करुणा ९९, १००
कर्म ४५, ९६, ३८६
कर्मकांडी ७९
कल्याण का रास्ता १८६
कवि सूरदास २२१
कश्यप २१९
कांगफ़त्ज़े ५२
काम ३१५
कामतृष्णा २०२
काम संकल्प १६४
कीमिया की साइंस
किमोनो ५९
कुरान १६, १८, ३७, ३८, ४२, ४३, ५३, ५४, ७८, ७९, ८८, ९४, १०६, १०७, ११०, १११, ११२, ११६, १२१, १२२, १३२, १४२, १६४, १६७, १७०, १७२, १८६, २०८, २१८, २२३, २२८, २५८, २८१, २८७, २९३, ३०४, ३१९, ३७०, ३७४, ३८३, ३८६, ३९१, ४४०, ४४१, ४५०,
कूटनीति २३
कृष्ण ३६, ५२, ५३, ७१, ९६, १११, ११३, १२१, १४७, १५५, १६७, १७९, २०५, २३४, २९५, ३५०
कामधेनु गाय ६७
कार्डिवेल न्यूमैन २४८
कैलडिया १२६
कोआंगत्जे १३३
क्राइस्ट १५९
क्रिया अद्वैत ३८६
क्रिश्चियैनिटी ६२
क्रीएटिव एवोलूशन १४६
क्रूरता १००
क्रोध ३१५
क्लीमैन्स एलेगजैन्ड्रिनस १२७
क्वांगत्जे १९४, १९७, १९९
क्वान यन-त्से १०९
क्वानयिन ३०६
क्षत्री ३३३, ३३५, ३५०, ३५३
क्षुद्रविराट १४०, १४३

ख

ख़लीफ़ा अली ८२
ख़ुद ग़रजी ३३
ख़ुदी २४
ख़ुरासानी १२५
ख़्वाजा ख़ाँ १४५

ग

गज़्ज़ाब ४२
गन्धर्व १३७
ग़फ़्फ़ार ४२
गरुड़ पुराण १३२
गाथा ५२, १०६, १२४, १३३, १८०, १९३, २१९, २२५, २३८, ३३४
गायत्री मंत्र २७९
गालगोथा २१२
गिआरडानो ब्रूनो १२७
गिबन १२७

गीता ३६, ४१, ५२, ६३, ६७, ७५, ७९, १११, १४३, १४७, १५५, १६०, १६५, १७९, १८६, १९१, १९७, १९८, २००, २०१, २०२, २०५, २०८, २१४, ११५, २३४, २३८, २४०, २६२, २७०, २८७, २९२, २९५, ३४२, ३५०, ३५३, ३६९, ३७२, ३७९, ३८०, ३८३, ३८७, ३८९, ३९१, ४००, ४३७
गुप्त विद्या ८०
गुरु गोविन्द सिंह ९१, २८७
गुरुनानक ३०८, ३६६
गुलशनेराज़ ७०, १३५, २०१, ३००
गृहस्थ ३३३, ३५१
गेटे १२७
गोमेध ३१५
ग्नोस्टिक सम्प्रदाय १५४
ग्रन्थ साहब १९, २८७, ३०८
ग्रास्टिक १२७

घ

घमण्ड १००
घरेलू जीवन ४१८, ४२३

च

चरक ९६
चान्द्रायण व्रत ३११
चार आश्रम ३५०
चार ख़ास फर्ज़ ३३१
चार जमाअत ३३४, ३३५
चार तरह का पेशा ३२८
चार तरह का कर्ज़ा ३३९
चार तरह की इच्छाएँ ३३०
चार तरह की आमदनी ३२८
चार तरह की ख़ुराक ३२९
चार तरह की भूख ३२९
चार तरह की शक्तियाँ ३३०, ३३७
चार तरह के आदमी ३२८
चार तरह के कर्तव्य ३३०
चार तरह के संगठन ३३१
चार तरह के सामान ३२९
चार हालत १२४
चारों कर्ज़ों को अदा करने के चार तरीक़े ३३२
चार्ल्स डारविन २९
चार्ल्स बौनेट १२७
चित १६६
चित्त परिकर्म २२२
चित्त प्रक्रमा ४९२
चित्त प्रसादन २२२, ४९२
चित्त शक्ति ५०
चित्र ९८
चित्र गुप्त ९६, ९८, ३९६
Chips from a german work-shop ३२२
चीन ५२, १२०
चीनी धर्म १०९
चेतन ३६६
चेतन शक्ति २९
चैलमीडियस १२७
चोहन २१६
चौदह भुवन १४०

छ

छुआ छूत २२
छै दुश्मन २००
छै साधन २००
छान्दोग्य उपनिषद् १८२

ज

जगल १३७
जडवाद १०७, ११७
ज त १३७
ज़रतुश्त ४१, ८१
ज़रतुश्ती ३९८

ज़रथुस्थ्र १८०
ज़रथुस्ती ८२
ज़रथुस्त्री १२९
ज़रथुस्त्री यानी पारसी मत १२
जलवा ४४९
जहूदी १२०
ज़हूर ३०
जातपात २५
जाति भेद ३२४
जानवरों की हत्या ३१६
जापान ३७, ६१
ज़ामी १४१
जितेन्द्रिय १७९
ज़िन्दावस्ता ३१५
जिन्नात १३७
जिबराईल १३८
जिस्म १४०
जिस्मे कसीफ़ १४१
जिस्मे लतीफ़ १४१
जीवनमुक्त १५९, १६३, २१०
जुहर १२४
जूलू धर्म १४०
जे० ई० कारपेन्टर ६०, ४२५
जे० ए० टामसन ३०
जेन्दअवस्ता ७०
जे० बी० एस० हैलडेन २९
जेम्स जीन्स २७
जैन २१, ९०, १२०, १२१, १७१, २१६, २५६, ३१६
जैन तत्त्वार्थ ७०
जैनधर्म १२, ८२, १०९, १४०, १४७, १५३, २०२, २८५, ३५०, २६६
जैनी २१६, ३१९
जोजेफस १२७
ोहर १२६, १४४, १५५, १६२
ज्ञान ४५, ५२, ७९, १००, ११६, १२९, १६९, ३६३, ३८६
ज्ञान कांड ७३
ज्ञान का सोता ३८५
ज्ञान की कुंजी ७९
ज्ञानमार्ग ७०, २७५
ज्ञान योग २७६, २७७
ज्ञानार्णव १५५, १७१
ज्ञानी ६३, १२१, १५५
ज्योतिर्मय १०४
ज्योतिष ३४५

ट

टियोटोनिक क़ौमो १२९
टी० एच० हक्सले १५०
टेनीसन २०२
ट्रेज़र हाउस आफ़ लिविंग रिलीजन्स १३

ड

डा० इनाज़ो नितोबे ६१
डा० डब्लू० रीज़ ४२१
डा० रीज़ ४२२
Decline and Fall of the Roman Empire १२७
डेमोक्रेटिज्म ५०
डेलफ़िक टेम्पिल ४१

त

तआस्सुबी ३९
तलमूद १४४
तलमूद १४५
ताओतेहकिंग ७५, ९०, १५५, ३७३ ४३४
ताओधर्म ६९, ९०, ११२, १४७, १६६, १९२, २०९, २२४, ३८०, ३९८, ३९९
तानसेन २९९
तारक ४२

तिरमिज़ी ६४
तुलसी दास ३६६, ३९९
तोगा ५९

द

दस शील १७२
दर्शनशास्त्र २४, ३४, ३४५, ३९८
दर्शन ९
दारेषणा २०२
दासानुदास १६०
The Ancient Wisdom in Africa.
The Encyclopedia of Religions and Ethics
The Encyclopedia of Islam १३०
दिक पाल १३८
दि ग्रेट डिज़ाइन
दि न्यू बैकग्राउन्ड आफ साइन्स २८
दि बाइबिल आफ़ बाइबिलस १३
दि बुक आफ दी डेड ३८७
दि प्लेस आफ क्रिश्चियानिटी अमंग दि रिलिजन्स आफ दि वर्ल्ड ४२५
दि प्लेस आफ क्रिशचियानिटी इन दी रिलीजन्स आफ दि वर्ल्ड ६०
दि फ़िलासफी आफ इसलाम १४५
दि मिस्टीरियस यूनिवर्स २८
दिल १४०
दि लाइट आफ एशिया १७१
दिवाली ९६
दिव्य ज्ञान ८०
दिव्य दृष्टि ३८५
दिव्य पुरुष १५९
दिव्य शक्ति १३७
दि साइन्स आफ दी सेल्फ ३२८
दि साइन्स आफ़ सोशल आरगेनीजेशन ३२८
दि स्टोरी आफ़ ह्यूमन रेस ३६३
दीक्षा ३१३
दीनता १००
दुई ३९५
दुर्गा सप्तशती १४८
देव १३७
देव उठान ९६
देव ऋण २५२
देवशयनी ९६
देवी भागवत १०८
दैत्य १३७
दैवी वीणा २७२
दो असूल २०९
दोज़ख १३७
दो तरह का इश्क २५३
द्यौपितर २८८
द्वन्द्व ४१, ११६
द्वैत १६१
द्वैत मिथ्यात्व ५८

ध

धन शक्ति ३३६
धम्मपद ७०, १९२, १९४, १९५, १९७, १९८, ३४९, ३७२, ३७५, ३८८
धर्म २६, ३५, ६३, ६५, ६६, ६९, १५२, ४१७
धर्म का इत्र ६७
धर्म का निचोड १९०
धर्मकाम १४०
धर्म का रास्ता ६९
धर्म का सार ६६
धम रक्षा ९६
धार्मिक गुरु ३२१
ध्यान चोहन २१६

न

नफ़त १४०
नफ़ेश १४०
नफ़से अम्मारा १४१

नफ़से जारी १४१
नफ़से मुक़ीम १४१
नफ़से मुतमइन्ना १४१
नफ़से मुलहिमा १४१
नफ़से रहमानी १४१
नफ़से लव्वामा १४१
नबी २०, २८२
नम्रता १०६
नरक १३७, १८२
नाम के ब्राह्मण ७९
नारद १०५
नास्तिक ४४६
निःश्रेयस १५३, २५१
नित्य ६३
नियम १७२, ४९२
निरहंकार २३३
निरुक्त ३७२
निरंजन ९०
निर्गुण ८९, २३१
निर्जला एकादशी ९६
निर्माण काय १४०
निर्वाण २४७
निर्विकल्प-समाधि ४९२
निर्विशेष ८९
निर्वेद १०२
नूसमा १४०
नेचर ४०६
नैतिक ५०, ४४०
नैतिक गुण ४१२
नैयायिक १०८
नैशनलिज्म ३४

प

पंचशील १७०
पंडा ३२२
पतित पशेमानी ३८०
पतंजलि १७३
परिग्रह संज्ञा २०२
पाँच असूल १७२
पाईथागोरस १२६
पाप ११३, ३२२
पारसी गाथा १५५, १५८
पारसी धर्म २१, ५२, ७०, ८८, १२०, १३८, १४७, १८६, २०६, २१६, २१८, २२५, २३०, २४५, ३१४, ३२२, ३५७
पार्लियामेंट्स आफ रिलिजन्स ४१०
पितृ ऋण २५२
पुनर्जन्म ९६, १२१, १२५, १२६, १२७, १२९, २९३
पुजारी ३२२
पुराण १२३, १४५, २११, ३७९
पुरोहित ३२२
पुरोहितों ७९
पूर्ण पुरुष १५९
पूर्णानन्द २४३
पैगम्बर कनफ़्यूशियन १९, २०, ५२, १५७
पैट्रिक बौविन १२८, १२९
प्रतिभा ज्ञान ८०
प्रेम का महल १५४
प्रेम धर्म ३६६
प्रो० क्रू ४०७

फ

फ़क़ीर ३२२
फ़रशार १३७
फ़रिस्ते १३७
फ़ासिज्म ५०
फ़ासिस्ट ५०
फ़िदा १३८
फ़िरिश्ता १३८
फ़ैकनर १४५
फ़ौजी १४८

फ़ैरेडे १४१
फ्रन्क एल० रिले १३

ब

बरट्रंड रसल ८६, ४०६
बरनोऊ ५९
बर्गसन १४६
बाँझ विद्या १००
बाइबिल १७२, १७५, १७६
बायज़ीद बुस्तामी ८३
बायोलोजी ३४५
बिम्बसार ३१६
बुक आफ़ दी डेड ३७१
बुद्ध २०, ३८, ५२, ५३, ८२, १०८, १२६, १४९, १५९, १७२, १८६, १९१, १९७, २१२, २१६, ३०७, ३८९
बुद्ध धर्म १९४
बुद्ध भगवान १९६
बृहदारण्यक उपनिषद् २५७
बैतुल्लाह ३२१
बैरागी ३२२
बोधिसत्त्व १५९, २१६
बौद्ध २१, १०८, १२०, १२१, १४०, १६२, १६६, २१६, २५६, २८१, ३२२
बौद्ध ग्रन्थ १७३
बौद्ध धर्म ६१, ६२, ७०, ८२, १०५, १३८, १४६, १५३, २०२, २०३, २४५, २४६, ३६६, ३७७, ३९८, ३९९, ५५७
बौद्ध भिक्षु १७२
बौद्ध मत १२
ब्रह्म ६०, ७४, १०८, १२०, १२४
ब्रह्मचर्य ८२, १७३, २०३, २०८, २३३, २३४, ३५१
ब्रह्म निर्वाण ३९६
ब्रह्मपुरी ३०२
ब्रह्मभून २१०
ब्रह्मरन्ध्र २५४
ब्रह्मा १०८
ब्रह्माण्ड १४०, १४३
ब्रह्मानन्द १६९
ब्राह्मण ३३३, ३३५, ३५०, ३५३
ब्रिगेडियर जनरल एफ० पी० क्रोजियर ३३
ब्रिस्टल २६

भ

भक्ति १६९, २०३, २३१, ३८६
भक्तिमार्ग ७१, १६९, २२२, २४२, २४८, २७१
भक्तिभोग २७६
भगवद्भक्ति १६९
भव ४२
भविष्यपुराण ३५०
भागचन्द्र ११३
भागवत ५७, ६९, ७९, ८५, ८७, १२३, १७५, १७९, १९६, २१४, २२३, २३४, २३८, २४६, २६३, २७६, २९३, ३२०, ३८८
भाव अद्वैत ३८६
भिक्षु ७०, २५६
भुवन १३७
भूतृष्णा २०२
भूधर ९०
भेदबुद्धि ९८, २०८
भौतिकवाद १०७

म

मण्डलेश ३२२
मण्डारिन कोट ५९
मन्त्र दर्शन ३८५
मकर स्नान ९६
मक़ला १५७

मज़हब ५०
मज़हबी २५
मज़हरे अतम्म १५९
मज्झिम पतिपदा ३८
मठाधीश ३२२
मत्ती की इञ्जील ३६९
मदर जूलियन २४३
मध्यम मार्ग २१०
मध्यमिका कारिका ८९
मनकन मेज़ी १२८
मनीशियन फ़िरक़े १२७
मनु ३४२
मनुस्मृति १७०, १८०, १८४, १८५, १९२, १९३, १९७, २०३, २५२, २६७, २९२, ३७२, ३७४, ३७६, ३८६, ३८७, ३८९, ४३१, ४३५, ४३६, ४३८
मसनवी ६४, ३६५
मसीयाह २०
मसीह १५९, २८२
महन्त ३२२
महाकरुणा १०२
महात्मा १५७
महात्मा लाओत्ज़े ३७
महाबीर ५२, ५३
महाभारत ३७, ३९, ४१, ६३, ७०, १२१, १३२, १३४, १९३, १९४, १९६, १९८, २०६, २११, २२०, २३६, २५७, २५९, ३१६, ३७३, ३७४, ३७६, ४८४, ४०२, ४५०
महामङ्गल सुत्त १८६
महावग्ग १३३
महावाक्य ७८
महाविदेहा १४२
महा विराट १४०, १४३
महावीर स्वामी ३४८
माइका ३१८
माइक्रो काज़म १४३
माटीवाद १०७
मानवता ३४
मानवधर्म १०, १२, ५१, ६०, ६८, ६९, ३४६, ३५४
मानव धर्म का रास्ता ७२
मानसिक शक्ति का फैलाव १३६
मामुकीया ९०, १५६, १६५, २२१, ३६७, ४४९
मायावी ११४
मार १०५
मायी ४२
मिकाइल १३८
मिनरवा २८८
मिशना ३७९
मित्र १२९, १६३
मिस्री धर्म १४०, ३७०
मीमांसा १०८
मुईनुद्दीन चिश्ती २७०
मुनि २१६
मुसलमान १४३, २१६, ३२२
मुसलमान सूफी १४०
मुहम्मद इक़बाल ४०१
मुहम्मद साहब ३८, ६४, ७६, ८१, ११०, १११, ११६, ११८, १२४, १४१, १६४, १६६, १६७, १७२, १७४, १७९, १८४, १८६, १८७, १९१, २१४, २२३, २३४, २४१, २६७, २९६, ३०१, ३०४, ३७३, ३७९, ३९०, ३९१, ४००, ४०२, ४३७
मूर्तिपूजा ३००, ३४३
मूर्ति या बुत ३४३
मूसा १७२, १८४

मैक्समूलर ३२२
मत्रेय १४९
मेथ्यु ३१७
मैनशियस १९४, २४०
मोक्ष २१४
मोक्ष का रास्ता २२१
मोजजा १३७
मौलाना अबुलकलाम अज़ाद ३५३
मौलाना जलालुद्दीन रूमी ६४, ४४१
मौलाना रूम ३२, ५२, ५५, ५७, ६४, १२३, १८५, २००, २०५, २७६, २९१, २९६, २९९, ३४२, ३६५, ३८४, ४०१, ४४६
मौलाना शौकत अली ३५३

य

याजक ३२२
यारसी ४१
यूनान ३८, ४१
यूनानी १८९
यूनानी धर्म १४०
यूनीवरसल रिलिजन ४६
यूरोप ३४, ३६०
येरुसलम १०५
योग २१, १००, १३९, ३१९
योगज ज्ञान ८२
योग भाष्य ४०, ३०७
योगवाशिष्ठ ८५, २६७
योगशास्त्र १७०, २०१, २१६, २२०, २२२
योग सिद्धि १३७
योगसूत्र १००, १४२, १७३, १७५, ३६६, ३९२, ३९४
योरप २३, २४, ३१, ६९, ७१
योरोप साइन्स
यौगिक ३८७
यौगिक ज्ञान ३८५
यज्ञ १३७
यजुर्वेद ३३६
यज्द १३७
यति ३२२, २५६
यम ४३, ९८, १३४, १७२, ३९२
यलो स्येन पार्क ३०३
यहूदी १२, २१, ४३, १२९, १४०, १४४, १४७, १६६, २८३, ३१६, ३५७

र

रसूल २०, ५४, ३०१
राक्षस १३७
राग २२०
राज १३८
राजनीति २३, ३९७
राजस भाव ११३
राबर्ट अरनेस्ट ह्यूम १३
राबर्ट ए० मिल्लीकान ३०
रामनवमी ९६
रामराज्य ६८
रामानन्द ३६६
रायल सोसाइटी २७
रिलिजन ६७
रिविलेशन आफ डिवाइनहूड २४३
री एजूकेशन २९३
रुअह १४०
रुद्र ४२, १४४
रूल आफ थ्री ७३
रूस ५०
रूह १४०
रूहानी उन्नति १४९
रेखा गणित ७३
रोमन कैथोलिक २१
रोमन्स २०४
रोमी १२९

ल

लाओत्सी मत १२

लाओत्से ४३, ४४, ५२, ६९, ७५, १५९, ३७०, ४३४,
लाओ-त्से किंग ३७०
लागडाट ३३
लीग आफ नेशन्स ४१०
ली-की ३७७
लू शुन यान ६२
लोक १३७
लोकपाल १३८
लोकमाता १८६
लोकेषणा २०२
लोभ ३१५
लौसिंग १२७
लौह १३७

व

वर्णाश्रम धर्म ९६, ३३३, ३५४
वर्ल्ड फिलासफी आफ फेथ्स ४२१
वर्ल्ड फेलोशिप आफ फेथ्स ४०९, ४४९
वशिष्ठ स्मृति ३७२
वांग यांग मिंग ८१
वानप्रस्थ ३३३ ३५१
वान हैलमन्ट १२७
वाममार्ग २५४
वाल्मीकि रामायण २२५
विद्यापीठ ३०२
विलयम जेम्स १४५
विलियम रौबर्टसन ३२
विष्णुपुराण २२१
वेन्देदाद ३१४
वेस्टकाट २६८
वैदिक ऋषि १८१
वैदिक धर्म ६९, ७०, १५३, १८५, २४४, २४६, ३१५, ३२४, ३२६, ३५७, ३६६
वैदिक मत १२
वैशेषिक सूत्र ४५
वैश्य ३३३, ३३५, ३५०, ३५३
व्यक्तिवाद ३९७, ४२५, ४४२
व्यास १९०, १९१
व्रत ९६

श

शंकर का अद्वैत ३६६
शंकराचार्य ४५, ११३, ११८, १७५ १८४, २२४, २७०, ४००
शक्तिपूजा २५४
शतपथ ब्राह्मण २२५
शब्दज्ञान ८२
शब्दों का जंजाल ३८४
शम्स तबरेज़ ८३, २७१
शान्ति २५
शान्ति ४४
शायर नज़ीर १५७
शारीरिक भाष्य १७५
शिन्तोधर्म ६१, ११८, ३९८, ३९९
शिन्तो मत १२
शियो १३०
शिव ४२, १०८
शिवमहिम्न १११
शिवपुराण ८३
शिवलिङ्ग ३०५
शीकिंग १०८, २२४
शुकिंग ५४
शुक्रनीति ४३९
शुद्ध अद्वैत ७४, ३८६
शुद्ध चैतन्य १६२
शुद्धता ३१४
शुद्ध बुद्धि ४१३
शुभवासना १०८
शूकिंग १३३, २०७
शूद्र ३३३, ३३५, ३५०, ३५३
शेख सादी ७७, ९०, १३१, १४२, १५६, १६५, २७९, ४९९
शैख्युल इशराक १२५

शैव १०८
शोतूकू ६१
शौच १७४
शौनक २३४
शौपनहावर १२७
श्रद्धा १११, २४०
श्रमण १७२, २५६
श्रमशक्ति
श्रावणी ९६
श्रुति २९४

स

संकल्प शक्ति १०१, २७७
संग्राम ३२
संत ३२२
संध्या ९६
सध्या उपासना २७१
संन्यासी ३२२, ३३३
संसार चक्र १२१
सस्कृत १२०, १२१, १६१, १६२
संहर्ता ४२
सगुण २३१
सच्चा आदम १२८
सच्चा ज्ञान १४४
सच्ची प्यास ४४६
सच्चा ब्राह्मण ४०४, ४१३
सच्चा भाईचारा ४३४
सच्चा मुनि २३८
सच्चा राजराज ४३३
सच्चा समाजवाद ४२९
सत्ता स्वराज ४३१
सच्चिदानन्द १५४
सच्ची आजादी ४३४
सच्ची दुनिया २७
सच्ची बराबरी ४३४
सच्ची बुद्धि १७०
सच्ची सभ्यता ४२९
सच्चे ज्ञान ९५
सच्चे ब्राह्मण ४४१
सत्ता सामान्य ९३
सत्यनारायण की कथा ३११
सत्यम् शिवम् सुन्दरम् ३९२
सत्यम् हितम् प्रियम् ३९२
सनातनधर्म ५६, ६९, १८१, १९४, २४७, ४००
सन्त सोलोन
समभोगकाय १४०
समाजवाद ३९७, ४२४, ४२५, ४४२
समाजवादी सभ्यता ४४१
समाज संगठन ४४३
समाधि शतक ३०७
सर जेम्स जीन्स १३५
सरमद २७२, २७३
सरूरे जावेदानी १५५
सहीद जस्टिन ५५
स्मृति २९४
स्रस्तु ४३
सांग आफ सांग्स २४८
साइकिकल १३७
साइको ऐनेलिसिस २९३
साइन्टिफिक २५
साइन्स २३, २४, २५, २६, ३१, ४४, ४५, ४९, ५०, ८०, ९५
सात अर्द्ध १४०
सात अर्श १४०
सात्विक भाव ११३
साधू ३२२
सामवेद १९९
सामासिक १७०
साम्यवाद ३९७, ४२४
सारनाथ ३२९
सारङ्गनाथ ३०२
सारङ्ग वन ३०२

सिख १२, २१, १२१, २१६, ३६६
सिदक १३८
सिनेसियस १२७
सिन्तो धर्म ३७
सिफ़ात ४३
सुक़रात १९८, ३६६
सुर्किंग ८१
सुख ४६
सुनहरा असूल २३४
सुर ३२
सुषुप्ति १४०
सूफी १७, ४०, ५३, ५५, ५८, ६२, ७४, ७५, ७८, ८५, ८८, ९३, ११७, ११८, ११९, १२५, १४०, १४४, १५५, १९६, १५९, १६०, १६१, १६४, १६५, १६७, १७५, १८५, १९२, २०१, २०२, २०३, २०५, २०६, २०८, २१०, २११, २१२, २१३, २१५, २१६, २१७, २२४, २२९, २३२, २३६, २३८, २४१, २४३, २४५, २४८, २५८, २६१, २६३, २६९, २९१, ३०६, २०८, ३१८, ३५९, ३७३, ३७४, ३७८, ३८०, ३८५, ३८६, ३८८, ३९०, ३९१, ३९३, ३९४, ४३५, ४३६, ३४६, ४४८
सूरतुलबरक़ १२५
सूरतुलमायदा १२५
सृष्टिकर्ता ७६
सेन्ट जाम्स १७९, २४९
सेन्ट टामस ३९९
सेन्ट पाल १५४, २१३
सेन्ट पीटर १७५
सेन्ट फ्रान्सिस ऐलोसी २२६
सोशल इनवाइरनमेन्ट एन्ड मारल प्रोग्रेस २९
स्याद्वाद ८९
स्यादवाद धर्म ११४
स्रष्टा ४२
स्वचित परीक्षा २५५
स्वप्न १४०
स्वर्ग १३७
स्वामी दयानन्द ३६६
स्वीडिनबर्ग १२७

ह

हकीम सनाई ४०१
हज़रत अली ६५, ७७, ९७, २६६, ३०१, ३०३, ३१९
हजरत ईसा ५२, ६५, ६९, ७९, ८२, ११७, १२१, १७०, १७१, १७५, १७८, १८१, १८३, १९०, १९३, १९६, २०३, २१३, २६३, २७९, ३०२, ३१४, ३६९
हजरत उमर ३०१
हज़रत जुनेद ३०९
हज़रत नूह २१२
हजरत मूसा ६५, १७१
हजुल असवद ३०३, ३०५
हजुल यमान ३०५
हदीस ३८, १४८, १७४, १८४
हर ४२
हरडर १२७
हरबर्ट स्पेन्सर २९
हरिदास २९९
हार का दरवाज़ा २२५
हितोपदेश १९२
हिन्दू १२१, २१६, २२२, २२३
हिन्दूधर्म २४, १३९, १४०, १४३, १६६, १७०, २५१, २५६, २९९, ३०६, ३०९, ३३५
हिन्दू फिलासफी १६१
हिन्दू मत १२
हैनरी टामस ३६३
होसिया ३१७
ह्यूमनिज्म ६९, १२७